सम्पदा
जनवरी, १९५८
मूल्य
७५ नये पैसे

यात्रा के शिष्टाचार

- ईश्वरभक्ति के बाद सफाई का स्थान पहला है। हमें सफाई की आदत पैदा करनी चाहिए। गाड़ियों में या प्लेटफार्म पर भोजन के टुकड़े या फलों के छिलके न फेंककर दूसरों की सहायता कर सकते हैं। इन चीजों को कूड़े करकट के डब्बों में डालना चाहिए।

- प्लेटफार्म पर जहां तहां थूकना अस्वास्थ्यकारक है। यह अशिष्ट व्यवहार भी है। हमें थूकदानी का प्रयोग करना चाहिए।

- हमें शीतल और छाना हुआ पीने का पानी दूसरे कार्यों के लिए नहीं बरतना चाहिए।

- सीट पर पैर रख कर नहीं बैठना चाहिए। डब्बे में बैठे हुए दूसरे लोगों को इससे तकलीफ होती है। यह शिष्टाचार भी नहीं है।

- अपने भारी सामान को ब्रेक वैन मे बुक करने से हमें तथा और सहयात्रियों को डब्बे में अधिक स्थान मिल जायगा।

- अपने सहयात्रियों के कहने पर भी गाड़ी में तमाखू पीना एक अपराध है। दूसरों के कहने पर अथवा भीड़ और दरवाजे या खिड़कियां बन्द होने पर यमें तमाखू नहीं पीना चाहिए।

- रेलवे राष्ट्र की सम्पत्ति है। हम रेलवे सम्पत्ति को नुक्सान पहुंचाने या उसे उड़ाने वालों को पकड़वा कर इसके बचाने मे सहायक हो सकते हैं। ऐसे आदमियों को वर्दी वाले रेलवे कर्मचारियों के हवाले कर देना चाहिए या उन्हे उनका पता बता देना चाहिए। खतरे की जंजीर को बिना आवश्यकता के खींचने वाले अ-सामाजिक तत्वों के साथ भी यही व्यवहार करना चाहिए।

पश्चिमी रेलवे द्वारा प्रचारित

विषय-सूची

वर्ष ७] जनवरी, १९५८ [अङ्क १

हमारा जहाजी उद्योग

भारतीय उद्योग के विकास के लिए पिछले कुछ वर्षों से उद्योग-व्यापार-मण्डल निरन्तर यातायात की अच्छी और विस्तृत व्यवस्था पर जोर देता आया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश का उद्योग व्यापार जिस तेजी से बढ़ा है, उससे बहुत धीमी गति से यातायात का विकास हुआ है। यह ठीक है कि सरकार का ध्यान इस आवश्यक प्रश्न की ओर गया है, किन्तु अब भी हम बहुत पीछे हैं। गत मास उद्योग व्यापार मण्डल की ओर से किये गये यातायात सम्मेलन में अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए श्री बाबूभाई चिनाय ने बताया कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में प्रति ३७७ व्यक्तियों के पीछे १ मील रेलवे है, फ्रांस में ७७५, ब्रिटेन में ९५७, जापान में ७१०८, लंका में ८४५२, थाईलैंड में ८६१५ व्यक्तियों के पीछे एक मील रेलवे लाइन है, परन्तु भारत में १०५७६ व्यक्तियों के पीछे १ मील रेलवे लाइन है। बड़ी सड़कों के बारे में भी हम बहुत पीछे हैं। अमेरिका में प्रति मील जनसंख्या ५०, फ्रांस में ६१, ब्रिटेन में २७०, बरमा में ७७१, जापान में १००८, मलाया में १०८६, फिलिपाइन्स में १३१२ है, जबकि भारत में १४८८ व्यक्तियों के पीछे १ मील बड़ी सड़क है। मोटर गाड़ियों की दृष्टि से तो हम और भी पीछे हैं। प्रति हजार व्यक्तियों के पीछे मोटर गाड़ियों की संख्या निम्नलिखित हैं—

सं० रा० अमेरिका	३२१	मलाया	१७.२
ग्रेट ब्रिटेन	१०६	जापान	९'१
फ्रांस	१०९	लंका	८'६

और भारत १.०८

प्रति मील सड़क की दृष्टि से देखें, तो भी मोटरगाड़ियों में हमारी स्थिति शोचनीय है, जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होगा—

फ्रांस	१६	थाइलैंड	९.६
सं० रा० अमेरिका	१३	जापान	८.९
लंका	१२	इण्डोनेशिया	४.८

और भारत १.६

केवल सड़कों व मोटर-यातायात की दृष्टि से ही नहीं, जहाजी उद्योग भी हमारा बहुत अवनत है। आज भारत का अपने जहाजों से केवल ६ प्रतिशत विदेशी व्यापार होता है। बन्दरगाहों की स्थिति में बहुत सुधार की आवश्यकता है। भारत जैसे विशाल देश को देखते हुए हमारा जहाजी उद्योग नगण्य सा है। संसार के कुल १०५० लाख टन जहाजों में भारतीय जहाज एक प्रतिशत से अधिक नहीं है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में ३६०००० जी. आर. टी. जहाज

थे, ६ लाख टन का लक्ष्य नियत किया गया, किन्तु हम ४८०००० टन से अधिक पूर्ण नहीं कर सके। दूसरी विकास योजना में ६ लाख का लक्ष्य रखा गया है। पुराने जहाजों को बदलना भी है, इसलिए हमें मार्च १९६१ तक २,१०,००० टन का आर्डर विदेशों को भेजना होगा। हम प्रतिवर्ष विदेशी जहाजों को भाड़े के रूप में १५० करोड़ रु० चुकाते हैं। विदेशी मुद्रा के इस भारी अपव्यय को बचाने की आवश्यकता है। इसके लिए आवश्यकता है जहाजी उद्योग को बढ़ाने और उसकी कमियों को पूर्ण करने की। भारत के जहाजी उद्योग को यह भारी शिकायत रही है कि सरकार की ओर से उसे आवश्यक सहयोग नहीं मिलता। अन्य देशों की सरकारें विविध रूपों में जहाजी उद्योगों को सहायता देती हैं। इण्डियन नेशनल स्टीमशिप ओनर्स असोसिएशन के अध्यक्ष श्री वसन्त सेठ के कथनानुसार भारत की जहाजी कम्पनियों को आयकर व कारपोरेशन-कर के रूपमें ५१½ प्रतिशत देना पड़ता है,जबकि ब्रिटेन में ४२½ प्रतिशत कर देना पड़ा है। भारतीय कम्पनियों को अपनी पूंजी का २५ प्रतिशत छूट में मिलता है, जबकि ब्रिटिश कम्पनियों को मिलने वाली छूट ४० प्रतिशत होती है।

रेलवे मंत्री के पद पर रहकर उसकी अनेक विकास योजनाओंके निर्माणके बाद श्रीलालबहादुर शास्त्री अब यातायात विभाग-मंत्री के रूप में स्थल, वायु और जल परिवहन की समस्याओं को सुलझा रहे हैं। पिछले दिनों उन्होंने अनेक आश्वासन देश के व्यापारिक वर्ग को दिये हैं, जिनसे प्रकट होता है कि सरकार इस दिशा में विशेष ध्यान देने लगी है। सड़क परिवहन के विकास के लिए अनेक आश्वासन देने के बाद उन्होंने आशा दिलाई है कि जहाजी कम्पनियों को मिलने वाली छूट का दर जल्दी ही २५ प्रतिशत से अधिक हो जायगा। जहाजी-विकास-कोश की स्थापना का भी उन्होंने वचन दिया है, जिसमें भारत सरकार के कोष से एक रकम तथा जहाजी कम्पनियोंको दिये गये ऋण की वापसी तथा इन ऋणों पर मिलने वाले ब्याज की राशियां रखी जायेंगी। ७ करोड़ रु० की राशि से इस कोष की स्थापना भी कर दी गई है। योजना में नियत ३७ करोड़ रु० की राशि इससे पृथक् है। आगामी वर्ष से देश के राजस्व से भी कुछ राशि इसमें दी जायगी। तटीय या विदेशी व्यापार करने वाली सब कम्पनियों से एक समान ३ प्रतिशत ब्याज दर पर लेने का निश्चय किया गया है। यथाशक्ति व्यवहार में विदेशी-मुद्रा की सुविधाएं देने का भी आश्वासन श्री शास्त्री ने दिया है।

इस दिशा में एक और महत्वपूर्ण आश्वासन भी श्री शास्त्री ने दिया है। भारत सरकार की नई उद्योग नीति के अनुसार जहाज निर्माण सरकारी क्षेत्र के अंतर्गत है, लेकिन श्री शास्त्री ने घोषणा की है कि यदि निजी क्षेत्र से जहाज-निर्माण यार्ड बनाने का यदि कोई प्रस्ताव आया, तो इस पर गुणावगुण की दृष्टि से विचार किया जायगा। जहाजों की मरम्मत की सुविधाओं पर विचार करने के लिए एक कमेटी बना दी गई है। जहां सरकार इस दिशा में कुछ करने जा रही है, वहां जहाजी उद्योग का भी कर्तव्य हो जाता है कि वह अपनी पूंजी का सदुपयोग करे, अपने लाभ का बड़ा अंश विकास के लिए लगावे और यह सिद्ध करे कि वह स्वयं भी त्याग करने के लिए उद्यत है।

वस्त्र उद्योग का संकट

कपड़ा व्यवसाय देश का सबसे बड़ा निजी उद्योग है। आज देशभर में ४६५ सूती मिलें हैं, जिनमें १.२३ करोड़ तकुए और २ लाख लूम हैं। प्रतिवर्ष ५३० करोड़ गज कपड़ा इन पर बुना जाता है। इनके सूत से १५ लाख हैंड-लूम चलते हैं। १९५०में ३६६ करोड़ गज कपड़ा बुना गया था, और १९५६ में ५३० करोड़ गज। लेकिन देश का यह प्रधान व्यवसाय आज एक महान् संकट के किनारे पर खड़ा हुआ है। अधिकांश सूती मिलें या तो नुकसान उठा रही हैं अथवा बहुत कम लाभ उठा रही हैं। बहुत-सी मिलें बन्द हो चुकी हैं और हजारों मिल मजदूर अब बेकार हो रहे हैं।

बम्बई के मुख्यमन्त्री श्री शाह ने बताया है कि अप्रैल से नवम्बर तक कुछ मिलों के पूर्णतया बन्द होने से बड़े कारखानों में १०,१३५ तथा छोटे कारखानों में ५३७ मजदूर बेरोजगार हो गये। उसी काल में मिलों की आंशिक बन्दी से ९१३३ मजदूर बड़े कारखानों में तथा ५९९ छोटे कारखानों में बेकार हो गये। कुल मजदूरों में १९ हजार से अधिक सूती कपड़ा मिलों के हैं। पिछले कई महीनों

से मिलों के गोदाम भरे हुए हैं । कोई खरीदार नहीं मिलता । उद्योग मन्त्री की सूचना के अनुसार गोदामों मे ६ ०६ लाख गाठ कपडा नवम्बर में विद्यमान था, जबकि इस वर्ष के प्रारम्भ मे ४.१२ लाख गाठ कपड़ा विद्यमान था । लोगो के पास शायद पैसा ही खरीदने को नहीं रहा । उत्पादन-कर व मजदूरी आदि के खर्च बढ़ने के बावजूद मिलो ने कपड़े की कई किस्मों की कीमतें कम कर दी ह कि कपड़ा बिक जावे, लेकिन कपड़ा बिकने में नहीं आ रहा । अगस्त १९५६ मे कपडे के मूल्य के सूचक अक ४३१ थे, इस वर्ष अक्तूबर के अन्तिम सप्ताह मे ४१६ रह गये । सरकार ने गत वर्ष देश मे कपडे की खपत कम करने के लिए ३१ अगस्त १९५६ को उत्पादन-कर बहुत बढ़ा दिये थे । सुपरफाइन कपडे पर २ आने से ४ आना, फाइन कपड़े पर १॥ आने से ३ आने, मीडियम कपडे पर १ आने से २ आना और मोटे कपड़े पर १ आने से १॥ आना प्रति वर्ग गज । आज यही उत्पादन कर आदि कपड़े की माग को कम कर रहे हैं ।

कपड़ा उद्योग देश का बहुत महत्वपूर्ण उद्योग है। इसका असर अन्य उद्योगों पर भी पड़ रहा है। कपड़ा मिलें अपनी आर्थिक स्थिति को देख कर अपने आधुनिकीकरण व विस्तार की योजनाएं स्थगित कर रही हैं और परिणाम-स्वरूप मशीनरी निर्माण, रासायनिक उद्योग व स्टोर उद्योग पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। कलकत्ता की इन्जीनियरिंग फर्मों को आर्डर कम मिलने लगे है । वे कारखाने अपनी क्षमता का उपयोग नहीं कर पा रहे । कारखानों को आर्डर कम हो रहे हैं और उनके उद्योग पर प्रतिकूल प्रभाव पडने लगा है । नये कारखानो के न खुलने या विस्तार कार्य बन्द हो जाने और दूसरी ओर सरकार की अनेक योजनाओं के स्थगित हो जाने से सिमेंट की फैक्टरियों पर दबाव कम हो जाने की आशा है । मद्रास सरकार ने १५ प्रतिशत की जगह २० प्रतिशत तक अपना सिमेंट स्टाक बिना परमिट बेचने की आज्ञा सिमेंट कम्पनियों को दे दी है ।

प्रश्न यह है कि वस्त्र उद्योग के इस सकट को दूर कैसे किया जाय ? कुछ उत्साही विचारक और प्रवक्ता राष्ट्रीयकरण का सुझाव देते हैं, किन्तु इससे समस्या का समाधान नहीं होगा । राष्ट्रीयकरण से कपडे की मांग नहीं बढ़ जायगी । दूसरा सुझाव यह है कि मिल मालिकों द्वारा अनुचित रूप से लिये जाने वाले मुनाफे व अव्यवस्था पर नियन्त्रण कर के कपडे के मूल्य घटाये जायें, किन्तु हमारी नम्र सम्मत्ति के इससे कोई विशेष लाभ होने की सभावना नहीं है । सचाई यह है कि सरकारी अधिकारियों की अपेक्षा औसतन निजी व्यवस्थापक मितव्यय से काम चलाते है । मुख्य समस्या यह है कि उत्पादन व्यय कम किया जाय, और जनता की क्रयशक्ति बढ़ाई जाय ताकि माल की निकासी हो सके । उत्पादन-व्यय कम करने के दो तरीके हैं— मजदूरी या सरकारी टैक्स कम किये जायें अथवा उद्योगों का आधुनिकीकरण हो । पर आज आधुनिकीकरण के लिए न उद्योग के पास पैसा है और न विदेशी मुद्रा की स्थिति ही इसकी आज्ञा देती है । सगठित मजदूर मजदूरी कम होने देंगे, इसमे भी पूरा सदेह है, और विशेषकर आज, जब बढ़ती हुई महगाई के कारण वे अधिक मजदूरी की माग कर रहे हैं । तब एक उपाय रह जाता है कि सरकार अपना बोझ उन पर कम करे ।

किन्तु समस्या का स्थायी समाधान तो जनता की क्रयशक्ति बढ़ाने और महगाई कम होने से ही हो सकता है । आज हमें इस दिशा मे यह सोचना चाहिए कि वस्तुओं की महगाई कैसे कम हो । यह एक महत्वपूर्ण गभीर प्रश्न है, जिसकी चर्चा हम आगामी अकों मे करेंगे । यदि सम्पदा के विचारशील लखक इस दिशा मे कुछ सुझाव दे सकें, तो हम उनका स्वागत करेंगे ।

१९५७ का महान् अनुभव

१९५७ का वर्ष बीत गया । इस वर्ष का आर्थिक दृष्टि से किया गया सक्षिप्त सिंहावलोकन और मुख्य प्रवृत्तियों की चर्चा पाठक श्री जी० एस० पथिक के लेख मे अन्यत्र पढे गे । वस्तुत: इस वर्ष का प्रारम्भ बहुत उत्साह और आशा के वातावरण मे हुआ था । नए चुनाव हो रहे थे और उनमे कांग्रेस को अच्छी सफलता मिल रही थी । केन्द्र मे तथा अन्य राज्यों मे केरल के सिवा कांग्रेस सरकारें गौरव के साथ पुन अपने पद पर प्रतिष्ठित हुईं । इस सफलता ने उसके उत्साह और आशाओं को बहुत बढा दिया था । नये वर्ष के प्रारम्भ मे देश के शासकवर्ग मे आशावाद और उत्साह की झलक स्पष्ट थी । समाजवाद के लक्ष्य तक पहुँ-

चने के नारे उत्साहपूर्वक लगाये गये और पंचवर्षीय योजना के नए ऊंचे लक्ष्य निर्धारित किए गये। ४८ अरब रुपए के लक्ष्य ५५ और ६० अरब तक पहुँच गए। उत्साह में हम यह भूल गए कि यथार्थ स्थिति हमारी आशाओं के विपरीत जा रही है। वस्तुस्थिति की उपेक्षा करते हुए हमने और हमारे नेताओं ने कहा कि भारत अपने लक्ष्यों को अवश्य प्राप्त करेगा। इस वर्ष का नया बजट इसी आशावादी भावना का परिणाम था। समाजवाद की ओर तेजी से बढ़ने तथा वित्तीय साधनों के प्राप्त करने के उत्साह में नए-नए अभूतपूर्व कर लगाए गए।

परन्तु इस वर्ष का महत्वपूर्ण अनुभव इस वर्ष के उत्तरार्ध में हुआ। शासक वर्ग ने यह अनुभव किया कि केवल आशावाद, आदर्श, उत्साह और भावुकता से समस्या हल नहीं हो जाती। इस वर्ष के उत्तरार्ध में यह अनुभव किया गया कि महंगाई निरन्तर बढ़ती गई है, जीवनोपयोगी पदार्थों के मूल्यसूचक अंक लगातार ऊंचे होते जा रहे हैं, निर्यात कम हो गए और आयात-व्यापार छलांगें मार कर बढ़ गया, स्टर्लिंग निधि करोड़ों रुपए नीचे उतर गई। कृषि ने भी हमें धोखा दिया और हमारे इस अभिमान को चूर-चूर कर दिया कि हम अन्न की दृष्टि से स्वावलम्बी हो रहे हैं। हमने यह भी अनुभव किया कि जनता से जितनी बचत की आशा की गई थी, उतनी नहीं हो रही है। इसलिए १९५७ के उत्तरार्ध में समस्त देश के और विशेष कर सरकार के प्रयत्न इस स्थिति के सुधार के लिए शुरू हो गए। एक ओर देश में वित्तीय साधनों को बढ़ाने के विशेष प्रयत्न किए गए, जनता से एक अरब रु० ऋण लिया गया, छोटी बचत के आंदोलन को तेज किया गया और आयात-व्यापार में नई कठोर नीति अपनाई गई, बहुत-सी वस्तुओं के निर्यात के लिए कच्चे माल के आयात-कर तथा उत्पादन-कर में छूट दी गई। तुरन्त न देना पड़े, इस दृष्टि से विलम्बित मूल्य की शर्तों पर माल मंगवाने की नीति अपनाई जाने लगी। लेकिन इन सब प्रयत्नों का कोई विशेष प्रत्यक्ष परिणाम दृष्टिगोचर नहीं हुआ, क्योंकि जितना एक ओर विदेशी मुद्रा के संचय का प्रयत्न किया जाता, उतना ही विदेशों से अन्न तथा पंचवर्षीय आयोजना के लिए महंगी हो जाने वाली आवश्यक मशीनरी के आयात का विकट प्रश्न समस्या को और भी कठिन बना देता।

विदेशों से सहायता लेने के लिए सरकारी और गैर-सरकारी दोनों तरह के प्रयत्न किए गए। विदेशों से पूंजी प्राप्त करने में हुई असफलता को उद्योगपतियों और अनेक अर्थशास्त्रियों ने सरकारी नीति का परिणाम बताकर अपना पक्ष दृढ़ता से रखने का अच्छा अवसर पाया। पिछले कुछ समय से सरकार समाजवादी आदर्श की भावुकता में बहकर जिस तरह निजी उद्योग के रास्ते में निरन्तर बाधाएं डाल रही थी, उसके विरुद्ध आंदोलन करने की अच्छी भूमि निजी उद्योगपतियों को तैयार मिल गई। बिड़ला शिष्ट-मंडल की रिपोर्ट के साथ अमरीकन व्यापार विभाग का एक नोट छापा गया। नेशनल काउंसिल आफ इकोनोमिक रिसर्च ने भी विदेशी पूंजी को आकृष्ट करने के लिए कुछ सुझाव दिए हैं, जो भारतीय संसद में रखे गए। सरकारी नेता भी संभवतः अब यह समझने लगे हैं कि बिना निजी उद्योगों की सहायता के आर्थिक विकास सम्भव नहीं है। इसलिए अब सरकार की नीति में कुछ-कुछ परिवर्तन होने लगा है। अब यह आश्वासन दिया जाने लगा है कि अन्य उद्योगों का राष्ट्रीयकरण नहीं होगा। निजी उद्योगों को आर्थिक सहायता भी अधिक दी जाने लगी है। अनेक करों में कमी की प्रवृत्ति स्वीकार की जाने लगी है। हमारी नम्र सम्मति में गत वर्ष की सबसे महत्वपूर्ण घटना आर्थिक क्षेत्र में यह है कि सरकार वास्तविक परिस्थितियों के महत्व को समझने लगी है और यह आशा की जानी चाहिए कि भावुकता और आदर्शवाद भविष्य में कठोर सत्य को ओझल नहीं होने देंगे।

भारत और सहकारी खेती

पाठक इसी अंक में अन्यत्र सहकारी कृषि पर श्री एम. आर. मसानी का लेख पढ़ेंगे। वे देश के माने हुए अर्थ-शास्त्री हैं और प्रवाह में न बह कर प्रत्येक प्रश्न पर स्वतंत्र रूप से विचार करते हैं। भारत में कृषि की पद्धति पिछले कुछ समय से अत्यन्त विवादास्पद विषय रहा है। सहकारी कृषि, सामूहिक कृषि तथा देश में प्रचलित पद्धति आदि पर बहुत विचार-मन्थन हुआ है। अनेक शिष्ट मण्डलों था अर्थ-शास्त्रियों ने चीन की सहकारी कृषि का समर्थन करते हुए भारत को भी वही पद्धति अपनाने

की राय दी थी। पं० नेहरू द्वारा समर्थन के बाद देश में विशेष रूप से सहकारी कृषि का समर्थन सब ओर से होने लगा था। पाटिल शिष्ट मंडलने पहली बार बताया कि चीन की पद्धति का यहां पूर्ण अनुकरण करना ठीक न होगा, वहां की परिस्थितियां भिन्न हैं। साम्यवादी शासन का दबाव भारत में नहीं चल सकता। जापान में छोटे टुकड़ों के निजी खेतों में किसान अधिक पैदावार करते हैं। भारत में भूमि के सभी स्वामी खेती नहीं करते, बहुत से गांवों में नहीं रहते और बहुत से मजदूरी देकर किसानों से खेती कराते हैं। इन सब की सहकारी कृषि चीनी पद्धति के आधार पर होनी संभव भी नहीं है। योजना आयोग ने सामुदायिक योजना के कार्य क्षेत्र का अध्ययन करने के लिए अध्ययन मण्डल (स्टडी टीम) की नियुक्ति की थी। इसने भी सहकारी कृषि पर अपने विचार प्रकट किये हैं। इसकी रिपोर्ट में कहा गया है—"यद्यपि सभी राज्यों में सहकारी आन्दोलन पर बहुत जोर दिया गया है, तथापि सहकारी समितियों की संख्या ही बढ़ी है, परन्तु पहले से स्थापित समितियों के कार्य में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ।"

इसी मण्डल ने आगे कहा था "सहकारी कृषि का क्षेत्र बढ़ाने की बात करते हुए हमें चीन व भारत में संविधान के अन्तर को नहीं भूलना चाहिए। प्रबन्ध व्यवस्था तथा ग्रामवासी जनता के स्वभाव में परिवर्तन आये बिना सहकारी कृषि में सफलता पानी संभव नहीं है। एक बड़े पैमाने पर सहकारी कृषि की बात करने से पहले हमें परीक्षणात्मक कृषि क्षेत्र स्थापित करने होंगे।" पाटिल शिष्ट-मण्डल और उक्त अध्ययन मण्डल की रिपोर्टों ने बिना पूर्ण विचार के सहकारी कृषि की ओर भागने की प्रवृत्ति पर कुछ अंकुश लगाना चाहा है। इस आन्दोलन के सबसे बड़े समर्थक पं०नेहरू भी अब यह अनुभव करने लगे हैं कि चीन की पद्धति का पूर्ण अनुसरण भारत में उपयुक्त न होगा। अभी छोटे आकार के संयुक्त खेतों को ही हमें सामने रखना है। उन्होंने यह भी कहा है कि वह चीन के सामूहिक खेतों को समाजवादी सहकारी' या 'उन्नत कोटि के सहकारी नहीं मानते। हमारी नम्र सम्मति में विदेशी पद्धति के आकर्षण, भावुकता और आदर्शवाद के प्रवाह में वास्तविक सत्यों को दृष्टि से ओझल नहीं करना चाहिए। श्री मसानी के विचारपूर्ण लेख में जिन युक्ति-युक्त तथ्यों को सामने रखा गया है, वे विचारणीय हैं। आज कठिनता यह है कि अधिकांश अर्थ शास्त्रियों और नेताओं में योजना आयोग या भारत सरकार की नीति पर स्वतंत्र विचार करने का साहस नहीं रहा। हम अपने पाठकों से किसी प्रश्न के दोनों पहलुओं पर निष्पक्ष रूपेण विचार करके स्वतंत्र सम्मति बनाने का अनुरोध करते हैं।

सीमेंट व्यापार में ५ करोड़ रु० का लाभ

स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन की स्थापना भारत सरकार द्वारा मई १९५६ में की गई थी। इसके ११ डायरेक्टर हैं और सभी सरकारी अधिकारी हैं। हाल ही में उसकी प्रथम वार्षिक रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। उसने १० करोड़ रुपये का कारोबार इस वर्ष किया और ३२.६३ लाख रु० कमाया है तथा ६ प्रतिशत डिविडैण्ड बांटा है। सम्पदा के पाठक जानते हैं कि आयरन ओर तथा विभिन्न वस्तुओं के निर्यात व आयात का एकाधिकार इसे मिला हुआ है और सीमैण्ट के बाहर से आयात के अतिरिक्त देशी मिलों से सीमैण्ट लेकर वितरण का कार्य भी यही निगम करता है। सूती मिलों की मशीनरी के आयात की भी व्यवस्था इस निगम ने की है। चावल व जूट का क्रमशः आयात व निर्यात व्यापार भी इस निगम द्वारा किया गया। मिस्र से रुई मंगाने के प्रबंध में इसका भाग रहा है। वैस्टर्न शिपिंग कारपोरेशन के लिए डीजल हवाई जहाज तथा दो पैट्रोल लांच भी इसके द्वारा खरीदे गये हैं।

इस निगम के सिमैण्ट के कारोबार पर व्यापारिक क्षेत्रों में काफी आलोचना की गई है। यह व्यापार इसके हाथ में देने का मुख्य उद्देश्य यह था कि विदेशों से सीमैण्ट मंगा कर देश में एक समान दरों पर सीमैण्ट-वितरण किया जाय। विदेशों से सीमेंट महंगा आता है और देसी मिलों से सीमेंट खरीद कर कुछ बढ़े हुए भाव पर बेच कर घाटे को पूरा करना था, किन्तु निगम ने सीमैण्ट इतने महंगे दामों में बेचा है कि उसे ५ करोड़ रु० का लाभ हुआ है। इसका अर्थ है ग्राहकों पर बहुत भारी बोझ डाला गया है। जनता पर बोझ डालकर इतना लाभ उठाने के बाद सरकार निजी उद्योग को कैसे कम लाभ उठाने की प्रेरणा दे सकती है, इस प्रश्न का उत्तर सरकार को देना है।

दो आंदोलन

१९५७ की दो प्रमुख घटनाओं का निर्देश करना आवश्यक है। एक है केरल में साम्यवादी दल का शासन। केरल में साम्यवादी नीति के कारण आर्थिक क्षेत्र में नये परीक्षण चल रहे हैं। इनकी सफलता या असफलता भारत की आर्थिक नीति पर प्रभाव डालेगी। दूसरा आन्दोलन आचार्य विनोबा का है, जो भूदान से ग्रामदान में परिणत हो गया है। इस वर्ष सभी राजनीतिक दलों ने इस आन्दोलन का समर्थन करने का निश्चय किया है। सामुदायिक योजना मंत्रालय ने ग्रामदान वालों के साथ मिलकर काम करने का निश्चय किया है। यह आन्दोलन यदि कुछ आगे बढ़ा तो देश की अर्थ-व्यवस्था पर इसका क्रांतिकारी प्रभाव पड़ेगा, परन्तु ये दोनों प्रवृत्तियां देश की अर्थव्यवस्था पर कुछ प्रभाव डाल सकें, इसके लिए यह आवश्यक है कि वे व्यवहार का क्षेत्र भूल कर केवल शास्त्रीय विवेचना की गहरी भूल भुलइयां में न पड़ जावें. ऐसा करने पर शायद वे कोई स्थायी प्रभाव देश में नहीं छोड़ सकेंगी।

सामुदायिक योजना के लिए दो सुझाव

सामुदायिक विकास योजना जिस उत्साह से पांच वर्ष पूर्व प्रारम्भ की गई थी, वह उत्साह स्थिर नहीं रहा। यह अनुभव किया गया कि जनता में आवश्यक उत्साह उत्पन्न नहीं किया जा सका। इस स्थिति के कारणों की जांच पड़ताल के लिए एक अध्ययन समिति नियुक्त की गई। इस समिति ने जो रिपोर्ट पेश की है, उसमें अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए गए हैं, जिनमें से दो सुझावों की ओर हम सम्पदा के पाठकों का ध्यान खींचना चाहते हैं पहली तो यह कि कोई योजना तैयार करने से पूर्व जिला खण्ड के प्रतिनिधियों व कर्मचारियों से अवश्य परामर्श कर लेना चाहिए। आजकल योजनाएं उच्च स्तर से तैयार करके जनता पर ऊपर से थोपी जाती है, इसमें स्थानीय जनता को विशेष रुचि नहीं होती। दूसरी महत्वपूर्ण सिफारिश यह है कि विकास के लिए आर्थिक योजनाओं पर अधिक बल देना चाहिए। शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई आदि की कल्याण योजनाओं का स्थान है. आर्थिक योजनाओं का फल प्रत्यक्ष मिलता है और स्थानीय जनता में अधिक उत्साह पैदा करता है।

नये वर्ष में—

१९५७ का वर्ष बीतने के साथ सम्पदा के ६ वर्ष पूर्ण हो गये और अब वह सातवें वर्ष में प्रवेश कर रही है। इन वर्षों में सम्पदा ने हिन्दी पाठकों को क्या दिया और पत्रकारिता के क्षेत्र में वह कहां तक सफल हुई, इसका उत्तर सम्पदा के पाठक ही देंगे। हमें यह सन्तोष अवश्य है कि हमने अपने सीमित साधनों में यथाशक्ति प्रयत्न किया है कि हम अपने पाठकों को ज्ञानवर्धक और उपयोगी सामग्री दें। हमारा यह विश्वास है कि हमने अपने स्तर को नीचे नहीं गिरने दिया। विभिन्न उपयोगी विषयों व समस्याओं पर ज्ञानवर्धक विशेषांकों की जो स्वस्थ परम्परा सम्पदा ने जारी की है, उसका अनुसरण अन्य पत्रों ने भी प्रारम्भ किया है। हमारी नीति की एक ही कसौटी रही है और वह है राष्ट्र का हित। साम्यवाद, समाजवाद, पूंजीवाद मिश्रित नीति आदि हमारे निकट साधन रहे हैं, साध्य एक रहा है राष्ट्र का हित। हम प्रत्येक प्रश्न पर पूर्वाग्रह छोड़ कर विचार करने के समर्थक हैं। देश को खण्डित कर दुर्बल करने के सभी प्रयत्नों के हम विरोधी रहे हैं। विकास योजनाओं का सामान्य समर्थन करते हुए भी समय समय पर हमने मतभेद प्रकट करने में संकोच नहीं किया। हमें विश्वास है कि सम्पदा के पाठक इस नीति को पसन्द करते हैं।

आज के व्यावसायिक युग में पत्र प्रकाशन भी व्यापक साधनों की अपेक्षा रखता है, जिनका हमारे पास अभाव है। इस कारण जो असाधारण कठिनाइयां हमें हुई, उनकी चर्चा करना यहां अनावश्यक है। इतना अनुरोध हम अपने लेखकों, पाठकों, एजेण्टों व विज्ञापनदाताओं से अवश्य करना चाहते हैं कि उनका थोड़ा थोड़ा अधिक प्रयत्न भी हमें बल प्रदान करेगा और हम अपने पाठकों, आर्थिक क्षेत्रों के कार्यकर्ताओं और विद्यार्थियों की अधिक सेवा कर सकेंगे।

पूंजीवाद और उसका जन्म

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय एम. ए.

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से पूंजीवाद समाजवाद का अग्रज है। पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था ने यूरोप के औद्योगिक क्रान्ति के सहयोग से तत्कालीन समाज में जो आर्थिक वैषम्य, वर्ग-संघर्ष तथा शोषक और शोषित एवं सम्पन्न और अकिंचन के रूप में वर्ग भेद उत्पन्न कर दिया था, उन्हीं सब की भावात्मक प्रतिक्रिया के फलस्वरूप समाजवादी विचारधारा का जन्म हुआ, जिसके द्रष्टा और चिन्तक सेन्ट साइमन, राबर्ट ओवेन, और कार्लमार्क्स प्रभृति व्यक्ति थे। इस तरह समाजवाद का जन्म चूंकि पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था (कार्लमार्क्स के शब्दों में पूंजीवाद के अन्तर्विरोधों) से हुआ, हम इसे पूंजीवाद का आत्मज भी कह सकते हैं।

आधारभूत विचारधारा

पूंजीवाद का सैद्धान्तिक आधार हम १८ वीं शताब्दी के फिज़िओक्रेटिक अर्थ-शास्त्रियों की प्राकृतिक व्यवस्था की कल्पना तथा अर्थ-शास्त्रके प्रथम सुव्यवस्थित लेखक श्री आदम स्मिथ की 'अदृष्ट सत्ता' के सिद्धान्त में पाते हैं। फिजिओक्रैटों को 'प्राकृतिक व्यवस्था' तथा आदम स्मिथ की 'अदृष्ट सत्ता' के सिद्धान्त अपने आर्थिक तत्वों में प्रायः समान है। दोनों ही सिद्धान्तों के द्वारा सरकारी हस्तक्षेप एवं नियंत्रण को अनावश्यक माना गया तथा उन सब प्रकार के विधि विधानों का विरोध किया गया जिनके द्वारा व्यक्ति अथवा वाणिज्य को संरक्षण दिया जाता था। आदम स्मिथ ने अपने पूर्वगामी वाणिज्यवादियों (Mercantilists) का, जिन्होंने इंग्लैंड के विदेशी व्यापार की उन्नति के लिए राज्य से प्रोत्साहन तथा हर प्रकार के अनुकूल संरक्षणों की मांग की थी, विरोध किया। फिजिओक्रैटों की तरह अदम स्मिथ का भी विश्वास था कि समाज की रूपरेखा को राज्य जैसे किसी मानवीय संघ के अप्राकृतिक हस्तक्षेप को कोई आवश्यकता नहीं। अदृश्य सत्ता के रूप में नियति का अदृश्यमान हाथ स्वयं इस बात के लिए पर्याप्त है कि समाज को उसका सर्वोत्तम आर्थिक स्वरूप प्रदान करे। अतः अपने सिद्धान्त की तार्किक विवेचना के आधार पर उसने तत्कालीन सरकारी विदेशी व्यापार नीति के औद्योगिक नियमों, सरकारी सहायताओं तथा व्यापारिक प्रतिबन्धों व संधियों की निन्दा की तथा उन्हें अनुपयोगी बताया।

इस प्रकार फिजिओक्रैटों तथा आदम स्मिथ ने अर्थतंत्र के प्रत्येक क्षेत्र में स्वच्छन्दतावाद (Laissezfarie) का प्रचार किया, जिसके द्वारा उत्पादन, उपभोग, वितरण और विनिमय के क्षेत्र में व्यक्ति की अबाधित स्वतंत्रता की घोषणा की ग । व्यक्ति आर्थिक प्रतिबन्धों और उसकी शर्तों को स्थापित करने के लिए सर्वथा स्वतंत्र माना गया तथा राज्य का व्यक्ति के र्थिक ठेके में हस्तक्षेप करना उतना ही अवांछनीय माना गया, जितना उसके अन्य किसी भी प्राकृतिक अधिकारोंको तोड़ना। इस प्रकार व्यक्ति को स्वतंत्र रूप से सम्पत्ति अर्जन करने, संग्रह करने तथा अपनी मृत्यु के बाद विरासत के रूप में अपने उत्तराधिकारियों पर अवतरित करने का 'प्राकृतिक' अधिकार दिया गया। यही अर्थ व्यवस्था के नाम से अभिहित हुई तथा इस 'पूंजीवादी' अर्थ व्यवस्थाकी आर्थिक मान्यताओं का नाम 'पूंजीवाद' पड़ा।

सरकारी हस्तक्षेप का विरोधी

इस प्रकार पूंजीवाद आर्थिक क्षेत्र में राजकीय वा सरकारी हस्तक्षेप की विरोधी व्यवस्था (antithesis) है। इस दृष्टि से व्यावहारिक रूपमें पूंजीवाद को हम राज्य तथा सरकारों से भी पुराना तथा स्वयं मानव समाज जितना प्राचीन मान सकते है। वर्तमान पूंजीवाद की औद्योगिक क्रिया पद्धति के मूल में हम दो सूत्र पाते हैं जिन्हें वैज्ञानिक शब्दावली में। (१) कार्य विभाजन सूत्र तथा (२) स्वावलम्बन सूत्र कहते हैं। प्रथम सूत्र के अनुसार किसी बड़े कार्य को सरल व सहज बनाने के लिये उसे अनेक खंडों तथा उप-खंडों में बांटकर प्रत्येक खंड या उप-खंड को किसी ऐसे मजदूर तथा मजदूरों के वर्ग को सौंप देते हैं जो उसे करने में विशेष रूप से दक्ष होते हैं। थोड़े में हम इसे श्रम विभाजन का सिद्धान्त कह सकते हैं।

इसके ठीक विपरीत दूसरे सूत्र की मान्यता यह है कि किसी भी प्रकार के कार्य को अच्छी तरह करने तथा उस पर समुचित दृष्टि रखने के लिए यह आवश्यक कि कार्य का अधिक से अधिक भाग एक ही इकाई के अधीन रखा जाय तथा स्वयं किया जाय। ये दो सूत्र परस्पर विरोधी है, फिर भी वर्तमान उद्योगों के प्रवन्ध में इन दोनों ही सूत्रों का प्रयोग होता है। ऐसा कोई भी वर्तमान उद्योग नहीं है. जिसमें 'श्रम विभाजन' का प्रयोग नहीं होता। उसी प्रकार जितने भी औद्योगिक प्रतिष्ठान हैं, वे सभी अधिक से अधिक स्वावलम्बी होनेके लिए अपने उद्योगों का अधिक से अधिक अंग निजी प्रबन्ध के अन्दर रखने की कोशिश करते हैं। लोहे के उद्योग अपनी लोहा और कोयले की ानें तथा अपनी ही ब्लास्ट फरनेस तथा स्टील प्लान्ट रखने की कोशिश करते हैं। स्वावलम्बन की दृष्टि से ही उद्योग आपस में लम्बमान क्षितिज सहयोगिताओं (Combinations) की स्थापना करते हैं। यह सोचना आसान है कि जब तक उत्पादन प्रणाली का आधार श्रम विभाजन तथा श्रम का यंत्रीकरण रहेगा, समाजवादी उद्योगों का संगठन भी बहुत कुछ पूंजीवादी उद्योगों के ही सूत्रों के आधार पर होगा। अतः समाजवाद और पूंजीवाद में अन्तर उद्योगों के संगठन वा आन्तरिक क्रिया पद्धति की दृष्टि से उतना नहीं होता, जितना उद्योगों के उद्देश्य की दृष्टि से। पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था के उद्योगों का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ होता है जब कि समाजवादी अर्थतंत्र के उद्योगों का उद्देश्य सामाजिक कल्याण। अस्तु—

चार अवस्थाएं

पूंजीवादी उद्योगों के आन्तरिक क्रिया-पद्धति व संगठन के दो सूत्रों के आधार पर विद्वान अर्थशास्त्रियों की राय में पूंजीवाद की चार पूर्वावस्थाएं निश्चित की जाती हैं— (१) परिवार प्रणाली, (२) हस्तकला प्रणाली (३) व्यापारिक प्रणाली और (४) फैक्टरी प्रणाली। परिवार प्रणाली के आधार में मुख्यतः स्वावलम्बन का सूत्र काम करता है। शुरू-शुरू में प्रत्येक परिवार अधिक से अधिक स्वावलम्बी होना चाहता था। उसकी अपनी कृषि थी, सूत और वस्त्र अपने थे, आहार आवास के उपकरण भी स्वयं निर्मित और निजी थे। आज भी प्रत्येक परिवार एक दूसरे से अपने को यथासाध्य स्वतंत्र रखना चाहता है। इस प्रकार वर्तमान उद्योगों के कार्य-पद्धति के द्वितीय सूत्र का बीज हम परिवार प्रणाली में पाते हैं जो पूंजीवाद के विकास का प्रथम चरण थी। पूंजीवाद की दूसरी पूर्वावस्था हस्तकला प्रणाली है, जिसका आधार मुख्यतः कार्य विभाजन सूत्र है। इस प्रणाली का विकास चार उप अवस्थाओं से हुआ—

(क) हस्तकला प्रणाली की प्रथम उप अवस्था में ग्रामीण शिल्पकला का विभाजन वड़ा ही स्थूल और सरल था—जैसे लोहार, बढ़ई, राज मिस्त्री, आदि। इस अवस्था में शिल्पियों की उत्पादित वस्तु का बाजार करीब-करीब स्थानीय था तथा उपभोक्ता गांव के पड़ौसी ही थे। ये सब विशेषताएं इस बात से उत्पन्न हुई थीं कि इस अवस्था में आवागमन के साधन अत्यन्त अविकसित थे तथा भौगोलिक सम्पर्क का क्षेत्र अत्यधिक संकुचित था।

(ख) दूसरी उपावस्था में हस्तकला प्रणाली की कुछ उन्नति हुई। सड़कों और नदियों के द्वारा यातायात के साधनों का विकास हुवा, सामाजिक सुरक्षा बढ़ी, और शिल्पियों की उत्पादित वस्तुओं का बाजार भी कुछ विस्तृत हुआ। केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति का प्रादुर्भाव हुआ और कृषकों से पृथक होकर शिल्पी अपनी पृथक नगरी बसाने लगे। इस प्रकार ग्रामीण सभ्यता से भिन्न नागर-सभ्यता का उदय हुआ। कालान्तर में इन नगरों ने भी वस्तु-उत्पादन में विशिष्टीकरण (Specialization) शुरू किया और परस्पर विनिमय और वाणिज्य करना प्रारम्भ किया।

(ग) तृतीय उप अवस्था में हस्तकला प्रणाली के कार्य विभाजन के आधारभूत सूत्र का प्रयोग और भी सूक्ष्मतर रूप में हुवा। शिल्प कार्य अनेक छोटे छोटे टुकड़ों में बंट गया। अब कोई लोहार नहीं रह गया, बल्कि उसमें भी चक्कू-छुरी बनाने वाला, अथवा अस्त्र-शस्त्र बनाने वाला प्रमुख रूप से हो गया। इसी प्रकार ऊन और सूती कपड़े के कारीगर कातने वाले, बुनने वाले, रंगने वाले, धोने वाले आदि अनेक वर्गों में बंट गये। इन शिल्पकारों का प्रत्येक वर्ग अपने में अपूर्ण था, फिर भी एक स्वतंत्र कार्य था।

(घ) हस्तकला की चतुर्थ और अन्तिम उप अवस्था में समाज के आर्थिक इतिहास में कुछ पुनरावर्तन हुवा। उद्योगों का विकेन्द्रीकरण हुवा और कृषक-गांवों में भी उद्योग स्थापित होने लगे। औद्योगिक कार्यो का विभाजन वही रहा, किन्तु उद्योगों का कृषि के साथ कुछ समन्वय भी हुवा। शिल्पी अपने अवकाश के क्षणों में कृषक तथा कृषक शिल्पी बनने लगा।

वर्तमान पूंजीवाद का जन्म

उद्योगो के विकेन्द्रीकरण (हस्तकला की अन्तिम अवस्था) के बाद पूंजीवाद की तृतीय मुख्य पूर्वावस्था प्रारम्भ हुई। इसे व्यापारिक प्रणाली कहते है। वर्तमान पूंजीवाद का जन्म स्पष्टतः इसी अवस्था में हुआ। उत्पादक देश भर में छितराये हुये थे, उद्योगो का विकेन्द्रीकरण हो चुका था—बाजारों का स्थानीयकरण मिट चुका था और अब उत्पादक और उपभोक्ता का पूर्व सांनिध्य भी वर्तमान नहीं था। ऐसी अवस्था में उत्पादित वस्तुओं को उपभोक्ताओं के पास पहुँचाने का काम विशेष विशेष व्यापारियों के वर्ग के ऊपर आ पड़ा। व्यापारी ही सब उपभोक्ताओं और उत्पादकों के बीच की कड़ी थे। वस्तुओं का उत्पादन अब उपभोक्ताओं के प्रत्यक्ष मांग की पूर्ति के लिये नहीं होता था, अपितु व्यापारियों की मांग के अनुपात में होता था। उत्पादन की मात्रा उत्पादकों के ज्ञान से परे बाजार की अवस्था पर आधारित थी, जिसका ज्ञान केवल व्यापारियों को था। अतः उत्पादन व्यापारियों के आदेश पर होने लगा और शिल्पी व्यापारियों का मजदूरी पर काम करने वाला श्रमिक बन गया।

फैक्टरी-प्रणाली

यह अवस्था यूरोप और इंग्लैन्ड में १६ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक चली, किन्तु औद्योगिक क्रान्ति के प्रभाव और नयी दुनिया की खोज के पश्चात् पूँजीवाद अपनी चतुर्थ तथा अन्तिम मुख्य पूर्वावस्था में प्रविष्ट हुवा, जिसे हम 'फैक्टरी-प्रणाली' कहते हैं।

इस प्रणाली' की व्याख्या हम दो दृष्टियों से कर सकते है—(१) शैल्पिक किंवा प्राविधिक दृष्टिकोण; तथा (२) सांगठनिक दृष्टिकोण। प्राविधिक दृष्टिकोण से इस प्रणाली की मुख्य विशेषता यह थी कि इस युग में वस्तुओं के उत्पादन कार्य में हाथ से चलाने वाले सरल औजारों के स्थान पर वाष्प संचालित यंत्रों का प्रयोग होने लगा। दूसरे शब्दों में 'श्रम का यन्त्रीकरण' इस प्रणाली की शैल्पिक अथवा प्राविधिक विशेषता थी। (२) संगठन की दृष्टि से इस प्रणाली को विशेषता यह थी कि इस युग मे श्रमिक वर्ग को एक बहुत बड़े पैमाने पर कार्य पद्धति, अवकाश तथा निवास आदि की दृष्टि से एक ही प्रकार के नियमों से एक समुदाय के रूप में अनुशासित किया गया। उद्योगों का प्रबन्धकर्त्ता (संगठनक) अब मात्र व्यापारी नहीं रहा अपितु नियोजक (Employer) हो गया और मजदूरों का वर्ग उसका अर्ध स्वतंत्र नियुक्त (Employee)। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री राबर्टसन की राय में इस फैक्ट्री प्रणाली की विशेषता मानवीय श्रम के स्थान पर यंत्रों का प्रयोग उतना नहीं था जितना कि आदेश देने वाले, अल्पसंख्यक नियोजकवर्ग तथा आदेश पालन करने वाले बहुसंख्यक नियुक्त वर्ग के बीच का अन्तर। थोड़े में हम यह कह सकते है कि उत्पादन कार्य का यंत्रों द्वारा वृहत पैमाने पर संचालित होना, श्रम का अत्यधिक विभाजन तथा थोड़े से पूंजीपतियों के शासन में अनेक श्रमिकों का रहना ही इस प्रणाली की मुख्य विशेषतायें थीं, जिनमे अन्तिम महत्वपूर्ण थी।

स्पष्टतः पूंजीवाद की तृतीय और चतुर्थ पूर्वावस्थायें अर्थात् व्यापार-प्रणाली और फैक्ट्री-प्रणाली तर्क सम्मत दृष्टि से हस्तकला प्रणाली की ही विकसित तथा अधिक उन्नत उप अवस्थायें थीं। इसीलिये राबर्टसन ने सांकेतिक भाव से कहा है कि 'फैक्ट्री प्रणाली सामाजिक विकास और कार्य विभाजन सूत्र के अनवरत सामाजिक प्रयोग का फल है। यह औद्योगिक क्रान्ति के यंत्र अन्वेषकों जैसे कार्ट-राइट अथवा वैट के किसी अन्वेषण का आकस्मिक उप-परिणाम नहीं, अपितु परम्परा और आरामप्रिय मनुष्य की सामूहिक प्रतिभा का दीर्घकालीन प्रतिफल है।'

पूंजीवाद का वर्तमान रूप फैक्ट्री-प्रणाली की द्वितीय संगठन सम्बन्धी विशेषता में प्रकट हो चुका था। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में मालिक के रूप में आदेश देने वाले कम, किन्तु उनके आदेश के इशारे पर काम करने वाले मजदूर

(शेष पृष्ठ ४८ पर)

आज का गंभीर प्रश्न—

सहकारी खेती भारत के अनुकूल नहीं

श्री एम. आर. मसानी

भारत में 'सहकारी खेती' को कई अर्थों में लिया जाता है। एक अर्थ में इसका तात्पर्य यह होता है कि किसान अपने अपने खेतों के स्वयं मालिक होते हैं लेकिन एक बहूद्देश्यीय सहकारी समिति की, बीज का खरीदना, कृषि यंत्रों का प्रबन्ध करना, उपज को बाजार लाना आदि सेवाओं को प्राप्त करते रहते हैं। दूसरा अर्थ इस प्रकार किया जाता है कि एक विशेष क्षेत्र में सब कृषि योग्य भूमि किसानों के अधिकार से ले ली जाती है और एक बड़ा सहकारी फार्म बना लिया जाता है, जिसको किसान संयुक्त रूप में जोतते, बोते और काटते हैं। किसानों के पास केवल वही जमीन बच रहती है, जिसमें उनके गांव के मकान बने हैं।

ऐसा कहा जाता है कि एक विशेष पद्धति पर जिससे भारत में सहकारी खेती की स्थापना की जा सके, बिना किसी पूर्व आग्रह के विचार करना चाहिए। इस कथन का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। मैं सदा सहकारी सिद्धान्तों का समर्थक रहा हूँ, पर आयोजना आयोग के द्वितीय पंचवर्षीय योजना के इस विचार से मुझे बड़ा दुःख होता है कि "सहकारी खेती के लिए छोटे खेतों को मिलाकर बड़ा फार्म बनाना और संयुक्त प्रबन्ध आवश्यक है।" यह ठीक है कि आयोग ने यह भी कहा है कि इस पद्धति को अभी परीक्षणात्मक आधार पर अपनाना और अन्य विभिन्न पद्धतियों का भी परीक्षण करना चाहिए। लेकिन मेरी चिन्ता का कारण तो यह है कि सहकारिता का जो रूप अपनाया जा रहा है, उसमें किसानके पास अपनी जो जमीन होगी, वह और उसके परिवार के लोग उसे जोतेंगे, लेकिन दूसरी ओर वह सहकारी समिति में विलीन हो जायगा। इस कृषि-सहकारिता की पद्धति को आरम्भिक अवस्था माना जा रहा है। इस पद्धति के अपनाये जाने से हमारे सब किसान अपनी भूमि से वंचित होकर सहकारी समिति के सदस्य मात्र अर्थात् भूमिहीन मजदूर बन जायेंगे। सहकारिता सिद्धांत का यह उद्देश्य नहीं है।

तीन प्रश्न

इस सम्बन्ध में मैं सुझाव के तौर पर तीन कसौटियां पेश कर रहा हूं, जिससे यह निश्चित किया जा सकेगा कि क्या एक परिवार या एक किसान द्वारा वैयक्तिक खेती करने की प्रथा को समाप्त कर देना चाहिए, और छोटे छोटे खेतों की हदबन्दी को तोड़कर बड़े-बड़े सहकारी फार्म बनाने चाहिए। मेरे तीन प्रश्न हैं—क्या (१) बड़े फार्म बनाकर उपज बढ़ायी जा सकेगी? (२) समाजशास्त्र की दृष्टि से ऐसा करना उचित है? (३) क्या यह परिवर्तन स्वेच्छा से किया जा सकता है? आयोजना में बार बार जोर देकर कहा गया है कि सहकारिता स्वेच्छा से स्थापित की जानी चाहिए और किसानों पर इसके अपनाने के लिए जोर-दबाव नहीं डालना चाहिए।

अब एक एक करके इन प्रश्नों पर विचार कर लें। पहला विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या छोटे छोटे खेतों के बड़े क्षेत्र बनाने से कृषि उपज में वृद्धि होगी? यह बात ही बेबुनियाद है कि बड़े बड़े क्षेत्र छोटे खेतों की अपेक्षा अधिक उपज वाले होते हैं। यदि ऐसी बात होती है तो निश्चय ही वे देश जिनमें बड़े बड़े खेत हैं, उन छोटे खेतों वाले देशों की अपेक्षा उपज में अग्रणी होते। यह तो सभी जानते हैं कि संयुक्तराज्य अमेरिका और सोवियत रूस में बड़े क्षेत्रों के आधार पर खेती होती है, जबकि पश्चिमी योरुप के देशों और जापान तथा स्वयं हमारे देश में छोटे छोटे और कहीं कहीं तो बहुत ही छोटे खेत होते हैं। लेकिन तथ्यों से उपर्युक्त मान्यता की विपरीतता ही प्रकट होती है। इसके अनुसार अमेरिका और रूस को इन देशों की अपेक्षा धान और गेहूं की प्रति हेक्टर उपज की दृष्टि से कहीं आगे बढ़ा होना चाहिए। लेकिन प्रति-हेक्टर उपज क्विंटल में (क्विटल— ५० सेर या ५६ सेर लगभग)

अमेरिका में १२.२,

रूस में ६.३,

ब्रिटेन में (छोटे खेतों सहित) २८.५,
डेनमार्क (छोटे खेतों सहित) ३४.४,
फ्रांस में २७.५,
जर्मनी में २६.१,
स्विटजरलैंड मे ३४.२ और

जापान में जहां के खेत हमारे खेतों से भी छोटे हैं-- और एक परिवार के लिए औसतन आधा एकड हो पडते हैं—गेहूं का उत्पादन २२.६ क्विटल प्रति हेक्टर याने अमेरिका से दुगुना और रूस से ढाई गुना है। इसी प्रकार धान की उपज जापान में प्रति हेक्टर ४८.५ क्विंटल है, जबकि अमेरिका में २८.३ और रूस में २१.५ है। इन अङ्कों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

सामूहिक खेती से कम उपज

इसी प्रकार उन देशों की चर्चा कर देना भी आवश्यक प्रतीत होता है, जिनका विचार है कि सामूहिक फार्मों में निजी छोटे खेतों की अपेक्षा अधिक उपज होती है। इसके लिए साम्यवादी देशों से अच्छा उदाहरण दिया ही नहीं जा सकता, जो कि गत ३०-४० वर्षों से इस दिशा मे प्रयत्न करते चले आ रहे है। यह तो सभी जानते हैं कि यूगोस्लाविया ने अब सामूहिक खेती और यहां तक कि सहकारी खेती की पद्धति समाप्त कर दी है। इसके लिए अप्रैल १९५७ को वहां की संसद ने एक प्रस्ताव पास किया था। इससे यही प्रकट होता है कि सामूहिक खेतों से कोई लाभ नहीं रहा, किसानों के हितों को हानि पहुँचती रही तथा उपज में भी कमी होती गई। इसलिए अब वहां 'समाजवादी सहकारिता' स्थापित की जा रही है। इसके अनुसार किसान अपने निजी खेतों में खेती करेंगे तथा सहकारी समितियां कृषि यंत्रों और कृषि-उपज की बिक्री का प्रबन्ध करेंगी। इस प्रकार यूगोस्लाविया की साम्यवादी सरकार ने डेनमार्क की सहकारिता को अपना लिया है, जिससे कि पिछली अर्ध-शताब्दी तक सारी दुनिया के देश प्रेरणा ग्रहण करते रहे। इसी प्रकार पोलैंड में कई सामूहिक फार्मो का अंत कर दिया गया है। ट्रैक्टरों के स्टेशन तोड़े जा रहे हैं और ट्रैक्टरों को वैयक्तिक किसानों के हाथ बेचा जा रहा है। अनाजों का अनिवार्य वितरण खतम कर दिया गया है। सहकारी फार्मों को मिली हुई कर की छूट वापस ले ली गई है, जिससे निजी और सामूहिक पद्धतियों में उचित स्पर्धा हो सके। सन् १९५५ में वहां के बड़े साम्यवादी नेता श्री गोमुल्का ने कहा था "निजी किसानों की उपज सामूहिक फार्मो की अपेक्षा १६.७ और सहकारी फार्मों की अपेक्षा ३२.७ प्रतिशत अधिक है।" मई '५७ को फिर श्री गोमुल्का ने कहा कि "किसानो की स्वायत्तता पुनः स्थापित करने का समय आ चुका है।" इससे उनका तात्पर्य किसानों का भूमि पर निजी स्वामित्व स्थापित करना ही था।

कृष्णप्पा और पाटिल का प्रतिवेदन

हमारे दो प्रतिनिधि-मंडल एक सरकारी और दूसरा अर्ध सरकारी चीन की कृषि पद्धति का अध्ययन करने के लिए गये थे। इन दोनों के प्रतिवेदनों का अध्ययन करके मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि इनके तथ्य विवादास्पद हैं। साक्षियां भी विवादास्पद है, इसलिए हमारे लिए संभव नहीं कि हम पाटिल मंडल के प्रतिवेदन और इसके अल्प मत के प्रतिवेदन की जांच कर सकें, क्योंकि हमारे पास कोई संबंधित तथ्य नहीं है। लेकिन एक बात, पाटिल और कृष्णप्पा दोनों के प्रतिवेदनों से स्पष्ट है कि चीन में कृषि-उपज में जो वृद्धि हुई है, यह सहकारी खेती के कारण नहीं हुई है। यह केवल इसी कारण से हुई है कि चीन की सरकार ने हमारी अपेक्षा कृषि पर अधिक धन का विनियोग किया और अधिक साधनों का उपयोग किया। साथ ही यदि खेती का समूहीकरण न किया गया होता तो उपज में और भी वृद्धि होती।

ब्रिटेन के मजदूर दल के प्रमुख सदस्य श्री बेविन ने, जिन्होंने चीन-सरकार के निमंत्रण पर वहां का भ्रमण किया, २ अप्रैल ५७ को दिल्ली की सार्वजनिक सभा में कहा था "भारत को रूस और चीन जैसी गलती नहीं करनी चाहिए।" यह उनकी हमें चीन और रूस की कृषि पद्धतियों के अपनाने के विरुद्ध चेतावनी थी। अपने भाषण मे श्री बेवन ने बतलाया कि "भारत के पास परीक्षण करने के लिए रूस की भांति फालतू जमीन नहीं है। परीक्षणों में असफलता इसके लिए मंहगी पडेगी। सामूहिक खेती, यंत्रीकरण और केन्द्रीय नियंत्रणके परीक्षण रूस में भी असफल हुए है। रूस के ग्राम क्षेत्रों में असंतोष फैल

गया है। रूस में आज भी क्रान्ति से पूर्व की अपेक्षा पशु कम हैं।" रूसी परीक्षण की नकल हमें नहीं करनी चाहिए।

भारत की समस्या भिन्न है

भारत की समस्या अमेरिका और रूस से मौलिक रूप से भिन्न है। इन देशों में जमीन काफी और आबादी कम है। हमारे यहां आबादी तो अधिक है लेकिन यथेष्ट भूमि नहीं। इसलिए अमेरिका और रूस को जिस यंत्रीकृत विस्तृत खेती की आवश्यकता है, वह हमारे लिए ठीक नहीं। हमें प्रतिव्यक्ति अधिक उत्पादन की आवश्यकता है; हमारी आवश्यकता है प्रति एकड़ अधिक उत्पादन की, हमारे पास जनबल की नहीं, भूमि की कमी है। जिस पद्धति से हम अधिक से अधिक उपज प्राप्त कर सकें, वह पद्धति केवल व्यक्ति का जमीन का मालिक होना और अपने परिवारसहित उस पर खेती करना है।

भारतीय-कृषि-अनुसंधान संस्था ने पता लगाया है कि ट्रेक्टर द्वारा खेती करने से कृषि-उपज बढ़ने की अपेक्षा कम ही हुई है। इस बात की पुष्टि के लिए कहा गया है कि

> उत्तर प्रदेश में बैलों से खेत जोतकर ४१० मन गन्ना उत्पन्न किया गया, जब कि ट्रेक्टर से ३६१.५ से ३६५ मन तक ही पैदा किया जा सका। संभवतः इसी बात को ध्यान में रखते हुए मसूरी में उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री

ने जो सहकारी आन्दोलन के अध्येता भी है, कहा था—"सहकारिता के सिद्धांत पर कोई विवाद नहीं, जिस बात पर विवाद है वह यह कि इस देश की कृषि की दशाओं पर इनको किस प्रकार लागू किया जाय।" उन्होंने यहां तक कहा जब लोग भूमि के समूहीकरण को 'धर्म' के रूप में मान लेते हैं, बहुतों का इसे स्वीकार कर लेना असम्भव प्रतीत होता है।" अतः स्पष्ट है कि यदि हमारी समस्या अधिक अन्न उत्पादन है तो इसका हल सामूहिक खेती या खेतों का एकत्रीकरण नहीं वरन, गहरी खेती से होगा।

जमीन छीनना हानिकारक

दूसरी कसौटी, समाज शास्त्र से सम्बन्धित है कि क्या किसानों से जमीन छीन लेनी चाहिए। लेकिन हमें किसानों के स्वामित्व को क्यों समाप्त करना चाहिए, जब कि यह प्रकट है कि इससे उत्पादन कम होता है बढ़ता नहीं? इस सम्बन्ध में मैं प्रो० रंगा के, जो इस क्षेत्र में काफी जानकार हैं, इन शब्दों को उद्धृत किये बिना नहीं रह सकता कि 'शोषण हीन कृषकीय अर्थव्यवस्था के विरुद्ध किसी भी प्रकार का आन्दोलन खतरनाक है। यह तो समाजवादी आदर्श या सहकारी कामनवेल्थ के विपरीत होगा। इस आन्दोलन से किसानों की बचत को, कृषि उन्नति में लगाने से निरुत्साहित किया जा रहा है। इससे कृषि में अधिक रुपया लगाने में बाधा पड़ेगी और चतुर शिक्षित और साहसी किसान कृषि-कार्य छोड़ने को विवश हो जायंगे। इससे जो होगा वह यह कि ग्राम, ग्रामीण जीवन तथा पारिवारिक अर्थ व्यवस्था में अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी।' इसलिए यह सत्य नहीं कि समाजवादी आदर्शों को लाने के लिए जमीन की मिल्कियत को समाप्त किया जाना चाहिए।

अमेरिकन समाजवाद के जनक श्री ओटो बाएर ने २५-३० वर्ष पूर्व लिखा था कि—"पूंजीपति के लिए जायदाद अपनी पूंजी लगाने का एक साधन है, एक दस्तकार मजदूर या किसान के लिए जायदाद अपनी मेहनत का फल उठाने का साधन मात्र है।" "दूसरे शब्दों में छोटे किसान को कुलक या ऐसा हीन नाम देना उचित नहीं है। मध्य श्रेणी का किसान होने में क्या बुराई है? थोड़ी भूमि के किसान का स्वामी बनने की भावना को तो प्रोत्साहित करना चाहिए। यह शोषण तो नहीं है। भूमि और मनुष्य का सम्बन्ध सदियों व सहस्राब्दियों से चला आ रहा है। इस सामाजिक तत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

नये 'जमीदारों' का भय

तीसरी बात यह कि क्या जमीन स्वेच्छा से हस्तगत की जा सकती है? लेकिन क्या कोई ऐसी कल्पना करता है कि इस देश के किसान तथाकथित सहकारी समितियों को अपनी जमीनें सौंप देंगे और भूमिहीन मजदूर के रूप में रहना पसंद करेंगे? होगा क्या—शहरों से एक आदमी आयेगा—उसे हम कोई नाम दें—कर्ता, प्रबंधक या मैनेजर। वह पुराने जमींदारों की स्थान पूर्ति करेगा। हो सकता है कि वह इस समय 'महाराजा' न हो, लेकिन

[शेष पृष्ठ ५० पर]

बिड़ला शिष्टमण्डल के सदस्य

नीचे की पक्ति मे सर्वश्री जी० एल० बसल (मत्री उ० व्या० मण्डल), घनश्यामदास बिडला (नेता), बाबूभाई एम० चिनाय (अध्यक्ष उ० व्या०), आर० ए० पोद्दार और मनमोहनदास मगलदास।

भारत में विदेशी पूंजी की संभावनाएं

अ० भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल की ओर से श्री घनश्याम दास बिडला के नेतृत्व में एक शिष्ट-मण्डल विदेशो मे गया था। विदेशी पूजी की प्राप्ति की सभावनाओ पर इस मण्डल की रिपोर्ट सक्षेप से यहा दी जा रही है।

विदेशो से हमे चाहे जितना व्यापारिक ऋण मिल सकता है, लेकिन इसके लिए शर्त यही है कि देश मे भी उसी हिसाब से आवश्यक रुपया-पूंजी जुटाने के लिए अनुकूल वातावरण पैदा किया जाय। इस देश मे नई पूंजी लगाने में अमरीका की दिलचस्पी अब इतनी अधिक है, जितनी पहिले कभी नहीं रही। यह आशा भी है कि फ्रास और पश्चिमी जर्मनी दोनों से भी देश की औद्योगिक योजनाओ के लिए ऋण मिल सकता है।

हमारी नम्र सम्मति में इस देश के पूजीगत मालके आयातको को अमरीका के आयात-निर्यात बैंक से मिलने वाली सुविधाओं से पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न करना चाहिए, वे सुविधाएं बहुत ही उचित और सहानुभूतिपूर्ण हैं। यह आशा की जा सकती है कि वह भारतीय निजी क्षेत्र को

सबसे अधिक सहायता दे सकती है। यह बैंक प्रति वर्ष लगभग ५० करोड़ डालर (५०० मिलियन) ऋण के रूप में देता है और उसकी व्याज की दर दूसरे देशों की दर से लगभग २ प्रतिशत कम है। सामग्री की कीमत के ६० प्रतिशत तक वित्तीय सहायता मिल सकती है और शेष ४० प्रतिशत का प्रबन्ध अमरीकी और इस देश के खरीदार के बीच आपसी समझौते द्वारा किया जाएगा। यद्यपि बैंक १५ और १८ वर्ष तक के लिए ऋण देता है, लेकिन कुछ मामलों में वह तीन वर्ष से अधिक समय तक के लिए नहीं देता। अधिकांश मामलों में यह सीमा पांच साल की होती है। लेकिन जहाज द्वारा पहली किश्त आनेके बाद पांच साल का अर्थ होगा सौदे पर हस्ताक्षर करने के बाद लगभग ७ वर्ष। इस कारण हमारा यह सुझाव है कि बैंक के साथ सम्बन्धों को विकसित करने के लिए यहां सरकार को ऋण की अवधि के बारे में उचित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए और पांच वर्ष की अवधि पर आपत्ति नहीं करनी चाहिए। भारत सरकार को इस बात की इजाजत देनी चाहिए कि 'रायल्टी-रेटों' का मामला अमरीकी निर्माताओं और इस देश के निर्माताओं के बीच आपसी-समझौते द्वारा तय किया जाए। आज देश के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा के महत्त्व को स्वीकार कर देश के विकास के लिए उसके महत्त्व को कम नहीं किया जाना चाहिए। कनाडा ने अपना विकास बड़ी-बड़ी अमरीकी पूंजी लगाकर ही किया है।

एक और बात की ओर भी हमारा ध्यान जाना चाहिए कि ऐसी योजनाओं के मुकाबले जिनमें लोककल्याणकारी कार्यों का तत्त्व अधिक है, उत्पादक-योजनाओं के महत्त्व को पूरी तरह समझें। यह सही है कि अस्पताल और स्कूल तथा अन्य भलाई के कार्य किए जाने चाहिए। लेकिन यह भी स्वीकार किया जाना चाहिए कि उनके लिए धन अंतिम रूप से उस उत्पादन से प्राप्त होगा जो कि कारखानों में होता है। इस प्रकार कारखानों द्वारा स्कूलों और अस्पतालों का निर्माण होता है, नकि स्कूलों और अस्पतालों द्वारा कारखानों का।

हमारी यह दृढ़ सम्मति है कि उत्पादक कार्यों में उचित तरीके से रुपया लगाने से अर्थव्यवस्था को बहुत अधिक मजबूत बनाया जा सकता है।

अगले पांच सालों में विशुद्ध उत्पादक योजनाओं में ४००० करोड़ रु० की रकम लगाने का लक्ष्य सम्भव है। हमारा यह विश्वास है कि यदि साधनों की फिजूलखर्ची नहीं हुई तो यह रकम पांच साल की अवधि के अन्त में १,६०० और १,८०० करोड़ के बीच अतिरिक्त आय के लिए पर्याप्त होगी। रुपयों में इस प्रकार के विनियोग के लिए १६०० करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की जरूरत होगी जो हम तभी प्राप्त कर सकते हैं, जबकि हम विदेशी विनियोग के लिए ठोस आधार तैयार कर लें। यह आधार किस तरह तैयार किया जाएगा—इस प्रश्न पर भी हमने विचार किया है। हमने किसी देश में भारत के विरुद्ध राजनीतिक द्वेष नहीं पाया। जो भी गलतफहमियां हैं वे हमारी नीति के कार्यान्वय के कई पहलुओं के सम्बन्ध में हैं। यदि इन गलत फहमियों को दूर करने की दिशा में काम करें तो यह एक अस्थायी चीज होगी। लेकिन हमारे आर्थिक क्षेत्र के बारे में गलतफहमियां और सन्देह गम्भीर मात्रा में पाए गए। उनमें से कुछ तथ्यों पर आधारित नहीं थे, जबकि कुछ को बढ़ा-चढ़ाकर कहा गया था। प्राइवेट बातचीत और भाषणों द्वारा इन्हें दूर करने या सही करने की हमने कुछ कोशिश की। लेकिन कई शिकायतें सच पाई गईं। उनकी अच्छी तरह जांच करने तथा भारत सरकार द्वारा स्थिति को सुधारने की कार्रवाई करने की जरूरत है।

हमारी सम्मति में यदि उचित वातावरण तैयार कर दिया गया तो अमरीका से मुख्यरूप से और कुछ हद तक पश्चिमी जर्मनी की पूंजी भारत में लगाई जा सकती है। इन दोनों देशों, फ्रांस और कुछ समय बाद, ब्रिटेन से सामग्री-विक्रेता उधार पर सामग्री दे सकते हैं।

परन्तु इन सभी सुविधाओं का लाभ उठाने के लिए देश के अन्दर पूंजी उगाहना जरूरी है। इस बात को देखकर निराशा होती है कि एक ओर सरकार विदेशी मुद्रा के सम्बन्ध में कठिनाई में फंसी हुई है और दूसरी ओर निजी क्षेत्र देश के अन्दर साधनों के अभाव में कठिनाई में फंसा हुआ है। जब तक हम इस कठिनाई को दूर नहीं करेंगे, तब तक आर्थिक विकास सम्भव नहीं होगा। यह जरूरी है कि निजी और सामूहिक, दोनों क्षेत्रों में

बचतको बढ़ावा देने के लिए कार्रवाई की जानी चाहिए। बचत के लिए किसी को बाध्य नहीं किया जा सकता। वर्तमान कर-ढांचे में उचित सुधार की जरूरत है, जिससे कि निजी और सामूहिक बचत को बढ़ावा मिल सके।

भारत सरकारसे हमारा अनुरोध है कि मुद्रा सम्बन्धी नीति को उदार बनाया जाए, जिससे कि औद्योगिक विकास की आवश्यकताएं पूरी हो सकें। गत १२ महीनों में बैंक-मुद्रा के सम्बन्ध में जो नीति अपनाई है, उससे विनियोग की कठिनाइयां बढ़ी हैं। इस नीति को मुद्रा-प्रसार विरोधी आवश्यक कार्रवाई कहकर उचित नहीं बताया जा सकता। गत पांच वर्षों के अन्दर उत्पादन बढ़ा है और यदि अनाज की कीमतें बढ़ी हैं तो उसका बहुत कुछ कारण फसलोंका नष्ट होना है। इस कारण खाद्यान्नों की बढ़ती हुई कीमतों का कारण मुद्रा की कमी में निहित है, न कि उसके बाहुल्य में।

खेती का उत्पादन बढ़ाने पर जोर

खेती की उपज बढ़ाने का महत्व कम नहीं है। औद्योगिक विकास खेती की उन्नति से सम्बंधित है।

सरकारी स्तर पर अमरीकी सहायता की प्राप्ति भी सम्भव है। जहां तक हम समझ सके हैं, अमरीकी कांग्रेस इस समय भारत को बड़ा ऋण देने की स्वीकृति देने के पक्ष में नहीं है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय बैंक तथा अन्य अर्ध-सरकारी संस्थाओं से हमें जो बड़ी सहायता मिलने वाली है, उससे कुछ हद तक सहारा मिलेगा और हम यह आशा कर सकते हैं कि यदि उचित तरीके अपनाए गए तो कांग्रेस भी इस देश के लिए ऋण मंजूर करने को तैयार हो जाएगी।

निर्यात को प्रोत्साहन देने के महत्व को हमें नहीं भूलना चाहिए। हमारा यह सुझाव है कि हर व्यवसाय के प्रतिनिधि-मंडल आयातक-देशों की समस्याओं का अध्ययन करने और मंडियां ढूंढने के लिए भेजें जायें। यह सुझाव भी है कि आयातक देशों में अधिक योग्य वाणिज्य दूतावास होने चाहिए।

१९५७ : एक सिंहावलोकन

श्री जी० एस० पथिक

१९५७ में भारत एक ऐसे मोड़ पर खड़ा हुआ, कि *जिससे उसे आंतरिक और बाह्य दोनों क्षेत्रोंमे उसे* संकट का सामना करना पड़ा। प्रथम पचवर्षीय योजना के काल में भारतने खाद्यान्नके उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त कर ली थी। यह दिखायी दिया था कि भारतको अब विदेशोंसे अन्नका आयात न करना पडेगा। पर विकास योजना के अन्तिम वर्ष में स्थिति ने पलटा खाया। १९५६ मे कहीं वर्षा न हुयी तो कहीं बेहद बाढ़ आयी। पर १९५७ में प्रकृति ने अधिक भयंकर रूप ग्रहण किया। इस वर्ष बिहार और उत्तरप्रदेश के बडे भाग में सूखा पड गया। राजस्थान की भी यही हालत हुई। पश्चिम बंगाल में बाढ़ आने से फसल नष्ट हो गयी। परिणाम यह हुआ कि कि देश को भयंकर अकाल का सामना करना पड़ा। इधर किसानों की प्रवृत्ति व्यापारिक पदार्थों की उपज के लिए *अधिक बढ़ने से भी खाद्यान्न का उत्पादन कम हुआ।* खाद्यान्न की अपेक्षा व्यापारिक फसलों की उपज से किसानों को अधिक दाम मिलते हैं। इसके सिवा जनसंख्या की आए दिन की वृद्धि ने भी अन्न की कमी में वृद्धि की। हम चाहे अन्न की उपज करें या न करें, किन्तु प्रति वर्ष *५० लाख मुंह तो मृत्यु की संख्या घटाने पर भी बढ़ते हैं।* ऐसी स्थिति मे खाद्यान्न का संकट भारत में आर्थिक विकास के लिए रोड़ा डालने वाला हुआ।

भयावह स्थिति

दूसरी पंचवर्षीय योजना का यह दूसरा वर्ष आर्थिक *क्षेत्र के लिए भयावह स्थिति पैदा करने वाला हुआ।* दूसरी विकास योजना अत्यन्त महत्वाकांक्षी होने से उसके प्रथम वर्ष में ही इतनी विदेशी मुद्रा खप गयी कि देश के सामने यह प्रश्न खड़ा हुआ कि नए उद्योग खड़े करने के लिए पूंजीगत सामान का आयात कैसे किया जाए? आयात में कई बार कमी की गयी, किन्तु उससे कोई राहत न मिली। कारण, निर्यात न बढ़ सका। बल्कि उसमें उत्तरोत्तर कमी हुयी।

विदेशी व्यापार ही विदेशी अर्जन का एक मात्र साधन है। भारत के पास अन्य विकसित देशों के समान विदेशी मुद्रा अर्जन के दूसरे साधन नहीं है। विदेशी बैंकिंग और

★

भारत का विदेशी व्यापार
(दस लाख रुपयों में)

इस ग्राफ से स्पष्ट है कि प्रयत्न करने के बावजूद आयात निर्यात से बहुत अधिक रहे हे।

★
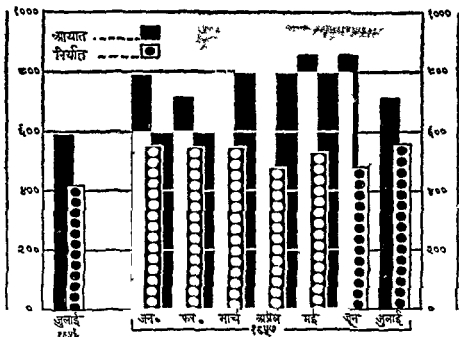
आग पानी आदि का बीमा अर्जन का साधन हो सकता है, इसके सिवा माल के यातायात के लिए जहाजों का साधन भी नहीं है। ये आयके अच्छे साधन हैं। पर भारत को उल्टे इन साधनोंमें काफी रकम व्यय करनी पड़ती है। एशिया और अफ्रीका में भारत एक ऐसे केन्द्र विन्दु में स्थित है, और उसकी आर्थिक अवस्था ने इतना विकास किया है कि इंग्लैंड की तरह भारत का रुपया विदेशी माल के वितरण का केन्द्र वनने पर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा का स्थान ले सकता है। इंग्लैंड के स्टर्लिंग—पौंड का राष्ट्र मंडल और स्टर्लिंग क्षेत्र में जो स्थान है, वह इसलिए है कि वह इस क्षेत्र के विदेशी व्यापार का माध्यम वना हुआ है। भारत भी इस विशाल क्षेत्र के लिए माध्यम वन सकता है। किन्तु इस ओर अभी तक कोई प्रयत्न नहीं हुआ।

रूस से भिलाई के कारखाने के लिए जो सामान खरीदा गया, उसका भुगतान रुपए में देना निश्चय हुआ। अन्न के संकट को दूर करने लिए भारत ने अमेरिका से गेहूँ खरीदने का जो इकरार किया, उसका भुगतान रुपए में देना निश्चय हुआ। इससे भारत को बड़ी राहत मिली। अन्यथा, यह प्रश्न था कि अब पूंजीगत सामान खरीदने के लिए विदेशी मुद्राएं कहां से आएंगी? पश्चिम जर्मनी से लोहे के कारखाने के लिए जो मशीनें खरीदी गयीं, उसका भुगतान भारत नहीं कर सका।

विदेशी मुद्रा

विदेशी मुद्रा कोष में भारत का एक प्रकार से दिवाला निकल गया। विदेशी मुद्रा कोष में पर्याप्त रकम जमा रखने के लिए भारत ने इस वर्ष कई प्रयत्न किए। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण लेकर विदेशी मुद्रा की जमा में कुछ साधारण वृद्धि की। इसके सिवा मुद्रा कोष में जमा सोने का नये स्तर पर मूल्यांकन कर कुछ सोना व्यय के लिए निकाला। इससे भी जब स्थिति न सुधरी, तब रिजर्व बैंक में नोट प्रकाशन मद में विदेशी मुद्रा की जमा रकम में कमी की गयी। इससे व्यय के लिए विदेशी मुद्रा कोष कुछ बढ़ा। पर यह सब धन, निर्यात व्यापार द्वारा आमद और साधारण रूप में विदेशी सहायता इतनी पर्याप्त नहीं प्रकट हुयी, जिससे कि भारत विकास योजनाओं के लिए पूंजीगत सामान खरीद सके। यह चिंतनीय स्थिति देख

कर भारत के प्रधान मं
जी ने विदेशों में भारत
अनुकूल स्थिति पैदा
अन्त में भारतीय उद्य
श्री घनश्यामदास बिड़
गया। निजी क्षेत्र के
पतियों, विदेशी बैंकों,
निर्यातकों से बातचीत
भारत की अर्थ नीति
नहीं है, वह अधिक
व्यापारिक प्रतिनिधिय
गत सामान देने की
लिए भी कहा। पर
नहीं कहा जा सकता

इसी प्रतिनिधि-
मन्त्री श्री कृष्णमाच
उन्होंने विश्व बैंक अ
और पश्चिम जर्मन
की बातचीत की।
नीति को अधिक स्प
कारी क्षेत्र के औद्योगि
दूर किया। उन्होंने
व्यापक रूप प्रकट
पूंजी प्राप्त करने के
और विकास का ज
आज से पहले कभी
के कारण अमेरिक
रूप से प्रकट हुआ।

पर अब राष्ट्
कांग्रेस ने दूसरी पं
प्रेरणा प्रकट की है।
भी सहायता देने की
यह नहीं कहा जा स
विदेशी सहायता कह
प्रश्न बना ही हुआ
दर बढ़ने से नई रुक

श्री ने योरुप का दौरा किया। नेहरू
में विदेशी विनियोजन के प्रति
करने का प्रयत्न किया। इस वर्ष के
गपतियों का एक प्रतिनिधि मंडल
ला के नेतृत्व में योरुप और अमेरिका
इस प्रतिनिधिमंडल ने विदेशी उद्योग-
विदेशी विनियोजकों और विदेशी
की ओर उनसे अनुरोध किया कि
विदेशी विनियोजन के लिए घातक
से अधिक रियायतें देती हैं। इन
ने दीर्घकालीन भुगतान पर पूंजी-
बातचीत की, विदेशी विनियोजन के
ये प्रयत्न कहां तक सफल होंगे, यह

मंडल की यात्रा के काल में भारत के
री भी अमेरिका और योरुप गए।
र अमेरिका तथा इङ्गलैंड, कनाडा
की सरकारों से भारत को ऋण देने
श्री कृष्णमाचारी ने भारत की अर्थ-
ष्ट रूप में प्रकट किया। उन्होंने सर-
क विकास और राष्ट्रीयकरण का भय
भारत में निजी क्षेत्र के विकास का
किया। यह कहना होगा कि विदेशी
लिए भारत में निजी क्षेत्र की स्थिरता
रूप इस वर्ष प्रकट किया गया, वह
नहीं हुआ था। भारत की विदेशी नीति
का सहायता देने में संकोच स्पष्ट

पति आइजनहोवर और अमेरिकन
चवर्षीय योजना में सहायता देने की
कनाडा और पश्चिम जर्मन सरकार ने
भावना प्रकट की है। पर इस सबसे
कता है कि भारत को विकास के लिए
तक प्राप्त होगी? यह एक संदिग्ध
है। फिर भारत में इङ्गलैंड की बैंक
वट पैदा हुई है। दीर्घकालीन मुद्दत

[सम्पदा

के भुगतान पर पश्चिमी जर्मनी की ब्याज की दरें बड़ी ऊंची हैं। रूस और जापान ने सहायता का हाथ बढ़ाया, पर वह पर्याप्त नहीं है। अभी यह कहा जाता है कि विकास योजना के व्यय में सत्तर अस्सी करोड़ रुपए की कमी हो गई है। इसलिए यह प्रकट है कि अमेरिकन सहायता के अभाव में भारत की दूसरी विकास योजना का पूर्ण स्तर न रह पाएगा।

नये कर

इस वर्ष के बजट में निजी क्षेत्र पर कई प्रत्यक्ष कर लगे। डिवीडेंड पर उपकर कायम ही रहा। किंतु बोनस शेयरों पर उप-कर लगा। जिस रकम पर एक बार आय कर लग चुका, और जो रकम बचत द्वारा पुनर्नियोजन के लिए रखी गयी, उसके उद्योगों में पुनर्विनियोजन होने पर पुन बोनस कर लगाना बचत और विनियोजन को प्रोत्साहन देना नहीं है। इस कर के लगने से बोनस शेयरों के जारी होने की तीव्र प्रगति धीमी पड़ गई। इसके सिवा दो नये पूंजीगत कर लगे। अर्थात् सम्पत्ति पर वार्षिक कर एक नया कर लगा। व्यय कर लगाने का भी विधान स्वीकृत हुआ, जो १९५८ से जारी होगा। यह भी एलान किया गया १९५८ में उपहार कर भी स्वीकृत होगा। इस प्रकार ये तीन पूंजीगत कर भारतीय अर्थ व्यवस्था में नये आए। पर व्यय कर तो एक ऐसा कर है, जो ससार के किसी देश में अब तक नहीं लगा है। इन करों के लगने से निजी क्षेत्र की पूंजी और साधनों पर भारी बोझ पड़ा है। निजी क्षेत्र विक्षुब्ध सा हो गया। १९५७ के बजट से अप्रत्यक्ष कर भी बड़े परिमाण में लगे, और उनका भार जन साधारण की आय पर पड़ा। केन्द्रीय सरकार का कहना है कि इससे करों का नया बोझ न बढ़ पाएगा। तटकरों में आयात कर में वृद्धि की गई और निर्यात कर केवल कम ही नहीं किए गए, बल्कि किन्हीं पदार्थों पर साधारण रह गए। सभी राज्यों के बजट घाटे के रहे यद्यपि अब केन्द्रीय वित्तमन्त्री का सुझाव है कि अगले वर्ष से राज्यों के बजट घाटे के न रहें।

दूसरे वित्तीय आयोग ने आय कर, तट कर और अनुदान में राज्यों को अधिक रकम निर्धारित की, जिसे केन्द्रीय सरकार ने स्वीकार कर लिया है। प्रथम बार जन संख्या के आधार पर राज्यों को आयकर में हिस्सा मिलेगा। और इस हिस्से के अनुपात को भी ८० प्रतिशत से अधिक रखा गया है। निर्यात कर अनुदानों के अंश में भी काफी वृद्धि की गई है। इस नए निर्णय से पश्चिम बंगाल को सतोष नहीं हुआ, यद्यपि जनसंख्या की दृष्टि से उसकी रकम घटी, किन्तु अन्य मदों से अधिक हिस्सा मिलने पर पूर्वापेक्षा उसे अधिक आमद होगी।

व्यापार

केन्द्रीय सरकार ने पूंजी निर्माण के स्रोत शेयरों के बाजार पर प्रथम बार नियंत्रण किया। नए सिक्यूरिटी कानून के अन्तर्गत बम्बई और कलकत्ता आदि के प्रमुख शेयर बाजारों को लाइसेंस दिए गए और उनका कारोबार सरकारी नियंत्रण में आया। वस्तुओं के वायदे के व्यापार में फारवर्ड मार्केट कमीशन ने दृढ़ता से काम लिया। रुई के वायदे के व्यापार में बम्बई के ईस्ट इंडिया काटन का कारोबार कई संकटों के बाद फिर से जारी हुआ। जीवन बीमा कार्पोरेशन ने बीमा व्यवसाय में अच्छी प्रगति की। पालिसियों की संख्या बढ़ी। निजी क्षेत्र में पूंजी निर्माण को प्रोत्साहन देने के लिए प्रमुख शेयरों में कार्पोरेशन का विनियोजन बढ़ा। जो शेयर खासा अच्छा मुनाफा देते हैं, उनमें कार्पोरेशन की रकम लगी। पर इधर कार्पोरेशन की रकम कलकत्ते के मूंदड़ा प्रतिष्ठानों में लगने से एक चिंतनीय अवस्था पैदा हो गई। इससे कार्पोरेशन को काफी घाटा हुआ, जिस पर संसद् में काफी चर्चा हुई और सरकार को जांच का आश्वासन देना पड़ा।

उद्योग

सरकारी क्षेत्र में लोहे के तीन कारखाने रूस, ग्रेट ब्रिटेन और पश्चिम जर्मनी के सहयोग में खुलेंगे और उनका काम जारी है। आसाम में तेल के कारखाने की योजना भी प्रगति कर रही है। सरकार ने रेल और जहाजी उद्योग के लिए विश्व बैंक से सहायता प्राप्त की है। टाटा कम्पनी को भी इस वर्ष विश्व बैंक से ऋण मिलना स्वीकृत हुआ है। राज्यों के वित्तीय कार्पोरेशन उद्योगों में विनियोजन करने में आगे बढ़े हैं।

(शेष पृष्ठ ४७ पर)

१६५७ का आर्थिक घटनाक्रम

जनवरी

१३ प्रधान मंत्री श्री नेहरू द्वारा हीराकुड बांध का उद्घाटन।

१८ २२ नई कागज की मिलों की स्थापना की अनुमति।

२० एशिया में प्रथम आणविक भट्टी का उद्घाटन।

२१ फिल्म और फोटोग्राफी सामान के लिए उटकमण्ड में कारखाना खोलने का निश्चय।

२२ नये भारत-पाक व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर।

२३ नेपाल भारत सड़क (त्रिभुवन राजपथ) की पूर्णता।

२३ मोटर उद्योग को १० साल के लिए संरक्षण की घोषणा।

२६ हिन्दुस्तान शिपयार्ड ने तीन नये जहाज १९५६ में समुद्र में उतारे।

३१ रिजर्व बैंक द्वारा ४ प्रतिशत ब्याजदर की सूचना।

फरवरी

५ जियोलोजिकल सर्वे द्वारा आन्ध्र में ३८.१ करोड़ टन लोहे की नई खानों की घोषणा।

१६ चाय के निर्यात लक्ष्य बढ़ाकर ४५.३ करोड़ पौं० कर दिये गये।

२२ पूर्वी जर्मनी का उधार की शर्त पर पूंजीगत सामान देने का प्रस्ताव।

२३ प्रधान मंत्री द्वारा पहली और एशिया में सबसे बड़ी इलैक्ट्रो-हाई टैंशन इन्सुलेटर फैक्टरी का उद्घाटन।

२६ भारत सरकार द्वारा निर्यात व्यापार के लिए रिस्क इन्श्योरेन्स कार्पोरेशन की स्थापना का निश्चय।

२७ आय-कर से प्राप्त रकम की विभिन्न राज्यों में वितरण की घोषणा।

मार्च

५ विश्वबैंक द्वारा 'एयर इण्डिया इन्टर नैशनल' को १६८०० डालर ऋण देने का निश्चय।

७ स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन द्वारा जापान की स्टील मिलों को ५ साल में ७२ लाख टन आयरन ओर देने का समझौता।

१३ भूपाल में बिजली की बड़ी मशीनों का कारखाना खोलने की भारत सरकार द्वारा स्वीकृति।

१६ भारत सरकार द्वारा १९५७-५८ में १८०००० अम्बर चर्खे बनाने की योजना पर स्वीकृति।

१८ पश्चिमी बंगाल का बजट—१२७७ लाख रुपये का घाटा।

१९ भारत के वित्त मंत्री द्वारा बजट—३६५ करोड़ रुपये का घाटा।

पंजाब का नया बजट—३.६२ करोड़ रुपये का घाटा।

२० बिहार और आन्ध्र के बजट—क्रमशः ४६.२७ और ५.३ करोड़ रुपये के घाटे।

२१ रूरकेला, भिलाई और दुर्गापुर के ३ लोहे के कारखानों के लिए १५६.८३ करोड़ रुपये के व्यय का सुझाव।

२३ अल्मूनियम के २ कारखाने (१० हजार टन क्षमता) खोलने का सुझाव।

२५ उत्तर प्रदेश का बजट—६.६८ करोड़ रुपये का घाटा।

२८ नमक का निर्यात ५५.६ करोड़ मन से बढ़ कर वर्ष में ७८.७ करोड़ मन तक पहुँच गया।

रूरकेला, भिलाई और दुर्गापुर के लिए जर्मन, रूस और ब्रिटिश फर्मों को मशीनों का आर्डर।

३१ एक सूचना द्वारा तीनों लोहे के कारखानों के प्रबन्ध के लिए हिन्दुस्तान स्टील (प्राइवेट) लि० की नियुक्ति।

अप्रैल

१ समस्त देश में सिक्कों की दशमिक पद्धति का प्रचलन।

४ वर्ष बाद भारत और पाकिस्तान में पहली बार सीधा सवारी के टिकट जारी किये गये।

२ बम्बई का बजट—२.३७ करोड़ रुपये का घाटा।

३ कच्चा जूट खुले लाइसेन्स में सम्मिलित।

११ एक रिपोर्ट—भारत की ३४ हजार मील लम्बी रेलवे लाइन—एशिया में पहली और संसार में चौथी।

१५ अखबारी कागज की दूसरी फैक्टरी के लिए निजामाबाद (आन्ध्र) का चुनाव।

१६ विश्व बैंक द्वारा लोहे के उत्पादन के लिए ६.५० करोड़ डालर ऋण देने पर सहमति।

२४ भारत सरकार द्वारा बोकारो (बिहार) में लोहे का चौथा कारखाना खोलने का निश्चय।

२५ पश्चिमी बंगाल के पूर्णिया जिले में लाइम स्टोन की एक बड़ी भारी खान का अनुसंधान।

२७ रेलवे और सामुदायिक योजनाओं के विकास के लिए अमेरिका द्वारा १२५ लाख डालर देने का समझौता।

मई

२ भारत में पहली बार कैल्शियम कार्बोनेट का हावड़ा के एक कारखाने में उत्पादन।

४ रूस द्वारा तेल निकालने की मशीनें देने का समझौता।

१४ रेलवे बजट संसद में पेश।

१५ केन्द्रीय बजट संसद में पेश।

सम्पत्ति और व्ययकर के नये प्रस्ताव संसद में।

२० बिहार का बजट—४१ करोड़ ६१ लाख रुपये का घाटा।

नेवली लिग्नाइट प्रोजैक्ट (मद्रास) का प्रधान मंत्री द्वारा उद्घाटन।

२४ १ जून से १२ वर्षीय नैशनल प्लैन सेविंग सर्टिफिकेट जारी करने का निश्चय।

२६ जीवन बीमा निगम द्वारा बम्बई में "जनता पौलिसी" जारी।

२६ भारत सरकार द्वारा आयरन ओर का निर्यात स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन के द्वारा करने का निश्चय।

जून

८ रिजर्व बैंक द्वारा बैंकों को अनाज पर उधार नियंत्रित करने की सूचना।

१० तार के बढ़े हुए दर लागू।

जैकोस्लेवाकिया द्वारा भारत में चीनी शोधन के ३ नये कारखानों के निर्माण का समाचार।

२२ ईस्ट इण्डिया काटन एसोसिएशन को कारोबार करने अनुमति।

२५ खाद्य स्थिति की जांच के लिए अशोक मेहता की अध्यक्षता में आयोग की नियुक्ति।

२७ देश में चाय की खपत १६७१.६ लाख पौं० से बढ़ कर २१३२.२ लाख पौं० होने की सूचना।

जुलाई

१ रेलवे के किरायों में वृद्धि।

२ विदेशी मुद्रा की कमी से दूसरी पंचवर्षीय योजना में संकोच पर विचार।

८ भारत सरकार द्वारा कोयले का मूल्य डेढ़ रुपया प्रति टन बढ़ाने की घोषणा।

११ विश्व बैंक द्वारा भारतीय रेलवे के लिए ६ करोड़ डालर ऋण देने पर सहमति।

२२ विश्व बैंक को १६ करोड़ डालर के ऋण के लिए ५$\frac{3}{4}$ प्रतिशत ब्याज देने की सूचना।

२४ उत्तर पूर्वी रेलवे में भारत सरकार द्वारा आठवां क्षेत्र बनाने का निश्चय।

२५ भारत सरकार द्वारा १०० करोड रुपये के २ ऋण जारी करने का निश्चय।

२६ सरकारी रिपोर्ट—१९५५-५६ की अपेक्षा १०० करोड़ अधिक अर्थात् २५० करोड रुपये का विदेशी संतुलन में घाटा।

औद्योगिक वित्त निगम के द्वारा १२ सूती मिलों को १ करोड़ ९८ लाख रुपया ऋण देने की रिपोर्ट।

अगस्त

३ सरकारी कर्मचारियों के वेतन की जांच के लिए आयोग की नियुक्ति।

१७ जीवन बीमा निगम का कारोबार १९५५ (२३६.३४ करोड़ रु०) की अपेक्षा १९५६ में १८७.६१ करोड रु० तक गिर जाना।

२६ भारत, अमेरिका और नैपाल में आगामी ५ वर्षों तक नैपाल में ९०० मील सड़कें बनाने का समझौता।

सितम्बर

४ सूती मिलों द्वारा ३१ अगस्त १९५७ तक वर्ष मे ६६.५० लाख गांठ रुई की खपत—अधिकतम रिकार्ड।

(शेष पृष्ठ ५४ पर)

अमेरिकन पूंजी भारत में क्यों नहीं ?

अ. भा. उद्योग व्यापार मंडल ने बिड़ला शिष्ट मंडल की जो रिपोर्ट प्रकाशित की है, उसके परिशिष्ट में अमेरिकन व्यापार विभाग का नोट छापा है, जिसमें बताया गया है कि अमेरिकन व्यवसायी भारत में रुपया लगाने में किन कारणों से संकोच करते हैं ? ये कारण संक्षेप से निम्नलिखित हैं—

सम्पत्ति कर—यद्यपि सम्पत्ति कर का ½ प्रतिशत दर अधिक नहीं है, किन्तु इसकी विद्यमानता ही विनियोजक को अनुत्साहित करती है। पहले ही आयकर, अतिरिक्त कर व कम्पनी कर काफी हैं। यद्यपि ये दर कुछ कम किये गये हैं, तथापि संसार में ये सबसे ऊंचे कर हैं।

रिजर्व का जमा कराना—भारत सरकार ने कुछ प्रकार की कम्पनियों को छोड़कर बाकी सब कम्पनियों के लिए यह अनिवार्य कर दिया है कि वे अपने रिजर्व-फण्ड का ५० प्रतिशत सरकारी कोष में जमा करावें। इससे भी उद्योग विकास में बाधा आ सकती है।

कम्पनी कानून—नये कम्पनी कानून की कुछ धाराएं सरकारी निरीक्षण व नियन्त्रण को आवश्यकता से अधिक कर देती हैं।

रायल्टी पर टैक्स—विदेशी लाइसैंस वालों को ५ प्रतिशत तक अधिकतम रायल्टी लेने का अधिकार दिया गया है। सब तरह के कर देने के बाद एक विदेशी फर्म को १.८ प्रतिशत लाभ होगा, जो वह अपने देश ले जा सकेगी। इस स्वल्प लाभ का प्रलोभन विदेशी विनियोजकों के लिए कोई आकर्षण नहीं है।

प्रशिल्पिकों को आयकरमें छूट—आजकल विदेशी विशेषज्ञों को अस्थायी निवास पर भारत में आयकर में छूट मिलती है, परन्तु उन्हें बीच-बीच में दूसरे देशों में भी कुछ समय तक जाना पड़ता है। इस सम्बन्धमें छूट की शर्तों का अधिक स्पष्टीकरण होना चाहिए।

श्रम-सम्बन्धी कानून—भारत में ऐसे कानून बने हुए हुए हैं, जिनसे अनावश्यक व अपराधी मजदूरों को निकालना भी असम्भव या बहुत कठिन है। इससे एक ओर व्यय बहुत बढता है, दूसरी ओर परेशानी भी बहुत रहती है और उद्योग के शान्तिपूर्ण संचालन में बाधा आती है।

राष्ट्रीयकरण व चौथा संशोधन—संविधान में चौथा संशोधन (१९ अप्रैल ५५) करके सरकार ने राष्ट्रीयकरण करते समय मुआवजे के निर्धारण का अधिकार अदालत की बजाय अपने हाथ में रखा है। अमेरिकन विनियोजकों को यों ही राष्ट्रीयकरण का भय है। फिर नये संशोधन से मूल्य भी उचित मिलेगा, इसमें संदेह हो गया है।

दोहरा टैक्स—भारत व अमेरिका में दोहरे टैक्स के सम्बन्ध में किसी संधि के न होने से भी अमेरिकन पूंजी को भारत जाने से संकोच होता है।

निजी उद्योग में भेदभाव—अनेक आश्वासनों के बावजूद अमेरिकन व्यवसायी को भय है कि सरकार कच्चा माल, यातायात व बाजार आदि के बारे में निजी उद्योग से भेदभाव करती है।

विनियोग की जांच—भारत सरकार किसी उद्योग में रुपया लगाने की इतनी अधिक जांच-पड़ताल करती है कि इसमें देर लगने के अलावा अनेक रहस्यों का उद्घाटन भी हो जाता है।

——

भूमि-सुधार की आवश्यकता क्यों ?

डा० श्री के० एन० ताज

भारत कृषि प्रधान देश है और यहाँ की अर्थ-व्यवस्था कृषि पर आधारित है। देश के औद्योगिक विकास और अर्थव्यवस्था की मजबूती के लिए वर्तमान भूमि-व्यवस्था मे सुधार की आवश्यकता अनुभव की जाती है। प्रस्तुत लेख मे भूमि-सुधार क्यो आवश्यक है, इस पर प्रकाश डाला गया है।

यह तो मानी हुई बात है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देशो में भूमि सुधार की आवश्यकता रहती है, फिर यह क्यो आवश्यक है कि भूमि सुधार की जरूरत को समझा भी जाए।

भूमि सुधार के समर्थन या विरोध के विभिन्न कारण है। कुछ लोग नैतिक कारणों से इसका समर्थन या विरोध करते है, कुछ सामाजिक या राजनैतिक कारणो से। नैतिक दृष्टि से इसका समर्थन करने वालो की दलील यह होती है कि भूमि तो ईश्वर की देन है, इसलिये उसे निजी सपत्ति के कानूनो या रीति रिवाजो से जकडना उचित नहीं। सामाजिक दृष्टि से इसका समर्थन करने वालों का कहना है कि भूमि पर जायदाद क अधिकार लागू कराने से सामाजिक विषमता बढ़ती है और यदि सुधार न किये गये तो राजनैतिक उथल पुथल की सभावना होगी। अन्य लोग केवल आर्थिक दृष्टि से इसका समर्थन करते हैं।

ये सब दलीलें परस्पर विरोधी होने के बावजूद काफी ठोस और महत्वपूर्ण है। इनमें से किसको कितना महत्त्व दिया जाय, यह केवल अपनी अपनी समझ की बात है।

उत्पादन का मुख्य साधन

कृषि प्रधान देशो मे भूमि के वितरण और उस पर अधिकार का उनके सर्वसाधारण जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यह प्रभाव केवल राजनैतिक या आर्थिक क्षेत्रो में हो नहीं, बल्कि समाज और देश की नैतिक तथा दार्शनिक विचारधारा पर भी पड़ता है।

भूमि पर अधिकार का साधारण जीवन पर प्रभाव पडने का प्रमुख कारण यह है कि श्रम के अलावा भूमि ही उत्पादन का मुख्य साधन है। इतना ही नहीं, बजर भूमि को खेती के योग्य बनाने से उपजाऊ भूमि बहुत हद तक बढ़ाई जा सकती है, लेकिन इतने पर भी उसका क्षेत्र सीमित ही होगा।

यह सीमित भूमि आय का साधन है और यही कारण है कि भूमि पर अधिकार का कृषि प्रधान देश मे सपत्ति के वितरण पर गहरा प्रभाव पडता है। सम्पत्ति के वितरण का देश की राजनीति और सामाजिक रचना आदि पर प्रभाव पडता है।

कृषि प्रधान देशो की अर्थव्यवस्था पुराने ढर्रे की ओर अपरिवर्तनशील होती है। वहा का खेतीका ढग भी पुराना सदियों से चलता आया होता है। आबादी बढ़ने के बावजूद उसमे परिवर्तन नही होता। भूमि क सीमित क्षेत्र और असमान बटवारे का यह नतीजा होता है कि भूमि सुधार के लिए लोग उतने उत्सुक नही रहते। अनाज की पैदावार और वितरण उसी पुराने ढग से चालू रहता है। कभी समझौते से और कभी जबरदस्ती से लगान वसूल किया जाता है। लगान देने वाले और लेने वाले दोनो ही इस पद्धति के आदी हो जाते है। इस पद्धति को सामाजिक मान्यता भी प्राप्त होती है। साराश, जब तक यह अर्थव्यवस्था कायम रहती है, तब तक उसमे परिवर्तन करने का किसी को खयाल नहीं आता।

परिवर्तन का कारण

इस व्यवस्था को तभी धक्का लगता है, जब कोई बाहरी शक्ति इसमें दखल देती है। भारत मे अगरेजी राज्य स्थापित होने के बाद उसके कायदे कानून लागू होने लगे। ये कानून इगलैण्ड की विचारधारा क अनुकूल थे। इन्होने भारत मे भूमि को निजी सपत्ति के रूप मे परिवर्तित कर दिया। इसके पहले भारत मे भूमि को निजी सपत्ति नहीं माना जाता था। भूमि पर अधिकार के साथ ही उसे बेचने या गिरवी रखने का अधिकार हासिल किया गया।

इससे पहले भूमि पर राजा का या सम ाजे का अधिकार
रहता था। भूमि न तो बेची जा सकती थी और न ही गिरवी
रखी जा सकती थी। परन्तु कानूनों के बद ढलने और अर्थ-
व्यवस्था में धन का महत्त्व बढ़ने के बाद हमारी सदियों
पुरानी कृषि-व्यवस्था का ढांचा खड़खड़ाने लगा। जब फसल
नष्ट हो जाती और धन का अभाव रहत ा, किसान भूमि
को वेचता या गिरवी रखता। इसका परिण ाम यह हुआ कि
कुछ समय के बाद किसान भूमि का मालि ाक नहीं रहा।
आबादी बढ़ने से अधिक अनाज की जरूरत हुई,
जिससे भूमि की कीमत भी बढ़ने लगी। बड़ी संख्या में
किसान बेदखल होने लगे। भूमि ऐसे लोगों के हाथों में
गई, जिनका खेती से कोई संबंध नहीं था। इससे इन दो
वर्गों में तनाव पैदा हुआ और इस तन ाव से सामाजिक
जीवन को खतरा पैदा हुआ। एक ऐस ी स्थिति पैदा हो
गई जिससे लोग भूमि-सुधार चाहने लगे।

भूमि सुधार का हेतु यदि केवल किस ानों की सहायता
ही है तो लगान की वसूली में निर्दयता, कुड़की, बेदखली
आदि को कानून की सहायताले रोका जा सकता है। यदि
बहुत बड़ी संख्या में किसान भूमिहीन हो गये हों और
इसके कारण सामाजिक या राजनैतिक त नाव पैदा हो गया
हो, तो जोत की भूमि का अधिकतम च ेत्र तय कर देनेसे
काम चल जाएगा। परन्तु बढ़ती हुई आबादी और
औद्योगीकरण के प्रयास के कारण भूमि पर बोझ बढ़ता जा
रहा है। ऐसी अवस्था में आर्थिक परि स्थिति को ध्यान में
रखकर ही भूमि-सुधार के बारे में स ोचना पड़ेगा। इस
जबकि देश का औद्योगिक विकास ा हो रहा है, भूमि-
। ऐसे होने चाहियें जिनसे किसान ों को पैदावार बढ़ाने
का प्रोत्साहन मिले। किसान को अपन ी मेहनत का पूरा-
पूरा लाभ मिलना चाहिये। अक्सर य ह देखा गया है कि
किसान को उसकी मेहनत का पूरा फल नहीं मिलता।
देश में कृषि की उपज का लग भग पांचवां हिस्सा
अर्थात सालाना ६००-८०० करोड़ रुप ये बिचवई को लगान
या महाजन को सूद के रूप में किसान के हाथ से निकल
जाते हैं। यह राशि विकास कार्यों के लिये उपलब्ध नहीं
होती। भूमि-सुधार द्वारा इस राशि का कुछ हिस्सा विकास
कार्यों के लिये हासिल किया जाना चा हिये।

मैसूर के भूदान सम्मेलन से स्पष्ट हो गया है कि भूमि सुधार के संबंध में अब देश में एक राय हो गई है। देश का आर्थिक विकास होना चाहिये, इसे भी अब सब मानते हैं। परन्तु अभी तक यह स्पष्ट नहीं हुआ है कि जो लोग भूमि-सुधार के समर्थक हैं, क्या वे उसका संबंध आर्थिक विकास के साथ जोड़ना चाहते हैं? उदाहरणार्थ खेती की भूमि का क्षेत्र निश्चित किया जाता है, परंतु उत्पादकता बढ़ाने पर विचार नहीं किया जाता।

भूमि सुधार सभी चाहते हैं परंतु भूमि सुधार के उद्देश्य के विषय में सबका दृष्टिकोण भिन्न है। इस विषय में एकमत होना कठिन भी है। परंतु आयोजन और आर्थिक विकास के विषय में थोड़ा बहुत मतैक्य है और इस मतैक्य के होते भूमि-सुधार का ऐसा कार्यक्रम बनाना कठिन नहीं होगा, जो हमारे सामाजिक लक्ष्य की पूर्ति में सहायक हो।

युग की मांग : ग्रामदान

श्री धीरेन्द्र मजूमदार

नौकरशाही का खतरा

मनुष्य ने राज्य सस्थाका निर्माण किया था, परस्पर सघर्ष की चौकीदारी के लिए। *क्रमश लोगों ने उस सस्था* पर नित्य नयी जिम्मेदारिया डालनी शुरू कीं और दिन ब दिन उसके भरोसे रहने की आदत डाली। इन जिम्मेदारियों ने बढ़ कर आज लोक कल्याणकारी राज्य के रूप में शासन सत्ता ने मनुष्य के दैनिक जीवन द्वारा अग प्रत्यग पर कब्जा कर लिया है। फलस्वरूप लोकशाही को मानने वाले मुल्कों में *अत्यन्त विराट तथा शक्तिशाली नौकरशाही* की सृष्टि हुई है, जिसके चलते दुनिया की लोकशाही वैधानिक किताबों के पन्नों में पड़ी रह गयी है और प्रत्यक्ष व्यवहार मे नौकर शाही का ही कब्जा जमा हुआ है। इतना ही नहीं, जिसे हम जन प्रतिनिधि कहते है और वैधानिक किताबों मे जिन्हें वास्तविक सत्ताधारी कहा जाता है, उनमे हर तीन या पाच साल से बदल होने के कारण वास्तविक सत्ता नौकरशाही के हाथ में ही पडी रहती है और जनता के प्रतिनिधि का नाम कागज मे दर्ज मात्र रहता है। राजनैतिक विचारकों के सामने लोक शाही की रक्षा के लिए नौकरशाही का उत्कट सगठन खतरनाक हो रहा है।

चालू लोकशाहीमें दल निष्ठ राजनीति ने जन-जीवन को *आज और भी अधिक अनिश्चित बना दिया है। मनुष्य ने* दल निष्ठ राजनीतिकी कल्पना इसलिए की थी कि एक पक्ष समाज का काम काज चलाये और दूसरा पक्ष समाज की भूल चूक को सुधारता रहे, यानी उसके एक सुधार-कर्ता के रूप मे उसकी कल्पना की थी। लेकिन व्यवहार मे वह दल सुधारक न होकर सत्ता के लिए प्रतियोगिता करने वाला (कॉंपिटीटर) हो *गया। नतीजा यह हुआ कि* इस पक्ष की शक्ति इस बात के सिद्ध करने में खर्च हो जाती है कि अधिकारी पक्ष जिम्मेदारी ठीक से नहीं निभा रहे हैं। फलस्वरूप उनका दलीय कार्यक्रम अधिकांश अधिकार-प्राप्ति के काम को सफल बनाने की दृष्टि से चलने लगा। लोकशाही मे दलनिष्ठ राजनीति इस युग की एक समस्या हो गयी है। यह पराकाष्ठा को तब पहुची, जब राज्य ने कल्याणकारी राज्य का रूप लिया। इन समस्याओं के समाधान मे यह आवश्यक है कि दल निष्ठ केन्द्रीय सत्ता के स्थान पर लोक-निष्ठ विकेन्द्रित ग्रामराज का स्थापना हो, जिसका जन्म केन्द्र शक्ति के नियोजन पर न हो, स्वत स्फूर्त हो, जो ग्राम-दान से ही सभव है।

फिर, यह चल नहीं सकता कि समाज मे एक श्रेणी श्रमजीवी के रूप मे शरीर श्रम से सपत्ति का उत्पादन करती रहे और दूसरा श्रेणी बुद्धिजीवी के रूप मे नाना प्रकार की सेवा देने के बहाने उत्पादक वर्ग को उत्पादित सामग्री से वचित कर अनुत्पादक उपभोक्ता के रूप मे उसे भोगती रहे। इसलिए विनोबा हर मनुष्य को श्रम द्वारा उत्पादन करने को कहते है और शरीर श्रम व बौद्धिक श्रमो की मजदूरी में समानता लाना चाहते है। यह तभी होगा, जब गाव के सारे साधनों को एक करके गाव के सब लोग उन पर परि-श्रम करके उपभोग करे। इस उद्देश्य से विनोबा ग्रामदान की प्रक्रिया से समाज में बुनियादी, तौर पर कुटुम्ब भावना का विकास करना चाहते हैं।

★

वैलफेयर स्टेट : एक भयानक कल्पना

आज का पॉलिटिक्स तो सत्ता के जरिये समाज पर कुल चीजें लादने की कोशिश करता है और 'वेलफेयर स्टेट' से तो भयानक कोई स्टेट ही नहीं हो सकती है। दीखने मे तो यह बड़ा सुन्दर विचार दीखता है। कहा जाता है कि "पुरानी स्टेट केवल पुलिस स्टेट् थी, वह केवल रक्षण की चिंता करती थी, और कुछ नहीं। सारा काम समाज ही *करता था। अब वह पुरानी सरकार गयी और नयी सरकार* आयी, जो समाजके कल्याण की चिंता करती है। पर वेल-फेयर स्टेट् की भी कल्पना नयी तो नहीं है। कालिदास ने रघुवश मे एक राजा के राज्य का वर्णन किया है, जो आदर्श वेलफेयर स्टेट् का वर्णन है—'प्रजाना विनयाधानाद् रक्षणात्

भरणादपि।' वह राजा प्रजा का रक्षण, पालन-पोषण सभी करता था। इसलिए 'स पिता', वही एक पिता था, 'पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः।' बाकी सारे बाप केवल जन्म देने वाले थे। हम तो कालीदास का श्लोक पढ़कर बिल्कुल घबड़ा गये। अगर ऐसी स्टेट् हो, तो वह बड़ी भयानक कल्पना है। जिसमें जनता के जीवन को सब तरह से कस कर बांधा जाता है, उसमें जनता को स्वतंत्र रीति से कुछ भी काम करना नहीं होता है, देश के हर काम के लिए सरकार की तरफ से ही प्लान बनता है। समाज-सुधार, खेती-सुधार, वस्त्र, शिक्षण देना, उद्योगों के बारे में पालिसी (नीति) तय करना, रक्षण आदि सब सरकार करेगी और लोग रक्ष्य बनेंगे। यह बिल्कुल जड़ दशा है, यह तो भेड़ों की अवस्था है।

—विनोबा

★

अम्बर के नवप्रयोग

(श्री कृष्णदास गांधी)

कोशिश करते-करते अब अम्बर चरखे का सस्ता नमूना बना है। पहले की अपेक्षा वह काफी सस्ता रहेगा याने आधे या आधे से कुछ ज्यादा दामों में वह बन सकेगा। साबरमती के प्रयोग-विभाग में इस नमूने का परीक्षण कुछ अरसे से हो रहा है।

कई दिक्कतों का हल निकालते-निकलते आज पूनी को तकुवे पर ही बनाने का प्रयत्न और पिंजाई से कताई तक सारा काम बिना बेलनी अंबर चरखे पर ही करने का प्रयत्न काफी सफलता तक आ पहुँचा है। इस सफलता के कारण नीचे लिखे लाभ मालूम पड़ रहे हैं:

(१) एक ही साधन के कारण जगह कम घिरती है।

(२) अंबर सेट के दाम, जो करीबन् ६० रुपये पड़ते हैं, उसके बदले में इस संयुक्त चरखे के दाम ५० रुपये के आसपास पड़ेंगे, ऐसा दीखता है।

(३) तकुवे पर पूनी बनने से पूनी बनाने का परिश्रम बहुत कम हो गया है।

(४) महीन सूत की पूनी बनाना बहुत आसान हो गया है।

(५) पूनी कुकड़ी पर भरी जाने से उसे खोलने का काम कम हो गया है।

(६) आसानी से महीन पूनी बनने के कारण कम गुणक से कातना संभव हुआ है। उससे कातते वक्त धागे का टूटना कम हुआ है।

(७) चारों तकुवे पर पूनी बनती है, इस कारण २० अंक से महीन सूत की पूनी बनाने में वक्त की भी बचत होगी, ऐसा दीखता है।

इस पद्धति से पूनी बनाने का अभ्यास करने में शुरू में कुछ ज्यादा समय लगना संभव है। कुछ छोटी-छोटी दिक्कतें भी इस पद्धति में आती हैं। लेकिन हम अपने हाथों से जिस प्रकार काम करना चाहते हैं, उसके लिए इन दिक्कतों के मुकाबले में लाभ बहुत ज्यादा है, ऐसा पिछले ५-६ मास के प्रयोग से हमें दिखा है। अब इस पद्धति को विभिन्न क्षेत्रों में आजमा कर हमें देखना है कि ये सब लाभ किस हद तक व्यापक क्षेत्रों में काम दे सकते हैं।

कताई का विज्ञान आज बहुत आगे बढ़ा है। लेकिन उनका मुख्य उद्देश्य यह रहता है कि कपड़े के उत्पादन के काम में, मनुष्यों की संख्या कम से कम लगे और करोड़ों लोगों को कपड़ा अधिक से अधिक सस्ता मिले। मगर चरखे का हेतु कुछ दूसरा है। करोड़ों को कपड़ा मुहैया करने के बदले में करोड़ों को कपड़ा बना लेने की शक्ति देना, साधन देना, यह चरखे का लक्ष्य है। नवीनतम विज्ञान हमें चाहिए। पर वह करोड़ों हाथों से काम छीनने के लिए नहीं चाहिए, बल्कि उन हाथों को मजबूत बनाने के लिए चाहिए।

[शेष पृष्ठ ५० पर]

ग्रामदान

हमारा ग्राम जीवन आज रेत के दानों की तरह बिखरा पड़ा है। कोई भी सरकार, चाहे वह कम्युनिस्ट हो या सोशलिस्ट, अपनी मर्जी से ही सामूहिक ढंग से सारे काम नहीं करा सकती। केवल ग्रामदान से गांव का और उससे देश का पुनर्निर्माण किया जा सकता है। केवल ग्रामदान से ही भारत का राजनीतिक तथा आर्थिक ढांचा बदला जा सकता है और देश में असली समाजवाद की स्थापना की जा सकती है।

—जयप्रकाश नारायण

फोन : ३३१११
तार : 'ग्लोवशिप'
न्यू ग्लोब शिपिंग
सर्विस लिमिटेड
खताऊ बिल्डिंग्स
४४ ओल्ड कस्टम हाउस रोड, फोर्ट, बम्बई

नया सामयिक साहित्य

इण्डियन इकानामिक्स ईयर बुक—१९५७-५८ (अंग्रेजी में)—लेखक व संकलनकर्ता—श्री राजनारायण गुप्त। प्रकाशक—किताब महल, अलाहाबाद। पृष्ठ संख्या २६०। मूल्य २.५० रु०।

प्रस्तुत पुस्तक अर्थशास्त्रीय दृष्टि से भारत का अध्ययन है। इस में लेखक ने जो उपयोगी सामग्री दी है, उसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। समस्त पुस्तक में आर्थिक दृष्टिकोण से अंकों व तालिकाओं द्वारा भारत के संबंध में उपयोगी जानकारी दी गई है। जनसंख्या, भूमि, प्राकृतिक साधन, पंचवर्षीय योजना और कृषि, भूमिसुधार, सिंचाई, उद्योग आदि विविध अंग, बीमा, बैंक, वित्तीय साधन आदि के बारे में अंकों व तालिकाओं की सभमार है। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित जनगणना आदि व रिजर्व बैंक, योजना आयोग तथा उद्योग व्यापार विभाग आदि द्वारा बीसियों रिपोर्टों में से आवश्यक सामग्री का एकत्र चयन किया गया है, जिससे पाठक या अर्थशास्त्र का विद्यार्थी एक साथ सब उपयोगी जानकारी पा सके। यह अपने आप में विद्यार्थियों व विचारकों की एक बड़ी सेवा है। परन्तु पुस्तक का दूसरा भाग भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। केवल अंक शुष्क व नीरस हो जाते हैं। इनके साथ साथ पृष्ठभूमि, संक्षिप्त इतिहास और विविध नई प्रवृत्तियों की विवेचना आदि देकर विद्वान् लेखक ने पुस्तक को अत्यन्त उपयोगी बना दिया है। उद्योग व कृषि आदि के विकास में क्या बाधाएं थीं, उनके निराकरण के लिए क्या उपाय बरते जा रहे हैं तथा उनका भविष्य क्या है, सरकार की भावी नीति क्या है, नये तथ्य क्या हैं—यह सब सरल भाषा में संक्षेप से दिया गया है। अनेक स्थलों पर विदेशों से तुलनात्मक आंकड़े हमें अपनी स्थिति पर विचार करने की प्रेरणा देते हैं। कुछ समस्याओं या मौलिक प्रश्नों पर विवेचन भी बहुत उपयोगी है, जैसे विदेशी सहायता का औचित्य, घाटे की अर्थ-व्यवस्था, कैलडोर के कर प्रस्ताव, बीमा का राष्ट्रीयकरण, दशमिक पद्धति आदि आदि। इस सुन्दर संग्रह के लिए श्री गुप्त व प्रकाशक दोनों अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों के निकट बधाई के पात्र हैं।

★

स्टैटिस्टिकल आउटलाइन आफ इण्डिया (अंग्रेजी में)—प्रकाशक टाटा इण्डस्ट्रीज प्राइवेट लि०, बाम्बे हाउस, बम्बई—१। मूल्य लिखा नहीं।

प्रस्तुत छोटी सी पुस्तिका, जैसी कि नाम से स्पष्ट है, भारत संबंधी महत्वपूर्ण जानकारी देने के लिए प्रकाशित की गई है। इसमें ६९ तालिकाएं दी गई हैं, जो भारत की जनसंख्या, व्यापार, उद्योग, राष्ट्रीय आय, श्रम, रोजगार वित्तीय अवस्था, बैंक और पंचवर्षीय योजनाओं आदि से सम्बंध रखती हैं। अनेक तुलनात्मक अंकों से यह भी प्रकट हो जाता है कि हम किस क्षेत्र में उन्नति कर रहे हैं और किसमें प्रगति शिथिल है। अनेक तालिकाओं में विदेशों से भी तुलना की गई है। कुछ तालिकाएं बताती हैं कि निजी उद्योग सरकारी उद्योगों से अधिक सफल हुए हैं। अन्न व अन्य कच्चे माल के आयात के अंक बहुत चिन्ताजनक है। बढ़ते हुए मूल्यों का परिचय भी इससे मिल जाता है।

पुस्तिका का गैट अप, छपाई व जिल्द बहुत मनोमोहक है।

★

आजादी का दसवाँ वर्ष—१९५६-५७—प्रकाशक अ० भारतीय कांग्रेस कमेटी, जन्तरमन्तर रोड, नई दिल्ली। पृष्ठ संख्या ३२५। मूल्य ३)।

अ० भा० कांग्रेस कमेटी प्रतिवर्ष भारत की केन्द्रीय व विविध राज्यों की सरकारों द्वारा प्राप्त सफलताओं व प्रगति का विवरण प्रकाशित करती है। यह विवरण अंग्रेजी में होता था, इसलिए कांग्रेस कमेटियों, विधान सभाओं व संसद् के अधिकांश सदस्य इससे लाभ नहीं उठा सकते थे। अब यह विवरण हिन्दी में प्रकाशित हुआ है और अपने वास्तविक उद्देश्य को पूर्ण करने में सहायक सिद्ध होगा।

इस पुस्तक से भारत की विदेश नीति, वित्तीय स्थिति पंचवर्षीय योजना और उसके विविध क्षेत्रों में की गई प्रगति का एक साथ परिचय मिल जाता है। सरकार के विविध मंत्रालयों के संक्षिप्त विवरण अर्थशास्त्र के विद्यार्थी के लिए उपयोगी होंगे। यह ठीक है कि इसमें केवल एक

सरकारी पर्चे मिलेगा, पर देश का शासन करने वाली संस्था कांग्रेस के प्रकाशन में सरकारी प्रगति की आलोचना अपनी आलोचना होती और यह कार्य तटस्थ व्यक्ति का है। पुस्तक के उत्तरार्ध में विविध राज्यों के प्रकाशन विभागों द्वारा दिया गया प्रगति सबंधी संक्षिप्त ज्ञानवर्धक विवरण है। विभिन्न चित्रों, ग्राफों, नक्शों व चार्टों द्वारा इस पुस्तक को उपयोगी और आकर्षक बना दिया गया है। रेफरैंस के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी हो सकती है।

★

यूरोप के स्कैच—ले०—श्री रामकुमार। प्रकाशक—आत्माराम एण्ड सन्स, काश्मोरी गेट दिल्ली-६। मूल्य ६)

प्रस्तुत पुस्तक यूरोप के एक यात्री का यूरोप देखा वर्णन है, परन्तु अन्य यात्रियों के वर्णनों से भिन्न। दूसरे यात्री थे शिक्षार्थी या राजनैतिक, किन्तु इस पुस्तक का यात्री है एक कलाकार। उसने यूरोप के बड़े बड़े नगरों, जहाजों और यात्रियों से होने वाले व्यवहारों तथा कठिनाइयों का बहुत वर्णन नहीं किया, जैसा कि अन्य यात्रा वर्णनों में मिलता है। यह एक कलाकार की दृष्टि से देखा गया यूरोप का चित्र है। पेरिस का चित्रकला-जगत् शान्ति आन्दोलन में फ्रैंच संस्कृति, १४ अक्टूबर की एक शाम, लुई अरागो, पिकासो, रोमां रोला का घर, पाल एलुआर, और टालस्टाय का मकान आदि प्रकरण लेखक के कला प्रेम का परिचय देते हैं। एक ओर फ्रांस के चित्रकारों का पतन दिखाया गया है, दूसरी ओर फ्रांस के ओजस्वी कवियों और कलाकारों का परिचय भी पुस्तक पढ़ते समय पाठक के हृदय में ये विचार अनायास उत्पन्न होते हैं कि क्या कभी हिन्दी साहित्यकार भी इतने लोकप्रिय हो जावेंगे कि लोग उनकी रचनाएं लेने और उनसे सम्पर्क करने के लिए लालायित हो उठें। अरागो या एलुआरकी सी ओजस्विनी वाणी क्या हमारे देश में अब भी गूंजेगी? पिकासो सा चित्रकार कब देश में लोकप्रिय हो जायगा? हिन्दी के अनेक साहित्यकारों ने देश के स्वातंत्र्य संग्राम में भाग लिया अवश्य है, किन्तु आज राष्ट्रनिर्माण में उनका स्थान कहां है? लेखक यदि पिकासो की दो एक श्रेष्ठ कृतियों के चित्र भी दे देता, तो पाठक भी लेखक द्वारा उठाये गये आनन्द का कुछ अंश ले लेता।

साम्यवादी देशों से श्रीरामकुमार बहुत प्रभावित हुए हैं। उन्होंने भी उसका शुक्ल पक्ष ही देखा है, जो एकांगी हो सकता है, इसका ध्यान शायद लेखक को नहीं रहा, परन्तु यह वर्णन पुस्तक का मुख्य विषय भी नहीं है।

★

ग्रेट ब्रिटेन का संविधान—ले०—श्री योगेन्द्र मल्लिक प्रकाशक वही। मूल्य ४) सजिल्द।

भारत ब्रिटिश शासन के नीचे दीर्घकाल तक रहा है, और ब्रिटिश पार्लमेण्ट सब पार्लमेण्टों की जननी है। इन दोनों कारणों से भारतीय संविधान पर ब्रिटिश संविधान का बहुत प्रभाव पडा है और उसके अनेक गुण दोषों की छाया भारतीय संविधान पर पड़ी है।

प्रस्तुत पुस्तक में ब्रिटेन के संविधान, उसका संक्षिप्त इतिहास, उसकी विशेषताओं और कमियों का परिचय दिया गया है। लेखन शैली सरल है, जिससे विषय दुरूह नहीं रहा। भाषा भी सरल है। ब्रिटिश नरेश, पार्लमेण्ट और उसके दो सदन, मंत्रिमण्डल, न्यायपालिका, ब्रिटेन के राजनैतिक दल वस्थानीय शासन-सस्थाओं आदि सभी का परिचय पुस्तक में दिया गया है। विभिन्न महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विविध राजनीतिज्ञों और अध्यापकों के मत देकर पुस्तक को अधिक उपयोगी बना दिया गया है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में दिये गये मुख्य प्रश्न विद्यार्थी के लिए सहायक होंगे।

आज भारत की साधारण जनता मंत्रिमण्डल को निरंकुश कहकर उसकी आलोचना करती है, क्योंकि उसके प्रतिनिधि संसद सदस्यों की, उसके आगे नहीं चलती। इसका मूल ब्रिटिश संविधान में है, जिसका अनुसरण भारत में किया गया है। भारतीय संविधान की विशेषताओं और कमियों के मूल तक जाने के लिए भी ब्रिटिश संविधान का अध्ययन आवश्यक है। हमें आशा करनी चाहिए कि राजनीति शास्त्र के विद्यार्थी और देश के विचारक इससे लाभ उठायेंगे।

—कृष्ण

★

गोरी:—महिलाओं की मासिक पत्रिका। प्रकाशक—नेशनल हाऊस, ६. टुलो रोड, बम्बई १.। वार्षिक मूल्य

४ रुपये २५ नये पैसे। एक प्रति ३७ नए पैसे।

गोरी महिलाओं की मासिक पत्रिका है। हिन्दी में महिलाओं के लिए ऐसे पत्र की आवश्यकता है। नारी जगत् के विभिन्न पहलुओं पर सुन्दर तथा उपयोगी लेख हैं। आवरण पृष्ठ छपाई, विषय चयन प्रशंसनीय हैं। अच्छा होता कि एक ऐसा भी स्तम्भ हो, जिसमें महिला साहित्यकारों तथा संगीतज्ञों की चर्चा हो। प्रयत्न सराहनीय है।

★

इन्सानः—सम्पादकः—लवणम्—नागेश्वर। हिन्दी मासिक। प्रकाशनः—पटमटा कृष्णा (जिला) आंध्र प्रदेश। वार्षिक मूल्य ३ रुपये। एक प्रति २५ नए पैसे।

'इन्सान' आंध्र प्रदेश का हिन्दी मासिक है। लेखकों के अहिन्दी भाषी होने पर भी उनकी भाषा स्वाभविक तथा मुहावरेदार है। लेख गंभीर तथा विवेचनापूर्ण हैं। हम आशा रखते हैं कि दक्षिण की संस्कृति तथा साहित्य के बारे में भी 'इनसान' पाठकों के लिए अत्यन्त उपयोगी प्रस्तुत करेगा।

हिन्दी के विकास के लिए अहिन्दी प्रांतीयों का हा प्रयत्न प्रशंसनीय है। —रघुराम

प्राप्ति स्वीकार

निम्न पुस्तक भी प्राप्त हुई हैं, जिनकी आलोचना आगामी अंकों में प्रकाशित की जायगी—

(१) आर्थिक और वाणिज्य भूगोल—ले०—श्री चतुर्भुज मामोरिया। मूल्य १५)

(२) आधुनिक परिवहन—ले०—श्री डा० शिवध्यानसिंह चौहान। मूल्य रु० ६.७५।

(३) भूदान सम्बंधी साहित्य—अनेक पुस्तकें।

(४) उनसे न कहना—ले०—श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी मूल्य ५)

(५) मैकवेथ—अनु० श्री बच्चन ३)

(६) गुलाब के फूल—मूल्य ५) रु०।

महासागर भी धन का स्रोत हैं

श्री एल० ए० जेकेविच

यह बात भले ही कुछ अजीब मालूम हो, पर महासागरों की गहराइयों का अभी हाल ही में "अन्वेषण" हुआ है। कुछ समय पहले की बात है कि केवल चार या पांच किलोमीटर तक ही महासागर को "टटोला गया था।" इस समय वैज्ञानिक लोग प्रशान्त महासागर के गर्तों के तल की खोज कर रहे हैं और १० किलोमीटर की गहराई तक पहुँच रहे हैं। आधुनिक प्रविधि के फलस्वरूप अब महासागर के धनका उपयोग करने की, या यदि आप पसंद करें तो उसके औद्योगिक विकास की बात सोचना सम्भव हो गया है। सूखी.जमीनकी अपेक्षा समुद्रों में बहुत अधिक पदार्थ पाये जाते हैं, जिनमें पोषक पदार्थ भी शामिल हैं। उदाहरण के लिए, समुद्र के जल में जितना सोना है यदि वह सब निकाल लिया जाए तो पृथ्वी पर इतना अधिक सोना हो जाएगा कि उसका मूल्य ताम्बे के मूल्य से अधिक नहीं रह जाएगा : और कुछ वैज्ञानिकों ने तो समुद्र के जल से सोना निकालने की प्रौद्योगिकी का विकास करने का प्रयत्न भी आरम्भ कर दिया है। दुर्भाग्य से, अभी तक यह प्रौद्योगिकी सोने से कहीं अधिक महंगी सिद्ध हुई है।

हमें केवल मछली पकड़ने, ह्वेल मछलियां मारने, सीप और केकड़े पकड़ने तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए। समुद्र में जितने भी जीव-जन्तु रहते हैं, उन सब का मनुष्य के हित में उपयोग करना चाहिए। मनुष्य जाति को अति विशाल और संगठित समुद्री अर्थ-व्यवस्था का प्रबन्ध करने की कला सीखनी चाहिए।

उदाहरण के लिए ह्वेल मछलियों को लीजिए। उनके आकार को देखकर कोई सोचेगा कि हाथियों की तरह उनकी भी परिपक्वता तक पहुंचने में वर्षों लग जाते होंगे। लेकिन ये "समुद्री हाथी" तो अपने जीवन के दूसरे या तीसरे वर्ष में ही परिपक्व हो जाते हैं और बच्चे देने लगते हैं। ह्वेल मछलियों के इस तीव्र विकास का विज्ञान ने एक बहुत सरल सा कारण बताया है, वह यह है कि खाद्य-पदार्थों, पोषक पदार्थों, और विटामिनों के मामले में महासागर सूखी जमीन से कहीं अधिक धनी होता है।

पृथ्वी पर पौधों को गरमी और ठण्ड से अपनी रक्षा करनी पड़ती है, मिट्टी से नमी निकालनी पड़ती है, हवा से लड़ना पड़ता है, और सूरज की ओर बाहें फैलानी पड़ती हैं। उनकी सारी शक्ति इसी में खर्च हो जाती है, और जमीन के पौधों में कुल जितनी पोषक और उपयोगी सामग्री होती है, उसका प्रायः केवल पांच से लेकर छः प्रतिशत तक ही मनुष्य के भोजन के रूप में इस्तेमाल होने के लिए बचता है। समुद्रमें कुछ दूसरे नियम काम करते हैं। यहां पौधों को मजबूत तनों, बड़ी-बड़ी जड़ों, या संरक्षण के अन्य साधनों की आवश्यकता नहीं होती। जमीन के पौधों के विपरीत, समुद्री घास लगभग पूरी तरह कोमल कार्बनिक पदार्थों की बनी होती है, जिनका भोजन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। महासागर में जिस प्रकार की परिस्थितियां होती हैं। चारों ओर जल ही जल होता है, जिससे उनको पोषण मिलता है और ताप भी अनुकूल बना रहता है। यह बात अकारण नहीं है कि पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति सबसे पहले गरम पानी के महासगरों के उपहृदों में हुई थी।

जमीन के किसी पौधे में विटामिनों का ऐसा सांद्रण नहीं होता, जैसा समुद्री जीवों में होता है। वे जन्तु और पौधे विशेष रूप से समृद्ध और पोषक होते हैं, जो प्लैंक्टन् या मंदप्लवक कहलाते हैं। ये बहुत ही सूक्ष्म पौधे तथा जन्तु होते हैं जो बड़े-बड़े झुण्ड बनाकर जल के ऊपरी स्तरों में तैरा करते हैं। प्रसंगवश यहां यह भी बता दिया जाए कि अपने पोषक गुणों में वनस्पति प्लैंकटन सर्वोत्तम प्रकार के भूसे से बहुत अधिक मिलते-जुलते हैं।

यदि आप किसी वन-मार्ग के पेड़ों को काट डालें और वहां नवजात बिरवे लगा दें, तो उनको पक्वता तक पहुँचने में चालीस वर्ष लग जाएंगे। लेकिन महासागर में, उन तमाम जीवों की, जिनमें भूगोल की अधिकतर आधारभूत वनस्पतियां आ जाती हैं, एक वर्ष में पचास पीढ़ियां तैयार हो जाती हैं।

इससे यह बात स्पष्ट हो जायगी कि व्हेल मछलियां पचीस वर्ष के बजाय एक या दो वर्ष में ही क्यों बढ़ जाती हैं। उनको महासागर से प्रचुर पोषण प्राप्त होता है। और व्हेल मछलियां अपवाद नहीं हैं, वे तो यहां के जीवन का एक सुस्पष्ट उदाहरण मात्र हैं। ऐसे हजारों उदाहरण बताये जा सकते हैं।

मछलियों में सबसे अधिक पेटू शार्क होती हैं। लेकिन लगता है कि सबसे बड़े आकार की शार्क मछलियां अब दूसरी मछलियों को खाकर नहीं जीतीं। व्हेल मछलियों की तरह शार्क मछलियां भी अब अपने भीतर जल खींच कर और उसे छानकर मंदप्लवकों या प्लैंकटन नामक जीवों का भोजन करती हैं। शार्क मछलियों के पूर्वज निस्सन्देह दूसरी मछलियों को खाया करते थे। लेकिन उनमें किसी का भी आकार इतना बड़ा नहीं था, जितना बड़ा आजकल की १६ मीटर लम्बी दैत्याकार शार्क का होता है, जो समुद्री चरागाहों में शान्तिपूर्वक प्लैंकटन जीवनों का भोजन किया करती है।

ऐसी है प्रकृति की महिमा। इन साधनों का उपयोग करके मनुष्य भी चमत्कार करके दिखा सकता है।

दसेक वर्ष और बीत जाने दीजिए, मनुष्य महासगर से प्लैंकटन जीवों की विशाल राशियां बाहर निकालने में सफल हो जायेगा, उनका पालतू जानवरों के चारे के रूप में, और सम्भवतया मनुष्यों के भोजन के रूप में भी उपयोग किया जाएगा, और वे बहुत से प्राविधिक और डाक्टरी कामों में भी आयेंगी।

आजकल की नयी पीढ़ी, हमारे बच्चे और उनके बच्चे समुद्र की जटिल एवं अत्यधिक उन्नत अर्थ-व्यवस्था का प्रबन्ध किया करेंगे। जब उसका वैज्ञानिक आधार पर संचालन किया जाएगा, तो वह लाभप्रद सिद्ध होगी। सबसे पहले तो स्वयं समुद्री जन्तुओं को इस्तेमाल किया जाएगा। इन जन्तुओं को जीवित फैक्टरियां समझना चाहिए, जो प्लैंकटन जीवों को अधिक मूल्यवान पदार्थों में—पोषक प्रोटीनों, अनेक प्रकार की वसा और विटामिनों में—परिणत कर देती हैं।

समुद्री घास भी एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण ढंग का कच्चा माल बन जाएगी। अभी किसी ने ठीक-ठीक हिसाब तो नहीं लगाया है, लेकिन अनुमान किया जाता है कि संसार में अरबों टन समुद्री घास मौजूद है। हम उसमें से केवल चन्द हजार टन का, अथवा एक नगण्य मात्रा का प्रयोग करते हैं।

ऐसा विश्वास है कि लगभग ४० वर्ष में एक नया विज्ञान अपने जन्म की घोषणा कर देगा। वह होगा समुद्रान्तर शस्य विज्ञान। तब १०० मीटर तक की गहराई पर, जहां सूर्य का काफी प्रकाश पहुँच जाता है और जल गरम होता है, शस्य वैज्ञानिक और मिस्त्री लोग, डुबकी लगाने वालों के कपड़े पहने हुए और द्रुतगामी पनडुब्बी मशीनों का संचालन करते हुए, उपयोगी पौधों और जन्तुओं का पालन किया करेंगे।

वम्बई मे यूगोस्लाविया प्रदर्शनी का मण्डप

विदेशी अर्थ-चर्चा—

युगोस्लेविया की औद्योगिक प्रदर्शनी

भूमध्यसागर पर महत्वपूर्ण स्थान, जलशक्ति की अमूल्य सम्पत्ति, धातु, खान तथा कृषि सम्बन्धी अनेक सुविधाओं के कारण निकट देशों की अपेक्षा युगोस्लेविया का खास महत्व है। इस कारण इस में कोई आश्चर्य की बात नहीं कि युगोस्लेविया ने गत विश्वयुद्ध के बाद ज्यो ही राजनैतिक तथा आर्थिक स्वतत्रता मिली, इस अवसर से लाभ उठाया तथा अपनी उत्पादन क्षमता को बढ़ा लिया।

युगोस्लेविया की आर्थिक उन्नति का प्रभाव भारत के साथ व्यापार की वृद्धि पर भी काफी पड़ा है। दिसम्बर १६४८ मे जो आर्थिक समझौता हुआ था, वही भारत के स्वतत्र होने के बाद युगोस्लेविया के साथ पहला आर्थिक समझौता था। युगोस्लेविया ने उसी वक्त समझ लिया था कि भारत आर्थिक क्षेत्र में, एशिया मे प्रमुख स्थान लेगा तथा अतर्राष्ट्रीय व्यापार मे भी प्रमुख सहयोगी सिद्ध होगा। युद्ध से पहले जिन वस्तुओ का लेन देन होता था, उन्हीं वस्तुओ का युद्ध के पश्चात् भी कुछ वर्षा तक लेन देन चलता रहा। लेकिन पिछले कुछ वर्षों से युगोस्लेविया से भारत को निर्यात होने वाली वस्तुओं मे परिवर्तन हुआ है। काफी मात्रा तक युगोस्लेविया ने बिजली के क्रेन, ट्रासफार्मर, गृह निर्माण सम्बन्धी मशीनें, ईन्धन तथा लोह सम्बन्धी मशीनें, स्टीम रोल, अल्यूमिनियम की तारें, ट्यूब, इस्पात, अभ्रक की बनी चीजें, पुल बनाने के साधन, रेल्वे सम्बन्धी मशीन, जहाज आदि की मशीनों को जो कि उसके नये उत्पादन हैं—भारत को भेजे है।

भारत के बाजार मे उसे जो सफलता युगोस्लेविया के व्यापारियो को भी काफी

प्रदर्शनी का एक कक्ष

तथा भारतीय व्यापारियों ने भी जो कि युगोस्लेविया के साथ नए व्यापार सम्बन्ध बढ़ाना चाहते थे, किसी अड़चन या संकोच के बिना उससे आयात व्यापार किया।

युगोस्लेविया की औद्योगिक प्रदर्शिनी, भारत में तीसरी बार होने पर भी महत्वपूर्ण है। पहली दो प्रदर्शिनियां १९५२ तथा १९५५ में नई दिल्ली में हुई थीं। इन दोनों में युगोस्लेविया के निर्यात सम्बन्धी साधनों तथा सुविधाओं को दिखाने का प्रयत्न किया गया था।

युगोस्लेविया की यह स्वतंत्र औद्योगिक प्रदर्शिनी, विशेषतः बम्बई के व्यापारियों की सुविधा के लिए बम्बई में हो रही है। बम्बई भारत का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार केन्द्र है। इसलिए प्रदर्शिनी में युगोस्लेविया की आर्थिक स्थिति औद्योगिक उन्नति तथा निर्यात साधनों की झलक प्रस्तुत की जा रही है। प्रदर्शिनी के अधिकारियों का यह विश्वास है कि इस औद्योगिक प्रदर्शिनी से भारत को युगोस्लेविया के औद्योगिक विकास का परिचय मिलेगा तथा भारत, और युगोस्लेविया के व्यापार सम्बन्ध और भी अधिक सुदृढ़ होंगे।

भारत के राज्य व्यापार निगम और यूगोस्लाविया के "इंटर ट्रेड" में एक करार हुआ है, जिसके अनुसार भारत यूगोस्लाविया से जो माल मंगायेगा, उसके दाम का भुगतान रुपयों में किया जाएगा। इस करार का उद्देश्य दोनों देशों के व्यापार को और अधिक बढ़ाना है। इसके अनुसार भारत जो सामग्री यूगोस्लाविया से मंगवाया, उसका मूल्य नयी दिल्ली में स्टेट बैंक आफ इंडिया के एक विशेष खाते में जमा होगा और "इंटर ट्रेड" इस धन से भारत से नियत चीजें खरीदेगा।

चीन की पहली पंचवर्षीय योजना

चीन के उप-प्रधान मंत्री लि फु-चुन की घोषणा से ज्ञात होता है कि चीन की कुल औद्योगिक पैदावार पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि में १२० प्रतिशत बढ़ गयी है। घोषणा का सार यह है:—

इस्पात की पैदावार : १९५२ में १३,५०,००० टन से १९५७ में ५२,४०,००० टन;

उपभोग की वस्तुओं की पैदावार : ८० प्रतिशत वृद्धि;

अनाज की पैदावार : १९५२ में १५ करोड़ ४५ लाख टन से १९५७ में १८ करोड़ ५० लाख टन (सोयाबीन को छोड़ कर);

रूई की पैदावार : १९५२ में १३,०५,००० टन से १९५७ में १६,४०,००० टन;

नियोजित पूंजी : पांच वर्षों में ४८ अरब ४६ करोड़ युआन (लगभग ७ अरब पौंड स्टर्लिंग), जिसमें से ५६ प्रतिशत उद्योग के लिए थी;

बड़ी औद्योगिक परियोजनाएं : पांच वर्षों में ८२० से कुछ अधिक शुरू की गयीं और ४५० पूर्ण हो गयीं;

औद्योगिक स्थिर परिसंपत् : पांच वर्षों में दुगुनी से भी अधिक हो गयीं;

[सम्पदा

नये रेलमार्ग : पांच वर्षों में ८,९०० किलोमीटर;

श्रमिकों के वेतन : ३७ प्रतिशत वृद्धि (१९५६ के अंत तक);

किसानों की आय : पांच वर्षों में ३१ प्रतिशत वृद्धि।

कुल औद्योगिक पैदावार योजना से १७ प्रतिशत अधिक और नियोजित पूंजी योजना से १३ प्रतिशत अधिक रहेगी।

१९५६ के अंत में देश की कुल औद्योगिक पैदावार में राजकीय फैक्टरियों और खानों का योग ६५.५ प्रतिशत, सहकारी व्यवसायों का २ प्रतिशत और संयुक्त राजकीय-निजी व्यवसायों का योग ३२.५ प्रतिशत था;

उत्पादन के साधनों की कुल पैदावार इन पांच वर्षों में तिगुनी हो गयी है और समूचे उद्योग के लिए वृद्धि की जो दर निर्धारित की गयी थी, उसे पार कर गयी है।

उद्योग की कई नयी शाखाओं की स्थापना हुई है जिनमें विमान, मोटर गाड़ी, रेलवे इंजन, मशीनी औजार, पावर उपकरण, धातु-संशोधन व खनन उपकरण, उच्च कोटि के मिश्र इस्पात और लोहहीन धातुओं का निर्माण शामिल है।

उत्तरपूर्व में एक औद्योगिक केन्द्र की स्थापना हो गयी है जिसकी धुरी आनशन का इस्पात कंप्लैक्स है। शंघाई और अन्य समुद्रतटवर्ती नगरों के औद्योगिक केन्द्र मजबूत कर दिये गये हैं और उत्तर, मध्य व उत्तर-पश्चिम चीन में नये औद्योगिक क्षेत्र उभरते आ रहे हैं।

रेलमार्ग के अलावा, मोटर के लिए भी पांच वर्ष की इस अवधि में ८०,००० किलोमीटर से अधिक लम्बी सड़कें बनायी गयी हैं। देश के व्यापारिक बेड़े में ४,१०,००० टन के नये जलयानों की वृद्धि हो गयी है।

★

अन्तर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेला

आने वाले लीपजीग वसन्त मेले में करीब ४० देशों के ६,००० से भी ज्यादा प्रदर्शनकारी भाग लेंगे। ३,०००,००० वर्ग फीट विशाल मैदान में से ४४०,००० वर्ग फीट मैदान में इस महान् प्रदर्शनी की योजना की गई है, जिसमें पश्चिम जर्मनी तथा अन्य अनेक देशों के प्रदर्शक भाग लेंगे। इन आंकड़ों से ज्ञात होता है कि यह मेला सचमुच अंतर्राष्ट्रीय है। प्रदर्शिनी में विदेशी वस्तुओं के अलावा देखने वालों को पूर्वी जर्मनी की विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति की भी झलक मिलेगी।

पूर्वी जर्मनी के विशाल मशीन उद्योगों की प्रगति के बारे में भी प्रदर्शिनी में दर्शकों के लिए काफी सामग्री मिलेगी। भारी मशीन के अलावा कई ढंग के मशीन पुर्जो तथा सूती, खेती, बिजली, मोटर छपाई, सम्बन्धित विविध सामग्री प्रदर्शिनी में दिखाने का आयोजन हुआ है।

लघु उद्योगों के विभिन्न क्षेत्रों में भी प्रदर्शक अपने अपने देशों की विविध सामग्री का प्रदर्शन करेंगे। जर्मनी रासायनिक उद्योग निर्यात सामग्री में से काफी हिस्सा पैदा करता है। कपड़ा उद्योग, कपड़े होजियरी, सिलाई की चीजें, दरियाँ, पर्दे वगैरह माल को काफी संख्या में निर्यात करता है। वाद्य् सामग्री, खिलौने, कांच की बनी चीजें वगैरह लघु उद्योग की सामग्री की भी विश्व में काफी मांग है। लिपजिग मेले में इन चीजों का प्रमुख स्थान है। गत वर्ष के इस मेले में भाग लेने वाले प्रदर्शकों ने उपभोग सामग्री बेचकर काफी लाभ उठाया। वे लोग फिर इस मेले में भाग ले रहे हैं।

गत वर्ष के मेले में सिर्फ कपड़ा विभाग में ही ७६२ प्रदर्शकों ने भाग लिया था। गृह संबन्धित वस्तुओं के

विभाग में ३७५, कांच सम्बन्धित विभाग में ३५६, मिट्टी की बनी वस्तुओं के विभाग में १०८, कागजी विभाग में १६१, खेल सम्बन्धित विभाग में २१०, खिलौने के विभाग में ८३ और वाद्य सामग्री के विभाग में १६१ प्रदर्शकों ने सिर्फ पश्चिम जर्मनी से भाग लिया था।

इस वर्ष के मेले में करीबन ८० देशों के प्रदर्शक भाग लेंगे। आधुनिक समय में यूरोप के औद्योगिक क्षेत्रों में विकसित देशों में पूर्वी जर्मनी का पांचवां स्थान है। वर्तमान पंचवर्षीय योजना द्वारा प्रति वर्ष ६ प्रतिशत से भी ज्यादा औद्योगिक उत्पत्ति हो रही है। आधार भूत भारी उद्योगों के आधार पर ही उत्पादन की वृद्धि हो सकती है। मशीन उद्योग १९५५ तक की तुलना में विशेष महत्व रखता है। १९६० तक इस क्षेत्र में १५० प्रतिशत तक उत्पत्ति बढ़ जायगी। मशीन तथा औजारों के उत्पादन के क्षेत्र में पूर्वी जर्मनी का समाजवादी देशों में द्वितीय स्थान है।

औद्योगिक देशों में, विदेशी व्यापार विशेष महत्व रखता है। पूर्वी जर्मनी को काफी मात्रा में विदेशों से कच्चा माल मंगवाना पड़ता है। १९५६ में ११०० करोड़ रूबल का (४ रुबल-५.८० रुपये) विदेशी व्यापार हुआ अर्थात् १९५० की अपेक्षा ३१२ प्रतिशत वृद्धि हुई। १९५७ के पूर्वार्ध में विदेशी व्यापार में १९५६ की तुलना में २२ प्रतिशत की वृद्धि हुई। १९६० तक निर्यात में ६५ प्रतिशत की वृद्धि तथा आयात में १९५५ के निस्वत ५९ प्रतिशत की वृद्धि होने की आशा है।

पूर्वी जर्मनी की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ है और वह पारस्परिक लाभ की दृष्टि से माल के विनिमय के लिए उन देशों को, जो औद्योगिक क्षेत्र में प्रगति करना चाहते हैं, काफी सुविधाएँ देता है। इस लीपजीग मेले के दर्शन से पूर्वी जर्मनी तथा अन्य अविकसित देशों के मध्य व्यापार में पारस्परिक सम्बन्ध अधिक सुदृढ़ होने की आशा है।

★

विदेशी पूंजी का नया क्षेत्र

पिछले वर्षों की एक क्रांतिकारी घटना यह है कि जहां पहले ब्रिटेन, अमरीका आदि देशों से ही अविकसित देशों को आर्थिक विकास के लिए सहायता मिलती थी, वहां अब रूस भी पूंजी के रूप में आर्थिक सहायता दे रहा है। रूस के अर्थ विशेषज्ञ श्री ए० ए० अर्जुमन्यान लिखते हैं—

अब केवल पूंजीवादी देश साज-सामान तथा मशीनरी देने, कर्ज प्रदान करने और जानकारियां प्रदान करने के इजारेदार नहीं रहे। समाजवादी देश भी अवनत देशों को आर्थिक, वित्तीय तथा प्राविधिक सहायता दे सकते हैं और वस्तुतः इस तरह की सहायता दे रहे हैं।

अवनत देशों की सहायता की प्रधान शर्त यह होनी चाहिए कि उसके साथ कोई शर्त—फौजी या राजनीतिक आर्थिक या सामाजिक—नहीं जुड़ी होनी चाहिए यानी वह बांडुंग सिद्धान्तों के अनुरूप होनी चाहिए।

सोवियत संघ और तमाम समाजवादी देश अन्य मुल्कों को जो सहायता देते हैं और उनसे जो आर्थिक सम्बन्ध कायम करते हैं, वे इन्हीं सिद्धान्तों द्वारा संचालित होते हैं। भारत सरकार ने जब सोवियत संघ से कहा कि वह लौह और इस्पात कारखाने के निर्माण में मदद दे तो सोवियत संघ ने सुगम शर्तों पर भारत को ऋण दिये और उसके अनुरोध पर वहां विशेषज्ञ भेजे। बर्मा, अफगानिस्तान, हिंदेशिया और अन्य देशों को दी गयी सहायता सम्बन्धी समझौतों पर भी इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर हस्ताक्षर किये गये। जब सीरिया सरकार ने सोवियत संघ से सहायता का अनुरोध किया तो संघ से तुरन्त उस ओर ध्यान दिया और किसी भी शर्त के बिना उसे आर्थिक, वित्तीय तथा प्राविधिक सहायता प्रदान की। सोवियत संघ ने मिस्र की प्रार्थना पर उसे ७० करोड़ रूबल देना स्वीकार किया।

इस समय सोवियत संघ संधियों और समझौतों के आधार पर भारत, मिस्र, लेबनान, बर्मा, सीरिया, यमन, लीबिया, पाकिस्तान, हिन्देशिया, कम्बोदिया, मोरक्को, तुर्की और अफगानिस्तान के साथ बहुत बड़े पैमाने पर व्यापार कर रहा है। वह स्याम, इथियोपिया और सूदान के साथ भी व्यापार कर रहा है। पिछले छः सात सालों में दक्षिण-पूर्वी एशिया और मध्यपूर्व के देशों के साथ सोवियत संघ का व्यापार प्रायः साढ़े चार गुना बढ़ गया। अनेक एशियाई और अफ्रीकी देशों के लिए सोवियत संघ के साथ व्यापार उनके अर्थतंत्र तथा विदेश व्यापार को मजबूत बनाने के लिए महत्वपूर्ण उपकरण है।

अर्थ-वृत्त-चयन—

तेल के उपभोग में कमी ?

क्या द्वितीय महायुद्ध के बाद होने वाली प्रगति के कारण पश्चिमी देशों में तेल के उपभोग में कमी हो रही है ? पिछले कुछ सप्ताहों से इस प्रकार का प्रश्न इन देशों के विविध क्षेत्रों में किया जा रहा है। इस समय १९५६ की पहली छमाही के जो आंकडे उपलब्ध है, उनसे प्रकट होता है कि तेल की आवश्यकता में कुछ वृद्धि हुई है, लेकिन उतनी नहीं, जितनी होनी चाहिए थी'। पिछले १० वर्षों से तेल की खपत औसतन ७॥ प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से बढ़ी है और दीर्घकालीन मांग की प्रवृत्ति भी ऊपर की ओर है, पर सामान्य स्थिति की प्राप्ति में अभी समय लगेगा।

सारे गैर साम्यवादी देशों के तेल की खपत का मोटे रूप में, अमेरिका में ५५ प्रतिशत, पश्चिमी योरप में १६ प्रतिशत और अन्य कोयलों की खानों आदि में ६ प्रतिशत की आवश्यकता होती है। यह मांग १९५६ में ६,६०० लाख मोटर टन थी, जबकि १९५५में ६,४०० लाख थी।

स्वेज संकट के समय अमेरिका में बडी मात्रा में अमेरिका से घरेलू मांग की उपेक्षा करके तेल का निर्यात किया गया था। यह असाधारण स्थिति थी। अतः इस वर्ग की तेल की खपत के अमेरिका के अंक भ्रमात्मक हो सकते है। अमेरिकी खानो के कार्यालय ने १९५५-५६ मे तेल की खपत में ४ प्रतिशत वृद्धि प्रकट की तथा इस वर्ष की पहली छमाही में पेट्रोल और उसके उत्पादनों की वहां घरेलू मांग १९५५ और १९५६ के जनवरी से जून तक के महीनों की मांग से कम है। यद्यपि १९५६ "लीप" वर्ष था और मांग में कुछ वृद्धि हुई थी। हां गैसोलीन और वायुयान के लिए प्रयुक्त होने वाले शक्ति-तैल की खपत में कुछ वृद्धि अवश्य हुई है।

अमेरिका के अतिरिक्त अन्य देशों के आंकडे सुलभ न होने के कारण उनकी स्थिति इतनी स्पष्ट नहीं होती। फिर भी इन देशों में तेल की अतिरिक्त और व्यापारिक खपत में ४ से ५ प्रतिशत तक की वृद्धि हुई जबकि इन्ही देशों में १९५५-५६ में १३ प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। इस प्रवृति का मुख्य कारण यह है कि मौसम के अनुकूल ही तेल की मांग कम और ज्यादे होती है। १९५५-५६ में अमेरिका और उत्तरी पश्चिमी योरप में बहुत सर्दी रही और १९५६-५७ में मौसम सामान्य रहा। इसलिए १९५५-५६ तेल की मांग अधिक रही। इसी प्रकार पश्चिमी योरप में स्वेज संकट के कारण तेल की पूर्ति में कमी होने और कर तथा मूल्य बढ जाने के कारण तेल की मांग की प्रवृत्ति भी घटती ही रही। जब स्वेज नहर इस मई से पूर्ववत आवागमन जारी हो गया तब पश्चिमी योरप में तेल की खपत बढ़ने लगी। पश्चिमी जर्मनी में जहां इस प्रकार के प्रतिबन्ध ढीले थे, वहां इस वर्ष की पहली छमाही में पेट्रोल और उसके उत्पादन की खपत ६६,५५,००० टन थी—यह आकस्मिक ढंग की वृद्धि १९५६ की पहले ही महीनों से १३॥ प्रतिशत अधिक थी। इंगलैण्ड में जहां संभवतः तेल के उपयोग को बडी मात्रा में ८ प्रतिशत कम करने को विवश किया गया था, वहां जून जुलाई १९५६ में २ प्रतिशत मांग बढ़ी थी।

तेल की खपत पिछले कुछ महीनों में कम होने का एक एक दूसरा कारण जो पूर्णतः अस्थायी है—यह भी है कि आपात कालीन स्थिति में तेल की खपत पर जो रोक लगाई गई थी, उनसे मूल्य बढ़ गए और स्वभावतः मितव्यता से तेल का उपभोग किया जाने लगा। मुख्यतः 'शक्ति' के रूप में तेल का प्रयोग मितव्ययता से होने लगा। उदाहरणतः इंगलैंड में १ करोड टन कोयले की बरबादी उचित रूप से प्रयोग न किये जाने के कारण हो जाती है। अतः इंगलैंड का ध्यान तेल से हटकर कोयले पर केन्द्रित हो गया, लेकिन यह अस्थायी स्थिति ही है।

भारत में सहकारिता आन्दोलन

१. कुछ ही वर्षो मे भारत मे सहकारिता आन्दोलन ने बहुत प्रगति की है। पिछले तीन वर्षों (१९५३-से १९५६) में सहकार समितियों के सदस्यों की संख्या

लगभग ४२ प्रतिशत, उनकी चुकता पूंजी ७० प्रतिशत, चालू पूंजी ६१ प्रतिशत और सम्पत्ति तथा कारोबार में लगी हुई पूंजी ६० प्रतिशत बढ़ गई है।

२. रिजर्व बैंक ने सहकारी ऋण समितियों की पूंजी बढ़ाने के लिए ५ करोड़ रु० दिया।

३. रिजर्व बैंक ने राज्य सहकारी संघों, केन्द्रीय सहकारी बैंकों और केन्द्रीय सरकार को मध्य अवधि के लिए ५ करोड़ रु० ऋण के रूप में दिया।

४. रिजर्व बैंक सहकारी संस्थाओं के मार्फत लोगों को माल के उत्पादन तथा उसकी बिक्री के लिए थोड़ी अवधि के लिए ऋण देता है। इसके लिए वह एक साल में ४० करोड़ रु० का ऋण देता है। इसके अलावा ऋण समितियां इसके लिए अपनी ओर से लोगों को हर साल ३५ करोड़ रु० का और ऋण देती है।

५. सहकारिता विकास मण्डल ने ६ करोड़ से अधिक रु० खर्च किया है। उन्हें गोदाम बनाने तथा गोदाम बनाने वालों को आर्थिक सहायता देने के लिए १ करोड़ रुपया का अनुदान दिया गया है।

६. रिजर्व बैंक सहकारी समितियों के कर्मचारियोंकी ट्रेनिंग में बहुत दिलचस्पी लेता रहा है। इसके लिए रिजर्व बैंक ने इन समितियों को १ करोड़ रु० से भी अधिक धन आवर्तक खर्च के रूप में दिया है।

★

मकान बनाने की योजना

१. दूसरी पंचवर्षीय आयोजना की अवधि में गन्दी बस्तियों की सफाई के लिए २० करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। इन गन्दी वस्तियों की सफाई हो जाने पर यहां मकान बनाने के १,००,००० प्लाट तैयार हो जाएंगे।

२. इसके लिए केन्द्रीय सरकार १५ करोड़ रु० ऋण तथा अनुदान के रूप में देगी तथा राज्य सरकारों को ५ करोड़ रु० अनुदान के रूप में देंगी।

३. अगस्त १९५७ तक औद्योगिक मजदूरों के लिए मकान बनाने की योजना के अन्तर्गत २५ करोड़ ३३ लाख रु० मंजूर किया गया और ६३,४५३ मकान बनाये गये।

४. इस अवधि तक कम आय वालों के लिए मकान बनाने की योजना के अन्तर्गत १३,५१२ मकान बन चुके थे तथा १३,१६८ मकान बनाये जा रहे थे।

५. इस योजना के अन्तर्गत अभी तक राज्य सरकारों को १८ करोड़ ४१ लाख रु० दिया जा चुका है।

एण्ड्रयूस' किस्म की कपास

भारत अच्छी किस्म की कपास उगाने के लिए काफी समय से प्रयत्नशील है। देश के विभिन्न भागों में लम्बे रेशे की कपास पैदा करने के कई प्रयोग किए गए, जिनमें पट्टम्बी तथा मंगलौर में 'एन्ड्यूस' किस्म की, सी आइलैंड कपास उगाने का प्रयोग सफल हुआ है। इसलिए सरकार नें १९६१ तक २॥ लाख एकड़ जमीन में यह कपास बोने का लक्ष्य निर्धारित किया है। एन्ड्यूस कपास दुनिया की सबसे उम्दा कपास मानी जाती है। अभी तक यह कपास वैस्ट इन्डीज में ही पैदा की जाती रही है। वहां २-२ इंच लम्बे रेशे तक की कपास मिलती है।

पिछले साल की फसल में एन्डयूस कपास का १२०० पौंड बीज उगाया गया था, जिसे इस साल बोया गया है। इससे ५० हजार पौंड बीज होने की सम्भावना है। इस प्रकार १९५९-६० तक २५ लाख पौंड बीज पैदा हो सकेगी। इसके लिए केरल में १ लाख ३० हजार एकड़ जमीन में, मैसूर में १ लाख एकड़ जमीन में और असम में २० हजार एकड़ जमीन में कपास बोयी जाएगी।

भारत के लिए एन्ड्यूस कपास उगाना हर दृष्टि से उपयोगी है। मिस्र से 'करमक' किस्म की जो कपास मंगायी जाती है, उससे भी यह अच्छी है। किसान को भी इसे उगाने में फायदा है। अच्छा खाद-पानी देकर तथा फसल को खराब होने से बचाकर, किसान एक एकड़ में एन्ड्यूस कपास बोकर ५०० रु० तक कमा सकता है, जब कि अन्य कपास बोकर वह ६० रुपए फी एकड़ से अधिक नहीं कमा सकता।

आजकल पूर्वी अफ्रीका, अमेरिका, मिस्र, सूडान, पेरू और अदन से कपास मंगाकर भारत अपनी जरूरत पूरी कर रहा है। १९५५-५६ में इन देशों से ६.१ लाख गांठ

कपास का आयात हुआ था। दूसरी आयोजना के अन्त तक यहां २॥ लाख एकड़ जमीन में यह कपास बोई जाने लगेगी और उत्पादन २। लाख गांठ होने लगेगा। इस तरह ३७ करोड रु० की विदेशी मुद्रा बचेगी।

★

विदेशी मुद्रा और हलका साहित्य

आज जब हम एक-एक पैसे विदेशी मुद्रा की बचत कर रहे हैं, विदेशी संवाददाताओं, कहानी लेखकों, सिनेमा, राजनीति या यौन विज्ञान, समाज विज्ञान-संबंधी लेखकों तथा अन्य मनोरंजक सामग्री पर लाखों रुपया व्यय हो रहा है। किस्सों कहानियों तथा हलके साहित्य की पत्र पत्रिकाओं के लिए भी हम काफी रुपया विदेशों में भेजते हैं। इतिहास या विज्ञान आदि की पुस्तकें भी उसी स्तर की आनी चाहिएं, जिस स्तर की भारतीय लेखक न लिख पाते हों। आजकल ह्वीलर तथा अन्य बुक स्टालों पर सैंकड़ों विदेशी पत्र पत्रिकाएं व हलके किस्म के उपन्यासों की भर मार रहती है। इसे कम करने का प्रयत्न करना चाहिए। संसद् के हाल के अधिवेशन में वित्त मंत्री, श्री कृष्णमाचारी ने बताया है कि इसके आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं कि १९५६-५७ और १९५७-५८ में समाचार पत्रों और अन्य संस्थाओं ने अमेरिका, ब्रिटेन तथा अन्य देशों की उन संस्थाओं को कितनी विदेशी मुद्रा भेजी, जो लेख हास्य-चित्रावली आदि भेजती हैं। सरकार के पास जो आंकड़े हैं, वे केवल दो मुख्य भागों में विभाजित हैं—(१) समाचार-पत्र संवाददाता और (२) पत्र-पत्रिकाओं, डाक द्वारा पाठ्यक्रम आदि के लिए भुगतान। उनके आंकड़े इस प्रकार हैं :

समाचार पत्र सम्वाददाता (हजार रु० में)

	ब्रिटेन	अमेरिका	अन्य देश	कुल
१९५६-५७	४००	१३०	४०	५७०
१९५७-५८ (अप्रैल-अगस्त)	८०	९०	—	१७०

पत्र-पत्रिकाएं, डाक द्वारा पाठ्यक्रम आदि (हजार रु० मे)

	ब्रिटेन	अमेरिका	अन्य देश+	कुल
१९५६-५७	२८५०	२०४०	३४०	५,२३०
१९५७-५८ (अप्रैल-अगस्त)	१२३०	७३०	१३६०	३,३२०

+ अन्य देशों में मुख्यतः स्वीडेन और फ्रांस हैं।

१६५७ का घटनाक्रम

(पृष्ठ २५ का शेष)

१० बिड़ला शिष्टमंडल अमेरिका में।

१७ वित्त मंत्री विदेशों से सहायता लेने के लिए विदेशों की ओर रवाना।

१६ अमेरिकन निजी पूंजी को भारत में आकृष्ट करने के लिए भारत और अमेरिका में नये समझौते पर हस्ताक्षर।

२२ अखिल भारत सर्व सेवा संघ की ओर से ग्रामदान आन्दोलन के लिए सर्वदलीय सम्मेलन।

२६ श्री नेहरू द्वारा माइथान बांध का उद्‌घाटन।

३० भारत सरकार की नई आयात नीति—विदेशी मुद्रा को बचाने के लिए कठोर नियंत्रण। आयात योग्य वस्तुओं की सूची में भारी कटौती।

५ रूस का कृत्रिम उपग्रह आकाश में ६५० मील ऊपर १८ हजार मील प्रति घंटे की चाल से चक्कर लगाने लगा।

७ रेलवे की द्वितीय पंचवर्षीय योजना का अनुमान १४२५ करोड़ रुपये।

३० द्वितीय वित्त आयोग की राज्यों को केन्द्र से मिलने वाली आय के वितरण की सिफारिशें।

अक्तूबर

८ विश्व बैंक से इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी को ३ करोड़ २० लाख डालर का ऋण।

६ भारत सरकार द्वारा कलकत्ता स्टाक एक्सचेंज एसोसिएशन को कलकत्ता में कार्य करने की स्वीकृति।

१५ भारत और जापान के प्रधान मंत्रियों द्वारा आर्थिक सहयोग के समझौते पर हस्ताक्षर।

३१ रिजर्व बैंक में नोटों के चलन के लिए रखी जाने वाली न्यूनतम सुरक्षित राशि को २०० करोड़ रुपया तक कम करने का अध्यादेश।

नवम्बर

६ योजना आयोग द्वारा योजना के अत्यन्त महत्वाकांक्षापूर्ण होने की स्वीकृति।

६ रूस और भारत में औद्योगिक विकास के लिए रूस द्वारा ५० करोड़ रुपये ऋण के समझौते पर हस्ताक्षर।

१३ सूचना—भारतीय जहाजों का टनेज १२५ हजार टन (युद्ध से पूर्व) से बढ़कर ५ लाख ५६ हजार टन तक वृद्धि।

१५ एयर इण्डिया इन्टर नेशनल को ३८.४२ लाख रुपये का लाभ तथा इण्डियन एयर लाइन्स कार्पोरेशन को १०८.७६ लाख रुपये का १६५६-५७ में घाटा।

सूचना—भारत के होटलों को १६५६ में विदेशी मुद्रा में १५ करोड़ रुपये का लाभ।

रेलवे कर्मचारियों के लिए अप्रैल ५७ से पेंशन स्कीम जारी करने का निश्चय।

१६ खाद्यान्नों पर नियंत्रण के सम्बन्ध में 'मेहता समिति' की रिपोर्ट।

२० विश्व बैंक तथा अमेरिका व कनाडा के ६ बैंकों द्वारा टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी को सवा तीन करोड़ डालर का संयुक्त ऋण।

२० रेलवे के दो कर्मचारी संगठनों में एकता।

२७ स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन द्वारा अपने प्रथम वर्ष ३२.६३ लाख रुपये लाभ की सूचना।

पुनर्निर्माण व विकास अन्तर्राष्ट्रीय बैंक द्वारा रिपोर्ट—भारत में स्टील का उत्पादन-व्यय संसार में सबसे कम।

२६ १६५६-५७ में भारत में २३८ करोड़ रुपये के घाटे की मुद्रा की सूचना।

३० सवा तीन प्रतिशत ब्याज दर पर ३० करोड़ रुपये के नये बौंड जारी करने का निश्चय।

दिसम्बर

८ २० करोड़ रुपये नयी योजना में मकान बनाने के लिए सुरक्षित करने की सूचना।

१४ कलकत्ता में नई उपनगरीय बिजली गाड़ी का उद्‌घाटन।

१६ जीवन बीमा निगम के मून्दड़ा कम्पनियों में शेयर खरीदने पर गम्भीर आक्षेप।

१८ तमाखू, कपड़े व चीनी पर बिक्री कर समाप्त करके उत्पादन-कर में कुछ वृद्धि। संसद में विधेयक पास।

भारत सरकार द्वारा बीच के कपड़े पर उत्पादन कर में

तेल मिलें और घानी

योजना आयोग ने लघु व ग्राम उद्योगों के विकास के लिए तेल उद्योग को बड़े उद्योगों की सूची से पृथक् रखने की सलाह दी थी और सरकार ने उस नीति को स्वीकार करके मिलों को क्षमता बढ़ाने के लइसेंस देना बन्द कर दिया है। कुछ लोग सरकार की इस नीति का उल्लघन करने की कोशिश करते है। वे तेल मिलों की पुरानी और बेकार मशीनें खरीद लेते है और उनमे नये कोल्हू लगा लेते है। लोग यह भी करते है कि पहले छोटे पैमाने पर तेल मिल लगा ली और बाद मे मजदूरों की संख्या ५० करके इसको उद्योग (विकास और नियमन) अधिनियम के अतर्गत रजिस्टर कराने की कोशिश की। इसलिए सरकार को यह स्पष्ट करना पड़ा है कि वह यह नहीं चाहती कि नयी तेल मिलें खोली जाए या पुरानी मिलो को बढ़ाया जाय। एक ओर बहुत सी तेल मिलें अपनी क्षमता से कहीं कम उत्पादन कर रही हैं, दूसरी ओर घानी उद्योग को भी प्रोत्साहन देना बहुत जरूरी है। इस समय, देश मे, बिजली से चलने वाली ३,००० तेल की मिलें और गावो में ४ लाख घानिया है। इनसे हर साल ६६ लाख टन तेलहन पेला जा सकता है।

कोयले का उत्पादन

दूसरे आयोजन मे सरकारी क्षेत्र मे १ करोड २० लाख टन और कोयला निकालने का कार्यक्रम है। इसमें से आयोजन के आरम्भ मे सरकारी कोयला खानों से ३३ लाख ७० हजार टन और सिंगरेनी कोयला खानों से ११ लाख ५० हजार टन कोयला निकाला जाएगा। सिंगरेनी कोयला खान आंध्र प्रदेश सरकार की है।

बाकी कोयला नयी खानों से निकाला जाएगा, जिनके नाम इस प्रकार हैं—

१. कोरबा	२६ लाख टन
२. कथारा	१० हजार टन
३. कर्णपुर	
(अ) गिदी क्षेत्र	१५ लाख टन
(आ) बछरा सौंदा	६ लाख टन
४. कोरिया	१० लाख टन
५. बिसरामपुर	१० लाख टन
	कुल ७७ लाख टन

★

तेल शोधन का नया कारखाना

३० नवम्बर १९५७ को विशाखा पत्तनम मे आंध्र के मुख्य मन्त्री श्री सजीव रेड्डी ने काल्टैक्स के कारखाने का विधिवत उद्घाटन करके देश मे तीसरे तेल शोधन कारखाने का कार्य चालू कर दिया है। इससे पहले अगस्त १९५४

कुछ कमी।

१८ विश्व बैंक द्वारा पाकिस्तान और भारत मे नहरी पानी का समझौता कराने का प्रयत्न असफल।

१८ खाद्य कृषि मन्त्री द्वारा विदेशों से १० लाख टन गेहूं के आयात की व्यवस्था की सूचना।

२१ इण्डियन एयर लाइन्स निगम के किराया बढ़ाने की सिफारिश।

—राज्य सरकारों को चावल वसूल करने की कीमतें निर्धारित करने का अधिकार है।

—मैसूर की सोने की खानों को १ करोड ६४ लाख रुपया मुआवजा देने की सिफारिश।

२५ वित्तमन्त्री द्वारा सूचना—योजना पर इस वर्ष अनुमान से ६० करोड़ रुपये कम व्यय।

२५ सूती मिलों के बन्द हो जाने के कारण मजदूरों की स्थिति सुधारने के लिए श्री बसावड़ा के सुझाव।

३० चार विदेशी तेल कम्पनियों के राष्ट्रीयकरण की सम्भावना पर विचार।

३० तमाखू और सिगरेट के उत्पादन शुल्क। कुछ कमी।

३१ उद्योग मन्त्री द्वारा महाराष्ट्र मे अल्लूमीनियम का कारखाना खोलने का आश्वासन, परन्तु तीसरी योजना के अन्तर्गत।

सरकारी व्यापार पर स्टेट बैंक को कमीशन

रिजर्व बैंक तथा स्टेट बैंक के मध्य व्यापार पर कमीशन के बारे में एक संशोधित समझौता हुआ है। इसके अनुसार रिजर्व बैंक की तरफ से प्रतिनिधि के रूप में सरकारी व्यापार करने वाले स्टेट बैंक को जो कमीशन मिलता है, उसकी अवधि १ अप्रैल १९५५ ३१ मार्च १९६० तक पहुँच गई है। व्यापार तथा कमीशन दरों में पूरा संशोधन हुआ है। समझौते की शर्तें वही रखी गई हैं जो ३१ मार्च १९५० तक इम्पीरियल बैंक आफ इण्डिया के साथ थीं। कमीशन में संशोधन होने से सरकारी व्यापार पर कमीशन मिलने के कारण स्टेट बैंक की आय में अधिक वृद्धि होगी।

१९५० से १९६० तक स्टेट बैंक को जो कमीशन मिलने वाला है, तथा इम्पीरियल बैंक को जो कमीशन चुकाया गया है वह तुलनात्मक आंकड़ों से ज्ञात होगा।

नवीनतम समझौता (क्रमिक दर)

	कमीशन %
पहला १५० करोड़ रुपये	१/१६
अगला ३०० करोड़ रुपये	१/३२
इससे ऊपर	१/६४

अगर किसी वर्ष कारोबार १,२०० करोड़ रुपये से भी अधिक हो जाता है तो उस पर कमीशन १/१२८ प्रतिशत है।

कम्पनियों पर कर

कम्पनियों पर कर का महत्त्व व्यक्तिगत करों से कम नहीं है। विदेशी कम्पनियां जो पूंजी लगाती हैं (उसका रूप ब्रांच कम्पनियों का होगा अथवा सहायक कम्पनियों का) पेनाल्ठी टैक्स विशेषकर के अलावा उन्हें लाभ अन्य देशों की अपेक्षा भारत में बहुत ही कम है। भारत में विदेशी कम्पनियों को कुल आमदनी में से जो लाभ मिलता है, वह ब्रांच के लिए ३७,८ प्रतिशत और सहायक कम्पनी के लिए ४१.० ०/० है। विदेशों में उन दोनों किस्म की कम्पनियों के लिए इंग्लैण्ड से ५४.५ फ्रांस से क्रमशः ६२.० ४६.०; अमेरिका से ४८.०, ३३.६; बर्मा से ४७.७ ३०.६; आस्ट्रेलिया से ६०.० ३६.०; तथा पाकिस्तान से ५०.०, ४०.६; मिलता है। इसका अर्थ यह है कि विदेशी कम्पनियों की पूंजी पर भारत का कर विश्‍ब के अन्य देशों की अपेक्षा बहुत ही अधिक है। अन्य विकसित अथवा अविकसित देश जो विदेशी पूंजी को अपने देशों में लगाना चाहते हैं, इतना कर नहीं लगाते। इस विषय पर काफी सुझाव रखे गए हैं, जिनसे सरकार की नीति विदेशी कम्पनियों को अपनी पूंजी भारत में लगाने की प्रेरणा दे।

में स्टेनवाक रिफाइनरी तथा जनवरी ५५ में बरमा शैल के दो कारखाने खुल चुके हैं। अब तीनों कारखानों की पैट्रोलियम शोधन की क्षमता ४३ लाख टन हो गई है। देश में बढ़ती हुई मांग को देखते हुए यह भी बहुत कम है। योजना आयोग के अनुमान के अनुसार प्रथम योजना के अन्तिम वर्ष की अपेक्षा ४५ से ५० प्रतिशत तक मांग बढ़ जायगी। इन स्थितियों में इस नये तेल शोधन कारखाने की स्थापना अत्यन्त स्वागत योग्य होगी। इस कारखाने के निर्माण पर १५ करोड़ रु० व्यय हुआ है और आंध्र प्रदेश में यह सबसे बड़ा निजी उद्योग है। इसमें प्रतिदिन पश्चिमी एशिया व इण्डोनेशिया का १३५००० बैरल कच्चा तेल साफ हो सकेगा।

विश्‍व बैंक और एशियाई देश

विश्‍व बैंक ने एशियाई देशों को १९५७ में कुल ३४ करोड़ २० लाख डालर की ऋण-राशियां दीं। यह रकम पिछले वर्ष की तुलना में दुगने से अधिक थी। १९५६ में विश्‍व बैंक ने उन देशो को कुल १५ करोड़ डालर के ऋण दिये थे।

विश्‍व बैंक से सबसे बड़ी ऋण-राशि भारत को मिली।

१९५७ : एक सिंहावलोकन

(पृष्ठ २३ का शेष)

इस वर्ष के अन्त में देश का सारा ध्यान विदेशी पूंजी पर लगा है। सरकारी क्षेत्र के लिए विदेशी पूंजी और सहायता उपलब्ध करने के लिए सरकारी प्रयत्न अग्रसर है। निजी क्षेत्र को यह कह कर छोड दिया गया है कि वह विदेशी व्यापारियों से दीर्घकालीन मुद्दत पर पूंजीगत सामान ले या विदेशी विनियोजकों से ऋण प्राप्त करे या हिस्सेदार बनाये। सरकार ने विदेशी उद्योगपतियों को करों में रियायतें दी हैं, मुनाफा ले जाने की छूट दी है, राष्ट्रीयकरण के समय उचित क्षतिपूर्ति की गारंटी दी है। इतने पर भी अगले वर्ष के बजट मे सम्भव है कि सम्पत्ति कर में कार्पोरेशनों पर सम्पत्ति कर न रखा जाए तथा कम्पनियो से डिपाजिट जमा करने को न कहा जाए। यह कहा गया है कि विदेशी मुद्रा के कोष में कमी पडने पर भी अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र मे भारत के रुपये की स्थिति सुदृढ़ है।

भारतीय उद्योगों में कागज की २१ मिलें हैं, उनका उत्पादन ११४००० टन से बढ़ कर १८७००० टन तक पहुँच गया। पर देश मे ३१७२३१ टन कागज की माग है। रसायन उद्योग मे सिंदरी तथा टाटा आदि द्वारा स्थापित कारखानों में रासायनिक खाद का उत्पादन काफी बडा है। दूसरी योजना में २८२००० टन अतिरिक्त खाद उत्पादन करने का लक्ष्य है। ४२६००० टन सुपर फास्फेट के उत्पादन वृद्धि करने की योजना है। मोटर गाडियों के उत्पादन के ६ बडे कारखाने है, जिनमें १७.३ करोड रुपए की पूंजी लगी है। १९५८ तक ७० प्रतिशत मोटर के पार्ट भारत मे बनने लगेंगे। अमेरिका मे ७० लाख और ब्रिटेन में १० लाख मोटरें प्रतिवर्ष बनती है, किन्तु भारत मे १९५७ मे उनका उत्पादन ३३००० मोटरों का था। १९६०-६१ तक ५७००० मोटरें तैयार करने का लक्ष्य है। चीनी का उत्पादन उच्च स्तर पर रहा। विदेशों मे चीनी के दाम गिरने से १.७१ लाख टन का निर्यात हो सका।

उसे इस्पात उत्पादन, विद्युत के विकास और वायुयानो और रेलों के कारखानो के विस्तार आदि के लिए १३ करोड ७९ लाख डालर की ऋण-राशियां मिलीं।

सीमेंट का उत्पादन ७४०२९ हजार टन से ऊपर चढ़ा है और वह बराबर बढ रहा है। कई नई फेक्टरियां स्थापित हो रही हैं। लाइम स्टोन और चूने के उद्योग ने भी विस्तार पाया है। पाट के उद्योग मे कच्चे पाट की आमद के लिए भारत अब ६ लाख गांठों के लिए पाकिस्तान पर निर्भर रह गया है। जूट फेक्टरियों में नए लूम लग रहे है। केवल दो विदेशी प्रतिष्ठानो के अंतर्गत कुछ जूट मिलें रह गई हैं, अथवा सब जूट मिलें मारवाडी व्यापारियों के हाथ में आ गई हैं। जूट मिलें अच्छा मुनाफा कर रही हैं। कपडे का उत्पादन ४००० लाख गज से ऊपर चढ़ गया और इस वर्ष यह उत्पादन अधिक बडा। १९४९ मे कपडे पर १२॥ करोड रुपए का उत्पादन कर था, वहां अब ८० करोड रुपए हैं। इस कर में और भी वृद्धि हो रही है। कपडा, चीनी और तम्बाकू पर से बिक्री कर हटाकर उत्पादन कर मे शामिल कर दिया गया। इससे उत्पादन कर पर अधिक बोझ पडा और इन पदार्थो के दाम बढ़ गए। ऊंचे दाम होने के कारण कपड़े का स्टाक जमा हो गया। विदेशों में कपडे की कम खपत है, यह देख कर वर्ष के अंत में सरकार ने कपडे के उत्पादन कर में साधारण छूट दी है।

पूंजीवाद और उसका जन्म

(पृष्ठ १३ का शेष)

अनेक होते हैं। मजदूरों का यह बहुसंख्यक वर्ग अल्प-संख्यक पूंजीपतियों का दास होता है। श्रीमान् और श्रीमती वेब्स के अनुसार—

'पूंजीवाद अथवा पूंजीवादी प्रणाली अथवा, इनसे भी अधिक रुचिकर तथा अधिक प्रयुक्त शब्द, पूंजीवादी सभ्यता से उद्योगों और वैधानिक संस्थाओं के विकास की उस विशेष अवस्था का बोध होता है, जिसमें मजदूरों का बहुत बड़ा वर्ग उत्पादक यंत्रों के स्वामित्व से इस प्रकार वंचित हो जाता है कि वह मजदूरी पर जीने वाला श्रमिक मात्र रह जाता है और ऐसा प्रतीत होता है कि उसकी स्थिति, सुरक्षा और वैयक्तिक स्वातंत्र्य राष्ट्र के अपेक्षाकृत उस छोटे वर्ग की इच्छा के परवश हैं जो देश की भूमि, यंत्र और श्रमिक शक्ति (समस्त उत्पादक साधनों) को अपने वैधानिक स्वामित्व के बल पर इस प्रकार नियंत्रित करते हैं कि उनका निजी व्यक्तिगत लाभ हो। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री पीगू के अनुसार हम इसे और भी सरलता पूर्वक व्यक्त कर सकते हैं। उनके अनुसार पूंजीवादी उद्योग वे उद्योग हैं जिनमें नियुक्त उत्पादन के साधन कुछ व्यक्तियों के स्वामित्व अथवा भाड़े से उपलब्ध होते हैं और उनका उत्पादन कार्य इस दृष्टि से संचालित होता है कि उत्पादित वस्तुओं को लाभ पर बेचा जाय। अतः पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था वह व्यवस्था है जिसमें उत्पादन के साधनों का मुख्य और अधिकांश भाग पूंजीवादी उद्योगों में नियोजित होता है।

पूंजीवाद की विशेषताएं

पूर्वोल्लिलेखित विवेचना के आधार पर प्रमुख रूप से वर्तमान पूंजीवाद की निम्नलिखित विशेषतायें निश्चित की जा सकती है।

पूंजीवाद में—

(१) उत्पादन के साधनों तथा उद्योगों पर व्यक्तिगत अधिकार स्वामित्व और नियंत्रण होता है।

(२) उत्पादन का कार्य लाभ की दृष्टि से परस्पर असम्बद्ध अनेक उद्योगपतियों के स्वतंत्र साहस और निर्णय के द्वारा संचालित होता है।

(३) मालिक पूंजीपतियों की संख्या कम और उ[illegible] मजदूरों की संख्या अधिक होती है, जिन्हें मालिकों [illegible] आदेश पर चलना तथा इच्छा पर जीना होता है।

(४) व्यक्ति को धनोपार्जन, संचय, उत्तराधिकार ग्रह[illegible] करने तथा विक्रय, दान आदि करने का पूर्ण अधिक[illegible] होता है।

(५) वस्तुओं का उत्पादन तथा विभिन्न उद्योगों में उत्पादक साधनों का नियोजन जनता की आवश्यकता के अनुपात में नहीं, अपितु बाजार में व्यक्त होने वाली मांग के अनुपात में वृहत पैमाने पर होता है, जिसका आधार मूल्य-यंत्र (Price mechanism) अथवा व्यापारियों द्वारा संग्रहीत आंकड़े होते हैं। आदि।

—

मूल्यवान कड़ी

समाजवाद अक बडा ही आकर्षक तथा उपयोगी सामग्री से परिपूर्ण है और अपने पुराने विशेषाको की शृंखला मे एक मूल्यवान कडी है । प्रस्तुत विशेषाक मे समाजवाद तथा उसके स्वरूप पर विभिन्न लेखो द्वारा विस्तार से विचार किया गया है। निश्चय ही इन लेखो को पढ़कर 'समाजवाद' के विचार को समझने मे सहायता मिलती है । इतनी उपयोगी सामग्री एकत्र करने के लिए सम्पादक को बधाई ।

— जीवन साहित्य

हिन्दी के अर्थशास्त्र सम्बन्धी सामयिक पत्रों मे 'सम्पदा' का स्थान महत्वपूर्ण है । पिछले ६ वर्षों से सम्पदा के ८ विशेषाक प्रकाशित हुए हैं। योजना भूमि-सुधार, मजदूर, बैंक, वस्त्र उद्योग आदि के सम्बन्ध मे प्रकाशित सम्पदा के ये विशेषाक प्रयत्न तथा सूझ के साथ निकाले गये है। प्रस्तुत अक में समाजवाद पर प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है । साम्यवाद, समाजवाद, भूदान, सम्पत्तिदान आदि कितने ही विषय इस अक मे लिए गये हैं । कुछ लेख बहुत दिलचस्प और उपयोगी हैं, 'मैं क्या मानता हू ?' के अन्तर्गत सर्व श्री एन० आर० मलकानी, हरिभाऊ उपाध्याय, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', जैनेन्द्र कुमार के विचार विशेषत उल्लेखनीय है ।

—श्री चन्द्रगुप्त विद्यालकार

जानकर प्रसन्नता हुई कि 'सम्पदा' अब सातवें वर्ष मे प्रवेश कर रही है। 'सम्पदा' का समाजवाद अक मिला था। यह काफी अच्छा और पठनीय है ।

—श्रीमन्नारायण

राष्ट्र को मार्ग दर्शन

आपका अक बडा सुन्दर निकला, 'सम्पदा' ने गैर सरकारी तौर पर वह कार्य किया, जो योजना आयोग का था। किस रूप मे समाजवाद हो, इस दृष्टि से 'सम्पदा' का यह अक राष्ट्र को मार्ग दर्शन देता है। मेरा ख्याल है कि भारत सेवक समाज के देशव्यापी सगठन और ग्राम पुस्तकालयों मे 'सम्पदा के इस अक का प्रचार होना चाहिए ।

—श्री जी एस पथिक, कलकत्ता

समाजवाद का महान् कोश

सभी विशेषाक अत्यन्त उत्कृष्ट एव ज्ञानवर्धक सामग्री से भरपूर होते हैं, परन्तु आपका समाजवाद अक पिछले सभी अकों से आगे बढ़ कर बाजी ले गया है । समाजवाद जैसे कठिन तथा विस्तृत विषय पर यदि इस अक को महान कोष माना जाय तो शायद कोई अतिशयोक्ति न होगी। अक मे विषयो का चयन इस दृष्टि से किया गया है कि पाठक को इस 'वाद' के प्रत्येक पहलू के सम्बन्ध मे पूरी जानकारी हो जाय । वैसे तो अक के सभी लेख अपनी विशेषता लिए हुए है, परन्तु मुझे श्री जयप्रकाशनारायणजी का लेख तथा 'समाजवाद तब तक स्थापित नही हो सकता' नामक लेख बहुत पसद आये ।　—श्री रामनारायण गुप्त

—यह जानकर प्रसन्नता हुई कि सम्पदा सातवें वर्ष मे प्रवेश करने जा रही है । मेरी मगल कामना सदा आपके साथ है । सम्पदा देश की अधिक से अधिक सेवा करे ।

—शांतिप्रसाद जैन

राज्यों में सम्पदा स्वीकृत

सम्पदा को निम्नलिखित राज्यों के शिक्षा विभागों ने अपने अपने राज्य के स्कूलों, कालेजों तथा सार्वजनिक वाचनालयों के लिए स्वीकृत किया है—

राज्य	परिपत्रक सख्या	दिनाक
(१) उत्तरप्रदेश	पुस्तक/५२५७	१२ १ ५४
(२) बिहार	७३३/एपी/१/५३	२७-११ ५३
(३) पंजाब	३२०६/५/२५/बी ५३ २६१४३	२३-७-५३
(४) मध्यप्रदेश		
(स्कूलों के लिए)	२ जी/बी	२ ८ ५२
(कालेजों के लिए)	३४२८ ३XVIII	२४ ८ ५२
(५) राजस्थान	३६८०/Edu II/५२	६ १२ ५२
(६) मध्यभारत	३ १५ २ ५२जी/२५६५	२४ ३-५२
(७) दिल्ली		

[पृष्ठ २२ का शेष]

उनकी सुविधा के लिए, उनका समय बचाने के लिए चाहिए। उन्हें बेकार बनाने के लिए नहीं चाहिए। इसलिए हमें इसका भी परीक्षण करना होगा कि हमारे सुधार और हमारे प्रयोग उस दिशा में आगे जा रहा है या उससे उल्टी दिशा में हम जा रहे हैं? हम उन्हें तैयार, बनी-बनायी चीजें प्राप्त हो जायें, ऐसी कोशिश में लगे हैं या उन चीजों को वे आसानी से बना लें, ऐसी योजना में लगे हैं।

व्यापार से मोक्ष

भारत के धर्म में एक बड़ी बात यह है कि यहां व्यापार को भी धर्म माना गया है। व्यापार के बिना कहीं किसी का चलता नहीं है। व्यापार का स्थान सब देशों में है, लेकिन यहां उसे सिर्फ व्यावहारिक ही नहीं, बल्कि आध्यात्मिक स्थान भी है। 'कृषिगोरक्षावाणिज्यम्'। वैश्य का धर्म है व्यापार करना। अगर वह व्यापार नहीं करेगा, तो अपने कर्तव्य में चूकेगा। लेकिन वह प्रामाणिकतासे और निष्काम बुद्धिसे अपना काम करेगा, तो मोक्ष का वह उतना ही अधिकारी है, जितना कि वेदाभ्यासी ब्राह्मण। हिंदुस्तान में यह बहुत ही अद्भुत चीज़ मानी गयी है कि व्यापारी व्यापार से ही मोक्ष पायेगा। व्यापारी अच्छा काम करेगा, तो लोगों का उस पर भरोसा रहेगा और वह अच्छा पैसा कमायेगा, यह तो दुनिया जानती है। लेकिन अच्छा व्यापार करने से वह पैसा ही नहीं, बल्कि मोक्ष पायेगा, यह सिर्फ हिन्दू धर्म में ही है। इस तरह यहां व्यापार का एक स्वतंत्र स्थान है। इस देश के और दूसरे देशों के 'सोशल एण्ड इकनामिक थिंकिंग' में ही यह फर्क है। इसी लिए यहां भूदान—ग्रामदान चलता है। —विनोबा

भारत की बादशाही

स्विटजरलैंड के एक भाई हमारे साथ यहां यात्रा में रहे थे। गांवों में उन्होंने जितना दारिद्र्य देखा, उतना पहले कभी नहीं देखा था। इतने दारिद्र्य का उन्हें ख्याल भी नहीं था। वे मुझे कहने लगे, 'यह सब मैं देखता हूँ, परन्तु आश्चर्य इस बात का है कि उनके चेहरे पर दुःख नहीं, आनन्द ही दीखता है। इसका कारण क्या है?' हमने कहा—'यह भारत का चमत्कार है। दुख में भी वे हंसते हैं। रोनी सूरत आपको बहुत कम दीखेंगी। घर में बहुत दारिद्र्य होगा, पर दोपहर में कभी उनके यहां जाकर रहिए, वे आपको खिलाए बगैर नहीं भेजेंगे। यह भारत की बादशाही है। भारतीय कहता है कि मैं दुनियां का बादशाह हूँ।

—विनोबा

[पृष्ठ १६ का शेष]

वह 'दिल्ली की सरकार' या 'लखनऊ की सरकार' तो होगा ही, क्योंकि वही 'कर्ता' को सहकारी फार्म का संचालन करने के लिए नियुक्त करेंगी। क्या हमारे किसान इतने नासमझ हैं कि अपनी जमीनों को ऐसे ही छोड़ देंगे? क्या संसार के किसी देश में बिना जोर जबरदस्ती के ऐसा किया गया है? केवल रूस और चीन में ही ऐसा किया गया है। इस संबंध में उत्तर प्रदेश के माल मंत्री के ये शब्द विचारणीय हैं। "मनुष्य स्वभाव ही ऐसा है कि अक्सर पिता के मरने पर या अन्य किसी कारण से एक ही मां से जन्मे दो भाई एक परिवार से अलग हो जाते हैं। तब इस स्थिति में ऐसा सोचना अव्यवहारिक होगा कि एक औसत गृहस्थ अचानक अपने हितों को उन अनेक अपरिचित व्यक्तियों से मिला लेगा, जिनके विषय में उसने सुना तक नहीं।" उनका यह भी कहना है कि खेतों की हदबन्दी के सिलसिले में झगड़े और यहां तक कि खून भी हो जाते हैं। यदि हदबन्दी के ५-७ इधर-उधर से खून तक हो जाते हैं तो क्या लोग बिना दबाव के अपने खेतों को त्याग देंगे?

पोलैण्ड के श्री गोमुल्का ने १० सालों के परीक्षणों के बाद कहा है कि किसान को सहकारी समितियों में भेजने के लिए उसके मन और चिन्तन-क्रम को बदलना होगा और यह किसी योजना-बद्ध तरीके से संभव नहीं है। स्वयं पाटिल कमेटी ने १८२ पृष्ठ पर यह स्वीकार किया है कि प्रत्येक योजित कार्य क्रम में दबाव तो होता ही है।

राजस्थान १९५७ में : एक दृष्टि

राजस्थान मरभूमि है, राजस्थान आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है, आदि बातें भूतकाल की रह जायंगी, यदि उसकी उद्योग, कृषि, बिजली और सिंचाई आदि क्षेत्रों मे होने वाली प्रगति जारी रही। १९५७ मे जो कुछ हुआ है, उसका संक्षिप्त सिंहावलोकन पाठक इन पंक्तियों मे पढ़ेंगे।

दूसरी पंचवर्षीय योजना

वर्ष के २०.६५ करोड रुपये बजट का ६४.८ प्रतिशत भाग ही द्वितीय आम चुनावो के कारण इस वर्ष व्यय हो पाया। द्वितीय योजना मे लघु तथा कुटीर उद्योगो के विकास पर विशेष बल दिया गया है और इसीलिए राज्य सरकार ने इन कला-कौशलों के पुनरुद्धार तथा पुन. स्थापन के लिए योजनायें हाथ में ली है। खादी और हाथ-करघा उद्योग ने तीव्र प्रगति की है।

८,७४७ सहकारी समितियाँ

इस वर्ष में राज्य में सहकारी समितियों की कुल संख्या ८,७४७ हो गयी है, जिनकी सदस्य संख्या ३,१७,२४५ है। एक शीर्ष सहकारी बैंक इन समितियों के लिये ऋण व्यवस्था करता है।

विद्युत् परियोजनायें

राज्य ने १९५६-५७ में अपनी विद्युत् परियोजनाओं पर ५३.३४ लाख रुपये व्यय किये हैं। विदेशों से मशीनें उपलब्ध न होने के कारण इस क्षेत्र में प्रगति अवरुद्ध रही, किन्तु योजना के लक्ष्य अपरिवर्तित है और राज्य का विद्युत् उत्पादन, जो १९५६ में ३२,१६० किलोवाट था, १९६१ में १,१७,००० किलोवाट हो जाएगा। बिजली पहुँचाने के लिए १,४०० मील लम्बी ट्रांसमिशन लाइनें डाली जाएंगी और ५,००० की जनसंख्या वाले ग्रामों तथा कस्बों में बिजली की रोशनी की व्यवस्था होगी।

वन-विकास का कार्यक्रम

इस वर्ष में १,८८८ एकड वन-भूमि का परिसीमन किया गया। १२१० एकड क्षेत्र को सुरक्षित वन क्षेत्र के अंतर्गत लाया गया और १,९९५ व्यावसायिक महत्व के वृक्ष आरोपित किये गये।

राज्य में औद्योगिक विकास

औद्योगिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सवाई माधोपुर तथा लाखेरी के सीमेंट के कारखानो की उत्पादन-क्षमता बढ़ाई गई है। गवर्नमेंट शूगर फैक्टरी और मेवाड़ शूगर मिल्स का विस्तार किया जा रहा है। आबू, चित्तौडगढ़ और नीम का थाना मे सीमेंट के नये कारखाने खोलने के लाइसेंस दिये गये। भरतपुर व सवाई माधोपुर मे मालगाडी के डिब्बे बनाने के कारखानों और जयपुर व उदयपुर में कपडा मिलों के लाइसेंस भी दिये गये। विभिन्न स्थानों पर औद्योगिक बस्तियां बसाने के लिये भी कदम उठाये गये और जयपुर मे ६० छोटी औद्योगिक इकाइयों की एक बस्ती बन रही है। राज्य में एक छोटे पैमाने के उद्योग के रूप मे साइकिल के पुर्जे के निर्माण ने पर्याप्त प्रगति की है और ऐसी चार इकाइयां स्थापित हो चुकी है। जयपुर में एक बाइसिकल फेक्ट्री की स्थापना के लिए भी लाइसेंस दिया जा चुका है। इस फैक्ट्री की क्षमता ३० हजार साइकिल प्रति वर्ष होगी।

कोटा में रेयन तथा नीलन के कारखानों की स्थापना के सुझाव केन्द्रीय सरकार के समक्ष विचाराधीन हैं। इनके साथ-साथ कच्चे लोहे के एक कारखाने की स्थापना की स्वीकृति शीघ्र ही मिलने की आशा है। लोहे के इस कारखाने मे राज्य में पाये जाने वाले लिगनाइट, कच्चा लोहा तथा चूने के पत्थर का पूर्ण उपयोग हो सकेगा और इसमें इंजिनियरिंग उद्योग के विकास में सहायता मिलेगी। उदयपुर मे एक 'जिंक स्मेलटर प्लांट' लगाने की योजना भी विचाराधीन है। इनके अतिरिक्त विचाराधीन नये उद्योगों में बीकानेर में प्लास्टर आफ रिस तथा सीमेंट सांभर मे सोडा ऐश तथा बीकानेर डिवीजन अमोनियम सल्फेट के कारखाने विशेष उल्लेखनीय हैं।

८ नये श्रमिक कल्याण केन्द्र

राज्य मे वर्तमान १६ श्रमिक कल्याण केन्द्रों

करने के अतिरिक्त ८ नये श्रमिक कल्याण केन्द्र स्थापित किये जायेंगे। इसके अलावा ११ नये काम दिलाऊ केन्द्र भी आरम्भ होंगे। भीलवाड़ा, जयपुर तथा जोधपुर में औद्योगिक गृह-निर्माण योजना के अंतर्गत कार्य में अच्छी प्रगति हो रही है। पाली तथा भीलवाड़ा में क्रमशः ४०० तथा २८८ एक कमरे वाले मकानों का निर्माण पहले ही हो चुका है। राज्य के पूंजीबद्ध कारखानों में ४३,७०३ श्रमिक कार्य पर लगे हुए हैं और यह सब कारखाने कल्याण योजना में शामिल हैं।

कृषि क्षेत्र में प्रगति

राजस्थान में गत वर्ष कृषि के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। गन्ने तथा कपास की उपज में विशेष वृद्धि हुई है। ५६-५७ की अवधि में सुधरे हुए कृषि उपायों के अन्तर्गत १ लाख एकड़ के लक्ष्य में से ८८,००० एकड़ अभी तक लाभान्वित हो चुके हैं। इसमें जापानी तरीके से चावल की सरल कृषि के लगभग ६,००० एकड़ के साथ-साथ अन्य तरीके जैसे बिना सिंचाई की खेती, पाल बांधना तथा पौधों की सुरक्षा आदि भी सम्मिलित हैं। १९५६-५७ में ३ लाख एकड़ क्षेत्र में १.८ लाख मन बीज वितरित किया। सरकार ने चालू वर्ष में ८७,००० टन कम्पोस्ट खाद का भी प्रयोग किया।

'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन

राज्य सरकार ने १९५७-५८ की अवधि में 'अधिक अन्न उपजाओ' योजनाओं के अन्तर्गत ९६ पम्पिंग सेटों तथा ३०० रहट लगाने के लिए २ लाख रुपये की राशि स्वीकृत की है।

सिंचाई योजनायें

भाखरा नांगल से राज्य के उत्तरी बंजर क्षेत्र में पानी लाने वाली नहरों का काम लगभग समाप्त हो गया तथा उस की मौसमी सिंचाई से १.०५ लाख एकड़ भूमि अब तक लाभान्वित हुई। लगभग ०.६१ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई अन्य योजनाओं से हुई है।

एक ओर जहां भाखरा, चम्बल तथा अन्य बड़ी और छोटी सिंचाई तथा बहुउद्देशीय योजनाओं का निर्माण-कार्य या तो समाप्ति पर है अथवा पर्याप्त प्रगति कर चुका है, वहां दूसरी ओर एक वृहत्तम सिंचाई योजना की, जो राज्य के पश्चिमी तथा पश्चिमोत्तरीय क्षेत्र की ३४ लाख एकड़ भूमि में सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध करेगी, कागजी कार्यवाही को अन्तिम रूप दे दिया गया है। राजस्थान नहर योजना नामक यह नहर, जो पंजाब में सतलज और व्यास के संगम के नीचे सतलज के हरीके, उद्गम-स्थल से निकलने को है, बीकानेर डिवीजन की हनुमानगढ़, सूरतगढ़, अनूपगढ़, रायसिंह नगर तथा बीकानेर तहसीलों के तथा जोधपुर डिवीजन में जैसलमेर जिले की नाचणा, जैसलमेर तथा रामगढ़ तहसीलों के विस्तृत क्षेत्रों में सिंचाई करेगी।

राज्य में सड़कों का विस्तार

राज्य की सड़क विकास योजनाओं ने भी अच्छी प्रगति की है तथा ८६७ मार्गों के लिए जो लगभग २२,४७५ मील के क्षेत्र में फैले हुए हैं. ३,८८७ परमिट देकर यातायात सेवाओं में विस्तार किया गया है। राज्य में इस समय १९,४०६ गाड़ियां चल रही हैं। इस वर्ष फरवरी में फतेहपुर तथा चुरू के बीच नई रेलवे लाइन प्रारम्भ कर दी गयी है। जयपुर रेल्वे स्टेशन के पुनर्निर्माण का कार्य भी समाप्ति पर है।

सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम, ६८,७४,००० की जनसंख्या वाले १७,०६१ गांवों को लाभ पहुँचा रहे हैं, जो ५०,७१७ वर्ग मील के क्षेत्र में फैले हुए हैं। इस कार्यक्रम ने ग्रामीण जनता को अभूतपूर्व उत्साह तथा सामूहिक प्रयत्नों की प्रेरणा देने में महान् सफलता प्राप्त की है। नकद, श्रम तथा अन्य प्रकार से ४०६,८४ लाख रुपये के जन-सहयोग ने यह सिद्ध कर दिया है कि जनता ने इस कार्यक्रम को अपना लिया है।

इस वर्ष ११ जिलों में आयोजित विशेष अल्प-बचत अभियान १४ लाख रुपये की प्राप्तियों तथा २९ लाख रुपयों के वायदों सहित बहुत सफल रहा है।

———

—इस समय देश में ७२ कपास अनुसंधान केन्द्र काम रहे हैं, जो इस बात की खोज करते हैं कि लम्बे रेशे की कपास उगाने के लिए किस-किस किस्म की कपास बोयी जावे।

———

भिलाई का कारखाना

★ भिलाई का लोहे और इस्पात का कारखाना साल में जितनी पटरियां बनायेगा, वे १००० किलोमीटर में रेल लाइन बनाने के लिए काफी होंगी।

★ इस समय भिलाई के कारखाने के निर्माण में २६००० लोग लगे हुए हैं। जब कारखाना चालू हो जायगा तब ७३००० लोगों को रोजगार मिलेगा।

★ भिलाई के कारखाने के लिए सोवियत संघ जो साज-सम्मान देगा, वह १,००,००० टन होगा, ब्लूमिंग मिल, बिलेट मिल, रेल एण्ड स्ट्रक्चरल स्टील मिल, प्रोफाइल्ड आइरन मिल, शक्तिशाली टावर और ब्रिज क्रेन विविध वायलर आदि।

★ निर्माणस्थल को १८,७००० टन ऐसा मसाला मिलेगा जो आसानी से आग में नहीं गलता। इस्पात और कच्चे लोहे के १२,००० टन नल तथा धातु के ७३०० टन ढांचे मिलेंगे।

★ भिलाई के निर्माण स्थल की सारी कटी हुई मिट्टी हटाने के लिये २२ टन माल ढोने लायक ३,५०,००० रेलवे वैगनों की जरूरत पड़ेगी। अगर इन डिब्बों को एक गाड़ी में जोड़ा जाय तो ट्रेन की लम्बाई बम्बई से कलकत्ते तक की होगी।

★ भिलाई के कारखाने को प्रतिदिन ५१०० टन कोयला, ५३०० टन खनिज लोहा, २४०० टन चूना और विद्रव पदार्थ तथा ५५० टन अन्य माल-मसाला भी मिलेगा।

★ भिलाई का लोहे और इस्पात का कारखाना प्रतिवर्ष ७७७,००० टन पिंड धातु तैयार करेगा।

—कलकत्ते के सेंट्रल ग्लास और सिरेमिक रिसर्च इंस्टिट्यूट ने तांबे पर चढ़ाने के इनेमल या मुलम्मा बनानेकी नयी विधि निकाली है। यह इनेमल घड़ियों, टेलिफोन यंत्रों और पानी और बिजली के मीटरों के डायलों पर चढ़ाया जाता है। अभी तक ऐसे डायल विदेशों से ही मंगाये जाते हैं। अनुमान है कि प्रतिवर्ष तीन लाख रुपये की इनेमल चढ़ी तांबे की चीजों का आयात होता है।

'सम्पदा' के पाठकों से

(१) स्थायी ग्राहक पत्र व्यवहार करते समय या चंदा भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या अवश्य लिख दिया करें। ग्राहक संख्या न लिखे होने की दशा में पत्र का उत्तर दे सकना कठिन हो जाता है।

(२) हमारे यहां से 'सम्पदा' का प्रत्येक अंक महीने की ७ तारीख को भेज दिया जाता है। अङ्क १० दिन तक न मिले तो कार्यालय को सूचित कर दें। इसके बाद आने वाले पत्रों का उत्तर देना कठिन होगा। पत्र के साथ ग्राहक संख्या लिखना आवश्यक है। ग्राहक संख्या महीने के प्रत्येक अङ्क के रैपर पर लिखी होती है। देखकर नोट करलें।

(३) नये ग्राहक बनने के इच्छुक चंदा भेजते समय इस बात का उल्लेख अवश्य करें कि वे नये ग्राहक बन रहे हैं और वर्ष के किस महीने से बनना चाहते हैं।

(४) नये ग्राहक बनने वालों को उनकी ग्राहक संख्या की सूचना पत्र द्वारा दे दी जाती है।

(५) कृपया वार्षिक चंदा धनादेश (मनीआर्डर) द्वारा ही भेजा करें। वी० पी० से आपको १० आने का अतिरिक्त व्यय देना पड़ता है।

(६) कुछ संस्थाएं चैक द्वारा चन्दा भेजती हैं। वे पोस्टल आर्डर से भेजें अथवा बैंक खर्च भी साथ भेजें।

(७) अपना पूर्व स्थान छोड़ने पर नये पते की शीघ्र सूचना दे देवें, अन्यथा दुबारा अंक नहीं भेजा जायगा।

—मैनेजर

रजिस्टर्ड नं० ३६१ डी०

समाजवाद-अंक पर लोकमत

पत्र क्या कहते हैं?

'सम्पदा' ने देश के सामने, जो आर्थिक क्रांति से गुजर रहा है, समाज के विभिन्न आर्थिक पहलुओं पर प्रकाश डालने वाली ऐसी सामग्री प्रस्तुत की है कि जो तथ्यों और आंकड़ों से युक्त होने के कारण उत्तम संदर्भ साहित्य का स्थान ले सकती है। वैदिक समाजवाद से लेकर कांग्रेस-समाजवाद तक की अवस्थाओं का इसमें सुन्दर ढंग से विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

—'नवभारत टाइम्स' बम्बई

इस अंक में समाजवाद, साम्यवाद, सर्वोदयवाद आदि के सम्बन्ध में प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की गई है। उसमें जहां रूस, चीन और युगोस्लाविया की अर्थव्यवस्था का परिचय दिया गया है, वहां अमरीका की नवीन पूंजीवादी व्यवस्था पर भी प्रकाश डाला गया है। —हिन्दुस्तान (दैनिक)

प्रस्तुत अंक में सुयोग्य विद्वानों द्वारा लिखित लेखों द्वारा 'समाजवाद' के सभी पक्षों का यथेष्ट विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

—पाञ्चजन्य (साप्ताहिक)

इसमें सन्देह नहीं कि 'सम्पदा' अपने विशेषांकों के द्वारा 'मील स्टोन' कायम करती जा रही है।

—'आपका स्वास्थ्य' (मासिक)

अर्थशास्त्र के अध्यापक क्या कहते हैं?

समाजवाद अंक मिला, देखकर जी खिल उठा। मिलने के बाद एक सांस सम्पदा ही पढ़ता रह गया। अंक बहुत सशक्त है। खूब बधाई! सचमुच मन भर गया।

—श्री रामनरेशलाल, रांची

"समाजवाद का विशेषांक हिन्दी क्षेत्र में आपकी लगन का परिचायक है, इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ेगा।"

—श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल

आप में लगन बहुत है। ईश्वर आपके विचारपूर्ण और मौलिक सूझपूर्ण सम्पादकत्व को नित नया स्नेह और आलोक दें दीर्घकाल तक, यही कामना होती है।

—प्रो० बी० एन० पाण्डेय

अर्थशास्त्र के विद्यार्थियों, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं और शिक्षित वर्ग सबके लिए एक समान उपयोगी समाजवाद अंक १॥।) (डाक खर्च समेत) मनी आर्डर भेज कर मंगा लीजिये।

योजना अंक, राष्ट्रीय विकास अंक, उद्योग अंक, भूमि सुधार अंक, वस्त्रोद्योग अंक, मजदूर अंक, बैंक अंक और समाजवाद अंक एक साथ मंगाने के लिए ६) रु० म० आ० से भेजिये। सब अंक रजिस्ट्री से भेजे जायेंगे। अन्य सम्मतियां पृष्ठ ४६ पर देखें।

—मैनेजर सम्पदा

अशोक प्रकाशन मन्दिर, रोशनारा रोड, दिल्ली।

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा
मार्च, १९५८
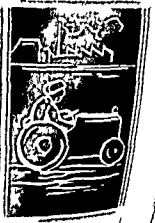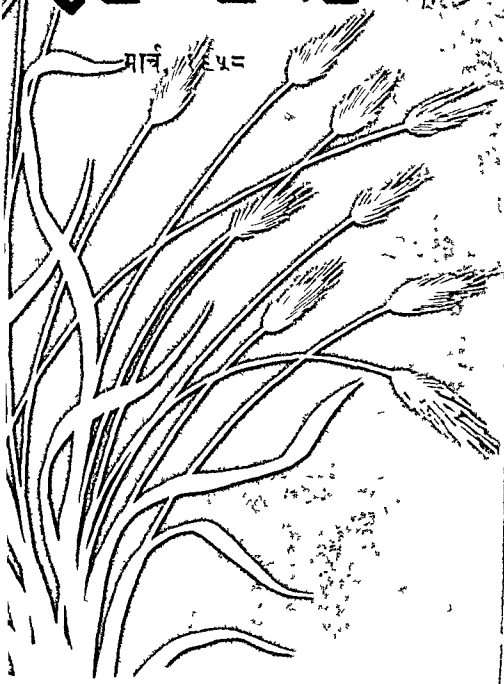
३,००,००० टन से अधिक

कोणार्क सिमेंट

का उपयोग हीराकुड बांध में हो चुका है।

भारत के विशालतम बांधों में से एक यह बांध उड़ीसा में महानदी के ऊपर बन रहा है। यह एक ऐसी बहुमुखी परियोजना है जिससे बाढ़ों का नियन्त्रण, १९ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई और २००,००० किलोवाट्स विद्युतशक्ति का उत्पादन हो सकेगा। मुख्य बांध १५८०० फीट लम्बा है और इसकी सर्वाधिक ऊंचाई १८३ फीट होगी। जिसमें से लगभग १२००० फीट बांध कच्चा है और लगभग ३७०० फीट बांध का निर्माण सिमेंट कंकरीट का है जिसमें कोणार्क सिमेंट का ही व्यवहार हो रहा है।

यह सिमेंट उड़ीसा राज्य के राजगांगपुर नामक स्थान पर बनता है। यह निर्माणी विशेषरूप से हीराकुड परियोजना की प्रतिदिन ५०० टन सिमेंट की आवश्यकता को पूरा करने के लिए स्थापित की गयी है। इस निर्माणी का उत्पादन इस साल १९५७ से १२०० टन प्रतिदिन हो गया है। अब यह सिमेंट जनोपयोग के लिए भी पर्याप्त मात्रा में मिल सकेगा।

उड़ीसा सिमेंट लिमिटेड

राजगांगपुर, उड़ीसा

प्रबंध-अभिकर्त्ता डालमिया एजेन्सीज प्राइवेट लिमिटेड

O.C.H 10. 57 A.I.A.B

विषय-सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक

२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस,
२री मंजिल, टुलक रोड, बम्बई- १

वर्ष : ७]　　　　　　　　मार्च, १९५८　　　　　　　　[अङ्क : ३

नये वर्ष का बजट

१९५८-५९ का बजट वित्त मंत्री श्री कृष्णमाचारी के पद त्याग के कारण श्री जवाहरलाल नेहरू को उपस्थित करना पड़ा। उन्हें नये बजट पर बहुत अधिक विचार करने का अवसर नहीं मिला। इसलिए उन्होंने थोड़े से परिवर्तनों के साथ पुराने बजट की पुनरावृत्ति कर दी है। स्वयं सम्भवतः उन्हें उससे पूर्ण सन्तोष नहीं है, उन्होंने उसे चलतू बजट कह कर आलोचकों से एक प्रकार से क्षमायाचना सी की है। बजट भाषण के शब्द उनकी भावना को प्रकट करते हैं, किन्तु बजट उस भावना के साथ संगति नहीं खाता। इसीलिए एक आलोचक ने इस बजट को "नेहरू की बोतल में टी० टी० की शराब" कहा है। इस दृष्टि से नए बजट की आलोचना में हम उससे अधिक क्या विचार कर सकते है, जो गत वर्ष हमने इन पंक्तियों में प्रकट किये थे। गतवर्ष के बजट में सरकार ने जिस तरह परिणाम का विवेक किए बिना नये से नये कर लगाए थे, और जिस तरह समाजवादी समाज की स्थापना के आदर्श के प्रतिकूल प्रत्यक्ष करों से अप्रत्यक्ष कर भारी अनुपात अधिक रखते थे, इसकी आलोचना की पुनरावृत्ति करने की यहां आवश्यकता नहीं है।

+　　　+　　　+　　　+

गत वर्ष देश जिस आर्थिक संकट में से गुजरा, उस पर बजट के परिणामों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, यह नहीं कहा जा सकता। नये बजट-भाषण में गत वर्ष की पृष्ठ भूमि दी गई है, जिसके कुछ अंश निम्न लिखित हैं—

"आंतरिक साधनों और शोधन सन्तुलन पर पड़ने वाला दबाव इस वर्ष भी जारी रहा है"। "वर्तमान वर्ष की अपेक्षा अगले वर्ष में देश के उत्पादन में कुछ कम वृद्धि होने की संभावना है, क्योंकि चावल की फसल कम हुई है और औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि की गति धीमी पड़ती जा रही है।" "१९५७ के पिछले महीनों में मूल्य निर्देशक अंक कुछ कम जरूर हुए, पर वर्ष भर का औसत १०९ आता है जबकि उसके पिछले वर्ष के औसत से करीब ६ प्रतिशत अधिक है। मार्च १९५६ में दाल से भिन्न अनाजों का सूचक मूल्य ८७ था, अगस्त ५७ में यह बढ़कर १०६ हो गया। यद्यपि दिसम्बर में यह अंक ९८ रह गया तथापि मार्च ५६ से से अब भी ११ अधिक है। इसी अवधि में चावल का मूल्यांक ९६ से बढ़कर १११ तक पहुँच गया।" "मुद्रा प्रसार का दबाव भी गत वर्ष बढ़ता रहा, यद्यपि पिछले कुछ महीनों में कुछ कमी हुई है।"

नीचे की इन दो संख्याओं से मालूम होगा कि हमारी विदेशी मुद्रा पर दबाव किस तरह बढ़ता रहा। १९५६-५७ में सरकारी हिसाब में २८०.६ करोड़ रु० का आयात हुआ था, किन्तु १९५७-५८ के सिर्फ छः महीनों में २३८.८ करोड़ रु० का आयात है अर्थात् इस अनुपात से वर्ष में ५७७.६ करोड़ रु०। आयात बढ़ने के साथ-साथ निर्यात भी बढ़ते तो कुछ दुःख न होता, किन्तु निर्यात में कमी हुई है। गत दो वर्षों की पहली दो तिमाहियों में क्रमशः २८८ करोड़ और २६७ करोड़ रु० का निर्यात हुआ। चाय, वनस्पति तेल, जूट आदि के निर्यात में कमी रही। इन कारणों से विदेशी परिसम्पद की स्थिति विपरीत होती गई, जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट है—

	करोड़ रु०
१९५५	७३५.१८
१९५६	५२६.९१
१९५७	२९७.६५

यह पृष्ठ भूमि है, जिसके आधार पर सरकार का नया बजट बनना चाहिए था। प्रश्न यह है कि क्या नया बजट हमारी आवश्यकताएं पूर्ण करता है? क्या पं० नेहरू के कथनानुसार देश को गतिहीन होने से रोकता है? क्या देश को और देश की जनता को आर्थिक वृद्धि के लिए पूरी शक्ति के साथ जुट जाने की प्रेरणा देता है? क्या देश के घोषित समाजवादी लक्ष्य की ओर ले जाने में सहायक सिद्ध होता है?

\+ + + +

यह ठीक है कि पिछले कई वर्षों से पहली बार इस वर्ष ऐसा बजट पेश हुआ है, जिसमें सामान्य जन पर कोई नया कर नहीं लगाया गया। इसलिए कुछ क्षेत्रों ने इसका भी स्वागत किया है। किन्तु सामान्य जन पर अब नये कर लगने की गुंजायश ही नहीं थी। भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री कृष्णामाचारी ने पिछला बजट पेश करते हुए यह स्पष्ट कर दिया था कि मेरी कर-पद्धति की रूपरेखा द्वितीय योजना की संपूर्ण अवधि के लिए है, अब नये कर लगाये जाने की संभावना नहीं करनी चाहिए। इसलिए नये बजट में उपहार व सम्पत्ति कर में कुछ परिवर्तनों के अतिरिक्त यदि कोई नये कर नहीं लगे तो यह अत्यंत स्वाभाविक था।

बजट का उद्देश्य केवल आय व्यय के अंकों का संग्रह या घाटे की कमी पूर्ण करने के उपाय बता देना भर नहीं है। पं० नेहरू ने कहा है कि आवश्यकता और अनुभव के आधार पर हमें अपनी कार्य-प्रणाली में परिवर्तन करने चाहिए, किंतु ऐसा किया नहीं गया। गत वर्ष की कर-पद्धति को बिना विशेष परिवर्तन किये स्वीकार कर लिया गया है।

गत वर्ष के नये कठोर और भारी करों का देश के आर्थिक जीवन पर जो प्रभाव पड़ा है, उस पर गम्भीर विचार करना चाहिए था। देश में लगातार बढ़ती हुई महंगाई में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सरकारी करों का जो बोझ है और उसके कारण लोगों में बचत की सामर्थ्य बहुत कम हो गई है, इसकी चिन्ता नहीं की गई। योजना आयोग ने अनुमान लगाया था कि द्वितीय योजना के प्रथम दो वर्षों में २०० करोड़ रु० छोटी बचतों द्वारा मिल जायगा, किन्तु यह आशा पूर्ण नहीं हुई। केवल १२० करोड़ रु० बचतों में मिला है अर्थात् ६० प्रतिशत।

\+ + +

सामान्यतः सम्पन्न क्षेत्रों में उपहार कर का विरोध हुआ है, जबकि साम्यवादी या जन-क्षेत्रों में इसका स्वागत हुआ है, क्यों कि इसका प्रभाव बहुत थोड़े से व्यक्तियों पर पड़ा है। उपहार-कर की संभावना पहले भी की जा रही थी और सरकारी क्षेत्रों के अनुसार उत्तराधिकार कर से बचने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए ऐसा करना आवश्यक था। किन्तु इस उपहार-कर का स्वागत होने पर भी सम्पत्ति कर के लिए छूट में कमी करने का समर्थन किसी तरह नहीं किया जा सकता। नये प्रस्तावों के अनुसार अब एक लाख रु० की बजाय ५०००० रु० तक की सम्पत्ति पर ही छूट मिलेगी। इसके परिणामस्वरूप नगरों में भवन-निर्माण को बहुत अधिक धक्का लगेगा। दिल्ली में २०० गज की भूमि पर बने एक दुमंजले मकान के मालिक से भी सम्पत्ति कर लिया जायगा। केवल सम्पत्ति करों का प्रश्न नहीं है। इसके साथ तवालत व परेशानी का शिकार भी उन्हें होना पड़ेगा।

भारी करों ने जिस तरह पूंजी निर्माण पर, जो देश के आर्थिक विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है, बुरा प्रभाव

डाला है, उसे देखते हुए यह सभावना की जा रही थी कि इस वर्ष कर कुछ कम कर दिये जायंगे। अन्य बहुत से देशों की अपेक्षा भारत में करों का बोझ बहुत अधिक है। आवश्यकता इस बात की है कि करों का बोझ कम किया जाय। विभिन्न स्थितियो में और विभिन्न सस्थाओ द्वारा लगने वाले अप्रत्यक्ष करों के कारण उपभोग्य वस्तुए निरन्तर महगी होती जा रही हैं, जीवन व्यय बढ़ता जा रहा है और इसके परिणामस्वरूप अधिक वेतनों की माग होती हैं और फिर वस्तुए और भी अधिक महगी होती जाती हैं। इस दुश्चक्र को रोकने के लिए करों का भार कम करना चाहिए था। तभी बचत भी लोग ज्यादा कर सकेंगे और पूंजी का निर्माण भी कुछ आसान हो जायगा। फिर भी बजट मे कुछ परिवर्तन किये गये हैं, जिन का स्वागत किया जायगा।

समाजवादी समाज जल्दी से जल्दी लाने के प्रलोभन में कुछ ऐसे कदम उठाये गये थे कि विदेशी पूजी को भारत आने की प्रेरणा मिलनी बन्द हो गई थी। पिछले वर्ष विदेशी पूंजी की कठिनता बहुत तीव्रता से अनुभव की गई, अत विदेशी नागरिक को उसकी सम्पत्ति पर कर से छूट दे दी गई है। विदेशी पूजी से पक्षपात और राष्ट्रीय भावना में कुछ असगति दीखती है, पर आर्थिक नीति कोरे आदर्शों पर नहीं टिक सकती। जहाजी उद्योग बहुत समय से मांग कर रहा था कि नये उद्योग के निर्णय के लिए पूजी पर छूट दी जानी चाहिए। विकास छूट की दर २५ से ४० प्रतिशत बढ़ा दी गई है। इन दोनो का क्या प्रभाव पड़ेगा, यह आज नहीं कहा जा सकता।

\+ + +

पचवर्षीय योजना के लक्ष्यो पर पिछले वर्ष बहुत विवाद हुआ है। ४८ अरब रु० की योजना बढ़ाकर ५५ और ६० अरब रु० की कर दी गई थी। यद्यपि प्रधानमंत्री अपने आत्मविश्वास के आधार पर योजना को अत्यत महत्वाकांक्षी भी मानने से इन्कार करते रहे, तथापि अब उन्होंने स्वीकार किया है कि ४८ अरब रु० से अधिक व्यय सम्भव न होगा। प्रथम दो वर्षों मे क्रमश ६७० और ८४५ करोड़ रु० व्यय हुआ है। शष तीन वर्षों में ३२६८ करोड़ रु० व्यय किया जायगा, जिसमें से इस वर्ष १०१७ करोड़ रु० ‥ ८

सार कुछ कटौती के सिद्धान्त को स्वीकार कर, लिया गया है। पर प्रश्न यह है कि क्या १० अरब रु० भी प्रतिवर्ष व्यय करने की क्षमता देश मे है? इस वर्ष बहुत प्रयत्नो के परिणामस्वरूप हम विदेशो मे जो कुछ ले पाये हैं, क्या देश के आतरिक साधनों की क्षमता बढाये बिना आगे भी वह प्रतिवर्ष सुलभ रहेगी।

देश का शासन व्यय बढ़ता जा रहा है। इसका एक बडा कारण यह है कि कर्मचारियो—कारीगरों, मजदूरो या बाबू श्रेणी का जीवन व्यय बढ़ने के कारण वेतनो पर व्यय बहुत बढ़ गया है। रेलवे मंत्री ने अपने बजट में इस कारण ५ करोड रु० की व्यय वृद्धि स्वीकार की है। असैनिक प्रशासन के मद में ५७२ लाख रु० की वृद्धि बताई गई है। अपने बढ़ते हुए व्यय को कम करने की अनिवार्य आवश्यकता है और इसके लिए वेतन वृद्धि की अपेक्षा बढती हुई महगाई को कम करके जीवन व्यय को न्यून करने की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। समस्त बजट में मितव्यय की ओर कोई विशेष ध्यान दिया गया हो, ऐसा प्रतीत नहीं होता। ५०० रु० से ऊपर के कर्मचारियो मे क्रमश कुछ कटौती की जाती तो जनता को प्रेरणा मिलती।

यह दुर्भाग्य की बात है कि विश्व की असाधारण राजनैतिक परिस्थितियों के कारण हमारा सैनिक व्यय भी बढ़ता जा रहा है। गत वर्ष ही ५० करोड़ रु० व्यय बढ़ाकर सैनिक व्यय २५२ करोड़ रु० कर दिया गया था, अब उसे बढ़ाकर करीब २७८ करोड़ रु० कर दिया गया है। यह कितना ही अवाछनीय हो, आज स्थिति से विवश होकर इसे स्वीकार करना पडा है। आर्थिक विकास के नाम पर लिये गये कर सरकार ने १५७ करोड रु० के अतिरिक्त कर गत दो वर्षो मे लगाये, परन्तु विकास भिन्न कार्यो पर १६३ करोड रु० के व्यय बढा दिये। शासन तथा रक्षा विभाग मे व्यय बढ़ रहे हैं, जिनका उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा।

बहुत कम विविध राज्यो ने इस वर्ष नये कर लगाये हैं। अब कर लगाने की गुंजायश ही नहीं रही, परन्तु प्राय सभी राज्य घाटे मे हैं। उनकी कमी पूर्ण करने की जिम्मेवारी इस वर्ष केन्द्र पर और भी अधिक पड़ गई है।

१९५७-५८ के संशोधित अनुमान के अनुसार २५२२ लाख रु० की राशि विविध समायोजन और अंशदान के लिए नियत की गई थी, जब कि इस वर्ष ४७०३ लाख रु० अर्थात् करीब ६० प्रतिशत अधिक राशि नियत की गई है। राज्यों की केन्द्र पर आश्रितता जिस वेग से बढ़ रही है, वह विचारणीय है। इस प्रवृत्ति को रोकने का प्रयत्न करना चाहिए।

\+ \+ \+

नई जिम्मेदारियों और शासन व्यय में कमी न करने आदि के परिणामस्वरूप देश को ३२॥ करोड़ रु० अर्थात् ७॥ लाख रु० दैनिक से अधिक का घाटा हो रहा है। विकास कार्यों के नाम पर इस घाटे की उपेक्षा नहीं की जा सकती। कांग्रेस अध्यक्ष श्री ढेबर के शब्दों में सरकार को स्वयं भी मितव्यय व त्याग का आदर्श उपस्थित करना चाहिए था। विदेशी शराब आज भी आ रही है, अनावश्यक विदेशी साहित्य की भी कमी नहीं हो रही, शासन के वेतनों तथा आडम्बरों पर आज भी व्यय कम नहीं हो रहा।

निजी उद्योग को विदेशी पूंजी के सहयोग और विलंबित भुगतान के आधार पर छोड़ दिया गया है। हम पं० नेहरू के प्रभावशाली व्यक्तित्व से किसी ऐसी अर्थनीति की आशा रखते थे, जो देश के आर्थिक विकास में नया मोड़ दे। परन्तु इस आलोचना के साथ हम उनके शब्दों में यह भी कहना चाहते हैं कि "हमें यह बात समझ लेनी है कि हमारी सफलता दूसरों पर नहीं, अपनी शक्ति व बुद्धि पर, अपनी एकता और सहयोग पर तथा अपने उन देशवासियों की भावना पर निर्भर है, जिनकी सेवा का गौरव हमें प्राप्त है।

★

विकास योजना पर पुनर्विचार

भारत के अत्यन्त प्रसिद्ध उद्योगपति श्री जे० आर० डी० टाटा ने अभी एक भाषण में पंचवर्षीय योजना के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये हैं। उनके विचार संक्षेप से यह हैं :—

पंचवर्षीय योजना को संक्षिप्त करने तथा उस का रूप बदलने के सिवाय आज हमारी कोई गति नहीं है, क्योंकि योजना आयोग के सदस्यों ने विदेशी साधनों की आवश्यकता का जो अनुमान लगाया है, वह बहुत कम है। और दूसरी तरफ आन्तरिक साधनों के सम्बन्ध में बहुत अत्युक्ति से काम लिया है।......पंचवर्षीय योजना के आकार का हमारे सामने इतना महत्व नहीं है, जितना थोड़े लक्ष्य रखकर उसकी जल्दी से जल्दी पूर्ति का महत्व है। श्री टाटा ने एक और महत्वपूर्ण क्रांतिकारी विचार यह प्रकट किया है कि भारत तथा अन्य देशों में योजनाओं के निर्माता इस्पात के कारखानों के पीछे भागते हैं, किन्तु विदेशी मुद्रा की भारी आवश्यकता का ध्यान नहीं रखते। हमें यह नहीं भूलनी चाहिये कि लोहे का सामान अधिक मात्रा में भेज कर विदेशों से अधिक रुपया नहीं ले सकते। इसलिए आज भी नये प्रस्तावित लोहे के कारखाने को स्थगित कर देना चाहिये तथा वह रुपया खाद के कारखाने तथा अन्य उद्योगों में लगाना चाहिये, जिससे देश को अधिक विदेशी मुद्रा प्राप्त हो सके। श्री टाटा ने अपनी पहली स्थापना को पुष्ट करते हुए कहा है कि योजना आयोग ने ४८ अरब रु० की योजना के लिए ११ अरब रु० विदेशी साधनों का अनुमान किया था, किन्तु अब १६ अरब रुपये की आवश्यकता बतायी जा रही है। योजना के व्यय का अनुमान भी पहले बहुत कम किया गया था, परन्तु अब ७ अरब रुपये ज्यादा व्यय की कल्पना की जा रही है। यदि हम विदेशी मुद्रा पर अधिक निर्भर रहें तो पीछे से उसे चुकाना अत्यन्त कठिन हो जायगा। आशा है, इन विचारों पर देश के अर्थशास्त्री और योजना-निर्माता गम्भीरता से विचार करेंगे।

सर डारलिंग की सूचनाएं

सहकारिता की पिछले कुछ वर्षों से धूम है। योजना आयोग, सरकारी अधिकारी, संसद या विधान सभाओं के सदस्य तथा सार्वजनिक नेता सहकारी समितियों का जाल फैला देने की चर्चा प्रायः करते रहते हैं। सरकारें इस आंदोलन पर करोड़ों रुपया व्यय कर रही हैं, किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि बिना विवेक और विचार के बहुत तेजी से कदम बढ़ाना नुक्सानदेह भी होता है। इसलिए हमें सर मालकम डारलिंग की सूचनाओं पर गंभीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। वे बरसों भारत की ग्राम सम-

स्थाओं का अध्ययन करते रहे हैं। सरकार ने उन्हें सहकार-आन्दोलन की जांच का काम सौंपा था।

कृषि बचत और उधार सोसाइटी के नाम की समीक्षा करते हुए, उन्होने कहा है कि दूसरी आयोजना में इसका काम अत्यधिक तेजी से बढ़ाने की कोशिश की जा रही है, जो ठोस विकास के लिए अनुचित है। बम्बई, आंध्र, मद्रास और पंजाब में, जहां यह व्यवस्था काफी प्रभावशाली है, यही बात देखने में आयी। इसलिए उनका सुझाव है कि पांच साल के लक्ष्यों को दस साल का कर देना चाहिए। यह भी उनके देखने में आया है कि कार्यशील पूंजी में हिस्सेदारों का हिस्सा कम होता जा रहा है और सोसाइटियों के उधार की वसूली भी कम होती जा रही है, इससे बकाया काफी बढ गयी है। उनका सुझाव है कि आगे उधार देने में और विशेष रूप से उन राज्यों में, जहां सहकार आंदोलन मजबूत नहीं है, विशेष सावधानी रखनी चाहिए। राज्य सरकारें इस वक्त लक्ष्य प्राप्त करने पर अधिक जोर दे रही हैं, लेकिन उन्हें उधार की वसूली पर अधिक जोर देना चाहिए।

सर मैलकम का कहना है कि ऊपर की समितियों मे सरकार का नियंत्रण इतना हानिकारक नहीं है, जितना प्राथमिक सोसाइटियों के प्रबन्ध में। प्राथमिक सोसाइटियो को अपने काम मे अधिक से अधिक स्वतन्त्रता रहनी चाहिए, यही इस आन्दोलन का बल है।

उनके प्रतिवेदन में कुछ ऐसी सोसाइटियों की ओर भी संकेत किया गया है, जो लोगों ने धन की सहायता से लालच में अपने स्वार्थ के लिए बना रखी हैं। ये सोसाइटियां गैर-सदस्यो से ही अधिक लेन-देन करती हैं। ऐसी सोसाइटियो को सहकार समिति अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार जो सोसाइटियां अपने को 'बहूद्देश्य समितियां' या 'मल्टी-परपज सोसाइटीज' कहती हैं, और काम एक ही करती हैं, उन्हें यह नाम नहीं रखने देना चाहिए।

ईंधन की समस्या हल

संसार में प्रतिदिन बढ़ते हुए ईंधन के प्रयोग के कारण वैज्ञानिक यह खतरा बहुत समय से अनुभव कर रहे हैं कि जब भूमि गर्भ में निहित कोयला व मिट्टी के तेल के विशाल भण्डार समाप्त हो जायंगे, तब क्या होगा? बिजली की शक्ति ईंधन की समस्त आवश्यकता पूर्ण नहीं कर सकेगी। नये ईंधन के आविष्कार के प्रयत्न में ही इंगलैंड के वैज्ञानिकों ने पानी की बूंद में विद्यमान उद्जन शक्ति के नियंत्रण का आविष्कार किया है, जिसका परिचय सम्पदा के पाठक गतांक मे पढ़ चुके हैं। अब रूस ने भी दावा किया है कि उसने उद्जन शक्ति पर नियंत्रण स्थापित करने में सफलता प्राप्त कर ली है। इसके अनुसार रूस ने उद्जन-शक्ति के औद्योगिक उपयोग के लिए आवश्यक ईंधन 'ड्यूट्रेयम' का पानी से उत्पादन करने की ऐसी विधि ढूंढ निकाली है, जिससे उसका उत्पादन व्यय कोयले के उत्पादन व्यय के १ प्रतिशत से भी कम पड़ता है। रूसी वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के कई दल इस समय उद्जनशक्ति की भट्ठी बनाने में लगे हुए हैं। इस प्रकार की भट्ठियों का निर्माण पूरा हो जाने पर ईंधन की समस्या हमेशा के लिए हल हो जायगी। इस विधि से सामान्य जल से पेट्रोल की अपेक्षा ४०० गुनी शक्ति पैदा की जा सकेगी। 'ड्यूट्रियम' की *(ऐसा उद्जन जिसका पारमाणविक भार सामान्य उद्जन के भार से दूना होता है)* १० लाख डिग्री सेण्टीग्रेड तक गरम करने से सफलता प्राप्त की गयी है इससे पहले ब्रिटिश उद्जन शक्ति की भट्ठी 'जेठा' में ५० लाख डिग्री तक तापमान पैदा किया जा चुका है।

प० जर्मनी से समझौता

विदेशी मुद्रा की समस्या को जिन उपायो से हल किया जा रहा है, उनमें से एक विलम्बित भुगतान भी है। प० जर्मनी ने स्वयं राउरकेला लोह-संयत्र मे रुपया लगाने से असमर्थता प्रकट की थी, जबकि रूस और इंगलैंड इस के लिए सहमत थे। इसे हल करने के लिए भारत के वित्त मंत्री ने अक्टूबर, १९५७ में जर्मनी की सरकार, उद्योगपतियों आदि से भारत के विकास में सहायता की चर्चा की थी, तो वहां की सरकार ने राउरकेला के इस्पात कारखाने की मशीनो का दाम बाद में लेने का प्रस्ताव किया था। इसके अलावा भारत की दूसरी पंचवर्षीय आयोजना की पूर्ति में यथासंभव सहायता करने की भी उसने इच्छा प्रकट की थी। इसके बाद जो बातचीत हुई,

आज की आर्थिक समस्याएं

श्री बाबूभाई एम० चिनाय

चार समस्याएं

पिछले वर्ष में चार महत्वपूर्ण समस्याएं, जो एक दूसरे से परस्पर सम्बद्ध भी हैं, हमारे सामने आईं। अन्न की कमी बहुत परेशान करने वाली थी। दूसरे, पदार्थों के मूल्य बहुत ऊंचे होते गये। तीसरे, विदेशी मुद्रा की दुर्लभता तीव्र रूप से अनुभव की गई और अन्तिम बात यह कि भारी करों तथा आर्थिक साधनों के अभाव के कारण शेयर बाजार, जो देश के आर्थिक जीवन का सूक्ष्म मापदण्ड है, बहुत संकट में रहा।

मेरा यह गंभीर विश्वास है कि कृषि विकास का गहन और समन्वय व सहयोग युक्त कार्यक्रम तैयार करके विभिन्न स्तरों पर देश के शासकों द्वारा किया में परिणत किया जायगा। इसमें केन्द्रीय, राज्यीय तथा स्थानीय सभी अधिकारी पूरा भाग लेंगे।

अध्यक्ष अ० भा० उ० व्यापार मण्डल

बढ़ते हुए मूल्य

मूल्यों के सम्बन्ध में सब जानते हैं कि जनवरी १९५७ में मूल्यों का जो सामान्य अंक ४२२.३ था, वह मई में बढ़ना शुरू हुआ और जुलाई में ४४३.९ तक पहुँच गया। मूल्य वृद्धि की यह प्रवृत्ति खाद्य पदार्थों तथा कारखानों के कच्चे माल में विशेष रूपेण में देखी गई। कारखानों में निर्मित माल के मूल्यों का रुख उल्लेखनीय है। उनके मूल्यों में न्यूनतम वृद्धि हुई। जनवरी में उनका मूल्य ३८७.४ था, जो जुलाई और सितम्बर में क्रमशः ३९२.३ और ३९९.७ हो गया। यही वर्ष का उच्चतम मूल्य था। इस सम्बन्ध में उद्योग के आत्म-नियंत्रण की प्रशंसा करनी होगी। उसने व्यापार व उद्योगमंत्री की उस अपील का पूर्णतः आदर किया, जो उन्होंने विदेशों से आयात कम करने की स्थिति में ग्राहकों को कम से कम कष्ट देने और मूल्य न बढ़ाने के लिए उद्योग से की थी। कच्चे माल का मूल्य बढ़ने, मजदूरी बढ़ जाने, सरकार द्वारा नये नये बन्धन लगाने आदि के बावजूद उद्योग ने मूल्य नहीं बढ़ाये।

गत अगस्त मास से खाद्य तथा अन्य पदार्थों के मूल्य कुछ गिरने लगे हैं। मूल्यों पर सतर्क दृष्टि रखना बहुत आवश्यक है। मांग और उपलब्धि की प्रवृत्तियों का भी अनुसरण करना चाहिए। एक विकासशील देश में मांग और उपलब्धि की शिथिलता अच्छी नहीं होती। मांग द्वारा समर्थित उत्पादन की वृद्धि से ही उन्नति का वातावरण स्थिर रखा जा सकता है। उत्पादन वृद्धि और उच्चतर उत्पादन क्षमता से अधिक और कोई बात वास्तविक आय को नहीं बढ़ा सकती। केवल उत्पादन और खपत की वृद्धि की ही चिन्ता नहीं करनी चाहिए, हमें अपना निर्यात व्यापार बढ़ाने की ओर भी ध्यान देना है। दुनिया के बाजारों में कुछ गिरावट आ रही है, इसलिए हमें निर्यात व्यापार बढ़ाने व उसे स्थिर रखने की ओर विशेष ध्यान देना होगा।
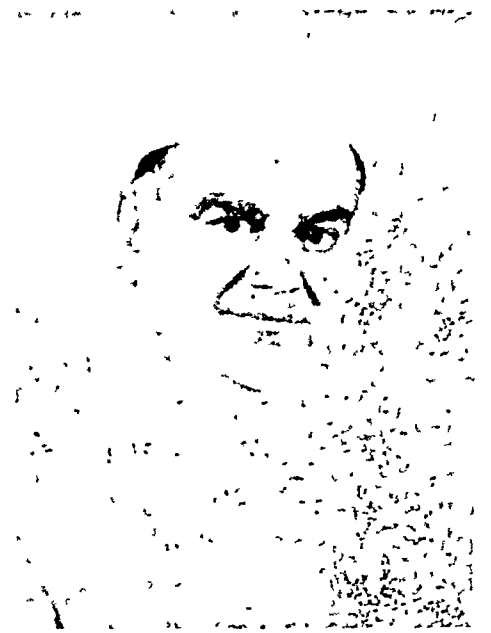
विदेशी मुद्रा

देश के सामने और विशेषकर उद्योग व्यापार के सामने एक गंभीर समस्या विदेशी विनिमय की है, जो विदेशी व्यापार के प्रतिकूल होने के कारण कठिन होती जा रही है।

गत वर्ष में हमारी स्टर्लिंग निधि २३० करोड़ रु० कम हो गई। हमने अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा प्राप्त ६१ करोड़ रु० की राशि का भी उपयोग कर लिया। यह भारी व्यापारिक प्रतिकूलता विकास सामग्री के भारी परिमाण में आयात के कारण हुई। हमारे ९० प्रतिशत आयात मशीनरी, यातायात वाहन तथा लोहे के होते हैं। पिछले कुछ महीनों से विदेशी विनिमय की स्थिति में सुधार के लक्षण इस रूप में दीखने लगे हैं कि पहले प्रति मास २५ करोड़ रु० की स्टर्लिंग निधि कम हो रही थी, अब १० करोड़ रु० कम होने लगी है। उद्योग व व्यापार के सहयोग से सरकार ने जो कदम इस दिशा में उठाये हैं, उन्हें इसका श्रेय है। भू० पू० वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी के प्रयत्नों का उल्लेख भी मुझे अवश्य करना है। उनके प्रयत्नों से जो हमारे मण्डल के साथ किये गये थे, विदेशी मुद्रा मिलने में सफलता मिली है।

निजी उद्योग के पूंजीगत सामग्री मंगाने पर कठोर शर्तें लगी हुई है। विलम्बित भुगतान के लिए भी शर्तें कड़ी कर दी गई हैं। मैं मानता हूँ कि हम इस योजना का बिना विवेक के खुले हाथों प्रयोग नहीं कर सकते, क्योंकि तब हमें भुगतान की कठोर समस्या का शीघ्र ही सामना करना पड़ जायगा, लेकिन मैं सरकार से यह जरूर कहना चाहूँगा कि हमें प्राप्त होने वाली विदेशी सहायता को सामने रखते हुए विदेशी विनिमय के समस्त प्रश्न पर विचार करना चाहिए। इसमें सन्देह नहीं कि आयात पर नियंत्रणों को शिथिल कर देने से खतरनाक परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं। किन्तु आवश्यक से अधिक समय तक आयात पर नियंत्रणों को जारी रखने से भी दु:खद परिणाम उत्पन्न हो सकते हैं, क्योंकि इससे संभावित विकास रुक सकता है।

सरकार की कर नीति

इसके साथ ही आन्तरिक स्रोतों के विकास और सरकार की कर नीति का प्रश्न भी उपस्थित हो जाता है। यह आम ख्याल है कि आन्तरिक साधनों से धन प्राप्त करने की कोई सीमा नहीं है। वह जितना चाहे, प्राप्त किया जा सकता है। यह ख्याल हमें प्रश्न पर ठीक तरह से सोचने में रुकावट डालता है। इस प्रश्न पर हमें इस बात को ध्यान में रखकर विचार करना चाहिए—खपत पहले ही बहुत कम है, उस पर बिना प्रभाव डाले आज की आर्थिक स्थिति में हम बचत को नहीं बढ़ा पा रहे। रुपया प्राप्त करने और पूंजी बनाने के लिए एक शर्त यह है कि द्रव्य के स्रोत कम होने या सूखने नहीं पायें। देश की सम्पत्ति बढ़ने के साथ ही सरकारी राजस्व बढ़ सकता है। दूसरे शब्दों में उद्योग और व्यापार नफा कमाने की स्थिति में होने चाहिए और उनकी उन्नति होनी चाहिए। अपनी बात को मनुस्मृति के इन शब्दों की अपेक्षा मैं अधिक अच्छी तरह व्यक्त नहीं कर सकता कि कर दाता के 'योग क्षेम' की ओर उचित ध्यान देना चाहिए। योग क्षेम एक व्यापक शब्द है और इसमें करदाता की स्थिरता (योग) और हित (क्षेम) के लिए आवश्यक सभी बातों का समावेश हो जाता है।

नया बजट

इन सब बातों की रोशनी में मैं सरकार से और उन अधिकारियों से, जिनके हाथ में कर नीति का निर्धारण है, कर नीति पर विचार करने का अनुरोध करना चाहता हूँ। हमें यह आशा थी कि नये वर्ष का बजट पेश करते समय सरकार कर नीति के उस असन्तुलन को दूर कर देगी, जो पिछले वर्ष के बजट के कम्पनियों पर सम्पत्ति-कर, व्यय कर, कम्पनियों के लाभ की अनिवार्य रूप से जमा आदि की व्यवस्था के कारण उत्पन्न हो गया है। इनमें से कई कर बिलकुल नये थे, जिनकी कोई संभावना भी न थी। इस नये बजट में कर नीति की पूर्णता के नाम पर एक और उपहार कर लगा दिया गया है। सैद्धान्तिक रूप से पूर्णता स्वयं अपने में कोई उद्देश्य नहीं है। सरकार जो नये नये कर लगा रही है, उससे रुपया लगाने वाले को भारी नुकसान होगा। यह इसी से मालूम हो सकता है कि अगस्त १९५६ में औद्योगिक क्षेत्र में डिविडेण्ड का सूचक अंक १२७.४ था, वह जनवरी ५८ में गिरकर ९९.१ तक आ गया है। प्रिफरैंस शेयरों का भी सूचक अंक इसी तरह गिरा है। यह अगस्त ५६ में ८५.२ था, किन्तु अब ७१.४ तक गिर गया है। हम ऐसी स्थिति पर पहुँच गये हैं, जब नये नये बढ़े हुए कर देश के आर्थिक विकास के लिए आवश्यक प्रेरणा और उत्तरदायित्व को ही समाप्त

करने लगे हैं। यह ठीक है कि समस्त देश की जनता को विकास के लिए प्रयत्न करना चाहिए और धन जुटाना चाहिए, किन्तु इस प्रश्न पर वास्तविक मतभेद हो सकता है कि क्या ये नये कर, जो जारी रखे जा रहे हैं, इस रूप में लगाये भी जाने चाहिए थे और क्या देश की अर्थ-व्यवस्था को उन्नत करने में ये कर कुछ भी सहायक हो सकते हैं ?

आर्थिक नीति

इस संबंध में मैं कुछ बातों की ओर सरकार का ध्यान खींचना चाहता हूं। पहली बात यह है कि रुपये के निवेशन (इनवैस्टमैण्ट) को बढ़ाने के लिए हमारी आर्थिक नीति में कुछ आवश्यक परिवर्तन करने चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि आर्थिक उन्नति के लिए सरकार बहुत कुछ कर सकती है और सरकार की यह सहायता उतनी ही आवश्यक है जितनी विदेशों से सहायता। दूसरी तरफ जनता की ओर से स्वयं मुख्य रूप से प्रयत्न होना चाहिए। यह एक महत्वपूर्ण बात है। यदि सहयोग से काम किया जाय, तो आधुनिक आर्थिक विकास अच्छे परिणाम ला सकता है, परन्तु आधुनिक शासन का भी कर्तव्य है कि वह बिना सत्ता का प्रदर्शन किये और बिना तरह-तरह के कानून जारी किये देश के विकास के निमित्त जनता की अभिलाषाओं और शक्ति के लिए आवश्यक सुविधाएं पैदा कर दे। कार्यक्रम की सफलता के लिए दूसरी आवश्यक शर्त यह है कि हमें यह ज्ञान रहना चाहिए कि आर्थिक उन्नति दीर्घकालीन प्रक्रिया है। इस ज्ञान से हमें शक्ति प्राप्त होगी, परन्तु यह जरूरी है कि किसी भी क्षेत्र से प्राप्त सहायता या उसके औचित्य को प्रति वर्ष विचार-विवाद का विषय न बना कर हम दीर्घकालीन सहायता के रूप में देखें।

आज सरकार के नये-नये करों के द्वारा अधिकाधिक नागरिक करों के जाल में फंस रहे हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि करदाता नागरिक यह भी आश्वासन चाहे कि शासक उनके व्यय में अधिकतम सतर्कता रखेंगे। हमारे जैसे विकासशील देश में जहां हम आर्थिक योजनाओं की पूर्ति के लक्ष्य से बंधे हुए हैं, यह स्वाभाविक है कि सरकारी खर्च बढ़ते जावें। परन्तु विकास व्ययों में भी फजूलखर्ची को रोकने का प्रयत्न करना चाहिए। सरकार को इधर बहुत अधिक ध्यान देना चाहिए। सरकार के सभी विभागों का यह कर्तव्य है कि वे पूर्ण उत्तरदायित्व तथा अनुशासन की भावना से काम करें।

राष्ट्रीयकरण की नीति

आज देश में जनता का जीवन-स्तर ऊंचा करना है। उसे आजीविका देनी है, राष्ट्रीय आय बढ़ानी है, और आयका अधिक अच्छा वितरण करना है। देश का व्यापारी समाज भी इन उद्देश्यों के साथ है; परन्तु मुझे भय है कि इन उद्देश्यों को मंगलकारी राज्य या 'समाजवादी पद्धति के समाज' के जिस रूप में प्रकट किया जा रहा है, उससे एक भावुकता की प्रेरणा मिलती है तो दूसरी ओर उसमें कठोरता या अनुदारता की भावना भी आ जाती है, जो जीवन को सरल गति से नहीं चलने देती। आज यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि इन उद्देश्यों को व्यापार व उद्योग के अधिकाधिक राष्ट्रीयकरण द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यह सब जानते हैं कि ब्रिटेन में सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति के साधनों व उपायों पर पुनर्विचार किया गया है। देश में जातपात और वर्ग चेतना या घृणा को फैलाने वाली भावना को जब तक भड़काया जायगा, जैसा कि देश के कुछ भागों में हो रहा है, तब तक समाजवादी समाज की बात करने का कोई अर्थ नहीं है। फिर अब इङ्गलैंड में राष्ट्रीयकरण को व्यापक करने का घोर विरोध किया जा रहा है। इसका एक कारण यह है कि राष्ट्रीयकृत उद्योगों की व्यवस्था संतोषजनक नहीं हुई। जिन उद्योगों पर सरकार ने एकाधिकार कर लिया, वहां प्रबन्धकर्त्ताओं को अपनी प्रतिभा या कुशलता दिखाने का वह आकर्षण ही नहीं रहा, जो निजी उद्योग में था। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री क्रासलैण्ड ने इस बात पर विशेष जोर दिया है कि सरकारी उद्योग पूंजी के निर्माण के लिए रुपया जुटाने में असफल सिद्ध हुए और निजी उद्योग से इस प्रयत्न में बहुत पीछे रहे।

जीवन बीमा निगम : नये सुझाव

मैं यह विचार प्रकट करने का साहस करना चाहता हूं कि भारत में भी समाजवादी समाज पर हमें खूब विचार करना चाहिए। इस सम्बन्ध में जीवन बीमा निगम का उल्लेख अप्रासांगिक न होगा। आज मैं बीमा उद्योग के पुनः अराष्ट्रीयकरण तक का प्रस्ताव नहीं करना चाहता, क्योंकि

क्राफ्ट
एम० जी०
पेपर
११ ग्राम और ज्यादा वज़न के
प्रामाणिक साइज़ों और रीलों में प्राप्य
वर्तमान उत्पादन :
बोर्ड : डूप्लेक्स, सफेद और रंगीन; पयरफ़िनिशड् आर्ट; एनामैल; ब्रिस्टल; प्रेस पान; मिल;
कागज़ : सफेद पोस्टर; डीलुक्स पोस्टर; सल्फाइट, रिब्ड, सफेद और रंगीन; टी यल्लो; एम० जी० टी यल्लो; एम० जी० ब्लू कैन्डल; एम० जी० मनिला; व्हाइट प्रिंटिंग, हार्ड साईज्ड, उत्तम क्वालिटी; क्रीम लेड, उत्तम क्वालिटी; सफेद बैंक और बौंड; आफसेट प्रिंटिंग; एकाउंट बुक।
साहू जैन
इंडस्ट्रीज़
रोहतास इंडस्ट्रीज लिमिटेड
डालमियानगर, बिहार

अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल

(१९५७ पर एक आलोचनात्मक दृष्टि)

कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल का ३१ वां अधिवेशन इन दिनों में हो रहा है। यह संस्था देश की आर्थिक, व्यापारिक और औद्योगिक विकास में विशेष सहयोग देती रही है। व्यापारिक और औद्योगिक समस्याओं पर राष्ट्र का ध्यान खींचना और उस के लिए मार्ग-दर्शन इस की नीति रही है। विदेशी शासन के समय इसका मुख्य कार्य भारत की आर्थिक हितों की रक्षा के लिए संघर्ष करना था। औद्योगिक, व्यापारिक और आर्थिक क्षेत्र का कोई ऐसा प्रश्न नहीं था, जिस की ओर फेडरेशन का ध्यान न गया हो।

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद भी इस का कार्य और महत्व कम नहीं हुआ। शासन की विकास योजनाओं के साथ सहयोग देते हुए भी आर्थिक समस्याओं पर राष्ट्र का मार्ग दर्शन इस का महत्वपूर्ण कार्य रहा है। यह ठीक है कि मण्डल अपने सदस्यों और निजी उद्योग के हितों की रक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्न कर रहा है, और इस के लिए उसे समय-समय पर सरकार की आलोचना भी करनी पड़ती है, फिर भी मण्डल की प्रवृत्ति हमेशा सहयोग और रचनात्मक आलोचना की ओर रही है। १९५५ में होने वाली विशाल औद्योगिक प्रदर्शिनी मण्डल की शानदार सफलता थी। उसने राष्ट्र की औद्योगिक प्रवृत्तियों और समस्याओं पर संसार भर का ध्यान खींचा है।

गत वर्ष १९५७ में भी मंडल ने अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। इस वर्ष देश की सबसे बड़ी समस्या विदेशी मुद्रा की दुर्लभता रही है। मंडल ने इस सम्बन्ध में न केवल सरकार को बहुमूल्य उपयोगी सुझाव दिए, किन्तु श्री घनश्याम दास बिड़ला के नेतृत्व में एक प्रभावशाली शिष्ट मंडल विदेशों में भेजा। इसने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका कनाडा, इग्लैंड, फ्रांस और जर्मनी जाकर वहां के नेताओं, बैंकरों, पत्र प्रतिनिधियों, व्यापारियों, उद्योगपतियों और सरकारी अफसरों से संपर्क स्थापित किया, तथा भारत की आर्थिक नीति या स्थिति के सम्बन्ध में उन के सन्देहों को दूर किया। इस ने वह सौहार्द्र पूर्ण वातावरण उत्पन्न कर दिया, जिस से भारत के वित्तमंत्री को विदेशों से सहायता लेने में बहुत आसानी हो गई। इसने अपनी महत्वपूर्ण यात्रा के बाद भारत की आर्थिक नीति के सम्बन्ध में जो सूचनात्मक सुझाव दिये, वे अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

मंडल ने जर्मन सरकार के निमंत्रण पर श्री रामगोपाल अग्रवाल व लाला भरतराम का एक प्रतिनिधि मंडल वहां भेजा। इस ने जर्मनी और भारत में परस्पर व्यापारिक संबन्ध बढ़ाने के लिए अनेक उपयोगी सुझाव दिए।

इस वर्ष मंडल ने एक दूसरा महत्वपूर्ण कार्य व्यवस्थित रूप से किया। विभिन्न उद्योगों के सामने आनेवाली महत्वपूर्ण समस्याओं पर विविध सम्मेलन किये गये, जिनमें सरकार और विभिन्न उद्योगों के प्रतिनिधि निमंत्रित करके विविध समस्याओं पर विचार किया गया। इन में पहला सम्मेलन १ जुलाई को श्री चिनाय की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें देश के प्रधान वस्त्रोद्योग के बर्तमान संकट पर विचार किया गया। वस्त्र उत्पादन, उत्पादन कर, बिक्रीकर, निर्यात, मशीनों के आधुनिकीरण तथा औद्योगिक शांति आदि विविध प्रश्नों पर विचार भी किया गया। इस

राजनैतिक दृष्टि से यह संभव न होगा। परन्तु मैं कम से कम जीवन बीमा के केन्द्रीय एकाधिकार का विरोध अवश्य करना चाहता हूँ। मेरी सम्मति में देश के विभिन्न क्षेत्रों में जीवन बीमा उद्योग के लिए छः निगम बना देने चाहिए, जिनमें से कुछ का प्रबन्ध निजी क्षेत्र के हाथ में सौंप दिया जाना चाहिए। मैं यह सुझाव अत्यन्त संकोच के साथ रख रहा हूं। अभी तक छागला जांच कमीशन से उड़ी धूल शान्त नहीं हुई है, परन्तु मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि निजी उद्योग इस दुःखजनक घटना पर प्रसन्न नहीं है। इस सम्बन्ध में वातावरण जिस तरह खराब हुआ, उसमें अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल या उसके सदस्यों का कोई हाथ नहीं है।❀

❀ अ० भा० उद्योग व्यापार मण्डल के ३१ वें अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण से।

सम्मेलन में सारे देश से २०० प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे।

इस दिशा में दूसरा सम्मेलन बम्बई में बिक्री कर के सम्बन्ध में किया गया। चार सौ से अधिक व्यापारिक संस्थाओं के १,००० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। बिक्री कर की दर, वसूली, तथा प्रबन्ध-सम्बन्धी सुझाव सम्मेलन ने दिया।

तीसरा सम्मेलन दिल्ली में यातायात और परिवहन सम्बन्धी समस्याओं पर विचार करने के लिए किया गया। इस के अनेक सुझावों पर सरकार ने सहानुभूतिपूर्वक विचार किया है और कुछ को स्वीकार भी कर लिया है। दो सम्मेलन तो इस वर्ष (१९५८) जनवरी और फरवरी में हुए। इनमें क्रमशः इंजनीरिंग उद्योगों तथा बचत निवेश (Investment) की समस्याओं पर विचार किया गया। दोनों में अपने २ प्रश्न के विविध पहलुओं पर विचार किया गया और अनेक सुझाव दिये गये। आज देश में रु० का बाजार बहुत तंग हो रहा है। पूंजी का निर्माण रुक गया है। लोगों के पास बचत करने के लिए पैसा ही नहीं है। इसलिए इन सुझावों का विशेष महत्व था।

इन सम्मेलनों के अतिरिक्त भी बीसियों ऐसे प्रश्न हैं—जिन की ओर मण्डल देश और सरकार का ध्यान खींचता रहा। भारत सरकार का बजट प्रस्ताव, बीमा कम्पनियों को मुआवजा, बीमा संशोधन बिल, पंचवर्षीय योजनाओं में लघु उद्योग, विदेश पूंजी, खाद्य संकट, आदि विविध प्रश्नों पर मण्डल ने शासन को परामर्श दिये हैं।

विविध देशों में होने वाले आर्थिक और औद्योगिक सम्मेलनों में मण्डल के प्रतिनिधि समय २ पर जाते रहे हैं। विदेशों से आने वाले व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डलों से सम्पर्क स्थापित करने और उन्हें भारतीय दृष्टिकोण समझाने का प्रयत्न भी मण्डल करता रहा है।

मण्डल के अपने जीवन में एक और महत्वपूर्ण घटना इस वर्ष यह हो रही है कि उस का अपना शानदार भवन बनकर तय्यार हो गया है, जिसका उद्घाटन भारत के प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने १० मार्च १९५८ को किया है।

—

भारत में करों का भारी बोझ

आजकल संसद में नये बजट और कर नीति पर विचार हो रहा है, यह लेख यद्यपि एक पक्ष को प्रकट करता है, तथापि यह तुलनात्मक परिचय संसद सदस्यों को विचारणीय सामग्री देगा।

एसोसियेशन आफ ट्रेड एण्ड इण्डस्ट्री ने एक पुस्तिका प्रकाशित कर देश के शासकों का ध्यान भारत में बढ़े हुए कर दरों की ओर खींचा है। इसकी मुख्य युक्तियां निम्नलिखित हैं—(१) देशभक्ति और त्याग की भावुकता जनता में प्रेरणा उत्पन्न करने में चिरकाल तक सहायक नहीं होती है, वास्तविक प्रेरणा लाभ की होती है। इसलिए करों के दर इतने नहीं होने चाहिए, जिससे उद्योग में विनियोग की प्रेरणा न हो। (२) योजना आयोग ने नये करों द्वारा ४५ करोड़ रु० का लक्ष्य नियत किया था, किन्तु गत वर्ष नये करों से ६० करोड़ रु० खींचने का प्रयत्न किया गया है। इससे पहले श्री देशमुख ने भी ३० करोड़ रुपये के नये कर लगा दिये थे। (३) विकास-भिन्न कार्यों पर सरकार खर्च निरन्तर बढ़ाती जा रही है। दूसरी योजना के पहले दो वर्षों में ही १६५ करोड़ रु० का खर्च बढ़ गया है, जबकि सरकार ने १५७ करोड़ रु० के अतिरिक्त कर लगाये हैं। इस तरह सरकार जनता के खून की कमाई विकास-भिन्न कार्यों पर खर्च करती जा रही है। (४) निजी क्षेत्र भारी कठिनता में से गुजर रहा है। उसे अपने विकास के लिए २४०० करोड़ रु० चाहिए, ११५० करोड़ रु० अतिरिक्त करों के लिए और १२०० करोड़ रु० सरकार को कर्ज देने के लिए। (५) भारत में विदेशों की अपेक्षा आय व निगम कर का दर बहुत अधिक है। इंगलैण्ड व राष्ट्र मंडल के अन्य देश पूंजीगत लाभ और सम्पत्ति पर कर नहीं लगाते। सं० रा० अमेरिका में सम्पत्ति कर नहीं है। पश्चिमी जर्मनी आदि में सम्पत्ति कर है, किन्तु उस सम्पत्ति में उपार्जित आय पर सर चार्ज नहीं है। पश्चिमी जर्मनी में ८० प्रतिशत अधिकतम दर है, किन्तु भारत में सम्पत्ति व आयकर मिलाकर १०० प्रतिशत से भी बढ़ सकता है। नीचे की दो तालिकाओं से यह स्पष्ट हो जायगा कि भारत में अन्य देशों की अपेक्षा कर बहुत अधिक है:—

प्रतिशत निगम कर (आय, डिविडेण्ट व सम्पत्ति)

आय रु०	२५०००	५००००	१ लाख	५ लाख	१० लाख
भारत×	५१.१	५६.	५६.०	५६.०	५६.०
इंगलैंड	५७.७	५७.७	५७.७	५७.७	५७.७
पश्चिमी जर्मनी×	४०.८	४१.४	४१.४	४१.६	४१.६
लंका	३६.०	३६.०	४८.२	४६.०	४६.०
जापान	३७.४	३८.७	३९.२	३९.९	३९.९
सं० रा० अमेरिका	३०.०	३०.६	३०.६	४७.७	५०.३
कनाडा	१८.०	१८.०	१८.१	३६.६	४२.३

× इन दो देशों में सम्पत्ति कर लगता है।

दो सन्तान वाले विवाहित व्यक्ति पर आय कर का प्रतिशत

आय	भारत	इंगलैण्ड	लंका	अमेरिका	प० जर्मनी,	जापान	कनाडा
५०००	०.८४	......	......	......	......	......	......
१०,०००	४.२८	२.७४	२.००	—	६.६६	१०.२६	,,
५०,०००	३४.१६	३३.१६	२५.००	१८.८४	३०.६६	२६.११	१५.६८
१,००,०००	५६.७६	४८.९७	४३.५०	२७.५८	४०.४२	३७.५३	२६.६२
५,००,०००	६२.४८	८२.६६	७६.४०	५६.४८	६२.६१	५४.४५	५०.६५
१०,००,०००	१०३.५८	८६.७०	८०.७०	७४.११	७०.७५	६१.४०	६०.७०

समाजवाद या पूंजीवाद ?

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

समाजवादियो और पू जीवादियों (सिद्धान्ततः व्यक्तिवादियो) के अन्तिम उद्देश्य मे कोई अन्तर नहीं। दोनो ही व्यक्ति को विकास के लिए अधिक से अधिक अवसर देना चाहते है। किन्तु व्यक्तिवादी का विकास बहिर्गत हस्तक्षेपो के अभाव मे ही हो सकता है। समाजवादियों का विश्वास है कि यह तभी संभव है जब सामाजिक व राजनीतिक संघो के रूप मे व्यक्ति सघबद्ध होकर परस्पर सहयोगी के रूप मे एक दूसरे को जीवन की पूर्णता तथा स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिये प्रयत्न करें। व्यक्तिवादियो के सिद्धान्त की आधारभूत त्रुटियो की चर्चा हम सम्पदा के गताक मे कर चुके हैं। उन्होने व्यक्ति के वैयक्तिक विकास को महत्व दिया, किन्तु हेत्वाभासिक रूप से एक ऐसी समाज-व्यवस्था की वकालत की, जिसमे भौतिक अभावों की चोट से मनुष्य का व्यक्तित्व उठ नहीं सकता था। फिजिओक्रेट, आदमस्मिथ, मिल, स्पेन्सर, बेन्थम, जर्मनी के कान्ट, फिश्ते आदि आशावादी थे और मानवीय हस्तक्षेप के अभाव मे भी वस्तुओं के सुन्दर स्वरूप ग्रहण कर लेने की क्षमता मे विश्वास करते थे। सामाजिक विकास के पक्ष में वे डारविन महाशय के विकासवाद के सिद्धान्त मे विश्वास करते थे। उनका तर्क था कि चूंकि मनुष्य का जीवन प्रारम्भ से ही सघर्षशील है, स्वस्थ समाज का मूलभूत आधार केवल व्यक्तिगत-स्पर्द्धा ही तैयार कर सकती है, जिसकी क्रियाशीलता से अयोग्य पुरुषो का अस्तित्व स्वय मिट जायेगा तथा केवल योग्य और स्वस्थ पुरुष ही समाज में बचेंगे।

इसके विपरीत समाजवादियों का विश्वास है कि संघर्ष अनिवार्य नहीं। मानव जीवन के अनुचित सघर्षों को हटाना आवश्यक है, क्योकि सभ्यता और विकास के साधन तथा द्योतक सघर्ष और व्यक्तिगत प्रतिस्पर्द्धा नहीं अपितु सामाजिक मेल और सौहार्द है। वास्तव में व्यक्ति-सघर्ष से पृथक मानवीय जीवन के कुछ अधिक भद्र उद्देश्य हैं जिनकी पूर्ति मानवता बर्बरता से छुटकारा पाकर ही कर सकती है। समाज का आर्थिक व राजनीतिक शरीर एक जीवन्त शरीर (living organism) की तरह है। इसके सभी अंगों का समानुपातिक विकास ही अपेक्षित है। यदि इसके किसी एक अंग (मनुष्य अथवा मनुष्यो के एक वर्ग को) अनियंत्रित वृद्धि का अवसर देते हैं, तो इसका कुप्रभाव दूसरे अंगों की वृद्धि पर पडेगा तथा शरीर के सम्पूर्ण ढांचे को कुरूप कर देगा।

इस तरह पूंजीवाद और समाजवाद दोनो के अपने अलग-अलग दर्शन हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में पूंजी कुछ लोगो के हाथ मे होती है। मजदूर वर्ग थोड़े से उत्पादक साधनो पर स्वामित्व रखने वाले धनी वर्ग की दया पर जीता है और निरन्तर शोषित होता है। उसे अपनी उत्पादकता का उचित अंश नहीं प्राप्त होता तथा अतिरिक्त अर्थ (Surplus value) के रूप में उसका अधिकांश पूंजीपतियो के द्वारा ले लिया जाता है। काम की प्रकृति, अवस्था, स्थिति मजदूरी सब कुछ पूंजीपति अपने हित की दृष्टि से निश्चित करता है और संघर्ष-शक्ति की दुर्बलता के कारण मजदूर को सब स्वीकार करने पड़ते हैं। यद्यपि यह ठीक है कि आजकल कम्पनी-कानूनों, फैक्ट्री कानूनों, व्यापारिक विधियों तथा मजदूर कानूनो के द्वारा सरकार नाना प्रकार से पूंजीवाद की उत्पीडक-क्रिया पद्धति को नियंत्रित करने की चेष्टा करती है, फिर भी सत्य यह है कि पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था कुछ सम्पन्न धनियों के हित में ही संगठित होती है।

पूंजीवाद का दूसरा दोष यह है कि यह विषमता (unequality) और अन्याय (injustice) पर आधारित है।

तृतीयतः पूंजीवाद के व्यक्तिगत स्वातंत्र्य तथा प्रतिस्पर्द्धा का परिणाम यह होता है कि कमजोर तथा छोटे-छोटे प्रतिस्पर्द्धी निरन्तर मिटते जाते हैं और आर्थिक सम्पदा व शक्ति कम से कम लोगों के हाथ में केन्द्रित होती जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि धनी और भी धनी तथा गरीब और भी गरीब बनते हैं। इसके अतिरिक्त एक ही प्रकार का कार्य व उद्योग कई मनुष्यों तथा संस्थाओं के द्वारा होने के कारण श्रम की अनार्थिक द्विरावृत्ति (Duplication) होती है और प्रतिस्पर्द्धी विज्ञापनों आदि पर

राष्ट्रीय सम्पदा का अनुत्पादक व्यय होता है।

चतुर्थतः पूंजीवादी अर्थव्यवस्था लाभ की दृष्टि से संचालित होती है। अतः केवल उन वस्तुओं का उत्पादन होता है, जो बाजार में बिक सकती हैं और उत्पादन को लाभ प्रदान कर सकती हैं। अतः स्वभावतः पूंजीवाद में उन वस्तुओं का उत्पादन नहीं होता, जिन्हें क्रय शक्ति के अभाव में दीन वर्ग नहीं खरीदता, किन्तु जीवनोपयोगी अनुभव करता है। वास्तव में उत्पादन का आधार सामाजिक उपयोगिता होनी चाहिये, व्यक्तिगत लाभ कदापि नहीं।

इन सबका निराकरण कैसे हो? कहा जाता है कि उत्पादन और वितरण की क्रिया के समाजीकरण (Socialization) के द्वारा वर्तमान समाज की आर्थिक विषमताओं तथा अन्याय का उन्मूलन किया जा सकता है। उत्पादन के सभी साधनों (मानवीय श्रम को छोड़कर) पर राज्य का अधिकार हो और समस्त समाज की उपयोगिता और आर्थिक कल्याण की दृष्टि से राज्य उद्योगों का संचालन करे। इससे मजदूर-वर्ग का शोषण रुक जायेगा, आर्थिक शक्तियों का केन्द्रीकरण समाप्त हो जायेगा तथा अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए सब को समान अवसर प्राप्त होगा और समाज के सभी अंगों का आनुपातिक विकास संभव हो सकेगा।

समाजवाद के दोष

किन्तु समाजवाद का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह राज्य की क्रियाओं के निरन्तर विस्तार पर विश्वास करता है। इसका परिणाम यह होगा कि व्यक्तियों के हाथ से निकल कर उद्योगों तथा उत्पादन के साधनों का स्वामित्व राज्य में केन्द्रित होजायेगा और व्यक्तिगत पूंजीवाद (Individual Capitalism) के स्थान पर राज्य पूंजीवाद (State Capitalism) की प्रतिष्ठा होगी, जिसमें रूस की तरह व्यक्ति को अपने कुछ उन आधारभूत प्राकृतिक अधिकारों से वंचित होना पड़ेगा, जो पेट की रोटी प्राप्त करने की आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण हैं।

द्वितीयतः कहा यह भी जाता है कि सामाजिक प्रतिष्ठा, यश और मान आदि की सामाजिक भावना से भले ही कुछ लोग परिश्रम-साध्य कार्यों से न हटें, पर लाभ का प्रोत्साहन नष्ट हो जाने के बाद समाजवादी समाज में व्यक्ति की कार्य कुशलता और प्रतिभा प्रयोग का एक बहुत बड़ा प्रभावोत्पादक प्रोत्साहन मिट जायेगा और तब राज्य के स्वामित्व में संचालित होने वाले कार्य पूंजीवादी अर्थतंत्र जैसी कुशलता, ईमानदारी और मेहनत से चल सकेंगे इसमें सन्देह है। समाजवाद का यह कटु अनुभव है कि उपर्युक्त सन्देह निराधार नहीं हैं।

समाजवाद का तीसरा दोष नौकरशाही (Bureaucracy) तथा फाइलबाजी (Red Tapism) है। उद्योगों का स्वामित्व राज्य में होता है और उसकी इच्छाओं का प्रकाश सरकार के द्वारा होता है। यह सरकार (मंत्रि-मंडलों तथा सरकारी नौकरों का समुदाय) अपनी औद्योगिक नीतियों तथा कार्यों के लिये पार्लियामेंट तथा विधायिका सभाओं जैसी जनता की प्रतिनिधि सभाओं के प्रति उत्तरदायी होती है। अतः किसी भी आर्थिक व औद्योगिक नीति का तब तक निर्धारण नहीं होता, जब तक जनता की प्रतिनिधि सभा उसे स्वीकृत न करे। किन्तु इस प्रकार आर्थिक नीतियों को बिल के रूप में प्रतिनिधि सभाओं में उपस्थित करने, उस पर बहस-बहसी करने और पारित करने में काफी विलम्ब होता है। व्यवसाय तुरन्त निर्णय चाहता है। परन्तु सरकारी नीति का द्रुत निर्धारण नहीं होता। इसके अतिरिक्त सरकार का ढांचा स्थायी-अस्थायी अफ्सरों के कुतुब मिनार की तरह होता है। नीचे के अफसरों को कोई भी महत्वपूर्ण कदम उठाने के पूर्व अपने ऊपर के पदाधिकारी (अफ्सर) की स्वीकृति लेनी होती है। इस प्रकार आवश्यक पत्रादि नीचे से ऊपर की अन्तिम मंजिल वाले अफ्सर के यहां पहुँचने और स्वीकृति लेकर अपनी दीर्घसूत्री गति से वापस लौटने में काफी समय खा जाते हैं। नीति निर्धारण की यह दीर्घसूत्रता समाजवाद की बहुत बड़ी दुर्बलता है और उन कारणों में से एक है जिन कारणों से समाजवादी उद्योगों का प्रबन्ध अपेक्षित कार्यकुशलता और तत्परता से नहीं हो पाता।

इस तरह स्पष्ट है कि समाजवाद और पूंजीवाद दोनों ही में दोष गुण हैं। और उनका चुनाव विवेकपूर्ण निर्णय के आधार पर ही हो सकता है। पूंजीवाद और समाजवाद वस्तुतः स्वयं सिद्धि न होकर साधन मात्र हैं। उनमें से किसी के भी प्रति हमारा पूर्व निश्चित निराधार अनुराग

होना अवैज्ञानिक है। हमारी सिद्धि है अपनी विभिन्न समस्याओं का सही सही और अधिकतम योग्यतापूर्ण समाधान। इनमें से जिस कार्य पद्धति के द्वारा हमारी सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं का श्रेष्ठतर और पूर्णतर समाधान हो सकेगा, वही हमारा स्वीकार्य 'वाद' होगा। मुख्यतः समाज के सामने तीन विकट समस्यायें हैं:—

(१) उत्पादन की समस्या —उत्पादन की समस्या यह है कि किस प्रकार सीमित उत्पादन साधनों को विभिन्न उद्योगों में नियोजित किया जाय ताकि न्यूनतम लागत पर उत्पादन की अधिकतम वृद्धि हो और उसके द्वारा प्रतिदिन एक लाख बीस हजार की गति से बढ़ती हुई विश्व की जनसंख्या को अधिक उन्नत जीवन स्तर प्रदान किया जा सके।

(२) वितरण की समस्या -हमारी दूसरी समस्या वितरण की है। उत्पादन के विभिन्न साधनों (भूमि, श्रम, पूंजी, संगठन और साहस) को पुरस्कार के रूप में राष्ट्रीय आय का किस प्रकार अंश प्रदान किया जाय, जिससे मानव समाज का हित बढ़े। राष्ट्रीय आय का वर्तमान वितरण विषम और अन्याय्य है राष्ट्रीय आय के उस वितरण प्रणाली का जो सामाजिक न्याय, औचित्य तथा समता के सिद्धान्त से संगत जचे।

(३) प्रबन्ध या संगठन की समस्या —प्रबन्ध की समस्या औद्योगिक शासन पद्धति की समस्या है। किस प्रकार उद्योगों को अधिकृत तथा नियंत्रित किया जाय, ताकि विभिन्न उद्योगों में काम करने वाले वे सभी स्त्री व पुरुष मजदूर केवल मजदूरी के ही अधिकारी न रह जांय, अपितु आज के दासत्व व परवशता की स्थिति से ऊपर उठकर समाज में अपना एक गौरव-पूर्ण-स्वतन्त्र स्थान बना सके। दूसरे शब्दोंमें यह समस्या 'औद्योगिक प्रजातन्त्र' की स्थापना की समस्या है।

पूंजीवाद या समाजवाद जिस किसी पद्धति से भी हमारी इन आधारभूत समस्याओं का संतोषपूर्ण समाधान सम्भव होगा, वही हमें ग्राह्य होगा।

हमें विभिन्न विषयों की चर्चा इसी दृष्टि से करनी चाहिए कि उनसे उपयुक्त समस्याओं पर प्रकाश पड़ सके। किन्तु इससे पहले यह देख लेना चाहिए कि क्या समाजवाद का अर्थ है राष्ट्रीयकरण। इस प्रश्न की चर्चा आगामी अंक में।

१९५८-५९ का बजट : नये कर ; २७ करोड़ का घाटा नासिक प्रैस का आश्रय

नये करों का प्रस्ताव

वित्तमंत्री के रूप में नेहरूजी ने लोकसभा में बजट उपस्थित करते हुए जो नए प्रस्ताव रखे हैं, वे इस प्रकार हैं—

दान कर—दस हजार रुपए तक दानों पर कोई कर नहीं लगेगा। केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों और धर्मार्थ संस्थाओं को दान देने पर कर नहीं लगेगा। विवाह के अवसर पर आश्रित स्त्री को दस हजार तक दान पर कर नहीं लगेगा। अपनी पत्नी को एक लाख रुपये के दान पर कर नहीं लगेगा। दान कर की दरें ४ प्रतिशत से ४० प्रतिशत तक है। इससे ३ करोड़ रुपये की आय का अनुमान है।

+ + + +

मृत सम्पत्ति शुल्क—सीमा की छूट १ लाख से घटाकर ५० हजार कर दी गई है। इससे आय में ५० लाख रुपए की वृद्धि की संभावना है।

+ + + +

जहाजों के लिए अधिक विकास पर छूट दी गई है।

+ + + +

सीमेंट पर शुल्क—सीमेंट पर उत्पादन-कर के शुल्क की दर को २० रु० प्रति टन से बढ़ाकर २४ प्रति टन कर दिया गया, लेकिन स्टेट ट्रेडिंग कार्पोरेशन द्वारा जो अधिभार लिया जाता है, वह वापस ले लिया जाएगा। इससे आय में २ करोड़ २४ लाख रुपए की वृद्धि का अनुमान है।

सूती कपड़ा तैयार करने वाले बिजली-चालित करघों को अभी जो रियायतें हैं वे १०० से अधिक करघों वाले संस्थानों को अब नहीं मिलेंगी। जिन संस्थानों में २५ से १०० तक करघे हैं उनके लिए सम्मिलित दरें दो चरणों में बढ़ाई जा रही हैं। इससे आय में ८३ लाख रुपये की वृद्धि होगी।

वनस्पति—वनस्पति पर शुल्क की दर प्रत्येक कारखाने पर पहले ३००० टन की निकासी के लिए घटाई गयी है। इससे २४ लाख रुपए की कमी होगी।
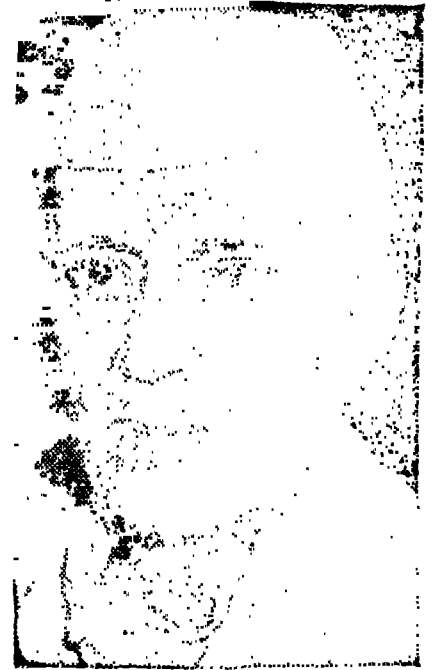
वित्तमंत्री पं० नेहरु

प्रस्तावित नए करों से केन्द्रीय सरकार की आय में ६ करोड़ ५७ लाख रुपए की वृद्धि होने का अनुमान है, लेकिन इसमें से ५० लाख रुपए राज्य सरकारों को चले जाएंगे और वनस्पति के उत्पादन शुल्क में कमी करने से २४ लाख रुपये का घाटा होगा। इस तरह से अतिरिक्त शुद्ध आय ५ करोड़ ८३ लाख रुपया रह जाने का अनुमान है।

आज की कर व्यवस्था के अनुसार सन १९५८-५९ के बजट में ३२ करोड़ ८५ लाख रुपये का घाटा होने का अनुमान है, लेकिन नए कर प्रस्तावों के पश्चात् वह २७ करोड़ २ लाख रुपए रह जाएगा।

सबसे अधिक आय २६० करोड़ ४५ लाख रुपया उत्पादन-शुल्कों से होने का अनुमान है और आय कर से २१७ करोड़, सीमा शुल्क से १७० करोड़, रेलों से ४६ करोड़ ५८ लाख आय होने का अनुमान है। नए कर—सम्पत्ति कर से १२ करोड़, ५० लाख रु० और व्यय-कर से ३ करोड़ रुपये की आय होने का अनुमान है।

७६६ करोड़ रुपए के अनुमानित व्यय में से २७८

बजट एक दृष्टि में

राजस्व		(लाख रुपयों में)	
	बजट	सशोधित	बजट
	१६५७-५८	१६५८-५८	१६५८-५६
सीमा शुल्क	१६७,६०	१८३,००	१७०,००
केन्द्रीय उत्पादन-शुल्क	२५६,५७	२६४,५५	३०१,६३ २,८३
निगम कर	५०,००	५०,५०	५५,५०
निगम कर के अतिरिक्त- आय पर कर	८६,६२	८२,४७	८४,५३
मृत सम्पत्ति-शुल्क	६	१२	१२
सम्पत्ति-शुल्क	१२,५०	६,००	१२,५०
रेल किराये पर कर		३	७
व्यय पर कर			३,००
दान कर			३,००
अफीम	२,५०	३,२८	२,८७
ब्याज	४,६०	६,१५	६,६०
नगर प्रशासन	४३,२१	५६,७६	४४,२४
चलमुद्रा और टकसाल	३६,०२	३६ ८४	३६,६२
नागर निर्माण कार्य	२,६५	२,७८	२,८७
राजस्व के अन्य स्रोत	२७,६५	२१,५६	३२,६३
डाक और तार-सामान्य- राजस्व में शुद्ध अशदान	३,६५	१,२३	२,३४
रेलें-सामान्य राजस्व मे शुद्ध अशदान	६,६७	६,२३	७,०४
जोड़-राजस्व	७०८,०३	७२४,६३	७६३,१६) ५,८३)

व्यय			
राजस्व से प्रत्यक्ष व्यय	४६,००	६२,६७	६४,४५
सिंचाई	१०	१०	१३
ऋण व्यवस्था	३५,००	३७,४४	४०,००
नागर शासन	१६१,०२	१६४,७१	२००,४४
चलमुद्रा और टकसाल	६,७२	७,३५	८,५०
नागर निर्माण कार्य और विविध सार्वजनिक- सुधार-कार्य	१५,६३	१६,२३	१८,७१
पेंशनें	६,१७	६,३६	६,४०
विविध विस्थापितो पर व्यय	२२,५०	२२,३३	२०,४८
अन्य व्यय	४४,०६	४२,६३	५०,३३
राज्यों को अनुदान आदि	२५,२३	४७,२६	४७,०३
असाधारण मुद्रा	२५,२३	४७,२६	४७,०३
असाधारण मदें	२३,८६	१३,१५	२८,४०
रक्षा सेवाएं (शुद्ध)	२५२,७०	२६६,०५	२७८,१४
जोड़—व्यय	६७२,२६	७१६,५८	७६६,०१
अधिशेष (|)	| ३५,७४	| ५,०५	—२७,०२
कमी (—)			

करोड़ १४ लाख रुपया रक्षा मे व्यय होने का अनुमान है। चालू वित्तीय वर्ष की अपेक्षा आगामी वित्तीय वर्ष में रक्षा मे १२ करोड ६ लाख रु० व्यय अधिक होने का अनुमान है। १६५८ ५६ में निर्माण कार्यों, शिक्षा, चिकित्सा सामुदायिक विकास योजना के लिए चालू वर्ष की अपेक्षा बहुत अधिक रकम रखी गई है। नागाओ के नव निर्मित प्रदेश के लिए ३ करोड़ ६४ लाख रुपया रखा गया है।

चालू वित्तीय वर्ष मे ७०८ करोड़ ३ लाख रुपये की आय, ६७२ करोड २८ लाख रुपये का व्यय और ३५ करोड ७४ लाख रुपए की बचत होने का अनुमान किया गया था, लेकिन सशोधित अनुमान के अनुसार केवल ५ करोड ५ लाख रुपये की बचक होने का अनुमान है। इस का कारण यह कि वित्त आयोग की सिफारिशो के अनुसार केन्द्रीय सरकार को ३४ करोड २० लाख रुपया राज्य सरकारों को देना पड़ा।

आगामी वित्तीय वर्ष मे विदेशो से ३२५ करोड रुपये की आर्थिक सहायता मिलने का अनुमान है। इससे दूसरी योजना को कार्यान्वित करने काफी सहायता मिलेगी।

—

विविध राज्यों के बजट

संक्षिप्त परिचय

पिछले साल विविध राज्यों के बजटों में नये करों की जो बाढ़ सी आ गई थी, वह इस वर्ष के बजटों में नहीं है। बहुत कम राज्यों ने नये कर लगाये हैं, किन्तु घाटा तो प्रायः सभी राज्यों को हुआ है । अपवादस्वरूप कुछ राज्य ऐसे भी हैं, जिन्होंने नये कर लगाकर बचत दिखाई है ।

एक विशेष बात यह है कि सभी राज्य पहले की अपेक्षा केन्द्र पर अधिक आश्रित हुए हैं । चीनी, तमाखू और कपड़े के बिक्री-कर केन्द्र के हाथ में जाने पर कुछ तो यह स्वाभाविक भी था । बढ़े हुए रेल-कर का भी हिस्सा राज्यों को मिलेगा । वित्तीय आयोग ने भी उदारता दिखाई है और राज्यों को अनुदान देने की सिफारिशें की हैं ।

विविध राज्यों ने जनता या उसके किसी वर्ग को सुविधा देने का भी प्रयत्न किया है, किन्तु उनसे कहां तक सन्तोष होगा, यह नहीं कहा जा सकता । शासन व्यय को कम करने की उल्लेखनीय चेष्टा किसी ने नहीं की ।

नीचे संक्षेप से विविध राज्यों के बजट दिये जाते हैं—

उत्तर प्रदेश

उत्तर प्रदेश के बजट में ४ करोड़ ५४ लाख का घाटा दिखाया गया है । १ अरब ८ करोड़ २३ लाख रु० की आय तथा १ अरब १२ करोड़ ७७ लाख व्यय होगा ।

कोई नया कर नहीं लगाथा गया है । जिन सरकारी कर्मचारियों का वेतन ४००) प्रति मास है, उनके आधे महंगाई भत्ते को वेतन में मिला दिया गया है । राज्य सरकार ने ७ करोड़ रु० ऋण दिया है और इसमें लघु उद्योग निगम की स्थापना की भी व्यवस्था है ।

इस बजट में लगभग १० लाख की अतिरिक्त व्यवस्था की गई है जो मंत्रियों, राज्य मंत्रियों, उपमंत्रियों, संसदीय सचिवों और विधानमंडल व सदस्यों के लिए सुरक्षित रखा गया है । १ करोड़ से अधिक राशि इसलिए सुरक्षित रखी गई है, कि जिससे ३५० नई डीजल बसें खरीदी जा सकें । १२५० जूनियर बेसिक स्कूल खोलने की भी व्यवस्था की गई है ।

एक करोड़ रुपये की लागत से मजदूरों के लिए मकान बनाये जायेंगे, चुर्क सीमेंट फैक्ट्री का विस्तार किया जायगा । हरदुआ गंज में ३० हजार किलोवाट का बिजलीघर खोला जायगा ।

आयकर में राज्य का हिस्सा इस वर्ष २४६ लाख रु० बढ़ जायगा, केन्द्रीय उत्पादन करों का हिस्सा भी ११४ लाख बढ़ जायगा । ६१ लाख रु० की १२०.०० करोड़ की और व्यय रकम रेल किरायों पर लागू कर के हिस्से में से मिल सकेगी ।

काश्मीर

काश्मीर के मुख्यमंत्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने १९५८-५९ का मुनाफे का बजट पेश किया है । इस वर्ष आनुमानिक आय १०४६.९० लाख रु० की होगी, तो व्यय ७६०.३६ लाख रु० का होगा । इसका अभिप्राय यह है कि २८६.५४ लाख का मुनाफा होगा ।

आय की रकम में ४८८.४३ लाख रु० की रकम भारत सरकार से अनुदान आदि के रूप में मिलेगी और ५५६.४७ लाख रु० की रकम राज्य में लगाये गये कर आदि से मिलेगी ।

भारत सरकार के साथ हुए अन्तरिम समझौते के फलस्वरूप आगामी वर्ष तदुद्देश्यी अनुदान की मद में २५० लाख रु० से २३८.४३ लाख रु० ज्यादा मिलेंगे । वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुसार दी जाने वाली रकम बढ़ा दी गई है । इससे भी अधिक खुशी का विषय यह है कि केन्द्रीय सरकार हमारे साथ भी आर्थिक मामलों में वैसा सम्बन्ध रखती है, जैसा कि दूसरे राज्यों के साथ । पहले हमें जहां तदुद्देशीय अनुदान मिलता था, वहां अब हमें भारतीय संविधान के अनुसार केन्द्रीय सरकार के करों से भी वैसे ही रकम मिलेगी और वैसे ही अनुदान मिलेंगे, जैसे कि भारत के दूसरे राज्यों को मिलते हैं ।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश के बजट में ११०,०३ लाख रुपयों की बचत दिखाई गई है।

बजट में सन् १९५८-५९ में ५६१६.७१ लाख रुपयों की राजस्व आय का अनुमान दिखाया गया है, जबकि आनुमानिक व्यय ५५०६.७६ लाख रुपयों का है।

वित्तमंत्री ने कोई नया कर प्रस्ताव प्रस्तुत नहीं किया है। वैसे उन्होंने वर्तमान कानून के अंतर्गत कल्याण कर और बिक्री कर के वैज्ञानिकन की घोषणा की है। इसके फलस्वरूप राज्य के कोष को १३० लाख रुपयों की अतिरिक्त आय होगी।

बजट का एक विशेष उल्लेखनीय पहलू प्राइमरी स्कूलों के अध्यापकों के लिए सरकार द्वारा नये वेतन स्तर का निर्णय किया जाना है।

यह नया वेतन स्तर समूचे राज्य में १ अप्रैल १९५६ से लागू होगा। यह भी निर्णय किया गया है कि प्राइमरी स्कूलों में, जो स्वायत्त संस्थाओं द्वारा चलाए जाते हैं, नए वेतन स्तर के फलस्वरूप जो अतिरिक्त व्यय होगा, उसे राज्य सरकार देगी।

पंजाब

पंजाब की विधान सभा में वित्तमंत्री श्री मोहनलाल ने निम्न नये कर प्रस्ताव पेश किये हैं—

बिक्री-कर की दर २ पैसा रुपया के स्थान पर ४ नया पैसा रुपया कर दी गई है।

व्यावसायिक व घरेलू रूप में बिजली को खपाने वाले प्रथम वर्ग के लोगों पर १० प्रतिशत और शेष पर २५ प्रतिशत बिजली कर लगेगा।

दाल आदि खाद्य-पदार्थों पर ७५ नए पैसे फी १०० रु० के हिसाब से बिक्री-कर लगेगा।

उत्पादकों द्वारा कच्चे माल की खरीद पर २ नया पैसा फी रुपया बिक्री-कर लगेगा।

हथियार-लाइसेन्स शुल्क दुगना होगा।

कपास, बिनौले, खली, खाल, चमड़ा और ऊन पर बिक्रीकर लगेगा। पहिले ये चीजें बिक्री-कर से मुक्त थीं।

नये वर्ष के बजट में २०८ लाख रु० का घाटा दिखाया गया है। कुल आय ४७ करोड ८१ लाख रु० की होगी तो व्यय ४९ करोड ८९ लाख का।

नए कर-प्रस्तावों से न केवल घाटा पूरा हो जाएगा, बल्कि १० लाख रु० की बचत हो जाएगी।

भूमि आय पर विशेष सरचार्ज लेने का विधेयक यदि पास हो गया तो १५ लाख रु० की अतिरिक्त आय होगी। फिर भी राज्य को २१९ लाख रु० का घाटा रह जायगा और राज्य उससे पूरा करना होगा।

बम्बई

बम्बई के बजट में १२०.०० करोड रु० का घाटा दिखाया गया है। आय करीब, १२२.०१ करोड रु० का होगा।

देश के विभिन्न राज्यों में से बम्बई का बजट सबसे बड़ा है। नए कर प्रस्तावों की भी घोषणा की गई है। इससे १९५८-५९ में करीब ३ करोड रु० की आय होगी, और नए करों से २.०१ करोड रुपये का घाटा २४ लाख रु० के मुनाफे में परिवर्तित हो जाएगा। नये कर-प्रस्ताव निम्न है :

(१) मुसाफिर किरायों पर कर से १८० लाख रु० की आय।

(२) मोटर गाडियों पर कर से १५ लाख रु० की आय।

(३) मोटर स्पिरिट तथा ईंधन के काम में आने वाले डीजल तेल पर कर से ३० लाख रु०।

(४) गैर-अदालती दस्तावेजों पर स्टाम्प-कर से २५ लाख रु०।

(५) विद्युत कर से २५ लाख रु०।

(६) मनोरंजन कर से २५ लाख रु०।

नए करों से न केवल आमदनी बढ़ेगी, बल्कि राज्य के घटक क्षेत्रों में कर एक समान लगेंगे।

अधिकांश कर वे है जो पुराने बम्बई राज्य में लगे हुए थे।

पुराने बम्बई राज्य की तरह विदर्भ व मराठावाड़ा में

भी कपास पर बिक्री-कर २ प्रतिशत के स्थान पर १ प्रतिशत कर दिया गया है।

इस वर्ष जो महत्वपूर्ण पूंजीगत खर्च किये जायेंगे, वे निम्न हैं :—

सिंचाई योजनाओं पर १७.३६ करोड़ रु०; कोयना योजना पर ८.५० करोड़ रु०; सड़कों व भवन निर्माण पर १४.५० करोड़ रु०।

सरकारी गतिविधि पर कुल २०४.३ करोड़ रु० खर्च किया जाएगा। १४६.७ करोड़ रु० विकास कार्यों पर खर्च किया जायगा। गैर-विकास कार्यों पर ५४.६ करोड़ रु० व्यय होगा।

मद्रास

मद्रास के वित्तमंत्री ने तीन नये कर प्रस्ताव प्रस्तुत किए हैं—

(१) कृषि आय कर, जो भूमि से होने वाली ३००० रुपये से अधिक आय पर लगेगा। (२) डीजल आयल पर २५ नये पैसे प्रति गैलन बिक्री-कर और (३) मनोरंजन कर में वृद्धि।

आय ६२७० लाख और व्यय ६३७५ लाख दिया गया है। मंत्री महोदय ने यह भी घोषणा की है कि सिनेमा तथा घुड़ दौड़ को छोड़कर शेष सभी प्रकार के मनोरंजनों पर से कर हटा दिया जाएगा।

आन्ध्र

आंध्र प्रदेश के वित्तमंत्री श्री. बी. गोपाल रेड्डी ने राज्य का सन् १६५८-५६ का ७६ लाख रुपये की बचत का बजट पेश किया है। इसमें ६३.६६ करोड़ रुपये की आय और ६२.८७ करोड़ रुपए का व्यय आंका गया है।

किसी नए कर का प्रस्ताव नहीं किया गया है।

अक्तूबर १६५३ में आंध्र प्रदेश के निर्माण के बाद पहली बार राज्य का यह बजट है।

बजट में राज्य की द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत उप-योजनाओं के क्रियान्वय के लिए ३०२ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। इसके अलावा केन्द्रीय सरकार ने केन्द्र द्वारा संचालित योजनाओं के लिए २.६१ करोड़ रुपया दिया है।

केन्द्रीय सरकार की १८ करोड़ रुपए की सहायता का अनुमान लगाया गया है, शेष उसे ही पूरा करना पड़ेगा।

बजट नागार्जुन सागर योजना, मचकुण्ड जल-विद्युत और तुंगभद्रा जल-विद्युत योजना के लिए क्रमशः ७ करोड़, १.७४ करोड़ और ८२ लाख रुपये के पूंजीगत व्यय की व्यवस्था की गई है। इसके अलावा तुंगभद्रा नहरों, राजौली बांद्रा योजना, तेलंगाना जल-विद्युत योजनाओं और कृष्णा नदी पर सड़क एवं तख्ता पुल के लिए भी धन की व्यवस्था की गई है।

छोटी बचत योजना के अंतर्गत तथा सार्वजनिक ऋणों से ६ करोड़ रुपया उपलब्ध होने का अनुमान है।

केरल

केरल के साम्यवादी शासन के पहले बजट में ६६.७८ लाख रु० के नये कर लगे हैं, जिनसे ३२.७७ लाख रु० का घाटा ३४.०१ लाख रु० की बचत में बदल जायगा। कुल आय ३३.८४ करोड़ रु० तथा व्यय ३४.१७ करोड़ रु० का अनुमान किया गया है। शहरी अचल सम्पत्ति पर कर की दर में वृद्धि की गई है, काली मिर्च व गोले के तेल में वायदे सौदों पर शुल्क, राज्य परिवहन सेवाओं के यात्रियों के भाड़ों पर १० प्रतिशत अधिभार, बिजली कर में वृद्धि, डीजल तेल पर बिक्री कर २ से बढ़ाकर २० नये पैसे। सरकार खुले बाजार से ३ करोड़ रु० ऋण लेगी।

पश्चिम बंगाल

पश्चिम बंगाल के बजट के अनुसार जो कि राज्य विधान सभा में प्रस्तुत किया गया है, १६५८-५६ के लिए आमदनी ६६.६८ करोड़ रु० का अनुमान है, जब कि वर्तमान वर्ष के लिए संशोधित अनुमान ६६.६४ करोड़ रु० लगाया गया था। कुल व्यय ७२.६६ करोड़ का अनुमान है, जबकि ७२.६४ करोड़ का संशोधित अनुमान लगाया गया था। इससे स्पष्ट है कि आमदनी में ३.८३ करोड़ रु० का घाटा रहेगा। पूंजीगत व्यय २१.८० करोड़ का अनुमान है, जबकि ३३.३५ करोड़ का संशोधित अनुमान लगाया गया था। फिर भी २.७ करोड़ रु० की बचत रहेगी। इस प्रकार पूरा घाटा १.७६ करोड़ रु० का है। बजट के प्रस्तावों के अनुसार कोई नये कर नहीं लगेंगे।

—

महत्वपूर्ण अम्बर चरखा

श्री आर० के० बजाज

पिछले कुछ समय से भारत के औद्योगिक एवं राष्ट्रीय क्षेत्र में अम्बर चरखे ने क्राति मचा दी है। क्या सरकार क्या नेता गण और क्या अर्थशास्त्री सभी को अम्बर चरखे ने अपनी विशेष उत्पादन क्षमता के कारण आकर्षित कर लिया है।

चरखे का इतिहास

चरखा कातना और कपडे बुनना अज्ञात काल से भारत का उद्योग रहा है। ब्रिटिश शासन में तो चरखे का नाम ही लुप्त प्राय हो गया। १६१६ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस मृतप्राय उद्योग को ओजस्विनी वाणी दी तथा उन्होंने भारत की जनता को चरखे और खद्दर का पुनीत संदेश देकर नवीन प्राण का संचार किया। फलत खद्दर राष्ट्रीयता का चिन्ह बन गया। विदेशी वस्त्रो का वाहिष्कार किया जाने लगा, उनकी होली जलाई गई। देश में जगह जगह खादी भंडार व चरखा संघ खुल गये।

किन्तु गांधी जी ने अनुभव किया कि इस चरखे पर निर्भर रहकर एक आदमी अपना जीवन यापन नही चला सकता। अतः उनका ध्यान सुधारों की ओर गया। इसी उद्देश्य से इसके सुधार पर भी वे महत्व देने लगे और उन्होंने सुधार करने वाले व्यक्ति को ५००) रुपये का पारितोषिक देने की घोषणा भी करदी। गांधी जी की घोषणा से प्रभावित होकर अनेक व्यक्तियो का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। सर्वप्रथम राजर्षि पुरुषोत्तम दास जी टंडन ने पुराने चरखे मे सुधार कर एक चर्खा प्रस्तुत किया जो "जीवन चरखा" नाम से विख्यात है। श्री काले ने भी एक चरखे का नमूना रक्खा। किन्तु आर्थिक एव यान्त्रिक कारणों के फलस्वरूप कोई भी चरखा गांधी जी की दृष्टि में ठीक नहीं जंचा। सन् १६२६ में अ० भा० कांग्रेस ने १ लाख रुपये के पारितोषिक की घोषणा कर दी। महाराष्ट्र के किलोस्कर बन्धु ने भी एक नया चरखा बनाया। जापान के कुछ व्यक्तियों ने भी गांधी जी के पास कुछ नमूने भेजे। किन्तु कोई भी गाधी जी की दृष्टि मे उपयुक्त नही बैठा। अन्त में १६४६ में तामिलनाड के एकाम्बरनाथ *नामक व्यक्ति इस कार्यमें सफल हुए। उन्होंने प्राचीन चरखे* में सुधार कर दो तकुवे वाला चरखा खोज निकाला जो उत्पादन की क्षमता अधिक रखता था तथा आर्थिक दृष्टि से भी उपयुक्त था। श्री एकाम्बरनाथ को उनकी सफलता पर पारितोषिक प्रदान किया गया। किन्तु प्रयोग एवं सुधार का यह क्रम रुका नहीं और १६५४ में बगाल के श्री नंदलाल ने इसी चरखे मे सुधार कर दो तकवे की जगह चार तकवे लगाने की व्यवस्था कर दी।

आविष्कारक श्री एकम्बर नाथ के नाम से इस चरखे

विभिन्न राज्योमें अम्बर चर्खे पर कार्य करने वाले प्रति व्यक्ति की मासिक आय।

राज्य	प्रति माह आय रुपयों मे	राज्य	प्रति माह आय रुपयों मे
१. आंध्र	२५	२. आसाम	२३
३. उडीसा	२५	४. उत्तरप्रदेश	५२
५. केरल	२२	६. दिल्ली	३५
७. पंजाब	३३	८. बंगाल पश्चिमी	३०
६. बम्बई	३३	१०. बिहार	२३
११. मद्रास	४२	१२. मध्य प्रदेश	२६
१३. मैसूर	३२	१४. राजस्थान	३२

दैनिक औसत समय ७ घन्टा और रविवार को विश्राम।

का नामकरण किया गया है। श्री एकाम्बरनाथ का तामिलनाड़ प्रान्त के तिरूचिरापली जिले में अम्बासमुद्रम तहसील के पायान-कुलम गांव में जन्म हुआ था। एक दिन चरखा कातते समय इन्हें ख्याल आया कि क्या इस चर्खे से ज्यादा सूत नहीं काता जा सकता? उन्होंने समीप के सूती मिल से रिंग ट्रेवलरस आदि पुर्जे मंगाकर चर्खे पर बैठाकर प्रयोग किया। इससे उन्हें चरखे की कार्यक्षमता में महान परिवर्तन प्रतीत हुवा। प्रयोग करते करते उन्होंने पूनी बनाने की बेलनी भी खोज निकाली। और अन्त में जिस अम्बर चरखे को आज देख रहे हैं वह सब उनकी खोज का ही परिणाम है। अम्बर चर्खा मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित हैः—(१) धुनिया मोदिया (२) बेलनी (३) चरखा।

एक अम्बर चर्खे को बनाने में लगभग १००) रु० खर्च आते हैं। इस चरखे के द्वारा १२ से ४० अंक तक का सूत तैयार किया जा सकता है, यदि एक साधारण व्यक्ति आठ घंटे प्रतिदिन इस चर्खे पर काम करे तो वह कम से कम १२ आने तो अवश्य कमा सकता है। एक अम्बर चर्खा १८ इंच चौड़ा लम्बा १६ इंच और १२ इंच ऊंचा होता है, इसका वजन २६ पौण्ड के आस पास है। इस प्रकार यह एक रेडियो या टाइपराटर की तरह हैं। मुख्य रूप से इसके निर्माण में लकड़ी का प्रयोग होता है, किन्तु कुछ भाग रबर और लोहे के भी बनाने पड़ते हैं।

अम्बर चर्खा जांच पड़ताल कमेटी

मार्च १९५६ में सरकार ने अम्बर चरखा की कार्य प्रणाली, उत्पादन व कार्यक्षमता आदि की जांच पड़ताल करने के हेतु एक कमेटी की नियुक्ति की। कमेटी ने देश के विभिन्न भागों का दौरा किया और सम्पूर्ण जानकारी के आधार पर २५ मई १९५६ को सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी।

सरकारी सहायता

राष्ट्रीय सरकार ने समिति की करीब करीब सभी सिफारिशों को स्वीकार कर अम्बर चरखे को अपनी विकास सम्बन्धी योजनाओं में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है। १९५६-५७ में ७४,००० अम्बर चरखे चालू करने की स्वीकृति दे दी। इस कार्य को करने हेतु १७० लाख रुपये का अनुदान व २११ लाख रुपया ऋण देने का निश्चय किया। सरकार ने मिलों से बने वस्त्र पर एक पैसा प्रति गज कर लगा कर, एक कोष की स्थापना की है, जिसका उपयोग अम्बर चरखे की उन्नति में किया जा रहा है। सरकार उत्पादकों को बिकने वाली खादी पर ३ आने प्रति रुपया सहायता भी देने लगी है, ताकि ग्राहकों को कपड़ा सस्ता मिले। इसके अलावा सरकारी अधिकारियों को प्रेरित किया जा रहा है कि वे यथा संभव सरकारी कामों के लिये अम्बर चरखे द्वारा बना वस्त्र ही काम में लायें। पर्दों, तौलियों, गद्दियों व चद्दरों आदि के वास्ते खादी खरीदने के लिये तो स्वयं राष्ट्रपति ने भी सिफारिश की है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना तक २७ करोड़ रुपये की सहायता देने का अनुमान है। प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्तियों को अम्बर चरखे खरीदने के लिये आधा मूल्य भी सरकार द्वारा दिया जाता है।

खेतिहर मजदूरों की बेकारी मिटाने के लिये अम्बर चरखा राम बाण यंत्र होगा, इसमें किंचित मात्र भी सन्देह नहीं है। भारत के अधिकांश व्यक्तियों का मुख्य धंधा कृषि ही है, किन्तु हमारे यहां वर्षा का मौसमी होना, अनिश्चित होना, अनियमित होना व असमान होने से खेती केवल ३-४ महीने ही होती है। शेष समय में अधिकांश कृषक या तो फालतू बैठे रहते या नौकरी के लिये मारे मारे फिरते हैं। अम्बर चरखे के प्रादुर्भाव से यह समस्या हल हो सकती है।

करवे कमेटी ने भी बेकारी की समस्या की भीषणता को देखते हुए सूत कातने की मिलों को खोलने के बजाय अम्बर चरखे को अपनाने के पक्ष में अपनी राय दी थी। कानूनगो कमेटी ने सूती मिलों में ३६ करोड़ रुपया लगाकर ५८००० आदमियों को रोजगार देने की सिफारिश की थी, किन्तु करवे कमेटी का कहना है कि मिलों में ५०० करोड़ गज से अधिक कपड़ा पैदा करने पर पाबन्दी लगादी जावे और १९ करोड़ रुपया लगाकर ही इतने अम्बर चरखे तैयार कर सकते हैं, जिससे सूत की यह आवश्यकता पूर्ण हो जायगी और इससे ५८००० की बजाय ३५ लाख अधिक व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा।

आर्थिक एवं सामाजिक महत्व

(१) अम्बर चर्खा अन्य ग्रामोद्योगों के लिये भी वरदान स्वरूप है। अम्बर चरखे से बढ़ई व लोहार को धन्धा मिलेगा तथा बुनकरों को रोजगार मिलेगा, छपाई व रगाई का कार्य भी बढ़ेगा।

(२) अम्बर चरखे से विकेन्द्रीकरण की समस्या काफी हद तक सुलझ जावेगी। आज भारत में कुछ ऐसे भाग हैं जहा कि कारखानो व उद्योगधधो का जाल सा छाया हुवा है, तो कुछ भाग ऐसे हैं जहा कि कारखानो का नाम निशान ही नहीं है। स्थान स्थान पर अम्बर परिश्रमालय खोलकर विकेन्द्रीकरण किया जा सकेगा।

अम्बर चरखा समाजवादी समाज की स्थापना में भी महत्पूर्ण योग प्रदान करेगा, क्योंकि इस से ग्रामीण जनता का पैसा उनके पास ही रहेगा तथा मिलों के वस्त्र का प्रयोग भी घट जायगा, जिससे पू जीपतियो को कम मुनाफा होगा। यह लाभ का पैसा ग्रामीणों के पास ही रहेगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना व अम्बर चरखा

अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड नामक सस्था ने अम्बर चरखे के विकास हेतु एक योजना प्रस्तुत की थी, जिसे योजना आयोग ने स्वीकार कर लिया है और द्वितीय पचवर्षीय योजना में उसे पूर्ण करने का निश्चय किया है। इस योजना के अतर्गत १९६०-६१ तक २५ लाख अम्बर चरखों को चालू करने का विचार है। जिस से ४१२५ लाख पौंड सूत तैयार किया जावेगा। इसके अतर्गत कई हजारो की सख्या में परिश्रमालय व विद्यालय खोलने का आयोजन किया गया है। निम्नलिखित सारणी से अम्बर चर्खे का वार्षिक उत्पादन, आवश्यकता एव अन्य आवश्यक जानकारी हो जावेगी —

(लाख में)	१९५६ ५७	५७-५८	६०-६१
वार्षिक उत्पादन	२०.६	६१ ९	४१२.५
प्रतिवर्ष चरखों की आवश्यकता	१.२५	२.५०	८ ७५
कुल काम में आने वाले चरखे	१.२५	३.७५	२५ ००
प्रतिवर्ष वस्त्र उत्पादन	७५	२२५	१५००
प्रतिवर्ष खादी का उत्पादन	७५	२२५	२२५
प्रतिवर्ष खादी के लिये सूत की आवश्यकता	१८ ७५	५६ २५	५६ २५
हाथकर्घों के वितरण हेतु उपलब्ध सूत	१.८५	५ ६५	३५६ १५

कुछ कठिनाइया

अम्बर चरखे के प्रयोग से कुछ व्यावहारिक कठिनाइया भी प्रकाश में आई हैं, किन्तु उन्हें हल करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

अल्प बचत का महत्व

अल्प बचत योजना एक अत्यन्त प्रशसनीय योजना है जिसे अधिकतम जन सहयोग मिलना चाहिए, इससे दो उद्देश्यों की पूर्ति होती है। एक तो इसके द्वारा व्यक्तिगत मितव्ययता, सुरक्षा एव समृद्धि को प्रोत्साहन मिलता है तथा दूसरी ओर यह राष्ट्रीय समृद्धि के लक्ष्य को पूरा करने मे प्रत्येक नागरिक को अपना अश दान देने के योग्य बनाती है।

"राष्ट्र की सहायता कर आप अपनी स्वय की भी सहायता कीजिये" यही अल्प बचत योजना का सार है। प्रथम पचवर्षीय योजनावधि में ये योजनायें अत्यधिक लोकप्रिय हुई हैं और इनकी लोकप्रियता से प्रोत्साहित होकर, द्वितीय पचवर्षीय योजना में इसके लक्ष्य की राशि बढ़ा दी गई है। हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि अल्प बचत योजना के अन्तर्गत जमा किये गये हमारे प्रत्येक १०० रु० का ⅓ भाग अर्थात् ३६ प्रतिशत प्रत्यक्ष रूप मे हमे लाभान्वित करता है और द्वितीय पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत हमारे हिस्से के कार्य को कार्यान्वित करने मे हमें सहायता पहुँचाता है।

जब हमे प्रगति करनी है और जीवन स्तर उन्नत करना है, तब राष्ट्रीय साधनों को अल्प बचत योजना द्वारा स्वैच्छिक सहयोग ही आसान तरीका है, जिसके द्वारा हममें से हर एक राष्ट्रीय कल्याण में वृद्धि करने के लिये अपने हिस्से का कार्य कर सकता है।

—कैलाशनाथ काटजू, मुख्यमंत्री मध्यप्रदेश

उत्तरप्रदेश का हाथकरघा उद्योग

श्री ए० पी० दीक्षित

घरेलू उद्योगों की उत्पादन-क्षमता ने विगत महायुद्ध में अत्यधिक सहायता पहुँचाई है। जब बड़े संगठित कारखाने अपनी पूरी क्षमता से काम करके भी देश की मांग की पूर्ति करने में असमर्थ हो गये थे, तब घरेलू उद्योगों के दस्तकारों को युद्ध के प्रयासों में योग देने और साथ ही साथ जन-साधारण की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए आमंत्रित किया गया था। युद्धकाल की नियंत्रित और राशन की अर्थव्यवस्था से थोड़े समय के लिए ग्रामोद्योग पनपे, किन्तु युद्ध की समाप्ति के बाद जब मिलों का वस्त्र जन-साधारण के उपभोग के लिये बाजार में पहुँचा तो बुनकरों पर आफत आ गई। इस संकट ने इतना गम्भीर रूप धारण किया कि सरकार को होड़ बचाने के लिये दोनों के उत्पादन का बटवारा करना पड़ा। कुछ अर्से तक इस कदम से बुनकरों को काफी राहत मिली, किन्तु सभी जगह यह अनुभव किया गया कि इस संकट पर काबू पाने और उद्योग को उन्नत बनाने के लिये शीघ्र दूसरे आवश्यक कदम उठाने जरूरी हैं। इस चीज को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने मिल उत्पादन पर और कर लगाकर एक कोष की स्थापना की और इस कोष के बुनकरों के हित में उपयोग को सुनिश्चित बनाने के लिये सन् १९५३ में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की स्थापना हुई। उत्तर प्रदेश में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की नीति और आदेशों का पालन उद्योग विभाग के संचालक द्वारा होता है।

कार्य प्रारम्भ करते हुए स्थिति का एक आम पर्यवेक्षण किया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि निर्धन खादी उत्पादकों की प्रमुख कठिनाइयां—पुराने किस्म के औजार, शीघ्र परिवर्तनशील-उत्पादन प्रणाली और उपभोक्ता की पसन्द उपयुक्त ढंग के सूत, रंग एवं दूसरे आवश्यक रासायनिक पदार्थों का उचित मूल्य पर अप्राप्य होना और कपड़े में अन्तिम चमक लाने की सुविधा और आवश्यक धन का अभाव आदि हैं।

२,५०,००० रजिस्टर्ड करघों को आवश्यक सुविधायें प्रदान करना, जिनसे कि वर्ष भर में २० करोड़ गज कपड़ा और दस लाख लोगों को राज्यमें काम मिलता है, बहुत बड़ा काम है। इसके लिये साधारण पैमाने पर भी सहायता के लिए बहुत बड़े धन और साधनों की आवश्यकता है। बुनकर की कर्ज लेने की क्षमता में वृद्धि के उद्देश्य से और साथ ही साथ उनमें सहकारिता की भावना उत्पन्न करने के लिये और इस प्रकार उनमें आत्मनिर्भरता बढ़ाने के लिये पूंजी निधि के अंश को बिना सूद कर्ज देकर बढ़ावा दिया गया।

प्रति सूती करघे पर ३०० रु० तक और प्रति रेशमी करघे पर ५०० रु० तक सहकारी समितियों से कर्ज भी प्राप्त हो सकता है।

सुधरे हुए औजार

सुधरे औजारों के लिये भी उदारतापूर्वक अनुदान दिया गया है—जैसे "पिट लूम्स" को अधिक कारगर "फ्रे लूम्स" में बदलना, हाथ द्वारा संचालित करघों को यंत्र संचालित करघों में बदलना आदि। इन औजारों की एकमुश्त खरीद का प्रबन्ध हो गया है।

औद्योगिक सहकारी बैंक

औद्योगिक सहकारी बैंक की स्थापना में उत्तर प्रदेश सर्वप्रथम है, जिससे कि साधारणतया औद्योगिक कारीगर संगठनों और विशेषतया बुनकरों को कर्ज की सुविधायें प्राप्त होती हैं। इस बैंक ने काम करने के प्रारम्भिक दो वर्षों में २८ लाख रु० कर्ज दिया है।

नई डिजाइन और नमूना

उत्पादन का स्तर ऊंचा करने के लिये अमरोहा, रामपुर गाजीपुर, मऊ और टांडा में, जहां पर बुनकर अधिक हैं, नमूना बनाने के केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रों का प्रमुख कर्तव्य व्यावसायिक उन्नति के लिये नये नमूने तैयार करना और बुनकरों को नई और पेचीदा डिजाइन बनाने में शिक्षित करना है। रामपुर में एक डिजाइन अन्वेषण केन्द्र भी खोला गया है। ३१ दिसम्बर १९५७ तक इन केन्द्रों ने १०८ नये नमूने व्यावसायिक उन्नति के लिये निकाले हैं

उत्तरप्रदेश का हाथकरघा उद्योग

श्री ए० पी० दीक्षित

घरेलू उद्योगों की उत्पादन-क्षमता ने विगत महायुद्ध में अत्यधिक सहायता पहुँचाई है। जब बड़े संगठित कारखाने अपनी पूरी क्षमता से काम करके भी देश की मांग की पूर्ति करने में असमर्थ हो गये थे, तब घरेलू उद्योगों के दस्तकारों को युद्ध के प्रयासों में योग देने और साथ ही साथ जन-साधारण की आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए आमंत्रित किया गया था। युद्धकाल की नियंत्रित और राशन की अर्थव्यवस्था से थोड़े समय के लिए ग्रामोद्योग पनपे, किन्तु युद्ध की समाप्ति के बाद जब मिलों का वस्त्र जन-साधारण के उपभोग के लिये बाजार में पहुँचा तो बुनकरों पर आफत आ गई। इस संकट ने इतना गम्भीर रूप धारण किया कि सरकार को होड़ बचाने के लिये दोनों के उत्पादन का बटवारा करना पड़ा। कुछ अर्से तक इस कदम से बुनकरों को काफी राहत मिली, किन्तु सभी जगह यह अनुभव किया गया कि इस संकट पर काबू पाने और उद्योग को उन्नत बनाने के लिये शीघ्र दूसरे आवश्यक कदम उठाने जरूरी हैं। इस चीज को ध्यान में रखकर भारत सरकार ने मिल उत्पादन पर और कर लगाकर एक कोष की स्थापना की और इस कोष के बुनकरों के हित में उपयोग को सुनिश्चित बनाने के लिये सन् १९५३ में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की स्थापना हुई। उत्तर प्रदेश में अखिल भारतीय खादी बोर्ड की नीति और आदेशों का पालन उद्योग विभाग के संचालक द्वारा होता है।

कार्य प्रारम्भ करते हुए स्थिति का एक आम पर्यवेक्षण किया गया, जिससे यह स्पष्ट हुआ कि निर्धन खादी उत्पादकों की प्रमुख कठिनाइयां—पुराने किस्म के औजार, शीघ्र परिवर्तनशील-उत्पादन प्रणाली और उपभोक्ता की पसन्द, उपयुक्त ढंग के सूत, रंग एवं दूसरे आवश्यक रासायनिक पदार्थों का उचित मूल्य पर अप्राप्य होना और कपड़े में अन्तिम चमक लाने की सुविधा और आवश्यक धन का अभाव आदि हैं।

२,४०,००० रजिस्टर्ड करघों को आवश्यक सुविधायें प्रदान करना, जिनसे कि वर्ष भर में २० करोड़ गज कपड़ा और दस लाख लोगों को राज्यमें काम मिलता है, बहुत बड़ा काम है। इसके लिये साधारण पैमाने पर भी सहायता के लिए बहुत बड़े धन और साधनों की आवश्यकता है। बुनकर की कर्ज लेने की क्षमता में वृद्धि के उद्देश्य से और साथ ही साथ उनमें सहकारिता की भावना उत्पन्न करने के लिये और इस प्रकार उनमें आत्मनिर्भरता बढ़ाने के लिये पूंजी निधि के अंश को बिना सूद कर्ज देकर बढ़ावा दिया गया।

प्रति सूती करघे पर ३०० रु० तक और प्रति रेशमी करघे पर ५०० रु० तक सहकारी समितियों से कर्ज भी प्राप्त हो सकता है।

सुधरे हुए औजार

सुधरे औजारों के लिये भी उदारतापूर्वक अनुदान दिया गया है—जैसे "पिट लूम्स" को अधिक कारगर "फ्रे लूम्स" में बदलना, हाथ द्वारा संचालित करघों को यंत्र संचालित करघों में बदलना आदि। इन औजारों की एकमुश्त खरीद का प्रबन्ध हो गया है।

औद्योगिक सहकारी बैंक

औद्योगिक सहकारी बैंक की स्थापना में उत्तर प्रदेश सर्वप्रथम है, जिससे कि साधारणतया औद्योगिक कारीगर संगठनों और विशेषतया बुनकरों को कर्ज की सुविधायें प्राप्त होती हैं। इस बैंक ने काम करने के प्रारम्भिक दो वर्षों में २८ लाख रु० कर्ज दिया है।

नई डिजाइन और नमूना

उत्पादन का स्तर ऊंचा करने के लिये अमरोहा, रामपुर गाजीपुर, मऊ और टांडा में, जहां पर बुनकर अधिक हैं, नमूना बनाने के केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इन केन्द्रों का प्रमुख कर्तव्य व्यावसायिक उन्नति के लिये नये नमूने तैयार करना और बुनकरों को नई और पेचीदा डिजाइन बनाने में शिक्षित करना है। रामपुर में एक डिजाइन अन्वेषण केन्द्र भी खोला गया है। ३१ दिसम्बर १९५७ तक इन केन्द्रों ने १०८ नये नमूने व्यावसायिक उन्नति के लिये निकाले हैं

दिसम्बर १९५७ में साम्यवादी विश्व

वर्ष जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश की आबादी लगभग	विवरण
१९१७	रूस	१९ करोड ३० लाख	प्रथम विश्व युद्ध काल में
१९२४	आउटर मंगोलिया	१० लाख	रूस की तरह का जनवादी गणतन्त्र
१९४४	पोलैंड	२ करोड ५० लाख	द्वितीय विश्व युद्ध के बाद
,,	रूमानिया	१ करोड ७० लाख	,,
,,	चेकोस्लोवाकिया	१ करोड ५० लाख	,,
,,	हंगरी	१ करोड़	,,
,,	बलगेरिया	७५ लाख	,,
,,	अलवेनिया	१२ लाख	,,
,,	यूगोस्लाविया	१ करोड ७० लाख	,,
,,	पूर्वी जर्मनी	१ करोड़ ७५ लाख	,,
१९४८	उत्तरी कोरिया	९० लाख	,,
१९४९	चीन (मंचूरिया, इनर मंगोलियासिंकियांग और तिब्बत सहित)	५० करोड	चीन में राष्ट्रवादी दलो के बीच गृह युद्ध के फलस्वरूप
१९५४	वियतमिन	१ करोड २० लाख	फ्रांसीसी उपनिवेशवाद के विरुद्ध युद्ध के फलस्वरूप
१९५६	केरल (भारत)	१ करोड़ ३६ लाख	स्वतन्त्र निर्वाचन द्वारा

पश्चिमी साम्राज्यवाद से मुक्त देश

दिसम्बर (१९५७)

किस देश का साम्राज्य	कौन से देश मुक्त हुए	किस सन में	विशेष
ब्रिटेन	ईराक	१९३२	
	जोर्डन	१९४६	
	भारत	१९४७	
	पाकिस्तान	१९४७	भारत को विभाजित करके नया राष्ट्र बनाया गया।
	इजराइल	१९४८	फिलस्तीन विभाजित होकर नया राष्ट्र बना
	बर्मा	१९४८	
	लंका	१९४८	
	मिस्र	१९५२, १९२२ एवं १९३६ में आंशिक स्वतंत्रता मिल चुकी थी	

१	२	३	४
	सूडान	१९५५	
	घना	१९५७	पूर्व नाम गोल्ड कोस्ट
	मलाया	१९५७	
अमेरिका	फिलस्तीन	१९४६	
फ्रांस	हिन्दचीन	१९५४	
	चंद्रनगर (भारत)	१९५२	
	पांडिचेरी कारिकल माही (भारत)	१९५४	
	फ्रैंच मोरक्को	१९५६	
	ट्यूनीसिया	१९५५	
हालैण्ड (डच)	हिन्देशिया	१९४९	
इटली	अबीसीनिया	१९४१	नया नाम एथिओपिया
	इरीट्रिया	१९५२	एथिओपिया मे संघबद्ध
	लीबिया		

मध्यप्रदेश का हाथ-करघा उद्योग

श्री तख्तमल जैन

देश की मिश्रित अर्थ-व्यवस्था में कृषि के बाद हाथ करघा उद्योग का ही स्थान है तथा इससे एक करोड़ बुनकरों को रोजगार प्राप्त होता है, जो भारत के कुल कपड़ा उत्पादन का २५ प्रतिशत कपड़ा उत्पादित करते हैं। राष्ट्र के आर्थिक विकास में इस उद्योग का योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण है। हाथ करघा उद्योग से हमें ऐसे सुन्दर वस्त्र मिलते हैं जो विश्व में अपनी सानी नहीं रखते और ये हमारे लिये बहुत विदेशी विनिमय भी प्राप्त करते हैं। विदेशी मुद्रा-सम्बन्धी हमारी वर्तमान कठिनाइयों के संदर्भ में मुझे आशा है कि हाथ करघा मंडल निर्यात में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकेगा।

मध्य प्रदेश में लगभग ५००,००० बुनकर हैं २१५ बुनकर सहकारी समितियों का, जिनकी सदस्य संख्या ४१००० है, निर्माण करके हमने उल्लेखनीय प्रगति की हैं। ये समितियां कुछ सर्वोत्तम प्रकार के वस्त्रों का निर्माण कर रही है। इन समितियों की आवश्यकता की पूर्ति के लिये २८ रंगाई घर तथा ९२ बिक्री केन्द्र है। इस मास बुनकर समाज को मध्य प्रदेश सरकार द्वारा उज्जैन में स्थापित होने वाले रंगाई, रंग उड़ाने तथा क्लफ करने के कारखाने के रूप में एक बहुत बड़ी सुविधा दी जा रही है। बुनकर लोग इस सुविधा का पूर्ण उपयोग करेंगे। इस सुविधा से उन्हें उन्नत तांत्रिक प्रक्रिया का सहयोग प्राप्त होगा, जिससे उनके उत्पादनों की बिक्री और अधिक बढ़ेगी। निकट भविष्य में बुनकरों के लिये राज्य द्वारा बस्तियां बसाने, डिजाइन केन्द्र खोलने तथा एक कताई घर खोलने जैसी महत्वपूर्ण योजनाएं हाथ में ली जावेगी।

मध्यप्रदेश इस उद्योग में पीछे नहीं है। चन्देरी, महेश्वर और बुरहानपुर इसके प्रमाण हैं। लगभग ५ लाख बुनकर १ लाख १० हजार करघे चलाते हैं और अनुमानतः ११ करोड़ गज वस्त्र प्रत्येक वर्ष उत्पादित करते हैं। चंदेरी महेश्वर, बुरहानपुर के अलावा हाथ करघा वस्त्र का व्यवसाय बिलासपुर, रायपुर, जबलपुर, दुर्ग, उज्जैन शाजापुर, सारंगपुर, टीकमगढ़, पन्ना, भोपाल, सीहोर और आष्टा आदि स्थानों पर भी पर्याप्त मात्रा में होता है। राज्य के आदिवासी क्षेत्रों में भी, जैसे धार, झाबुआ, नीमाड़ और बस्तर आदि स्थानों पर, आदिवासी लोग करघों पर कपड़ा बुनकर अपनी आवश्यकताएं पूरी कर लेते हैं। सारंगपुर, शाजापुर, जबलपुर, बिलासपुर आदि को छोड़कर अधिकांश स्थानों पर मोटा कपड़ा, जैसे दरी, कालीन, चादर, कोसा सिल्क, गमछा, दो सूती पाल, निवार आदि बुने जाते हैं, जिनकी खपत स्थानीय बाजारों में ही हो जाती है। इस व्यवसाय के इतना व्यापक होने पर भी आज बुनकर अधिकांशतः गरीब ही हैं और अभी तक वे पुराने और मन्द गति से चलने वाले करघों एवं सज्जा का ही उपयोग कर रहे हैं। इसीलिए नई सहकारी समितियों, शिक्षा केन्द्रों व सहायता केन्द्रों का जाल मध्यप्रदेश में बिछाया जा रहा है।

—

खादी का ५०० गज लम्बा थान

राजस्थान के बुनकरों ने ३ गज चौड़ी खादी का ५०० गज लम्बा थान बुनकर तैयार किया है। यह थान बम्बई के खादी ग्रामोद्योग भवन में रखा जायगा। आज तक देश में हथकरघे पर इतना लम्बा थान कभी नहीं बुना गया। इसकी लम्बाई का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि इस कपड़े को संसद भवन के चारों ओर लपेटा जा सकता है।

पिछले साल अमरीका ने खादी ग्रामोद्योग आयोग को कई लाख गज खादी का आर्डर दिया था। साथ ही उन्होंने यह शर्त रखी थी कि कोई थान १०० गज से छोटा न हो। बुनकरों ने इतना लम्बा थान कभी नहीं बुना था इसलिए उन्हें कपड़ा नहीं भेजा जा सका।

यह थान सफी मोहम्मद ने १२ से १४ घण्टे काम करके एक महीने के अन्दर ही बुनकर तैयार किया।

२ रु० प्रति गज के हिसाब से इस खादी के थान का मूल्य १,००० रु० है। इसका भार १ मन १२ सेर है।

दिसम्बर १९५७ में साम्यवादी विश्व

वर्ष जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश जिसमें साम्यवादी व्यवस्था आई	देश की आबादी लगभग	विवरण
१९१७	रूस	१९ करोड़ ३० लाख	प्रथम विश्व युद्ध काल में
१९२४	आउटर मंगोलिया	१० लाख	रूस की तरह का जनवादी गणतन्त्र
१९४५	पोलैंड	२ करोड़ ५० लाख	द्वितीय विश्व युद्ध के बाद
,,	रूमानिया	१ करोड़ ७० लाख	,,
,,	चेकोस्लोवाकिया	१ करोड़ ५० लाख	,,
,,	हंगरी	१ करोड़	,,
,,	बलगेरिया	७५ लाख	,,
,,	अलबेनिया	१२ लाख	,,
,,	यूगोस्लाविया	१ करोड़ ७० लाख	,,
,,	पूर्वी जर्मनी	१ करोड़ ७५ लाख	,,
१९४८	उत्तरी कोरिया	९० लाख	,,
१९४९	चीन (मंचूरिया, इनर मंगोलियासिंकियांग और तिब्बत सहित)	५० करोड़	चीन में राष्ट्रवादी दलों के बीच गृह युद्ध के फलस्वरूप
१९५४	वियतमिन	१ करोड़ ५० लाख	फ्रांसीसी उपनिवेशवाद के विरुद्ध युद्ध के फलस्वरूप
१९५६	केरल (भारत)	१ करोड़ ३६ लाख	स्वतन्त्र निर्वाचन द्वारा

पश्चिमी साम्राज्यवाद से मुक्त देश

दिसम्बर (१९५७)

किस देश का साम्राज्य	कौन से देश मुक्त हुए	किस सन में	विशेष
ब्रिटेन	ईराक	१९३२	
	जोर्डन	१९४६	
	भारत	१९४७	
	पाकिस्तान	१९४७	भारत को विभाजित करके नया राष्ट्र बनाया गया।
	इजराइल	१९४८	फिलस्तीन विभाजित होकर नया राष्ट्र बना
	बर्मा	१९४८	
	लंका	१९४८	
	मिस्र	१९२२, १९२२ एवं १९३६	में आंशिक स्वतंत्रता मिल चुकी थी

१	२	३	४
	सूडान	१९५५	
	घना	१९५७	पूर्व नाम गोल्ड कोस्ट
	मलाया	१९५७	
अमेरिका	फिलस्तीन	१९४६	
फ्रांस	हिन्दचीन	१९५४	
	चंद्रनगर (भारत)	१९५२	
	पांडिचेरी कारिकल माही (भारत)	१९५४	
	फ्रैंच मोरक्को	१९५६	
	ट्यूनीसिया	१९५५	
हालैण्ड (डच)	हिन्देशिया	१९४९	
इटली	अबीसीनिया	१९४१	नया नाम एथिओपिया
	इरीट्रिया	१९५२	एथिओपिया में संयुक्त
	लीबिया		

भारत का जहाजी व्यापार

सिं० स्टी० नेविगेशन कं० का विवरण

सिंधिया स्टीम नेविगेशन कं० लि० के वार्षिक अधिवेशन में श्री धरमसी एम. खताऊ ने निम्न आशय का भाषण दिया :—

चालू वर्ष के प्रथम ६ महीनों में (दिसम्बर १९५७ के अन्त तक) सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी का जो कार्य रहा है, उससे यही लगता है कि १९५७-५८ वर्ष में कम्पनी के कार्यपरिणाम संतोषजनक रहेंगे। बन्दरगाहों के कार्य में सुधार हो जाने से कम्पनी को यह भरोसा है कि उसके जहाज अधिक यात्रा कर सकेंगे, क्योंकि वह नए और तेज चलने वाले जहाजों को काम में ले रही है। कम्पनी का यह भी भरोसा है कि तहोम जहाजरानी से भी उसकी आय बढ़ेगी। किन्तु बर्मा से चावल लाने का जो भाड़ा कम्पनी को मिल रहा है, वह बहुत कम है और इसका कुछ असर कम्पनी के १९५८-५९ के कार्य-परिणामों पर पड़ेगा।

भारत और रूस के बीच कम्पनी ने जो जहाज सर्विस गत वर्ष शुरू की थी, उसमें खर्च की कुछ दिक्कतें उठ रही हैं, इस कारण कम्पनी ने सरकार से भाड़े में वृद्धि कर देने की मांग की है। यातायात मंत्री जो प्रयत्न कर रहे हैं उनकी वजह से जहाज कम्पनियों को शायद निकट भविष्य में जहाज खरीदने के लिए विदेशी मुद्रा मिल जाय। ऐसे समय में जबकि जहाज कुछ सस्ते उपलब्ध हो रहे हैं और भाड़ा-ऊंचा है, तब नए जहाजों की खरीद बहुत लाभदायक होगी। कम्पनी के पास इस समय ४४ जहाज हैं और दो जहाज एक आगामी माह और दूसरा जून में उसे विशाखा-पटनम् से मिलने वाले हैं। दो तेज जहाज एक १९५९ और दूसरा १९६० में कम्पनी को ल्यूबक यार्ड से मिलेंगे।

समुद्रपारीय व्यापार

व्यवसाय में नये और गतिमान जहाजों के योग द्वारा यह आशा की जाती थी कि हमारी उठान में भी क्रमशः बढ़ती होगी। किन्तु दुर्भाग्य से स्वेज नहर के बन्द हो जाने के कारण हमारे यात्रा मार्ग लम्बे हो गए और उसके परिणामस्वरूप हमारा उठान करीब ५ प्रतिशत ही बढ़ा।

नेशनल यूनियन ऑफ सी मैन के द्वारा वेतन वृद्धि व कुछेक अन्य सुविधाओं के लिए की गई मांग को देखते हुए

श्री धरमसी खताऊ

१० प्रतिशत वेतन वृद्धि व कुछेक सुविधाएं स्वीकार की गई थीं और उसका खर्च करीब ५ लाख रुपए देना पड़ेगा।

जहाज मालिकों को कुछेक भारतीय बन्दरगाहों पर पर्याप्त विलम्ब हुआ करता था, जिसका कारण केवल मानसून की स्थिति न होकर फर्टिलाइजर, खाद्यान्नों, लोहा तथा स्टील और दूसरे प्लान कारगोज का लगातार आयात था। यह आशा की जाती है कि विभिन्न बन्दरगाहों पर काम का रिकार्ड जो हाल ही में स्थापित हुआ है, लगातार रखा जा सकेगा।

वर्तमान वर्ष के लिये आशायें

बन्दरगाहों पर काम के सुधार द्वारा हमारा काम काज उन्नत हुआ है तथा नये और गतिमान जहाजों को सर्विस

(शेष पृष्ठ १७८ पर)

सन् १९५८-५९ का रेल्वे-बजट

गत १७ फरवरी को लोकसभा में रेल मंत्री, श्री जगजीवनराम ने १९५८-५९ वर्ष का रेलवे-बजट पेश किया। इसके अनुसार बजट-वर्ष में यातायात से कुल आय का अनुमान ४०७ करोड ४८ लाख रु० है, चालू वर्ष का संशोधित अनुमान ३८४ करोड ४० लाख रु० है। आगामी वर्ष में २७ करोड ३४ लाख रु० शुद्ध बचत होने का अनुमान है, जबकि चालू साल का संशोधित अनुमान कुल २१ करोड ६६ लाख रु० है।

रेलवे मंत्री के भाषण के कुछ उल्लेखनीय अंश निम्नलिखित है—

१९५७-५८ का संशोधित अनुमान

रेलों पर यातायात बढ़ जाने के कारण अनुमान है कि चालू वर्ष में माल यातायात से आमदनी बढ़कर २३१ करोड रु० हो जायगी, जो बजट के अनुमान से ४ करोड ५० लाख रु० अधिक है। यात्रियों के यातायात से आय भी बढ़कर १२० करोड ९० लाख रु० हो जाएगी, जबकि अनुमान ११९ करोड रु० का था। यातायात के और मदों से भी ३५ लाख अधिक आय होने का अनुमान है। इस प्रकार चालू वर्ष में यातायात से कुल आय ३८४ करोड़ ४० लाख रु० होने का अनुमान है।
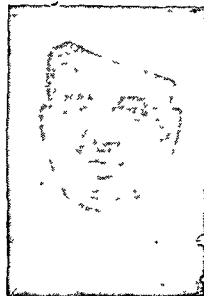
श्री जगजीवन राम

परन्तु, आमदनी में यदि ६ करोड़ ५० लाख रु० की वृद्धि होती है तो इसके मुकाबले साधारण संचालन व्यय में भी १५ करोड ३१ लाख की वृद्धि का अनुमान

रेलवे बजट एक दृष्टि में

करोड रुपयों में

	वास्तविक १९५६-५७	संशोधित अनुमान १९५७-५८	बजट अनुमान १९५८-५९
यातायात से कुल प्राप्ति	३४७.५७	३८४.४०	४०७.४८
कार्य चालन व्यय	२३३.९४	२५९.१६	२६८.३५
शुद्ध विविध व्यय	९.९२	१४.०१६	१६.९९
मूल्य ह्रास आरक्षित निधि के लिये विनिमय	४५.००	४५.००	४५.००
चालित (वर्कड) लाइनों को भुगतान	.३३	.३३	.२२
जोड़	२८९ १९	३१८.५०	३३०.५६
शुद्ध रेलवे राजस्व	५८.३८	६५.९०	७६.९२
सामान्य राजस्व को लाभांश	३८.१६	४४.२४	४९.५८
शुद्ध बचत	२०.२२	२१.६६	२७.३४

है। इसमें से ४ करोड़ ५० लाख अर्थात् वृद्धि का २१ प्रतिशत केवल मंहगाई भत्ते में ५ रु० महीने की अन्तरिम वृद्धि के कारण हुआ है, जो १ जुलाई, १९५७ से दी जा रही है। इसकी सिफारिश वेतन कमीशन ने की थी। खर्च में करीब १॥ करोड़ की वृद्धि जुलाई, १९५७ से कोयले का दाम बढ़ जाने के कारण हुई है। बाकी वृद्धि मरम्मत और देखभाल खाते में हुई है, जिसका मुख्य कारण मूल्यों का बढ़ जाना है।

अस्तु, अनुमान है कि अब शुद्ध बचत केवल २१ करोड़ ६६ लाख रु० होगी, जबकि बजट में अनुमान ३० करोड़ ८३ लाख रु० का किया गया था। यह सब रकम विकास निधि में डाल दी जाएगी।

१९५८-५९ का अनुमान

इस समय यात्रियों के यातायात का जो रुख है, उसे देखते हुए सन् १९५८-५९ में इस मद से १२४ करोड़ ७३ लाख रु० आय का अनुमान किया गया है, जो चालू वर्ष के संशोधित अनुमान से ३ करोड़ ८३ लाख रु० अधिक है। पारसल आदि अन्य यातायात से होने वाली आय का अनुमान २४ करोड़ ६५ लाख रु० है। माल की ढुलाई से २५० करोड़ ५० लाख रु० आय का अनुमान है। अनुमान है कि आने वाले वर्ष में रेलों को १ करोड़ २० लाख टन अधिक भार वहन करना पड़ेगा। इस्पात कारखानों के विस्तार और कोयले की ढुलाई में वृद्धि के कारण रेलों की ढुलाई में यह वृद्धि होगी। इस प्रकार अगले साल यातायात से कुल आय ४०७ करोड़ ४८ लाख रु० होने का अनुमान है।

बजट-वर्ष में २६८ करोड़ ३५ लाख रु० साधारण संचालन व्यय होने का अनुमान है, जो चालू वर्ष के संशोधित अनुमान से ९ करोड़ १९ लाख रु० अधिक है। इसमें से करीब ४ करोड़ ४० लाख रु० पूरे साल तक महंगाई का अधिक भत्ता देने के कारण तथा वार्षिक तरक्की और कर्मचारियों की संख्या बढ़ने के कारण होगी। मरम्मत खर्च भी २ करोड़ ५० लाख रु० अधिक होगा। शेष वृद्धि कोयला तथा अन्य ईंधन की मद में होगी।

अगले साल रेलों को आय से चालू लाइन के निर्माण पर ३। करोड़ रु० अधिक खर्च किया जायगा और साथ ही पूंजी से भी निर्माण कार्य पर अधिक खर्च होगा। इससे साधारण राजस्व में रेलों को ५ करोड़ रु० और लाभांश देना पड़ेगा। इन सबको बाद करके बजट-वर्ष में २७ करोड़ ३४ लाख रु० बचत होने का अनुमान है, जो सबका सब विकास निधि में जमा कर दिया जायगा।

चालू वर्ष में जितने निर्माण-कार्य शुरू किये गये थे, सब पर जोरों पर काम चल रहा है और इन सब पर करीब १॥ लाख मजदूर काम कर रहे हैं। इन कामों में विशेष उल्लेखनीय ५२ मील लम्बी भिलाई-दल्ली-रजहरा लाइन है, जो भिलाई के इस्पात कारखाने में कच्ची धातु पहुंचाने के लिए एक सीजन में ही बना दी गयी। इसके अलावा १५० मील नयी लाइनें चालू की गयीं और १३ मील दोहरी लाइन बिछाई गयी। करीब ५०० मील नयी लाइन बिछाई जा रही है। ८०० मील दोहरी लाइन बिछाई जा रही है। इसमें से ३८५ मील दक्षिण-पूर्व, ११५ मील दक्षिण, १३५ मील पश्चिम, १०० मील उत्तर और ४५ मील मध्य रेल की है। मोकामा में गंगा-पुल बनाने का काम चालू है। कुछ मशीनें और गाड़ी आदि जिनका आर्डर दिया गया था, समय के पहले ही उपलब्ध हो जाएंगी, इसलिए मशीन, गाड़ी आदि चल-स्टाक की मद पर अब २३५ करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है, जो बजट से करीब १७ करोड़ अधिक है।

अगले साल निर्माण का कार्यक्रम

अगले साल, मशीन, चल-स्टाक और निर्माण आदि के लिए २६० करोड़ रु० रखे गये हैं। दो नयी लाइनें बनाने का कार्यक्रम है। एक उत्तर रेलवे में,१०० मील लम्बी रावर्टगंज-गढ़वा लाइन होगी, जिस पर १७ करोड़ रु० खर्च होगा और दूसरी, पूर्व रेलवे में ४० मील लम्बी मूरी-रांची लाइन है, जिस पर ५ करोड़ ९० लाख रु० खर्च होगा: राउरकेला कारखाने के लिए बड़ाबिल-पाम्पोश दर्रे पर साइडिंग बनायी जाएगी, जिस पर १ करोड़ १७ लाख रु० खर्च होगा। अन्य उल्लेखनीय कार्य ये हैं: दक्षिण-पूर्व रेलवे में द्रुग से कामटी तक ६८ मील दोहरी लाइन-खर्च ७ करोड़ ८० लाख रु०, विजयानगरम-गोपालपट्टनम सेक्शन पर दोहरी लाइन—खर्च ३ करोड़ ८० लाख रु० और

(शेष पृष्ठ १७४ पर)

१९५६-५७ में रेलवे

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजनाके प्रथम वर्ष १९५६-५७ की रेल मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट १४ फरवरी को प्रकाशित हुई है। इससे पता चलता है कि इस वर्ष माल और यात्रियों के यातायात में भारतीय रेलों ने नये रिकार्ड कायम किये।

आलोच्य वर्ष, दूसरी पंचवर्षीय आयोजना का पहला साल है। १९५५-५६ के मुकाबले, जो आयोजना का आखिरी वर्ष था, १९५६-५७ में सरकारी रेलों में माल का यातायात १० प्रतिशत, अर्थात् ११ करोड ४० लाख टन से बढ़कर १२ करोड ५० लाख टन हुआ।

प्रस्तुत वर्षमें वास्तविक खर्च १७६ करोड ६ लाख रु० हुआ। स्मरण रहे कि आयोजना में रेलों के लिए कुल १,१२५ करोड रु० निर्धारित है। इसमें से एक तिहाई रेलों को अपने पास से खर्च करना है, २२५ करोड रु० रेलों के घिसाई-कोष से और १५० करोड रु० रेलों की आय से। बाकी ७५० करोड रु० साधारण राजस्व से आयेगा।

माल के यातायात में पिछले साल का रिकार्ड तोड दिया गया। इस वर्ष १२ करोड़ ५० लाख टन माल ढोया गया और टन मीलों की संख्या ४० अरब २२ करोड ५० लाख रही, जबकि पिछले वर्ष का रिकार्ड ११ करोड़ ५० लाख टन और ३६ अरब ४७ करोड़ २० लाख टन मील (संशोधित) था।

यात्रा आरम्भ करने वालों की संख्या सन् १९५५-५६ में १ अरब २९ करोड ७० लाख यात्रियों से बढकर, १९५६-५७ में १ अरब ३८ करोड ३० लाख हो गई। यात्री—मीलों की संख्या ३९ अरब ८ करोड ३० लाख से बढ़कर ४२ अरब १९ करोड़ ४० लाख हो गई।

बडी लाइन पर प्रतिदिन औसत १२,१६८ माल के डिब्बे और छोटी लाइन पर ७,८१९ डिब्बे माल की लदाई के लिए उठे। पिछले साल का औसत ११,३७४ और ७,२६३ था। यदि इसके साथ रेल की अपनी ढुलाई की संख्या भी शामिल कर दी जाए, तो माल डिब्बों की प्रतिदिन ढुलाई का औसत बड़ी लाइन पर १४,२७५ और छोटी लाइन पर ८,६७० हो जाता है। पिछले साल का औसत १३,४०७ और ८,०२६ था।

कार्यकुशलता

सन् १९५६ ५७ में रेलों की कार्यकुशलता बढ़ने का प्रमाण टन मीलों की सूचक संख्या में वृद्धि से मिलता है, जो बडी लाइन पर पिछले साल ५४१ टन मील प्रति वैगन दिन से बढ़कर इस वर्ष ५७० और छोटी लाइन पर पिछले साल के २०३ से बढकर २१० हो गई। वैगनों को अधिक से अधिक लादने और चलाने का जो प्रयत्न किया गया, उसी का यह फल है।

इस वर्ष यात्री ट्रेन मील की संख्या भी बढ़कर ११ करोड़ ८७ लाख ५० हजार मील हो गई। माल ट्रेन मीलों की संख्या भी बढ़कर ८ करोड ६६ लाख ४० हजार हो गई। बडी लाइन पर प्रत्येक वैगन प्रतिदिन औसत ४७.७ मील और छोटी लाइन पर २८.७ मील चला, जबकि १९५५-५६- में ४६.३ और २८.५ मील चला था।

आय और व्यय

आलोच्य वर्ष में सरकारी रेलों की यातायात से कुल

रेलों में लगी कुल पूंजी

३१ मार्च १९५७ को सब रेलो मे कुल १२ अरब ४६ करोड ४० लाख रु० की पूजी लगी हुई थी। इसमे से १२ अरब ३९ करोड ८८ लाख रु० सरकारी रेलो की पूजी लगी हुई थी। इसमें पूजी (ऋण खात)—१० अरब ७१ करोड ७१ लाख, घिसाई कोष में—४९ करोड ४२ लाख, विकास निधि—७५ करोड ५४ लाख और रेल-राजस्व—४३ करोड २१ लाख रु० थी। ६ करोड ५२ लाख र० की बाकी रकम विभिन्न कम्पनियो और स्थानीय वोर्डो को लाइनो मे लगी हुई थी।

वर्ष के अन्त मे सारे देश में रेल-लाइनो की लम्बाई ३४,७४४ मील थी। इनमें से ३४,२९१ मील सरकारी रेलो की थी और बाकी ४५३ मील लाइन गैर-सरकारी रेलो की।

आय ३४७ करोड़ ४७ लाख रु० हुई। इसमें ११६ करोड़ २३ लाख यात्रियों के यातायात से और २०२ करोड़ ६१ लाख रु० माल की ढुलाई से हुई। बाकी २७ करोड़ २८ लाख पार्सल सामान और फुटकर मदों से हुई।

१९५६-५७ में साधारण संचालन व्यय २:३ करोड़ ६४ लाख रु० हुआ, जो पिछले साल से २० करोड़ ६६ लाख रु० अधिक है। घिसाई-कोष में ४५ करोड़ ६३ लाख रु० डाले गये। इसमें ६३ लाख रु० चित्तरंजन इंजन कारखाने और इंटिगरल कोच कारखाने की मशीनों की घिसाई के खाते के हैं। सब खर्च और भुगतान बाद कर देने के बाद, शुद्ध आय ५८ करोड़ ३८ लाख रु० रही। इसमें से ३८ करोड़ १६ लाख रु० सामान्य राजस्व में लाभांश के रूप में दिया गया। इस प्रकार, आलोच्य वर्ष में शुद्ध लाभ २० करोड़ २२ लाख रु० हुआ, जो विकास-निधि में डाल दिया गया।

रेलों की आय और काम में वृद्धि का सम्बन्ध देश की आर्थिक उन्नति से है। इस वर्ष खेती की उपज में थोड़ी वृद्धि हुई। कुल ६ करोड़ ८६ लाख टन अन्न पैदा हुआ। यह पिछले वर्ष की उपज से ३४ लाख टन अधिक है। तेलहन, कपास, गन्ना और पटसन आदि व्यापारिक फसलों की उपज बढ़ी।

पिछले कई वर्ष औद्योगिक उत्पादन बढ़ रहा है। इस वर्ष भी बढ़ती जारी रही। अधिकांश उद्योगों में, विशेषकर चीनी, सीमेंट, इंजीनियरी, मोटर गाड़ी और साइकिल कारखानों का उत्पादन बढ़ा। कोयले के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई और वह ३ करोड़ ८५ लाख टन से बढ़कर ४ करोड़ ३ लाख टन हो गया।

यात्रियों को सुविधाएं

स्टेशनों और गाड़ियों और माल लदाने वालों की सुविधा पर विशेष ध्यान दिया जाता रहा।

इस वर्ष १३०१ नये सवारी डिब्बे चलाये गये, जिनमें से ५६५ डिब्बे बड़ी लाइन के, ७०४ मीटर लाइन के और ३२ छोटी लाइन के थे। इनमें से ६१० नये सुधरे किस्म के डिब्बे निचले दर्जे के यात्रियों के लिए हैं।

इस वर्ष तीसरे दर्जे के १३०६ डिब्बों में बिजली के पंखे लगाये गये। यात्रियों को अन्य भी सुविधाएं दी गईं।

—

बर्मा द्वारा कोयले में आत्मनिर्भरता का प्रयत्न

वर्मा एक कृषि प्रधान देश है। यहा के चावल और सागौन का विश्व क व्यापार मे प्रमुख स्थान है और बर्मा की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ता प्रदान करते है। इनके अतिरिक्त वर्मा मे अनेक खनिज पदार्थ तेल, चादी, सीसा टीन और टगस्टन भी अच्छी मात्रा मे उपलब्ध होते हैं। सीसे की विश्व भर मे सबसे अधिक खानें वर्मा मे ही है, वर्मा में कोयला और लोहा भी मिलता है, लेकिन इस क्षेत्र में विशेष प्रगति नहीं हुई है।

कोयला और कोक की उपलब्धि के लिये वर्मा को पूर्णत भारत पर निर्भर रहना पडता है। १९५६ में बर्मा को भारत से २,५०,९९१ टन कोयला भेजा गया है, और १९५५ में इसकी मात्रा १ ६६,४३२ टन थी। बर्मा सरकार ने विदेशी विनिमय की बचत क लिए खानो के सुधार का कार्यक्रम आरम्भ कर दिया है। प्रारम्भिक रूप मे खनिज पदार्थों की उन्नति क लिये एक कार्पोरेशन बनाया गया था। १९५३ और १९५४ के बाच प्राविधिक सहयोग सहायता (टी० सी० ए०) के अतर्गत एक अमेरिकी फर्म के सहयोग से चिन्दविन नदी के किनारे की कालेवा की खानों में कोयले की खुदाइ के कार्य सम्बन्धा सर्वेक्षण किया गया था। साथ हा बर्मियो को अमेरिकी फर्मों में प्रशिक्षण दिया गया। इसका फल यह हुआ कि जनवरी १९५६ से कालेवा की खानों से ५० टन प्रति दिन के हिसाब से कोयला निकलने लगा। इन खानो से बर्मा की २० वर्ष की आवश्यकता तक के लिये पर्याप्त कोयला निकल सकता है।

अब एक ब्रिटिश फर्म ४ वर्षीय कार्यक्रम (१९६० में समाप्ति) क अनुसार कालवा कोयला खानों के विकास में सलग्न है। कार्यक्रम के अनुसार कोयले के क्षेत्र में पूरा नगर बसाना भी है। बर्मा सरकार ने इस फर्म को दूसरे वित्तीय वर्ष तक अपने कार्यक्रम का पूरा विवरण दे देने का अनुरोध किया है।

वर्मा में 'मैसोजोहक'' से 'टरटिअरी'' तक के कई प्रकार का कोयला प्राप्त हो सकता है। टरटीअरी' किस्म का कोयला विशेष महत्वपूर्ण है और यह लिगनाइट क प्रकार का होता है। कालेवा में मिलने वाला कोयला बारीक (कोल डस्ट) किस्म का है। रगून के विद्युत कारखानो के लिए उपयुक्त सिद्ध हो चुका है तथा रेलें भी उसे भारतीय कोयले क साथ मिला कर प्रयोग में लाती हैं। अभी अभी सयुक्त राष्ट्रीय प्राविधिक सहायता कार्यक्रम (यू० ए० टी० ए० ए०) क अनुसार एक रूसी प्राविधिक दल बमा सरकार को कलेवा खानों के मितव्ययतापूर्ण उपयोग के सम्बन्ध मे सलाह देने के लिए वर्मा आया है। इन्जिनों मे इस कोयल का उपयोग किस प्रकार हो, इसक सम्बन्ध मे भी मत्रणा ली जा रही है।

कालेवा क कोयले का महत्व इस बात पर निर्भर करता है कि उसकी उत्पादन लागत कितनी रहती है। निकट भविष्य में भारत से कोयले का आयात वन्द कर दने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। वैसे बर्मा मे आर्थिक विकास और बिजली के कारखानो के लिये कोयले की माग निरन्तर बढ़ती जायेगी।

—

आर्थिक समृद्धि में अमेरिकन सहयोग

प्रेसिडेण्ट आइज़न हौवर ने १३ जनवरी को कांग्रेस के नाम अपने बजट सन्देश में सब मिला कर कुल ७२ अरब ५० करोड़ डालर की रकम की स्वीकृति देने का अनुरोध किया है।

स्वतन्त्र विश्व के व्यापार तथा आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए प्रेसिडेण्ट आइज़न हौवर ने प्रार्थना की है कि अमेरिका के निर्यात-आयात बैंक की ऋण देने की क्षमता में २ अरब डालर का विस्तार कर दिया जाए। १९५९ में विकास ऋण कोष के लिए ६२ करोड़ ५० लाख डालर तथा १९५९ के अमेरिकी टैक्निकल सहायता कार्यक्रम को क्रियान्वित करने और संयुक्त राष्ट्रसंघ के टैक्निकल सहायता कार्यक्रम को अमेरिकी सहयोग देने के लिए १६ करोड़ ४० लाख डालर की एक राशि की स्वीकृति प्रदान करने की मांग की है। दूसरे देशों की खास संकटकालीन मांगों को पूरा करने के निमित्त २० करोड़ डालर के संकटकालिक कोष की स्थापना की भी सिफारिश की है।

अनुसन्धान और विकास सम्बन्धी खर्च २ अरब २५ करोड़ ६० लाख डालर का होगा। १९५५ की तुलना में इसमें ५० प्रतिशत की वृद्धि हो गई है। अणुशक्ति सम्बन्धी कार्यक्रम के विस्तार के लिए प्रेसिडेण्ट ने कांग्रेस से २ अरब ५५ करोड़ डालर की रकम मांगी है। चालू वर्ष से यह मांग २५ करोड़ डालर अधिक है।

विज्ञान, अनुसन्धान, पुस्तकालय और संग्रहालय की अभिवृद्धि के कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रेसिडेण्ट ने वैज्ञानिक अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने के लिए ११ करोड़ ९० लाख डालर की रकम मांगी है तथा शिक्षा के विस्तार के लिए ४६ करोड़ ३० लाख डालर की रकम मांगी गई है।

भारत को सहायता

गत मास १६ जनवरी, भारत को दिए जाने वाले नए अमेरिकी ऋण की घोषणा की गई है। यह नया ऋण लगभग २२॥ करोड़ डालर अर्थात् ११२ करोड़ रु० का होगा। इस ऋण को मिला कर स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत को दी गई कुल अमेरिकी सहायता-राशि लगभग १ अरब २७ करोड़ ५० लाख डालर अथवा ६०६ करोड़ रु० तक पहुँच गई है।

इस कुल राशि में से १ अरब १८ करोड़ ८० लाख डालर अथवा ५६५ करोड़ रु० की रकम तो अमेरिकी सरकारी कोष से भारत को प्राप्त हुई है तथा शेष राशि गैर-सरकारी साधनों, जैसे प्रतिष्ठान तथा धार्मिक, दानी अथवा शिक्षा सम्बन्धी संस्थाओं से प्राप्त हुई हैं।

१९५६ में हुए कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौते को छोड़कर घोषित किया गया नया ऋण भारत को दी गई अमेरिकी सहायता की सबसे बड़ी रकम है। कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौते के अन्तर्गत भारत को बिना डालर खर्च किए ही ३६ करोड़ डालर मूल्य का गेहूँ, चावल तथा अन्य कृषि-सामग्री मिल रही है। भारत में इन वस्तुओं की बिक्री से रुपये के रूप में जो रकम प्राप्त होगी, उसमें से २८ करोड़ ८० लाख डालर की रुपयों के रूप में प्राप्त हुई रकम भारत सरकार को अमेरिका की ओर से ऋण और अनुदानों के रूप में प्रदान कर दी जाएगी।

अब तक भारत को मिली अमेरिकी सहायता का कुल ब्योरा निम्न है:

	करोड़ डालर में
अमेरिकी आयात-निर्यात बैंक तथा विकास ऋण-कोष	२२.५०
भारत-अमेरिकी टैक्निकल कार्यक्रम के अन्तर्गत टैक्निकल और आर्थिक सहायता	४०.११
१९५१ का गेहूँ-ऋण	१९.००
१९५६ का कृषि-सामग्री सम्बन्धी समझौता	२८.८०
१९५१ का मोटे अनाज सम्बन्धी समझौता	१.२०
अन्य विविध	७.१४
कुल योग	११८.८५ करोड़ डालर

गैर सरकारी साधनों से प्राप्त सहायता का योग ८७२ लाख डालर है।

भारत सरकार ने अमेरिका से मिलने वाली आर्थिक सहायता के बारे में विस्तृत रूप से चर्चा करने के लिए एक प्रतिनिधि मंडल वाशिंगटन भेजने की घोषणा की है।

(शेष पृष्ठ १७२ पर)

नया सामयिक साहित्य

आधुनिक परिवहन—ले० श्री डा० शिवध्यानसिंह चौहान, प्रकाशक—लक्ष्मीनारायण अग्रवाल। १८+२२/४ पृष्ठ संख्या ४१० । मूल्य ६.७५ नये पैसे सजिल्द ।

सम्पदा के पाठक प्रस्तुत पुस्तक के लेखक से परिचित हैं। उन्होंने दो वर्ष पूर्व यह पुस्तक लिखी थी। जल्दी ही इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित होना इस बात का सूचक है कि अब हिन्दी में भी उत्कृष्ट अर्थशास्त्रीय साहित्य पढ़ा जाने लगा है।

किसी भी देश के आर्थिक विकास में परिवहन के साधनों व स्थल, जल और वायु द्वारा यातायात के विकास का असाधारण महत्व रखता है। भारत को विदेशी शासन के जो दुष्परिणाम भोगने पड़े, उनमें से एक यह था कि उस के जल व वायु यातायात का विकास नहीं हुआ। केवल रेलवे जाल बिछाया गया और यह भी विदेशी व्यापार के या सैनिक आवश्यकता को सामने रख कर। नहरी मार्ग के सरल और सस्ते यातायात की विशेष रूप से उपेक्षा की गई। समुद्री व्यापार पर भी विदेशी कम्पनियों का एकाधिकार था। आज औद्योगिक विकास करते हुए यातायात की कठिनाइयां अत्यन्त विकट रूप में सामने आ रही हैं। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने स्थल, जल और वायु यातायात का इतिहास देते हुए उसको वर्तमान योजनाओं व समस्याओं पर प्रकाश डाला है। रेलवे स्थल परिवहन का सर्व प्रधान अंग है। इसलिए उस पर १४ अध्याय दिये गये हैं, जिनमें इतिहास के अतिरिक्त पुनर्वर्गीकरण, प्रबन्ध, रेलभाड़ा नीति और रेलवे व्यय आदि पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। पुनर्वर्गीकरण की कठोर आलोचना की गई है। इस का विशेष रूप से उल्लेख हम इसलिए आवश्यक समझते हैं कि आजकल अर्थशास्त्र के विद्वान् सरकार की आलोचना करने में संकोच करते हैं। किन्तु इस प्रकरण में से पुनर्वर्गीकरण में इन संशोधनों का उल्लेख करना लेखक संभवतः भूल गये हैं, जो १ अगस्त १९५५ को किये गये हैं। स क यातायात के राष्ट्रीयकरण की आलोचना भी लेखक के स्वतंत्र चिन्तन का परिचय देती है।

आजकल देश की नई आवश्यकताओं के कारण ट्रकों, बसों के बढ़ते हुए युगमें हम ग्रामोद्योगों के महत्व को भूल रहे हैं। आजकल बैलगाड़ियों का स्थान ट्रक ले रहे हैं और बैलों पर किसानों का खर्च यथापूर्व होते हुए भी उनका उपयोग कम हो रहा है। इसी तरह शहरों में तांगों का प्रचलन निरन्तर कम हो रहा है और पैट्रोल व डीजल प्रधान गाड़ियों के कारण हम विदेशों पर निर्भर होते जा रहे हैं, इस समस्या पर अभी अर्थशास्त्रियों ने—गांधीवादी नेताओं ने भी कम विचार किया है। इस पुस्तक में यदि इस प्रश्न पर कुछ निश्चित दृष्टि दी जाती तो अच्छा होता।

आंतरिक जल परिवहन की नई योजना का परिचय देना लेखक नहीं भूला है। जहाजी उद्योग का इतिहास बहुत जानकारी पूर्ण है और आज की समस्याओं पर अच्छा प्रकाश डालता है। विमान परिवहन का प्रकरण भी आधुनिक जानकारी से पूर्ण है।

लेखक व प्रकाशक इस पुस्तक के लिए हिन्दी जगत् की ओर से बधाई के पात्र हैं।

★

इन्टरमीडियेट बैंकिंग—ले० श्री लालताप्रसाद अग्रवाल एम० काम०। प्रकाशक—इण्डस्ट्रियल एण्ड कमर्शल सर्विस, ११ हीवेट रोड, अलाहाबाद—३ पृष्ठ संख्या ४००, आकार २२+१८/८। मूल्य ४)।

प्रस्तुत पुस्तक अर्थशास्त्र के इण्टरमीडियेट विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। अर्थशास्त्र में बैंकिंग का विषय अत्यन्त शुष्क तथा अरोचक माना जाता है। लेखक ने प्रयत्न किया है कि बैंक-शास्त्र के शुष्क विषय को सरल व सुविधाशैली में समझावे।

प्रस्तुत पुस्तक के वस्तुतः दो भाग हैं। पहले दस अध्यायों में बैंक शास्त्र के नियमों का सैद्धान्तिक परिचय दिया गया है। मुद्रा की उत्पत्ति, मुद्रा, कागजी मुद्रा, मुद्रा के मान, ग्रीशम का नियम, मुद्रा का मूल्य- साख व बैंक और खास पत्र आदि इस भाग के अन्तर्गत आते हैं। आवश्यक पारिभाषिक शब्दों में अंग्रेजी पर्याय साथ साथ

दे दिये गये हैं, इससे उन पाठकों को भी सुविधा हो जायेगी, जो इस पुस्तक के हिन्दी पारिभाषिक शब्दों से बहुत परिचित नहीं हैं।

पुस्तक का दूसरा भाग भारतीय बैंकिंग से सम्बन्ध रखता है। भारतीय बैंकिंग का इतिहास, देशी साहूकार सहकारी तथ्य विभिन्न प्रकार के बैंक, औद्योगिक अर्थ व्यवस्था, डाकघर सेविंग बैंक, विनिमय बैंक, केन्द्रीय बैंक, स्टेट बैंक और रिजर्व बैंक, भारत में बैंकिंग विधान, मुद्रा बाजार, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष तथा बैंक आदि सभी ज्ञातव्य विषयों का समावेश इस भाग में है। ये अध्याय केवल विद्यार्थियों के लिए ही उपयोगी नहीं हैं, सामान्य शिक्षित वर्ग भी इस से लाभ उठा सकता है। इन प्रकरणों में मुद्रास्फीति या मुद्रा प्रसार की विशेष प्रकार की चर्चा की गई है, जिसका सामान्य जनजीवन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। पौण्ड पावना, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रसार, ब्रिटिश साम्राज्य डालर निधि, रुपये का अवमूल्यन, मैनेजिंग एजेंसी (गुण व दोष), औद्योगिक वित्त निगम, औद्योगिक विकास और विदेशी पूंजी आदि ऐसे विषय हैं, जिनमें आज का शिक्षित वर्ग रुचि लेता है। इन विषयों का ज्ञान आज के पत्रकारों को भी होना चाहिए, तभी वे देश के इन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर पाठकों को जानकारी दे सकेंगे। लेखक ने प्रयत्न किया है कि प्रत्येक विवादास्पद प्रश्न पर दोनों पक्ष दे, ताकि पाठक स्वयं ही मत निर्धारण कर सके।

पुस्तक सामान्यतः विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है। उनकी सुविधा के लिए संक्षिप्त निर्देश तथा प्रश्नावलि भी प्रत्येक प्रकरण के साथ दी गई है। छपाई सफाई अच्छी है।

★

वाणिज्य प्रणाली—(१—२ भाग) लेखक और प्रकाशक वही। मूल्य प्रत्येक भाग २॥) रु०।

अर्थ शास्त्र के अनुभवी अध्यापक ने ये दोनों भाग हायर सैकण्डरी व इन्टर कक्षाओं के लिए लिखे हैं। वे विद्यार्थियों की योग्यता व आवश्यकता से भली भांति परिचित हैं। इसलिए उन्होंने प्रयत्न किया है कि प्रतिपादन शैली सुबोध हो और अरोचक न होने पावे। विक्रय के साधन, क्रय विक्रय, सौदे की गतिविधिके अतिरिक्त व्यापार के लिए उपयोगी अन्य सामग्री—बैंक, चैक, हुण्डी, डाक विभाग की सेवाएं, दफ्तरी कार्य की आवश्यक जानकारी आदि सभी देने का प्रयत्न किया गया है, तो दूसरे भागमें व्यापारिक संगठन की विस्तृत रूपेण चर्चा है। कम्पनी कैसे खड़ी की जाती है, नया कम्पनी कानून क्या है, इसमें मैनेजिंग एजेंसी की नई व्यवस्था क्या है, विदेशी व्यापार कैसे होता है लेनदेन का भुगतान कैसे होता है? यह सब सरल शैली में दिया गया है। दूसरे खण्ड में बाजार समाचार को भी १५० पृष्ठ दिए गए हैं। जिन में पारिभाषिक शब्द. स्टाक व शेयर बाजार और मुद्रा बाजार आदि की जानकारी दी गई है। साधारण पाठकों को मुंदड़ा शेयर प्रकरण जानकर बहुत आश्चर्य हुआ था, क्योंकि शेयर बाजार स्टाक एक्सचेंज आदि का अजीब गौरखधन्धा होता है। इस प्रकार की पुस्तकों से उसका सामान्य ज्ञान सामान्य शिक्षित वर्ग को भी हो सकता है।

व्यापारिक जगत में प्रचलित शब्दों के अंग्रेजी व हिंदी शब्द देकर उन्हें समझाया गया है। यह खेद की बात है कि इन पारिभाषिक शब्दों का अभी तक अखिल देशीय स्तर पर निर्धारण नहीं हो सका है, किन्तु प्रस्तुत पुस्तक के शब्द कठिन नहीं हैं।

विद्यार्थियों की दृष्टि से इस पुस्तक में आवश्यक परीक्षा सम्बन्धी प्रश्न देकर अधिक उपयोगी बना दिया है।

★

"निबन्ध भारती"—भद्रव्रत, एम० ए०, साहित्य-रत्न। प्रकाशक:—भारती पब्लिकेशन्ज, ३ लाज बिल्डिंग, रोहतक रोड, नई दिल्ली—५, मूल्य ३)।

प्रस्तुत पुस्तक में अनेक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक एवं जीवन चरित्र सम्बन्धी ४२ निबन्ध लिखे गए हैं। विश्वशांति, भारत सेवक समाज, दशमलव मुद्रा, शिक्षा प्रणाली, गांधीवाद, पंचवर्षीय योजना, स्वतन्त्रता के दस वर्ष, आदि अधिकांश निबन्ध आधुनिक विषयों पर ही लिखे गए हैं। रूस के कृत्रिम उपग्रह तक विषय पर निबन्ध देकर इसे आधुनिकतम रूप दे दिया गया है।

निबन्ध संक्षिप्त होते हुए भी लेखक के अध्ययन तथा विविध समस्याओं पर विचार क्षमता का परिचय भी देते

हैं। लेखक के दक्षिण भारतीय होने पर भी हिन्दी पर पूर्ण अधिकार है। शैली मनोरंजक, स्पष्ट एव प्रभावशाली है। दक्षिण के दो महान सन्त कवि आण्डाल तथा सगीत ब्रहा श्री त्यागराज का भी हिन्दी पाठकों को परिचय इस सग्रह की अपनी विशषता है। यह सग्रह कालेजो एव हायर सेकेन्डरी स्कूलो के विद्यार्थियों का तात्कालिक आवश्यकता को दृष्टि मे रखकर प्रस्तुत किया गया है। आशा है इससे वे लाभ उठायेंगे। छपाई शुद्ध तथा आकार सुन्दर है।

★

योजना (गणतन्त्र अक)—सम्पादक श्री मन्मथनाथ गुप्त। प्रकाशक—पब्लिकेशन्स डिविजन, भारत सरकार, ओल्ड सैक्रेटेरियट, दिल्ली। मूल्य दस पैसे।

'योजना भारत सरकार द्वारा योजना के प्रचार के लिए निकाली जाती है। किन्तु इसके सुयोग्य सम्पादक ने केवल सरकारी प्रचार या प्रगति के सरकारी विवरण मात्र से इसका क्षेत्र अधिक व्यापक कर दिया है। देश की विविध आर्थिक और विशेषकर सामाजिक समस्याओं पर चिन्तन तथा मार्ग दर्शन इसकी विशेषता है।

प्रस्तुत अक मे ६ कहानिया, ७ कविताए तथा १६ लेख है। कुछ लेख स्वभावत योजना सम्बन्धी है और सरकारी दृष्टिकोण को प्रकट करते हैं। परन्तु कुछ विचारपूर्ण लेख सामाजिक समस्याओ पर लिखे गये है, जिनमे समाजका क्षयरोग जातपात, आधी जनता आज भी गुलाम, पठनीय है, किन्तु हमे सम्पादक का राशिफल सम्बन्धी लेख बहुत उपयोगी जान पड़ा। आज के प्रतिष्ठित दैनिक व साप्ताहिक पत्र भी शिक्षित जनता को झूठे वहमों मे डालने का अपराध कर रहे हैं। इस दुष्प्रवृत्ति के विरुद्ध सम्पादक ने कलम उठाकर प्रशसनीय कार्य किया है। सामुदायिक विकास सम्बन्धी लेख भी विचारणीय है। यह ठीक है कि कहानियां भी योजना की भावना को लेकर लिखी गई हैं, परन्तु कुछ कम कहानियों से भा काम चल सकता था। योजना सम्बन्धी मानचित्र बहुत अच्छा है। ३२ पृष्ठो के इस विशषाक का मूल्य केवल प्रचार के लिए दस पैसे-करीब डेढ आना रखा गया है।

★

प्रस्तुत अक गणतन्त्र दिवस के अवसर पर प्रकाशित किया गया है। इसमे अनेक सुन्दर विचारणीय लेख दिये गये है। कविताए पठनीय तथा कहानिया मनोरजक है, पजाब की यशोगाथा, सविधान का सामाजिक पहलू और प्रसाद के साहित्य मे राष्ट्रीय भावना आदि लेख हैं। पजाब की प्रगति पर भी परिचयात्मक लेख है। कहानियां जन सामान्य के निकट सम्पर्क और जन भावना के परिचय को सूचित करती हैं। सम्पादन मे प्रयत्न किया गया है। आवरण आकर्षक है और छपाई सफाइ अच्छी।

★

'मधुकर' (मासिक)—सम्पादक व प्रकाशक—श्री राजेन्द्र शर्मा २७/२, शक्तिनगर, दिल्ली। वा० मूल्य ६) रु०।

कुछ महानो से 'मधुकर' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ है। इसके सम्पादक विजय, सुप्रभात और धर्मयुग आदि पत्रों मे काम करके पत्रकारिता का पर्याप्त अनुभव ले चुके हैं। वे पाठको की रुचि को जानते हैं और पत्र का स्तर ऊचा रखने मे कुशल है। सामग्री की विविधता और बहिरग की दृष्टि से 'मधुकर' हिन्दी मे अपना स्थान जल्दी लेगा। बीच मे चित्र तथा सुन्दर प्रसग इसकी एक विशेषता है, जो नवनीत आदि मे पाई जाती है।

'अनहद नाद' तथा 'साहित्य चर्चा' नामक स्तम्भ विशेष रोचक तथा उपयोगी हैं। २००) रु० की वर्ग पहेली पाठको के लिए आकर्षण की वस्तु है।

★

प्राप्ति स्वीकार

नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त लेखक—श्री राजनारायण गुप्त, प्रकाशक—किताब महल, इलाहाबाद मूल्य ४ ०० रु०।

—

इण्डियन मर्चैण्टस चैम्बर

पिछले दिनों इण्डियन मर्चेन्ट्स चेम्बर की बम्बई में स्वर्ण जयन्ती मनाई गई। पं० जवाहरलाल नेहरू ने इसका उद्‌घाटन किया था। इस संस्था ने देश के आर्थिक विकास में विशेष भाग लिया है। इसकी स्थापना ७ सितम्बर सन् १९०७ को हुई थी, जब देश में राष्ट्रीय जागरण का प्रभात था। बंगभंग के विरोध में स्वदेशी आन्दोलन की धूम थी। १९०६ में पितामह दादाभाई नौरोजी के नेतृत्व में कांग्रेस ने स्वराज्य की मांग रखी थी। और लोकमान्य तिलक ने 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है' का नारा लगाया था। प्रारम्भ में चैम्बर के १०० सदस्य थे, जबकि आज २०७० सदस्य हैं और १२१ संस्थाएं इससे सम्बद्ध हैं। श्री मनमोहनदास रामजी इसके प्रथम अध्यक्ष थे। बम्बई के प्रमुख नेताओं, उद्योगपतियों और व्यापारियों का इसको सहयोग प्राप्त रहा है। इसके अध्यक्षों में सर्वश्री पुरुषोत्तमदास, ठाकुरदास. फजलुल भाई करीमभाई, दिनशा वाचा, लल्लूभाई सांवलदास, फिरोज सी० सेठना, वालचन्द हीराचन्द, जे० सी० सीतलवाद, प्राणलाल देवकरन नानजी, श्री एम० ए० मास्टर, आर० जी० सरैया, मुरार जी जे० वैद्य, नवल एच० टाटा आदि प्रमुख प्रभावशाली व्यक्ति रहे हैं। आज कल श्री गोपालदास कापड़िया इसके अध्यक्ष हैं।

इस चेम्बर को प्रारम्भ में विदेशी उद्योगपतियों के स्वार्थोंसे संघर्ष में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। विदेशी शासन में विदेशी उद्योगपति देशके आर्थिक विकास को सहन नहीं करते थे। सरकार भी स्वदेशी उद्योग और व्यापार के रास्ते में अधिकतम बाधाएं डाल रही थी। उन दिनों स्वदेशी उद्योग की उन्नति के लिए व्यापारिक समाज के प्रमुख नेताओं के नेतृत्व में इस चेम्बर ने व्यापक आन्दोलन किया। इसके प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप सार्वजनिक संस्थाओंमें (इम्पीरियल लेजिसलेटिव कौंसिल- प्रान्तीय कौंसिलें और पोर्ट ट्रस्ट आदि) इस चेम्बर को मान्यता मिल गई। विदेशी व्यापारियों को जो जो अनुचित सुविधाएं मिली हुई थीं, उनका विरोध करना बहुत कठिन था। फिर भी इस चेम्बर को निरन्तर प्रयत्न से सफलता प्राप्त होती रही और इसे योरोपियन हितों के समान प्रतिनिधित्व मिल गया। इस चेम्बर का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य बम्बई नगर के आर्थिक और औद्योगिक विकास में सहायता देना रहा है।

विदेशों में भारतीय व्यापार के विस्तार और विकास में इस चेम्बर ने विशेष भाग लिया है। विभिन्न देशों में ट्रेड कमिश्नरों की नियुक्ति में इस चेम्बर का महत्वपूर्ण भाग रहा है। आज ३० विदेशों में भारत सरकार की ओर से व्यापारिक एजेण्ट नियत हैं।

देश के सामने समय समय पर जो निम्नलिखित विविध आर्थिक समस्याएं आईं, उनके सम्बन्ध में चेम्बर विशेष प्रचार व आन्दोलन करता रहा है—रेलवे का सरकारी या गैर सरकारी प्रबन्ध, रुपए की विनिमय-दर, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों से दुर्व्यवहार, स्वदेशी उद्योगों को संरक्षण और विदेशी शासन में आर्थिक स्वाधीनता आदि। देश की आर्थिक उन्नति के लिए चैम्बर के निरन्तर प्रयत्नों के कारण ही सरदार पटेल ने कहा था कि "जैसे कांग्रेस ने देश भक्ति का वातावरण तैयार करने के लिए महत्वपूर्ण कार्य लिया है, उसी तरह चेम्बर ने देश के व्यापार उद्योग के लिए अकथनीय सेवा की है।"

दूसरे महायुद्ध के बाद देश में जो आर्थिक समस्याएं उत्पन्न हो गईं, उन पर चेम्बर ने विशेष ध्यान दिया और अनेक दिशाओं में उसे सफलता प्राप्त हुई। चेम्बर का मुख्य काम राष्ट्र के सामने आने वाली आर्थिक समस्याओं पर प्रकाश डालना रहा है। इसका सूचना विभाग आर्थिक प्रगति व समस्याओं की विशेष जानकारी देता है, व्यापारियों के परस्पर व्यापारिक सम्बन्धों को बढ़ाने और कानूनी कठिनाइयों में सहयोग देता है। यह विभिन्न व्यापारियों में पारस्परिक विवादों के समाधान का भी प्रयत्न करता है। युवकों में व्यापारिक शिक्षण के प्रसार में भी इसका विशेष सहयोग रहा है। एक न; योजना के अनुसार व्यापार के संगठन और प्रबन्ध की शिक्षा चेम्बर की ओर से भारतीय युवकों को दी जायेगी। आज देश के सामने जो आर्थिक समस्याएं हैं, उन सब पर न केवल चेम्बर मार्ग प्रदर्शन का प्रयत्न करता है, किन्तु देश की आर्थिक विकास की योजनाओं में सरकार को अनेक उपयोगी सुझाव भी देता है। यह आशा करनी चाहिए कि चेम्बर भविष्य में भी आर्थिक क्षेत्र में देश की निरन्तर सेवा करता रहेगा।

—

नेहरू का समाजवाद दीन इलाही

योजना आयोग ने भूमि-सुधार के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव रखा है, वह देश में अधिक अन्न उत्पादन के लिए उपयोगी नहीं है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में २.४०० करोड़ रु० खर्च किए गए थे और द्वितीय योजना में अब तक बांध, नहर आदि पर १.४०० करोड़ तक खर्च हुआ है, लेकिन फिर भी खाद्य अन्नों के उत्पादन में कोई प्रगति नहीं हुई है।

विदेशों से विवश होकर अधिक मात्रा में खाद्य अन्नों का आयात करना क्या यह सिद्ध नहीं करता कि हमारे अन्न उत्पादन सम्बन्धी आदर्श, सिद्धान्त तथा कार्यक्रम पूर्णरूपेण असफल हुए हैं। जोत के आकार पर प्रतिबन्ध लगाना, जमीन को छिन्न भिन्न करने के समान है, जिससे अधिक उत्पादन के बजाय अन्न की और कमी हो जायगी।

इंगलैंड में भी जबकि मजदूर दल सत्तारूढ़ था, उनकी कोई ऐसी नीति न थी कि जिसमें जमीन को छोटे छोटे हिस्सों में बांट दिया गया हो अथवा जमीन के आकार पर कोई प्रतिबन्ध लगा दिया गया हो।

नेहरूजी का समाजवाद अकबर की दीन इलाही के समान है। इस समाजवाद की भी वही दशा होगी, जो 'दीन इलाही' की हुई थी। नेहरू जी की हां में हां मिलाने वाले उनके ये सहयोगी, जिन पर वे आज इतना विश्वास करते हैं, सर्व प्रथम कहने वाले होंगे कि 'जब नेहरू जी नहीं हैं तो जाने दो इस नए समाजवाद को भी उनके साथ।'

समाज में सही परिवर्तन लाना कोई आसान काम नहीं है। जब कभी कोई परिवर्तन आया उसके लिए पहले भी सैंकड़ों साल लगे हैं। समाजवाद की आवाज भी बहुत समय से उठ रही है, परन्तु रूस के सिवा और कोई देश इसे कुछ हद तक अमल में नहीं लाया है। हमें चाहिए कि हम प्राचीन परम्परा को सामने रखकर समाजवाद की समस्या पर अच्छी तरह विचार करें यह नारे तो सदा रहने वाले नहीं हैं।

श्री के० हनुमन्तय्या भूतपूर्व मुख्यमंत्री "मैसूर"

सरकारी संस्थाओं पर नियंत्रण

अब तक देश के विभिन्न उद्योगों में सरकार की जो पूंजी लगी है, वह १,००० करोड़ रु० से भी अधिक है। द्वितीय योजना के अन्त तक यह पूंजी २००० या ३,००० करोड़ तक पहुँच जायगी। यह देश में लगी निजी पूंजी की लागत से भी अधिक है। लेकिन सरकारी संस्थाओं पर इतनी पूंजी लगी है, उसकी जांच पड़ताल के लिए शेयर-होल्डरों के वार्षिक अधिवेशनों की तरह कोई प्रबन्ध नहीं है, जिससे अधिकारी वर्ग के लोगों के लिए जितना चाहे, लूटने का लिए मौका मिल जाता है। पूंजी निर्माण या तत् सम्बन्धी प्रश्नों पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। अगर जनता का विश्वास प्राप्त करना है, तो शीघ्राति-शीघ्र इन प्रश्नों को हल करना होगा।

एक यह बात विचारणीय है कि एक भी सरकारी कारखाना (सिन्दरी के सिवाय और वह भी कई वर्षों तक चलने के बाद) मूल्यों की दृष्टि से नफा नहीं कमा रहा है। उनमें तैयार किये गये पदार्थ बहुत महंगे पड़ते हैं, जिनका बोझ नागरिकों पर पड़ता है क्योंकि इनके मुकाबले में और कारखाने नहीं है। इस स्थिति का अंत होना आवश्यक है।

सरकार का औद्योगिक क्षेत्र में स्थान बढ़ता जा रहा है। बहुत से कारखाने सरकार चला रही है, जिनमें से कुछ में निजी संस्थाओं और व्यक्तियों के भी शेयर होते हैं, लेकिन अधिकांश शेयर राष्ट्रपति अथवा विभिन्न मंत्रालयों के अवर सचिवों के नाम से होते हैं और इन्हीं में से कुछ लोग डायरेक्टर बना दिए जाते हैं। सरकारी कर्मचारियों की यह टोली अपने कारोबार की और उसकी अव्यवस्था की कोई जांच नहीं होने देती और यहां तक पार्लियामेंट भी सरकारी उद्योगों की जांच नहीं कर सकती, जबकि साधारण उद्योगों में हिस्सेदारों की सभा में काफी देखभाल और आलोचना हो जाती है। यह ठीक है कि सरकारी कारखाने के दैनिक क्रिया-कलाप में पार्लियामेंट को दखल देने का अधिकार नहीं होना चाहिए, किन्तु नई दिल्ली में एक अधिकारी और कारखाने में उसके दूसरे भाई को लाखों करोड़ों रुपए के कारोबार का निरंकुश अधिकारी नहीं बनने दिया जा सकता।

—श्री लंका सुन्दरम्

१९५७-५८ में भारत : राष्ट्रपति द्वारा सिंहावलोकन

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद ने ससद बजट-अधिवेशन का उद्घाटन करते हुए जो भाषण दिया, उसके कुछ अश निम्नलिखित हैं—

उत्पादनमें वृद्धि और घरेलू बचत हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक हैं। अधिक उत्पादन से विदेशी विनिमय की हमारी आवश्यकतायें कम रहेंगी और विनिमय के उपार्जन में सहायता मिलेगी।

विदेशी मुद्रा सबधी और वित्तीय मामलोंके बारेमें सरकारने अभी तक जो कुछ किया है उससे हमारी अर्थ व्यवस्था के स्थायी रहने मे मदद मिली है। १९५६ मे और १९५७ के आरम्भ में चीजों के दाम ऊचे चढते जा रहे थे, किन्तु इस कार्यवाही के फलस्वरूप कीमतों का बढना रुक ही नहीं गया, बल्कि गत वर्ष के अतिम महीनो मे उनमे कुछ कमी भी हुइ, जो अभी जारी है। हमारे देनदारी के खाते के घाटे मे भी काफी कमी हुई है। पिछले साल की अपेक्षा साख सम्बन्धी स्थिति में भी बहुत सुधार हुआ है, हमारे बैंक सबधी साधनों मे वृद्धि हुई है और बैंकों द्वारा मजूर किये गये ऋण भी अन्दाज के अन्दर रहे हैं। सट्टे की प्रवृत्ति को दबाने के उद्देश्य से रिजर्व बैंक स्थिति पर कडी दृष्टि रखेगा।

सरकार के पास अनाज का भडार है और आयात द्वारा इस सचय को उचित स्तर पर स्थिर रखा जायेगा। इसके साथ ही अन्न के परिवहन पर सीमित किन्तु अनिवार्य नियत्रण भी किया गया है। अनाज के व्यापार के लिये बैंकों द्वारा उधार दिये जाने का भी सरकार ने नियमन किया है ताकि अनुचित सग्रह न किया जा सके। सरकार ने सस्ते अनाज का दूकानो द्वारा बडे पैमाने पर जनता म अन्न के वितरण की व्यवस्था भी की है। इन उपायो स महगाई की प्रवृत्ति की काफी रोकथाम हुई है।

खाद्यान्नों की पैदावार बढ़ी

फसलो के खराब हो जाने के बावजूद १९५६ ५७ में उत्पादन अधिकतम हुआ है जो १९५३-५४ में हुआ था। कुल खाद्य उत्पादन ६ करोड ८७ लाख टन हुआ जो १९५५-५६ की अपेक्षा ५ प्रतिशत अधिक था। कृषि उत्पादन की अखिल भारतीय योजना के अनुसार पिछले वर्ष की अपेक्षा इस वर्ष करीब ६ प्रतिशत की वृद्धि हुई। व्यापारी फसलों के उत्पादन मे भी महत्वपूर्ण वृद्धि हुई, जो कपास के उत्पादन मे १८ प्रतिशत तथा गन्ने और तिलहन के उत्पादन मे क्रमश ६ प्रतिशत रही है।

कोयला व तेल

१९५७ मे कोयले का उत्पादन ४ करोड़ ३० लाख टन हुआ, जो उत्पादन की नई सीमा थी, जबकि १९५६ में यह उत्पादन ३ करोड़ ९० लाख टन था।

अभी हाल मे आसाम आयल कम्पनी के साथ समझौता किया गया है, जिसके अनुसार कम्पनी स्थापित की जायेगी और इसमे ३३ ३ प्रतिशत हिस्सा सरकार का होगा। इस कम्पनी का काम नाहर कटिया के कुओं से तेल का उत्पादन और वहां से तेल का परिवहन होगा। तेल

की सफाई के लिये आसाम और बिहार में दो कारखाने स्थापित होंगे। तेल के लिये देश के दूसरे भागों में भी पूर्वेक्षण और ढूंढ खोज की जा रही है। भारतीय जहाजों के अविलम्ब निर्माण और विकास के लिये एक जहाज-निर्माण कोष की स्थापना की गई है

बांध-योजनाएं

बहुमुखी नदी घाटी योजनाओं के सम्बन्ध में संतोष-जनक प्रगति हो रही है। दामोदर घाटी में माइथान बांध का उद्‌घाटन गत सितम्बर में हो गया था। भाखरा योजना के संबंध में कार्यक्रम के अनुसार ही नहीं बल्कि उससे बढ़ कर प्रगति हो रही है। नागार्जुन सागर में निर्माण का काम गत जुलाई मास में आरम्भ किया गया। दूसरी बहुमुखी योजनाओं पर भी संतोषजनक रूप से कार्य जारी है।

भारी उद्योगों की दिशा में काफी प्रगति हुई है। सार्वजनिक क्षेत्र में एक भारी मशीन बनाने का कारखाना और कई एक अन्य योजनायें सोवियत संघकी सहायता से चालू की जायेंगी।

लोहा ढालने का एक बड़ा कारखाना चैकोस्लोवाकिया के एक सहयोग से स्थापित किया जाएगा। नंगल में वैज्ञा-निक खाद का एक बड़ा कारखाना इङ्गलैंड फ्रांस और इटली की आर्थिक सहायता से बन रहा है। नेवेली में भी खाद का एक कारखाना बनाने की योजना है।

बिजली का सामान तैयार करने के लिये एक बड़ा कारखाना ब्रिटिश सहायता से भोपाल में बनाया जायगा। रुरकेला, भिलाई और दुर्गापुर में इस्पात के बड़े कारखानों के निर्माण की दिशा में काफी प्रगति की जा चुकी है।

पिछले वर्ष में आणविक शक्ति विभाग का काफी विस्तार किया गया। दो नये रियेक्टर और कई नये यंत्र इस समय बनाये जा रहे हैं। मौजूदा वर्ष के समाप्त होने तक आणविक शक्ति के लिये और रियेक्टरों के लिये ईंधन के रूप में उपयुक्त युरेनियम धातु का उत्पादन शुरू हो जायगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के कार्यकाल में एक या अधिक अणु-शक्ति केन्द्र स्थापित करने का सरकार का विचार है।

सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय विस्तार योजनाओं ने महत्त्वपूर्ण प्रगति की है। सामुदायिक विकास केन्द्रों की संख्या इस समय २,१५२ है जिनमें २,७६,००० ग्राम आते हैं। इन ग्रामों की जनसंख्या १५ करोड़ है।

कपड़ा और चीनी उद्योग के लिये त्रिदलीय वेतन-बोर्ड स्थापित किये गये हैं। दूसरे बड़े उद्योगों के लिये भी यथासमय ऐसे बोर्ड स्थापित करने का विचार है। फिलहाल कुछ चुने हुए उद्योगधन्धों में ऐसी योजनाएं चालू की गई हैं, जिनमें उद्योगों के संचालन में मजदूर अधिकाधिक भाग ले सकें।

कर्मचारी राज्य बीमा योजना का विस्तार किया जा रहा है और १९५२ के कर्मचारी प्राविडेंट फंड अधिनियम को अब १९ उद्योगों पर लागू कर दिया गया है और इस अधिनियम के अंतर्गत अब ६२१५ कारखाने आ गये हैं। चन्दे की कुल रकम प्रायः १०० करोड़ रुपये जमा हो चुकी है।

—

आंध्र का प्रकाशम बांध

आंध्रप्रदेश मे कृष्णा नदी पर प्रकाशम बाध बनकर तैयार हो गया है । इससे १२ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी और इस पर सड़क का पुल बन जाने से मद्रास और कलकत्ता के बीच सड़क बारहो मास चालू रहेगी । आंध्र प्रदेशके पुराने कृष्णा बाध को सुधार कर अब जो बाध बनाया गया है, उसका नाम आंध्र के सबसे पहले मुख्य मंत्री आंध्र केसरी स्व० श्री प्रकाशम के नाम पर प्रकाशम बाध रखा गया है । पुराने बाध से ११ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती थी । अब १ लाख एकड और भूमि सींची जा सकेगी । इस बाध पर २ करोड़ ८४ लाख रु० के खर्च का अन्दाजा लगाया गया था । लेकिन यह २ करोड़ ३० लाख रु० मे ही और निर्धारित समय से छ महीने पहले बनकर तैयार हो गया है ।

यह बांध ३,७३६ फुट लम्बा है और इससे २० फुट गहरा पानी सचित होता है । इसमे ४० फुट चौडे ७० फाटक है जिनमें १२ फुट ऊची झिलमिलिया है, जिनसे बाढ़ के समय पानी का निकास होता है और दोनो ओर बनी नहरों में भी पानी छोड़ा जाता है । बाध पर २४ फुट चौड़ी सड़क बनायी गयी है, जिसके दोनो ओर ५ ५ फुट चौड़ी पटरिया पैदल चलने वाले के लिये हैं । इसमें १० हजार टन इस्पात, ५० हजार टन सीमेंट, ७० लाख घन फुट ककरीट और पत्थर आदि लगे हैं । बाध की नींव में ककरीट के ६०० कुए गलाए गये हैं ।

—

१५८ गावों में जापानी ढग की धान की खेती

उत्तर प्रदेश मे जापानी ढग की धान की खेती लोकप्रिय होती जा रही है । दिसम्बर, १९५७ को समाप्त होने वाली चौथाई अवधि मे १२०० गावों की ३,१४,००० एकड भूमि मे इस ढग की खेती प्रचलित हो चुकी है और इस अवधि मे ५१,००० प्रदर्शनी की व्यवस्था की गयी है ।

खेती के इस ढग की सफलता उर्वरको के व्यापक प्रयोग पर निर्भर है । अतएव किसानो को उर्वरकों के लिए ३३ लाख ३१ हजार रुपये के ऋण भी बाटे गये हैं ।

गांवों का 'गणतंत्र'

ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि प्रत्येक गाव सम्पूर्ण गणराज्य होना चाहिए, जो अपनी जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं के लिए अपने पड़ोसियों से स्वतत्र हो, फिर भी बहुत सी बातो में, जिनमे आश्रितता जरूरी है, वे एक-दूसरे पर निर्भर रहें । इस प्रकार प्रत्येक गाव का पहला काम यह होगा कि वह खाने के लिए अपना अनाज और कपडे के लिए अपनी कपास उगायें । पशुओ के लिए उसका अपना चरागाह होना चाहिए और बालिगों तथा बच्चों के लिए मनोरजन और खेलकूद के स्थान होने चाहिए । इसके बाद अगर और जमीन उपलब्ध हो, तो वह रुपया पैदा करने वाली उपयोगी फसलें उगायेगा, परन्तु गाँजा, अफीम, तम्बाकू आदि का पूर्ण बहिष्कार करेगा ।

गाव की अपनी ग्राम नाटकशाला, पाठशाला और अपना सभा-भवन होगा । उसकी अपनी पानी की योजना होगी, जिससे साफ पानी मिलता रहेगा । प्रबन्ध नियत्रित कुओ और तालाबो से किया जा सकता है । जहा तक सम्भव होगा, सब काम सहकारी ढगसे किये जायेंगे । उसमें छूआछूत जातिप्रथा न होगी । गाव का शासन पचायत करेगी । उसके पास सारी आवश्यक सत्ता और न्यायाधिकार होगा ।

और, जिस स्वराज्य का सपना मैं देखता हू, वह गरीबो का स्वराज्य होगा । उसमें जीवन की जरूरी चीजें सबको वैसी ही मिलनी चाहिए, जैसी राजा-महाराजा और धनवानो को नसीब होती हैं । पर इसका यह मतलब नहीं कि सबके पास उनके जैसे आलीशान महल भी होने चाहिए । सुखमय जीवन के लिए यह कोई जरूरी चीज नहीं है ।

जो स्वराज्य सबको जीवन सबधी सहूलियतों की गारटी नहीं देता, वह पूर्ण स्वराज्य नहीं है, इसमें मुझे कतई शक नहीं ।

मेरी कल्पना का स्वराज्य सबका होगा, उसमे धनिकों का भाग होगा, पर उनके साथ अधे अपाहिज और लाखो-करोड़ों भूखे-नगे मेहनतकश भी उसमें पूरे हक़वाले हिस्सेदार होंगे ।

—महात्मा गांधी

भारत पर विदेशों का उधार

इस समय भारत पर विश्व बैंक और विभिन्न देशों का कुल २ अरब २१ करोड़ ३२ लाख कर्ज है। इसके अलावा कुछ देशों को २२ करोड़ ६१ लाख रु० का भुगतान करना है।

विदेशों के कर्ज और उसकी ब्याज-दरों का ब्यौरा इस प्रकार है—

(करोड़ रुपयों में)

	योजना का नाम	ब्याज दर	कर्ज की राशि (अब तक मिली रकम में से भुगतान घटाकर)
विश्व बैंक	रेलों के लिए पहला ऋण	४%	८ करोड़ ६५ लाख रु०
	रेलों के लिए दूसरा ऋण	५.५/८%	१४ करोड़ ६३ लाख रु०
	दामोदर घाटी निगम (पहला ऋण)	४%	६ करोड़ ७५ लाख रु०
	दामोदर घाटी निगम (दूसरा ऋण)	४.७/८%	४ करोड़ ३६ लाख रु०
	एयर इण्डिया इंटर नेशनल	५.५%	८१ लाख रु०
	इंडियन आयरन एण्ड स्टील कं० (पहला ऋण)	४¾%	६ करोड़ ४४ लाख रु०
	इंडियन आयरन एण्ड स्टील कं० (दूसरा ऋण)	५%	२ करोड़ ५४ लाख रु०
	टाटा आयरन एंड स्टील कं० (पहला ऋण)	४¾%	२८ करोड़ १० लाख रु०
	ट्राम्बे (पहला ऋण)	४¾%	५ करोड़ ८६ लाख रु०
	ट्राम्बे (दूसरा ऋण)	५.५/८%	६० लाख रु०
		कुल	८२ करोड़ ४ लाख रु०
ब्रिटेन	आइ० एस० सी० ओ० एन० का दुर्गापुर इस्पात कारखाने के लिए स्टर्लिंग ऋण	ब्रिटेन की बैंकदर से १ % ऊपर	१ करोड़ २६ लाख रु०
		कुल	१ करोड़ ८६ लाख रु०
रूस	भिलाई इस्पात कारखाने के लिए	२॥ प्रतिशत	१२ करोड़ ८५ लाख रु०
जर्मनी	राउरकला इस्पात कारखाने के लिए अन्तरिम उधार	६ प्रतिशत	१३ करोड़ १६ लाख रु०
अमेरिका	१९५१ में अमेरिका से गेहूँ खरीदने के लिए कर्ज	२॥ प्रतिशत	८६ करोड़ २१ लाख रु०
	अमेरिका से १९५५ में	(यदि डालर में लौटाया गया तो ३ प्रतिशत और रु० में लौटाया गया तो ४ प्रतिशत)	१५ करोड़ ३३ लाख रु०
	अमेरिका से १९५६ में	,,	३ करोड़ ३३ लाख रु०
	अमेरिका से १९५७ में	,,	३ करोड़ ४४ लाख रु०
		अमेरिका से कुल	२२१ करोड़ ३२ लाख रु०

बाद में भुगतान ❀

अमेरिका	२ करोड़ ६० लाख रु०
जापान	३ करोड़ ३७ लाख रु०
इटली	६ करोड़ ४४ लाख रु०
पश्चिम जर्मनी	१ करोड़ ६४ लाख रु०
फ्रांस	६ करोड़ ६७ लाख रु०
ब्रिटेन	१ करोड़ १७ लाख रु०
नार्वे	३६ लाख रु०
चैकोस्लोवाकिया	२६ लाख रु०
कुल	२२ करोड़ ६१ लाख रु०

नोट : ये आंकड़े बिलकुल सही नहीं, लगभग हैं।

★

१९५८-५९ का रेल्वे बजट

(पृष्ठ १६० का शेष)

अनूपपुर-कटनी सेक्शन में ६ करोड़ ७० लाख के खर्च से दोहरी लाइन। दक्षिण रेलवे में गूडीवाड़ा-भीमावरम सेक्शन में छोटी लाइन को बदलकर बड़ी लाइन बिछायी जाएगी। इस पर २ करोड़ २५ लाख रु० खर्च होगा। और कटिहार-बरौनी के बीच खगड़िया-कटरिया सेक्शन में १ करोड़ ८८ लाख रु० के खर्च से दोहरी लाइन बिछायी जाएगी।

पटरी बदलने के काम पर ३३ करोड़ रु० रखे गये हैं, जबकि चालू वर्ष में २८ करोड़ रु० रखे गये थे। ३ करोड़ रु० यात्रियों आदि की सुविधा के लिए खर्च किया जाएगा। और ११ करोड़ रु० कर्मचारियों के लिए घर बनाने और अन्य सुविधाओं पर खर्च होगा।

बिजली की रेल

बिजली से रेल चलाने के लिए २५ का० वा० ए० सी० ५० साइकिल सिंगिल फेस प्रणाली को अपनाने का निश्चय किया गया है। इस प्रणाली के अन्तर्गत १,०६२ मील लम्बी लाइनों का विद्युतीकरण होगा, जिस पर करीब ७५ करोड़ रु० खर्च होने का अनुमान है। १९५८-५९ में, विद्युतीकरण कार्यक्रम पर १६ करोड़ २६ लाख रु० खर्च होगा।

इंजन डिब्बों आदि का निर्माण

रेल के काम आने वाला सामान अब देश में अधिकाधिक बनाया जा रहा है। मामूली इस्तेमाल के वैगनों का आयात काफी पहले से बंद हो चुका है और अब सवारी लाइनों के लिए २-४ इंजनो को छोड़कर भाप से चलने वाले इंजनों का आयात भी बंद हो गया है। १९५८-५९ में, चल-स्टाक (डब्बे आदि) खरीदने के लिए ८७ करोड़ ९५ लाख रु० रखे गये हैं। इनमें से ६० करोड़ १७ लाख रु० की खरीद देश के अन्दर से होगी। बाकी बाहर के सामान आदि मंगाने, जहाज-भाड़ा, सीमा शुल्क आदि में खर्च होगा। १९५६-५७ में, चित्तरंजन में १५६ इंजन बनाये गये। इस वर्ष तथा अगले वर्ष १६८ इंजन बनाये जाएंगे। टैलको कारखाने से पिछले साल ७८ इंजन लिये गये। चालू वर्ष में ९० और अगले वर्ष १०० लिये जाएंगे।

गत वर्ष इंटिगरल सवारी डिब्बा कारखाने मे ८८ डिब्बे बने थे। चालू वर्ष में १८० और अगले वर्ष में २९५ बनने की आशा है। एक पारी काम करने पर इस कारखाने की पूरी क्षमता ३५० डिब्बा बनाने की है। आशा है कि १९५९-६० में इतने डिब्बे बनने लगेंगे। पहली अप्रैल, १९५९ से दो पारी काम चालू किया जाएगा, जिससे दूसरे आयोजन के अंत तक १८० डिब्बे और तैयार होने लगेंगे। इन डिब्बों में सजावट का सामान लगाने के लिए कारखाने में ३ करोड़ ९९ लाख रु० की लागत से एक विभाग और खोला जा रहा है।

सामान और रुपए आदि की कमी के कारण रेलों में भीड़-भाड़ अभी कम न की जा सकेगी। यात्रियों को अन्य सुविधाएं देने की कोशिश जारी है।

पिछले साल कर्मचारियों के लिए १० हजार क्वार्टर बनाए गए थे। १९५७-५८ में १६ हजार बनाए जाएंगे और अगले साल १५ हजार बनाने की व्यवस्था है। सब मिलाकर दूसरे आयोजन में ६४,५०० नये क्वार्टर बनाये जाएंगे।

❀ ये केवल सरकारी क्षेत्र की बाद में भुगतायी जाने वाली रकमें हैं।

(पृष्ठ १६४ का शेष)

पूर्वी जर्मनी से व्यापार

१९५६-५७ में भारत ने जर्मन लोकतंत्री गणराज्य को ४६ लाख रु० का माल भेजा है और ४७.२४ लाख रु० का वहां से मंगाया है।

पूर्वी जर्मनी ने भारतीय माल के बदले उतनी ही कीमत की कारखानों की मशीनें और कुछ और सामान देने का प्रस्ताव किया है। पूर्वी जर्मनी के एक राज्य व्यापार संगठन से, भारत के राज्य व्यापार निगम ने १ २ करोड़ रु० की सूती मिलों की मशीनें मंगाने का करार किया है। इसी तरह के और भी लेन-देन की बातचीत चल रही है।

पूर्वी जर्मनी के इस प्रस्ताव पर अमल होने से भारत को अपनी जरूरत की मशीनें मिल जायेंगी और बदले में हमारा निर्यात भी बढ़ेगा।

★

मध्य एशिया का सबसे बड़ा विद्युत स्टेशन

'जनगण की मैत्री' नामक काराकुम-जल-विद्युत-स्टेशन जलप्रवाह के सहारे सालभर में औसत एक अरब किलोवाट घंटा बिजली तैयार करेगा।

ताज़िकिस्तान में सिर-दरया के तट पर स्थित यह विद्युत् स्टेशन जो मध्य एशिया में अपने ढंग का सबसे बड़ा स्टेशन है और हाल ही में अपनी पूर्ण उत्पादन-क्षमता सहित चालू किया गया है, ताजिकिस्तान और उजबेकिस्तान के दर्जनों औद्योगिक संस्थानों, कोयला और खनिज धातु की खानों, नगरों और गांवों को बिजली प्रदान करेगा।

जलविद्युत् स्टेशन के कार्य को सुचारु रूपेण चलाने तथा खेतों की अबाध सिंचाई को सुनिश्चित बनाने के लिए तेईस मीटर (लगभग ७५ फीट) ऊंचा बांध खड़ा किया गया है। इस बांध के पीछे ६० किलोमीटर (३७ मील) लम्बा और २० किलोमीटर (१२ मील) चौड़ा मानव-निर्मित 'ताजिक सागर' है।

★

९३७ मील लम्बी गैस पाइप-लाइन

१५०० किलोमीटर (९३७ मील) लम्बी अति शक्तिशाली नयी गैस पाइप-लाइन का निर्माणकार्य सोवियत संघ में आरम्भ हो गया है। नयी लाइन क्रास्नोदार क्षेत्र, उत्तरी काकेशस में मिले गैस क्षेत्रों को लेनिनग्राद से मिला देगी। सोवियत संघ के युरोपीय भाग के मध्य में स्थित सैंकड़ों शहरों और देहातों को भी, जो इस नयी लाइन के मार्ग में पड़ेंगे, गैस दिया जाएगा। प्रथम भाग को इसी साल चालू कर दिया जाएगा।

उत्तरी काकेशस के गैस क्षेत्रों का उज्ज्वल भविष्य है। फलतः उन्हें तीन ट्रांसकाकेशियाई जनतंत्रों—जार्जिया, आर्मेनिया और अजरबेजान से मिला दिया जाएगा। इस व्यवस्था की दक्षिणी शाखा को उन गैस पाइपलाइनों से मिलाया जाएगा, जो कारादाग और अवस्तागा के स्थानिक ट्रांस काकेशियाई भंडारों से लेकर तिफलिस और येरेवान तक बिछायी जा रही है।

★

दो लाख नये घर

सोवियत गृह-निर्माण उद्योग इस वर्ष लगभग २००,००० बने-बनाये घर अर्थात् १९५७ की तुलना में लगभग ३० प्रतिशत अधिक तैयार करेगा। इनमें से अधिकांश घर शहर और देहात की जनता के हाथ बेच दिये जाएंगे।

यूराल के दक्षिण में २३४ लम्बी गैस पाइप-लाईन का निर्माण आरम्भ हो गया है। यह पाइप लाईन बश्कीरिया शकाप्लेवो के तेलक्षेत्र को मैग्नीतोगोर्स्क के साथ जोड़ देगी, जो यूराल में धातु उद्योग का केन्द्र है।

चौरानवे मील की लम्बाई में यह पाईप लाइन यूराल पर्वतमाला के चट्टानों से भरे दक्षिणी पाद प्रदेश में तथा पचहत्तर मील की लम्बाई में जंगलों से भरे स्थान में बिछाई जाएगी। यह पाईप-लाईन चौवालीस नदियों के ऊपर ले जाई जाएगी।

यह पाईप-लाइन १९५८ के अन्त में चालू की जाएगी। मैग्नीतोगोर्स्क के औद्योगिक संस्थानों को जहां अन्य जगह से लाये गये कोयलों की वृहत् परिमाण में खपत होती है, प्रतिवर्ष करोड़ों घन मीटर गैस प्राप्त होगा।

१८ नहीं : २४ करोड़ रु०

सम्पदा के पिछले अंक में जापान की भारत को अग्रिम ऋण की राशि १८ करोड़ रु० प्रकाशित हो गई है। वस्तुतः वह राशि १८ बिलियन येन या २४ करोड़ रु० है, न कि १८ करोड़ रुपये। यह ऋण १० वर्षों में किश्तों द्वारा चुकाया जायगा।

जर्मन गणराज्य की आर्थिक उन्नति

लेखक: वो ल्यूगैंग हैंकर   अनुवादक: श्री टी॰ एन॰ वर्मा

जब १९४५ मई में विश्वयुद्ध की आग की लपटें शांत हो गई, तो लाखों आश्रय हीन लोगों ने देखा कि चारों ओर विध्वंस का नाच हो रहा था। तीस लाख से भी अधिक आलीशान मकान, खण्डहर बना दिए गए थे। कई कारखाने चकनाचूर हो गए थे। यातायात का प्रबन्ध समाप्त हो गया था। पानी का इंतजाम नहीं था। बिजली की बत्ती तक नहीं बची थी। जीवनोपयोगी छोटी २ वस्तुएं तक उपलब्ध नहीं थीं। तबाही के कारण चारों ओर दर्दनाक दृश्य नजर आता था। हमारे सामने जीवन मरण की समस्या थी।

फिर भी हमारी जीवन यात्रा चल पडी, क्योंकि हमें आगे बढ़ना था। प्रतीक्षा करने के लिए हमारे पास समय नहीं था। पहले जीवनोपयोगी मुख्य चीजें रोटी, पानी, कपड़ा तथा बिजली की सुविधाएं दी गईं। धीरे २ परिस्थिति काबू में आने लगी। बम बारी से जो संस्थाएं ध्वंस हो गई थीं, उनको फिर से बनाया गया। सड़कें, हस्पताल, बिजली तथा यातायात आदि अत्यन्त आवश्यक मामलों पर काफी ध्यान दिया गया। स्त्री-पुरुष सभी कारखानों में जाकर काम करने लगे। मशीनें ठीक की गईं। लघु तथा भारी उद्योगधंधों की स्थापना हुई। भारी मशीनों का निर्माण जोरों से हुआ। मशीनों के मलबे से नई मशीनें बनाई गईं!

जमीन जोतने वाले को मिलनी चाहिए थी। इसलिए भूमि सुधार हुआ। जमीन जोतने वालों में बांट दी गई। शरणार्थियों को प्लाट तथा मकान अलाट किये गए। औद्योगिक क्षेत्र में सब तरफ से नया परिवर्तन हुआ। यातायात, व्यापार तथा औद्योगिक क्षेत्र में कारीगरों ने पहला स्थान हासिल किया। इन कारीगरों को सीखना पड़ा कि कारखाना कैसे चलाया जाता है, प्लान किस तरह बनाया जाता है तथा शहर अथवा प्रांत का प्रबन्ध किस तरह किया जाता है। उनके सामने कई कठिनाइयां भी थीं जिनका हल शीघ्र करना जरूरी था। फिर भी कारीगरों ने *साहस नहीं छोड़ा। नई समस्याएं तथा कठिन मामलों* को सुलझाने का उन्हें पूर्ण अनुभव हो गया। सफलता की पहली मंजिल पर पहुँचे। व्यापार की प्रगति हुई। १९४६ में ही मेलों के लिए प्रसिद्ध शहर लीपजीग में प्रथम शांति मेला सम्पन्न हुआ। इस वक्त इस मेले का मैदान २६००० वर्ग मीटर था, जबकि लेन देन तथा व्यापार १९ करोड़ मार्क का हुआ।

आज वे परिणाम, जो उस वक्त महत्वपूर्ण थे, हमें शायद साधारण लगेंगे। लेकिन धीरे २ इस मेले की गतिविधि में गत कुछ वर्षों के अन्दर सराहनीय प्रगति हुई है। इस साल जो लीपजीग मेला हुआ था (जिसमें टेकनीकल मेला शामिल नहीं है) उसका मैदान जहां जर्मनी तथा विभिन्न देशों की चीजें प्रदर्शित हुई थीं,— १०८,००० वर्ग मीटर का था तथा लेन देन व व्यापार एक अरब मार्क से भी अधिक था। १९४७ में जर्मनी का सर्वतोमुखी औद्योगिक विकास हुआ और प्रतिमास इसकी क्षमता बढ़ती ही जा रही है।

"अधिक उपजाओ", 'धन का बंटवारा करो' 'जीवन स्तर बढ़ाओ', आदि नारों के अन्तर्गत उत्पादन स्तर, कपड़े तथा नित्य जीवनोपयोगी चीजों के उत्पादन को भी बढ़ाना पडा। लोहा, कोयला तथा मशीनरी की काफी मात्रा में आवश्यकता पडी। लेकिन इन चीजों के उत्पादन के केन्द्र अधिक तर राइन (Rhine) जिले में ही थे, जो जर्मनी के पश्चिमी भाग में था। भारी उद्योगों के पुनर्निर्माण की समस्या हमारे सामने पहली थी। नए-नए लोहे के कारखाने तथा कोयले के डिपो खोलने थे। कृषि के साधन ट्रैक्टर तथा मछली धंधों के लिए जहाज आदि की अत्यन्त आवश्यकता थी। युद्ध से पहले समुन्दरी जहाजों का निर्माण वर्तमान जर्मन गणराज्य के क्षेत्र में साधारण ही था। गतवर्ष जहाजों पर माल लादने वाली 10000 (t) क्रेनें समुद्री तटों पर लगाई गईं और भी बड़े बड़े काम किए गए। इस प्रकार कुछ वर्षों के अन्दर ही औद्योगिक क्षेत्र में

हमें पूर्ण सफलता मिली।

जर्मन गणराज्य में शुरू से लेकर भारी उद्योगों की प्रगतिके प्रति प्राथमिकता दी जा रही है। राष्ट्रीय सम्पत्ति की निरन्तर वृद्धि के लिए यह आवश्यक भी था। हल्के तथा भारी उद्योगोंके क्षेत्र में स्थिरता लाने के साथ-साथ उत्पादित वस्तुओं का निर्यात भी भारी मात्रा में होने लगा।

यह सारा काम अपने कारीगरों के, जिन्होंने प्रत्येक रुकावट तथा मुसीबतों को पार करने में साहस दिखाया, अथक परिश्रम तथा अदम्य उत्साह का सफल परिणाम है। 'ओडर' के समीप जो कि जर्मन गणराज्य तथा पोलण्ड गणराज्य की सीमा पर स्थित है, यूरोप के महान तथा आधुनिक साधनों से युक्त 'लोह कर्मागार' का निर्माण हुआ है, जो कि पहले असंभव सा लगता था। जो लोग कल तक अन्य धंधों में लगे हुए थे, वे अब कुछ महीनों के कठिन परिश्रम से मशीनरी कला में विशेषज्ञ बन गए हैं।

पुनर्निर्माण की महान प्रगति में जिस पर हम आज गर्व कर सकते हैं, इतनी सफलता न मिली होती, अगर जर्मन कारीगरों ने अदम्य उत्साह, अथक परिश्रम, तथा कार्य निपुणता न दिखाई होती।

[पृष्ठ १५८ का शेष]

पर लगा कर हमें अधिक काम को पूरा करने की आशा है।

सरकार और जहाजरानी

भारतीय जहाज मालिकों को सरकार के द्वारा गत वर्ष जारी किए गए सम्पत्ति तथा दूसरे करों के कारण पर्याप्त रोष उत्पन्न हुआ था। तथापि प्रसन्नता की बात है कि भारतीय शिपिंग कम्पनियों को सम्पत्ति कर से छूट प्राप्त हो गई है। हम अब पूंजीगत लाभ से छूट प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

१ जनवरी १९५७ को भारत में १२४ जहाज ५१७३०० जी आर टी वाले थे। दस जहाज करीब ६६०१७ जी आर टी वाले सन् १९५७ में जोड़े गए थे। १ जनवरी १९५८ को १,३८१०० जी आर टी० वाले २३ जहाज, निर्माण में अथवा आर्डर दिए गए, भारतीय और बाह्य शिपयाड्र्स में थे। १८७१९ जी० आर टी वाले दो सेकिंड हैंड जहाज सन् १९५८ में होने वाली डिलीवरी के लिए खरीदे गए थे। इस प्राप्ति के द्वारा भारत की रजिस्टर्ड टनेज ७२४२१६ जी आर टी के १५९ जहाजों के योग पर पहुँचता है। सन् १९६०।६१ तक करीब ६०००० जी आर टी रद्द किए या बेच डालने योग्य हो जायेंगे और भारत वर्ष को तब भी अनुमानतः २५५००० जी आर टी की आवश्यकता होगी, जिससे ९ लाख जी आर टी के कम से कम और आवश्यक लक्ष्य पर पहुँचा जा सके, जो कि प्लानिंग कमीशन के द्वारा निर्धारित किया गया है। यातायात व संचारमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के उस प्रोत्साहनीय वक्तव्य को सुनकर उत्साह उत्पन्न होता है, जो उन्होंने पिछले दिसम्बर में इण्डियन नेशनल स्टीमशिप ओनर्स एसोसिएशन की आम बैठक में दिया था गये। विशेष रूप में शिपिंग डिवेलपमेंट फंड, कोस्टल जहाजों की प्राप्ति के लिए जहाजी कम्पनियों को दिए गए ऋण के ब्याज की दरों में घटती तथा उनकी उन आशाओं को जिनके द्वारा उन्होंने डिवलपमेंट रिबेट एलाँउन्स की बढ़ती हैं के लिए कहा है, उनके प्रोत्साहनीय विचार बहुत मूल्यवान मानता हूँ। उन्होंने भारतीय जहाजरानी में लाए जाने वाले कार्गों की प्राप्यता के सम्बन्ध में भी कुछेक सुझाव दिए हैं और हमें यह जानकर प्रसन्नता है कि, उनकी कोशिशों व भारत सरकार के अन्य मंत्रियों के सहयोग के लिए एक शिपिंग कोऑर्डिनेशन कमेटी का निर्माण हो गया है। भारतीय जहाज मालिक वास्तव में ही उनके कृतज्ञ हैं।

इस्पात

राष्ट्र की शक्ति

राष्ट्र की शक्ति के लिये इस्पात एक अनिवार्य वस्तु है। मूल और भारी उद्योगो एव विशाल मशीनें जो दैनिक जीवन में काम आने वाली वस्तुओ का निर्माण करने वाले यन्त्र तैयार करेंगी, बनाने के लिए अधिकाधिक इस्पात की आवश्यकता है। इस आवश्यकता पूर्ति के लिए भिलाई, रूरकेला और दुर्गापुर में इस्पात के कारखाने बनाए जा रहे हैं।

लाखों टन कोयला और करोडो वाट बिजली, उद्योग के मूलाधार इस इस्पात के निर्माण में काम आती है।

प्रगति का मूलाधार

कच्चे माल और तयार सामान ढोने के लिए परिवहन की सुविधाओं का विस्तार किया जा रहा है।

इस्पात कोयला रेल बंदरगाह आदि आर्थिक विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसी लिए द्वितीय पचवर्षीय आयोजना में इनको उच्चतम प्राथमिकता दी गई है।
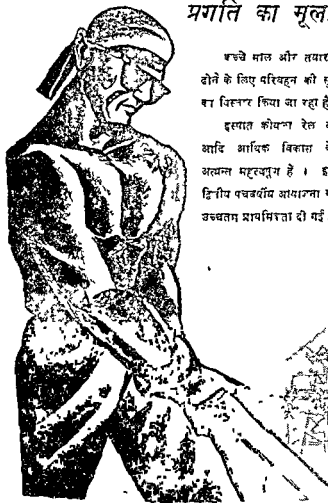
आयोजना सफल बनाइए
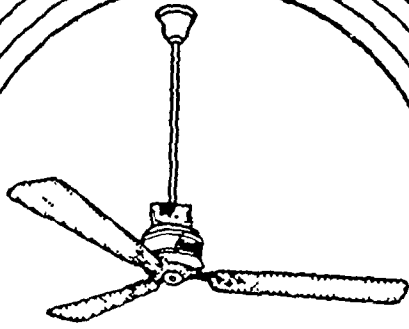
प्रगति और समृद्धि के लिये

C 5 36

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।
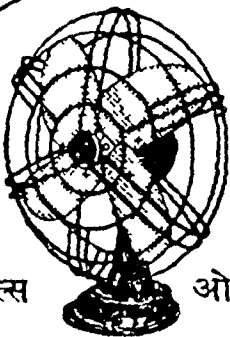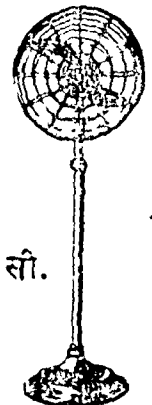
अप्रैल, १९५८

मूल्य
७५ नये पैसे

डालमिया उत्पादन

प्रयोग-सिद्ध एवं उच्च-कोटि के
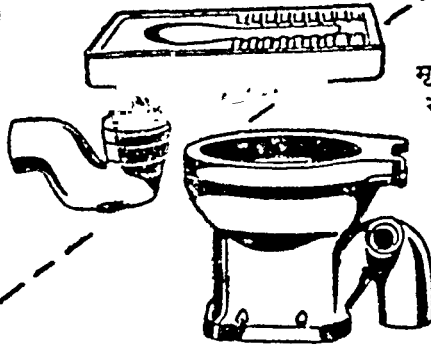
मृत्सा-आरोग्यपात्र (Porcelain sanitary ware) भारतीय और योरोपीय शौच कुंड (closets) धावन पात्री (Wash basins, मूत्रकुंड (Urinals), इत्यादि विसंवाहक (Insulations) एवं क्षाररोधक खर्परी (Tiles) भी मिल सकती है।

कश्मनाल (Stone ware Pipes) पूर्ण रूपेण लवण काचित (Salt Glazed) क्षार रोधक (Acid Resistant) एवं प्रमाप विदिष्ट (Tested of standard specification) जलोत्सारण (Drainage) के लिये
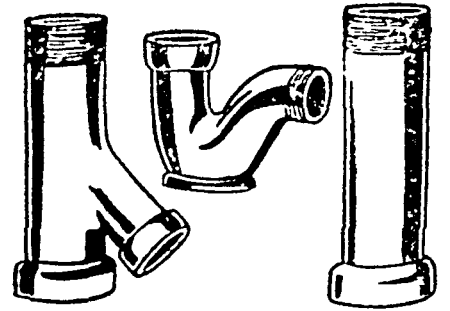
डालमियापुरम् मिल की सिमेंट भट्टी का एक दृश्य
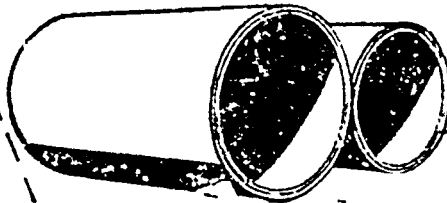
वज्रचूर्ण-आयससंघा नाल (R. C. C. Spun pipes) सिंचाई, पुलियाओं (Culverst) जलप्रदाय और जलोत्सारण (Cupply and drainage) के लिये सभी श्रेणियों और मापों में प्राप्य।
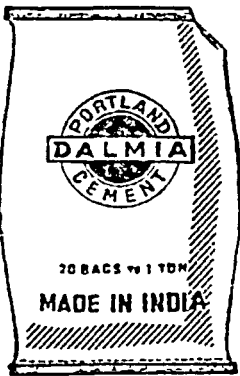
पोटलैण्ड सिमेंट सामान्य निर्माण के लिये
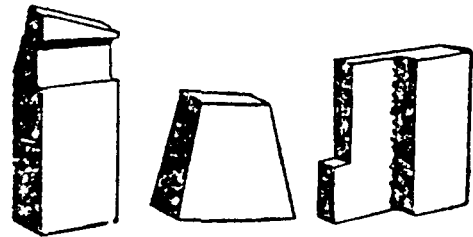
उग्मसह (Refractories) अग्नीष्ट कार्य (Fire Bricks) संम्रद (Mortors) तथा समस्त ताप-सीमाओं और आकृतियों में प्राप्य विसंवाहक ईंष्ट कार्य (Insulating Blocks) सभी औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये

डालमिया सिमेंट [भारत] लिमिटेड

डाकघर – डालमियापुरम्
जिला – तिरूचिरापल्ली, दक्षिण भारत

A.I.A.B. D/CH 2

व्यवस्थापकीय नियम

(१) स्थायी ग्राहक पत्र व्यवहार करते समय या चंदा भेजते समय अपनी ग्राहक सख्या अवश्य लिख दिया करें। ग्राहक सख्या न लिखे होने की दशा मे पत्र का उत्तर दे सकना कठिन हो जाता है।

(२) हमारे यहां से 'सम्पदा' का प्रत्येक अंक महीने की ७ तारीख को भेज दिया जाता है। अक १० दिन तक न मिले तो कार्यालय को शीघ्र सूचित कर दें। इसके बाद आने वाले पत्रों का उत्तर देना कठिन होगा। पत्र के साथ *ग्राहक सख्या लिखना आवश्यक है। ग्राहक सख्या* महीने के प्रत्येक अंक के रैपर पर लिखी होती है, देखकर नोट कर लें।

(३) नये ग्राहक बनने के इच्छुक चंदा भेजते समय इस बात का उल्लेख अवश्य करें कि वे नये ग्राहक बन रहे हैं तथा वर्ष के अमुक महीने से बनना चाहते हैं।

(४) नये ग्राहक बनने वालों को उनकी ग्राहक संख्या की सूचना कार्यालय से पत्र द्वारा दे दी जाती है।

(५) कृपया वार्षिक चदा धनादेश (मनी आर्डर) द्वारा ही भेजा करें। वी० पी० से आपको १० आने का अतिरिक्त व्यय देना पड़ता है।

(६) कुछ सस्थाएं चैक द्वारा चंदा भेजती हैं। वे पोस्टल आर्डर से भेजें अथवा बैंक खर्च भी साथ भेजें।

(७) अपना पूर्व स्थान छोड़ने पर नये पते की सूचना शीघ्र देवें, *अन्यथा अंक दुबारा नहीं भेजा जायगा।*

(८) नये अंक के नमूने के लिये १२ आने का मनीआर्डर अथवा डाक टिकट भेजें।

(९) अगर आप अपनी प्रति स्थानीय एजेन्ट से चाहते हैं, तो हमें लिखिए, प्रबन्ध हो जायगा।

—मैनेजर प्रसार विभाग

विषय-सूची

इस अंक के प्रमुख लेखक

१. श्री घनश्यामदास बिड़ला भारत के प्रमुखतम उद्योगपतियों में से हैं और आर्थिक समस्याओं पर उनके विचार देश में आदर से सुने जाते हैं ।

२. अनेक उद्योगों के संचालक श्री करमचन्द थापर कलकत्ते के प्रमुख व्यवसायी हैं । देश की आर्थिक समस्याओं का व्यावहारिक ज्ञान रखते हैं ।

३. श्री विश्वम्भर नाथ पाण्डेय झरिया में शिवप्रसाद कालेज में अर्थ शास्त्र के अनुभवी अध्यापक हैं और समय समय पर सम्पदा में लिखते रहते हैं ।

४. डा० श्री शिवध्यान सिंह चौहान आगरा के बी. आर. कालेज में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक हैं । उन्होंने भारतीय परिवहन नामक उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखा है ।

५. श्री कैलाश बहादुर सक्सेना सम्पदा के सुपरिचित लेखक हैं और बीकानेर में एक कालेज के प्रोफेसर हैं ।

६. दिल्ली फैक्टरी ओनर्स असोसियेशन के अध्यक्ष श्री मुरलीधर डालमिया बिड़ला मिल दिल्ली के जनरल सेक्रेटरी हैं और दिल्ली की औद्योगिक समस्याओं पर अधिकार पूर्वक लिख सकते हैं ।

—

क्षमा प्रार्थना

प्रेस की कठिनाइयों के कारण इस अंक में दो दिन का बिलम्ब हो रहा है और ४ पृष्ठ कम निकाले जा रहे हैं । किसी आगामी अंक में यह कमी पूरी कर दी जायगी ।

—व्यवस्थापक

वर्ष : ७] अप्रैल, १९५८ [अङ्क : ४

यथार्थ की ओर

किसी देश के और विशेष रूप से लोकतन्त्र देश के आर्थिक विकास में जनता का हार्दिक सहयोग अनिवार्य होता है, परन्तु वह केवल भावुकता और आदर्शवाद से अधिक समय तक प्राप्त नहीं किया जा सकता । भावुकता का अपना महत्व है । राजनैतिक स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए लोग असाधारण त्याग और आत्मोत्सर्ग करने के लिए तैयार हो जाते हैं, किन्तु निरन्तर बलिदान के मार्ग पर चलने वाले देशभक्त सैनिकों की संख्या बहुत थोड़ी रहती है, यद्यपि उसे अधिकांश जनता की हार्दिक सहानुभूति प्राप्त रहती है । अधिकांश जनता से निरन्तर त्याग की आशा चिरकाल तक नहीं की जा सकती । महात्मा गांधी के असाधारण व्यक्तित्व और ब्रिटिश शासन से मुक्ति की भावना के संकेत रूप होने के कारण खद्दर जनता में कुछ प्रचलित अवश्य हुआ, पर आज भी महान् नेताओं द्वारा खद्दर के प्रचार के निरन्तर ३५ वर्ष बाद भी उसे प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ३ आने प्रति रुपया छूट के रूप में करोड़ों रुपया व्यय करती है, तब भी उसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो पाता । यह इसका स्पष्ट प्रमाण है कि आर्थिक गतिविधि में भावुकता एक नियत सीमा तक ही काम करती है । एक तन्त्रात्मक आतंकवादी शासन में मिलों पर प्रतिबन्ध लगाकर भले ही खद्दर का प्रचार हो सके, सामान्य जनता उसे अपनी इच्छा से तभी अपनावेगी, जब उसे वह आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभकर प्रतीत होगा । देश की आर्थिक नीति निर्धारित करते हुए हम जब इस सत्य की अवहेलना करके भावुकता व आदर्शवाद को आवश्यकता से अधिक महत्व देंगे, तभी हम धोखा खायेंगे, यह हमें समझ लेना चाहिए ।

पिछले कुछ वर्षों से भारत की आर्थिक नीति के निर्धारण में, यह एक सचाई है कि यथार्थ और वस्तुस्थिति की अपेक्षा राजनीतिज्ञों की भावुकता, महत्वाकांक्षा, आदर्श और सैद्धान्तिक चर्चा अधिक प्रभावशालिनी सिद्ध हुई हैं । अर्थशास्त्र पर राजनीति हावी हो गई और देश के अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञों और नेताओं के प्रभावशाली व्यक्तित्व से अभिभूत हो गये । अपनी दृष्टि को स्वतन्त्र रूप से प्रकट करने का आवश्यक साहस उनमें नहीं रहा । यही कारण है कि हमारी जो अर्थनीति बन पाई, उसमें कुछ त्रुटियां रह गई ।

आर्थिक विकास के लिए मानव को मूल प्रेरणा केवल भावुकता से प्राप्त नहीं होती, यह हम ऊपर लिख आये हैं । समाजवाद, राष्ट्रीयकरण, मजदूरों और कर्मचारियों को (उत्पादन क्षमता का विचार किये बिना) अधिकाधिक

विषय-सूची

इस अंक के प्रमुख लेखक

१. श्री घनश्यामदास बिड़ला भारत के प्रमुखतम उद्योगपतियों में से हैं और आर्थिक समस्याओं पर उनके विचार देश में आदर से सुने जाते हैं।

२. अनेक उद्योगों के संचालक श्री करमचन्द थापर कलकत्ते के प्रमुख व्यवसायी हैं। देश की आर्थिक समस्याओं का व्यावहारिक ज्ञान रखते हैं।

३. श्री विश्वम्भर नाथ पाण्डेय झरिया में शिवप्रसाद कालेज में अर्थ शास्त्र के अनुभवी अध्यापक हैं और समय समय पर सम्पदा में लिखते रहते हैं।

४. डा० श्री शिवध्यान सिंह चौहान आगरा के बी. आर. कालेज में अर्थशास्त्र के प्राध्यापक हैं। उन्होंने भारतीय परिवहन नामक उत्कृष्ट ग्रन्थ लिखा है।

५. श्री कैलाश बहादुर सक्सेना सम्पदा के सुपरिचित लेखक हैं और बीकानेर में एक कालेज के प्रोफेसर हैं।

६. दिल्ली फैक्टरी ओनर्स असोसियेशन के अध्यक्ष श्री मुरलीधर डालमिया बिड़ला मिल दिल्ली के जनरल सेक्रेटरी हैं और दिल्ली की औद्योगिक समस्याओं पर अधिकार पूर्वक लिख सकते हैं।

—

क्षमा प्रार्थना

प्रेस की कठिनाइयों के कारण इस अंक में दो दिन का विलम्ब हो रहा है और ४ पृष्ठ कम निकाले जा रहे हैं। किसी आगामी अंक में यह कमी पूरी कर दी जायगी।

—व्यवस्थापक

वर्ष : ७] अप्रैल, १९५८ [अङ्क : ४

यथार्थ की ओर

किसी देश के और विशेष रूप से लोकतन्त्र देश के आर्थिक विकास में जनता का हार्दिक सहयोग अनिवार्य होता है, परन्तु वह केवल भावुकता और आदर्शवाद से अधिक समय तक प्राप्त नहीं किया जा सकता। भावुकता का अपना महत्व है। राजनैतिक स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए लोग असाधारण त्याग और आत्मोत्सर्ग करने के लिए तैयार हो जाते हैं, किन्तु निरन्तर बलिदान के मार्ग पर चलने वाले देशभक्त सैनिकों की संख्या बहुत थोड़ी रहती है, यद्यपि उसे अधिकांश जनता की हार्दिक सहानुभूति प्राप्त रहती है। अधिकांश जनता से निरन्तर त्याग की आशा चिरकाल तक नहीं की जा सकती। महात्मा गांधी के असाधारण व्यक्तित्व और ब्रिटिश शासन से मुक्ति की भावना के संकेत रूप होने के कारण खद्दर जनता में कुछ प्रचलित अवश्य हुआ, पर आज भी महान् नेताओं द्वारा खद्दर के प्रचार के निरन्तर ३९ वर्ष बाद भी उसे प्रोत्साहित करने के लिए सरकार ३ आने प्रति रुपया छूट के रूप में करोड़ों रुपया व्यय करती है, तब भी उसका यथेष्ट प्रचार नहीं हो पाता। यह इसका स्पष्ट प्रमाण है कि आर्थिक गतिविधि में भावुकता एक नियत सीमा तक ही काम करती है। एक तन्त्रात्मक आतंकवादी शासन में मिलों पर प्रतिबन्ध लगाकर भले ही खद्दर का प्रचार हो सके, सामान्य जनता उसे अपनी इच्छा से तभी अपनावेगी, जब उसे वह आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभकर प्रतीत होगा। देश की आर्थिक नीति निर्धारित करते हुए हम जब इस सत्य की अवहेलना करके भावुकता व आदर्शवाद को आवश्यकता से अधिक महत्व देंगे, तभी हम धोखा खायेंगे, यह हमें समझ लेना चाहिए।

पिछले कुछ वर्षों से भारत की आर्थिक नीति के निर्धारण में, यह एक सचाई है कि यथार्थ और वस्तुस्थिति की अपेक्षा राजनीतिज्ञों की भावुकता, महत्वाकांक्षा, आदर्श और सैद्धान्तिक चर्चा अधिक प्रभावशालिनी सिद्ध हुई हैं। अर्थशास्त्र पर राजनीति हावी हो गई और देश के अर्थशास्त्री, राजनीतिज्ञों और नेताओं के प्रभावशाली व्यक्तित्व से अभिभूत हो गये। अपनी दृष्टि को स्वतन्त्र रूप से प्रकट करने का आवश्यक साहस उनमें नहीं रहा। यही कारण है कि हमारी जो अर्थनीति बन पाई, उसमें कुछ त्रुटियां रह गईं।

आर्थिक विकास के लिए मानव को मूल प्रेरणा केवल भावुकता से प्राप्त नहीं होती, यह हम ऊपर लिख आये हैं। समाजवाद, राष्ट्रीयकरण, मजदूरों और कर्मचारियों को (उत्पादन क्षमता का विचार किये बिना) अधिकाधिक

वेतन देने भावना, आवश्यकता तथा विषमता कम करने के लिए अमीरों पर अधिकाधिक कर आदि बहुत ऊंचे आदर्श हो सकते हैं। देश के आर्थिक संकट को दूर करने के लिए बहुत बड़ी महत्वाकांक्षा पूर्ण योजना की प्रशंसा कौन नहीं करेगा, परन्तु इनका आधार ही यदि कमजोर होगा, तो निरा आदर्शवाद हमारी सब योजनाओं को चलाने में बहुत समय तक सहायक नहीं होगा। आज के अनुभव हमें अपनी समस्त नीति पर पुनर्विचार के लिए—यथार्थ परिस्थिति को देखकर पुनर्विचार के लिए विवश कर रहे हैं।

जब द्वितीय योजना बनाई गई थी, तब अनेक अर्थशास्त्रियों ने उसे अपनी क्षमता से बाहर, अत्यन्त महत्वाकांक्षापूर्ण बताते हुए कुछ अधिक सावधान होकर चलने की सलाह दी थी, किन्तु उस समय उन्हें निराशावादी, अदूरदर्शी तथा साहसहीन बताया गया। प्रथम योजना की सफलता ने हमें इतना अधिक आशावादी और उत्साहयुक्त बना दिया कि हम अपनी क्षमता भूलकर बड़े-बड़े सुनहले स्वप्न लेने लगे। कृषि सुधारों के उत्साह में हमने किसानों में भूमि वितरण की अधिक चिन्ता की, उत्पादन बढ़ाने की कम। मजदूरों के वेतन बढ़ने चाहिए, इसमें सन्देह नहीं, परन्तु इसका उत्पादन वृद्धि के साथ सम्बन्ध जोड़ने पर भी महत्त्व देना चाहिए था। उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का नारा इतना जोर पकड़ गया कि हम यह विचार नहीं कर सके कि आखिर हमारे पास न इतनी विशाल पूंजी है और न इतने अधिक अनुभवी, कार्यकुशल और ईमानदार कर्मचारी कि हम नये उद्योगों को चला सकें। अपने साधनों को नये उद्योगों में लगाने की अपेक्षा योजना आयोग की चेतावनी के बावजूद सब राज्य बस-यातायात आदि को हथियाने में लग गये। कोल-उद्योग के सम्बन्ध में नई नीति इसी का एक उदाहरण है। अपनी महत्वाकांक्षापूर्ण योजना की पूर्ति के लिए हमने दो काम और किये, एक तो उद्योग और सामान्य जनता पर भारी कर लगाये और दूसरे जनता से छोटी बचत और विदेशी सहायता की बड़ी योजनाएं बना लीं। नई कर नीति का परिणाम आज हम देख रहे हैं। पूंजी निर्माण के साधन ही कमजोर पड़ गये हैं और जनता आशा से बहुत कम रुपया बचा पा रही है। शानदार इमारतों तथा थोड़े-थोड़े समय बाद विदेशों में प्रतिनिधि मण्डल भेजने, लिफ्ट और एयरकन्डीशन सामग्री आदि पर अपनी क्षमता से अधिक हम व्यय करने लगे और यह भूल गये कि विदेशी मुद्रा कम होती जा रही है। हमारे आयात केवल एक वर्ष में ही ३२६ करोड़ रु० बढ़ गये। कला प्रेम, सौन्दर्य और भव्यता के फेर में हमने अशोका होटल बनाया। देश की आर्थिक नीति भी विदेशी पूंजी को प्रोत्साहित करने में सफल नहीं हुई। बरमा शैल ने ट्राम्बे में एक रासायनिक खाद का कारखाना खोलने की अनुमति मांगी थी, पर सरकार इस उद्योग को निजी उद्योग के हाथ में न सौंपने का निश्चय कर चुकी थी, अन्यथा दो वर्ष पूर्व यह कारखाना बनकर देश के आर्थिक विकास में सहायता दे रहा होता। इसी तरह अन्य भी अनेक ऐसे उदाहरण दिये जा सकते हैं कि व्यवहार और यथार्थ की अपेक्षा सरकारी नीति का निर्धारण सैद्धान्तिक आदर्शवाद या भावुकता पर किया गया है।

किन्तु जो हो गया, सो हो गया। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद हमारा उत्साह, हमारा आशावाद और हमारी महत्वाकांक्षाएं अत्यंत स्वाभाविक थीं। प्रथम योजना की सफलता ने, जिसमें उदार प्रकृति का भी बहुत सहयोग रहा, हमारे उत्साह को द्विगुणित कर दिया था। यह संतोष की बात है कि पिछले वर्ष से हमने अपनी नीति और कार्यपद्धति पर गम्भीरता से पुनर्विचार करना शुरू कर दिया है। विदेशी पूंजी और सुरक्षित निधि की समस्या ने हमें विवश कर दिया कि हम समस्त प्रश्न पर पुनर्विचार करें। योजना आयोग ने इस उद्देश्य से एक समिति नियुक्त की थी, जिसकी रिपोर्ट सामने आ चुकी है। इस रिपोर्ट में सरकार को अधिक सतर्क होने की सूचना दी गई है।

पिछले कुछ समय से सरकार की नीति में परिवर्तन के लक्षण भी दृष्टिगोचर होने लगे हैं। वस्त्र-उद्योग पर उत्पादन कर कम कर दिये गये हैं, अधिकारियों को रिजर्व फण्ड सरकारी खजाने में जमा न करने की छूट दे दी गई है, विदेशी पूंजी को अनेक ऐसी सुविधाएं दी गई हैं, जिनसे वह यहां आ सके, जहाजी उद्योग के विकास के लिए ४० प्रतिशत की छूट दी गई है। निर्यात-व्यापार को बढाने के लिए आयात करों में कमी का आश्वासन दिया गया है,

निजी उद्योग का कार्यक्षेत्र सीमित करने का आन्दोलन अब कम उग्र होता जा रहा है । नये वित्तमंत्री श्री देसाई ने लोकसभा में चाय उद्योग के राष्ट्रीयकरण या चाय निर्यात को स्टेट ट्रेडिंग कारपोरेशन के हाथ में देने का स्पष्ट विरोध किया है । ट्रक-यातायात के राष्ट्रीयकरण शीघ्र न करने का आश्वासन दिया जा रहा है, डाक-तार विभाग भी कुछ छूट देने को तैयार हो गया है, भारी उद्योगों के साथ-साथ कृषि पर फिर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है, औद्योगिक शांति बनाये रखने की ओर अब सरकार कुछ अधिक सावधान नीति बरतने के लिए उत्सुक दीखती है, आयात नीति अधिक कठोर कर दी गई है, और पिछले कुछ समय से योजना में कांट-छांट करने की नीति पर अमल होने लगा है, बहुत-सी योजनाएं, जिनमें विदेशी मुद्रा की अपेक्षा थी तीसरी योजना के लिए स्थगित की जा रही हैं । संचारमंत्री श्री राजबहादुर ने लारी ट्रक परिवहन पर लगे भारी करों को उद्योग के हित का विरोधी माना है । केरल की कम्युनिष्ट सरकार श्री बिड़ला ब्रादर्स को केरल में रेयन कारखाना खोलने की अनुमति दे रही है । कागज पर उत्पादन कर में कमी तथा आयात में सुविधा व रेल भाड़े में कमी आदि पर भी विचार हो रहा है । भूल करना उतना अपराध नहीं है, जितना भूलों से अनुभव न लेना । यह प्रसन्नता की बात है कि हम अव्यावहारिकता और भावुकता की बजाय यथार्थ और वस्तुस्थिति की ओर देखने लगे हैं ।

उद्योग में वेतन निर्धारण

भारत सरकार द्वारा वस्त्र उद्योग के लिए नियुक्त वेतन बोर्ड आजकल विभिन्न औद्योगिक नगरों में जाकर विविध दलों से उनके मत जान रहा है । मिल मालिक और मजदूर अपने अपने प्रश्न को पुष्ट करने के लिए प्रमाण दे रहे हैं । २७ मार्च को अ० भा० ट्रेड यूनियन कांग्रेस की ओर से देश भर में मजदूर दिवस मनाया गया । इसी दिन मजदूरी में २५ प्रतिशत वेतन बढ़ाने और महंगाई भत्ते को वेतन में सम्मिलित करने आदि आदि मांगों को करने का निश्चय किया गया था । जूट, चाय, लोहा, सीमेंट, रेलवे, डाक-तार, सैनिक विभाग, यातायात और बीमा उद्योग के लिए भी वेतन मण्डल नियुक्त करने की मांग की गई है । कुछ भाइयों ने इन मांगों को मजदूरों का अधिकार पत्र (चार्टर) कहा है । जहां तक मजदूरों की आवश्यकताओं और उनका जीवन-स्तर ऊंचा करने की भावना का प्रश्न है, वहां तक सभी यह चाहेंगे कि मजदूरों का जीवन-स्तर ऊंचा हो, उन्हें अधिक से अधिक सुविधाएं मिलें । लेकिन जिस समाचार पत्र में उक्त समाचार प्रकाशित हुआ है, उसी पृष्ठ पर एक दूसरा समाचार भी प्रकाशित हुआ है कि इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस की कार्य समिति को स्थान-स्थान पर बन्द होती हुई मिलों की संख्या बढ़ते जाने के कारण बहुत चिंता हो रही है । कपड़े, जूट मिल, तेल मिल, चाय के बागान तथा अन्य अनेक उद्योग धंधों में बेकारी बढ़ती जा रही है । कार्य समिति ने भारत सरकार से बंद होने वाली मिलों को शीघ्र चालू करने तथा निकट भविष्य में दूसरी मिलों को बन्द न होने देने की व्यवस्था करने का आग्रह किया है । पाठकों को यह मालूम होगा कि पिछले कुछ समय से सूती मिलें अपने असाधारण संकट में विविध सुविधाएं पाने की आवाज उठा रही हैं । ऐसी स्थिति से वेतन वृद्धि की मांग कहां तक सुसंगत है, यह निश्चय भारत सरकार द्वारा नियुक्त वेतन मंडल करेगा ।

हमारी नम्र सम्मति में इस प्रश्न पर निष्पक्ष और व्यावहारिक दृष्टि से विचार नहीं किया जा रहा । मिल मालिक अधिक वेतन देने में असमता दिखाते हैं और मजदूर प्रतिनिधि मिलों के घाटे की जिम्मेवारी संचालकों और प्रबन्धकर्ताओं पर डालते हैं । हमारा सुझाव यह है इन्टक, कम्युनिस्ट प्रभावित ट्रेड यूनियन कांग्रेस और सरकार देश के भिन्न-भिन्न भागों में दो दो औसत मिलें एक वर्ष के लिए अपने प्रबन्ध में लें । इन्हें साधारण मिलों से अतिरिक्त कोई सुविधा न दी जाय । एक वर्ष के परीक्षण के बाद, मजदूर और सरकार इस स्थिति में हो जायेंगे कि यह निश्चय कर सकें कि किस मजदूर को कितनी तनखा दी जा सकती है । मिल में लगी हुई पूंजी पर उचित मात्रा में ब्याज, सरकारी टैक्स, रेल-भाड़ा, घिसाई फण्ड आदि चुकाने की चिन्ता भी इन्हें करनी पड़ेगी । यदि मिल मालिकों का कोई दोष है तो वह स्पष्ट हो जायगा और यदि इसके विपरीत मजदूरों को नियत वेतन देना असम्भव

होगा तो मजदूर संघ अपनी मांगों में कमी करने को तैयार होंगे। कागजी आंकड़ों की अपेक्षा यह क्रियात्मक परीक्षण विविध दलों की स्थिति का स्पष्ट ज्ञान करने में अधिक सहायक होगा। आशा है कि इस पर सब सम्बद्ध दल विचार करेंगे। शोलापुर में सरकार एक मिल चलाने लगी है। उसका अनुभव भी सहायक होगा।

हमारी नम्र सम्मति में आज वेतनों के देशव्यापी प्रश्न पर उचित दिशा में विचार नहीं हो रहा। वेतन बढ़ाने की अपेक्षा, जीवन-व्यय कम करने की ओर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये, भले ही हमें जीवन स्तर में कुछ थोड़ी सी कमी भी करनी पड़े। परन्तु इसके लिए आवश्यक यह है कि पांच सौ रुपये से ऊपर वेतन पाने वाले सरकारी या गैर सरकारी सभी कर्मचारियों व अधिकारियों के वेतन में क्रमिक कटौती की जाय, तीन चार वर्ष उनकी वेतन वृद्धि रोक दी जाय। हमें जहां एक ओर मजदूर और किसान का जीवन-स्तर ऊंचा करना है, वहां उच्च या उच्च मध्यम-वर्ग के स्तर को कुछ नीचा भी करना होगा। तभी समाजवाद के लिए आवश्यक वातावरण उत्पन्न हो सकेगा।

परिवहन पर बोझ

भारत सरकार के मंत्री मण्डल में श्री लालबहादुर शास्त्री उन मंत्रियों में से हैं जो किसी प्रश्न की गहराई तक पहुँचकर पूर्व आग्रहों को छोड़कर निष्पक्ष दृष्टि से विचार करते हैं। कुछ समय पहले परिवहन सम्बन्धी कठिनाइयों पर अखिल भारतीय उद्योग व्यापार मण्डल ने उनका ध्यान खींचा था। उन्हें यह बताया गया था कि मोटर उद्योग किस संकट में से गुजर रहा है। भारत में प्रति मोटर गाड़ी को वर्ष में २०७० रु० टैक्सों के रूप में देना पड़ता है, जबकि फ्रांस में ८००, पश्चिम जर्मनी में १२००, इंग्लैण्ड में १३०० और इटली में १५०० रु० देना पड़ता है। विभिन्न राज्यों में पिछले वर्षों में मोटर परिवहन पर लगातार तरह तरह के कर बढ़ाने की प्रवृत्ति का परिणाम यह हुआ है कि १९४४-४५ में प्रति गाड़ी (जिसमें मोटर साइकिल भी सम्मिलित है) से ६११ रु० करों के रूप में लिया जाता था। १९४९-५० में यह रकम १११५ रु० और १९५४-५५ में १९०६ रु० हो गयी। अब २०७० रु० हो गयी है। सरकार ने इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया है। इसी के परिणामस्वरूप श्री राजबहादुर ने जो शास्त्री जी के साथ परिवहन मंत्री हैं, संसद में खुले तौर पर इसे स्वीकार किया कि हमें मोटर गाड़ियों पर कर भार कम करने पर विचार करना चाहिये। मोटर गाड़ियों पर केन्द्र, राज्य और स्थानीय समितियां तरह तरह के कर लगाती हैं। केन्द्र शासन मोटर गाड़ियों, टायरों, ट्यूबों, जरूरी पुर्जों तथा मोटर स्पिरिट पर तट कर या उत्पादन कर लेता है। राज्य सरकारें माल और यात्रियों पर टैक्स लगाती हैं। विभिन्न मार्गों के लाइसेन्स देने पर टैक्स लगाती हैं। विभिन्न वस्तुओं की बिक्री पर कर लगाती है और स्थानीय समितियां गाड़ियों पर तरह-तरह के कर लगाती हैं। इन सबको देखकर ही श्री लाल बहादुर शास्त्री ने इन भारी करों का विरोध किया। पंच-वर्षीय योजना के शेष तीन वर्षों में १ लाख २० हजार माल ढोने वाली गाड़ियों की जरूरत है। इन पर २५० सौ करोड़ रुपये की लागत आ सकती है। सड़क यातायात को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक है कि मोटर यातायात को कर भार से न लादा जाय और राष्ट्रीयकरण का खतरा भी उनके सिर पर न लटकता रहे। श्री लाल बहादुर शास्त्री ने अत्यन्त बुद्धिमत्तापूर्वक यह घोषणा की है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना तक अर्थात् ८ वर्ष तक माल परिवहन सड़क उद्योग का राष्ट्रीयकरण नहीं किया जायगा। यही व्यावहारिक और दूरदर्शितापूर्ण नीति है।

विश्व की बढ़ती हुई जनसंख्या

एक ओर हम कृषि और औद्योगिक पदार्थों का उत्पादन बढ़ाकर जीवन-स्तर ऊंचा करने का प्रयत्न कर रहे हैं, दूसरी ओर आबादी निरन्तर बढ़कर अर्थशास्त्रियों के सम्मुख चिन्ता का कारण उपस्थित कर रही है। १९२० में जनसंख्या १ अरब ८१ करोड़ थी। तीस वर्ष बाद १९५० में दुनिया की आबादी २ अरब ४९ करोड़ ५० लाख हो गई। और पिछले ५-६ सालों में यह २४ करोड़ २० लाख बढ़कर २ अरब ७३ करोड़ ७० लाख हो गई है। हिसाब लगाया गया है कि प्रतिदिन संसार में १ लाख १८ हजार नये बच्चे पैदा हो जाते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या पत्रक में उक्त संख्यायें देते हुए बताया गया है कि १९५०

से १८५० तक की दो सदियों में ०.४ प्रतिशत के हिसाब से जनसंख्या बढ़ी है। आगामी शताब्दी में यह प्रतिशत दुगना हो गया और आजकल यह १.७ प्रतिशत है। जनसंख्या बढ़ने का एक कारण यह भी बताया जा रहा है कि चिकित्सा, शिक्षा और सफाई के क्षेत्र में अधिक उन्नति के कारण अब मृत्यु संख्या पहले से बहुत कम हो गई है। यह सुधार प्रशंसनीय है, पर नई समस्या का कारण बन गया है।

नये वित्तमंत्री

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद यदि कोई मंत्रीपद सबसे अधिक आलोचना का विषय रहा है और यदि किसी को सबसे अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है तो वह *वित्तमंत्री का पद है। १९४६ में श्री षणमुखम्* चेट्टी ने यह पद सम्भाला था, किन्तु इन्कमटैक्स तथा कुछ कम्पनियों को लेकर जो वातावरण उत्पन्न हो गया, उसके कारण, उन्होंने त्याग पत्र दे दिया। इसके बाद भी जान-मथाई भारत के वित्त मंत्री बने, किन्तु वे भी इस पद पर बहुत समय तक नहीं रह सके। उन्हीं दिनों भारत सरकार ने योजना आयोग की नियुक्ति की थी। श्री मथाई का विचार यह था कि मंत्रीमण्डल पार्लियामेंट के प्रति उत्तरदायी है, इसलिए योजना आयोग को इतने अधिक अधिकार नहीं देने चाहियें, जिससे उसके सामने मंत्रीमण्डल नीति के निर्धारण में असमर्थ हो जाय। योजना-आयोग को मंत्रीमण्डल की इच्छा के अनुसार काम करना चाहिये, न कि आयोग मंत्रीमण्डल पर हावी हो जाय। तीसरे वित्तमंत्री श्री देशमुख ने राजनीतिक मतभेद के कारण त्यागपत्र दे दिया। उन्हें महाराष्ट्र में बम्बई नगर न मिलने पर तीव्र असन्तोष था। चौथे वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी को भी गत फरवरी में अलग हो जाना पड़ा, क्योंकि जीवन बीमा निगम ने मूंदड़ा के विपुल मात्रा में बहुत महंगे दामों पर शेयर खरीद लिये थे, जिसकी देश में कठोर आलोचना हुई। बहुत से सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं तथा पत्रों ने श्री कृष्णमाचारी को इसके लिए उत्तरदायी ठहराया। वस्तुतः वित्तमंत्री का पद अत्यन्त उत्तरदायित्व तथा कठिनाइयों से पूर्ण है। आज देश की प्रगति का प्रमुखतम क्षेत्र आर्थिक है। इसलिए वित्तमंत्री को ही देश की प्रगति के लिए विपुल मात्रा में आवश्यक मुद्रा की व्यवस्था और साधनों के संगठन आदि का भार लेना होता है। सरकार के निरन्तर बढ़ते हुए उत्तरदायित्वों को पूर्ण करने की जिम्मेदारी उसी पर आती है। इसके लिए उसे समय २ पर अप्रिय टैक्स लगाने पड़ते हैं, और सब तरफ से आलोचनाओं का शिकार होना पड़ता है।

अब श्री मोरारजी देसाई के कन्धो पर यह गुरु भार डाला गया है। वे कुशल और अनुभवी व्यक्ति हैं। वे अर्थशास्त्र के महा पण्डित न भी हो, तो भी उन्हें बम्बई से मुख्य मंत्री के पद पर रहते हुए देश की आर्थिक और औद्योगिक समस्याओं का अच्छा परिचय है। उन्हें देश के निजी उद्योगपतियों और व्यापारियों की भावनाओं तथा कठिनाइयों का भी ज्ञान है। गत वर्ष आयात नीति में कठोरता बरतकर उन्होंने देश की विदेशी मुद्रा को काफी हद तक बचा लिया। आज हमारे सामने अनेक आर्थिक समस्याएं हैं, जिनमें से विदेशी मुद्रा, देश में पूंजी निर्माण का स्वस्थ वातावरण, और उद्योग को आवश्यक प्रोत्साहन, बढ़ती हुई महंगाई को रोकना तथा जन सामान्य में बचत की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन आदि मुख्य हैं। हमें आशा करनी चाहिये कि श्री देसाई देश की आर्थिक समस्याओं को यथार्थवादी दृष्टिकोण से देखेंगे और इन कार्यों में सफल होंगे।

वस्त्रोद्योग-संगठन

जब विपत्ति आती हैं, तब वह साथियों को संगठन के लिए विवश कर देती है, इसका एक उदाहरण गत मास में इण्डियन काटन मिल्स फैडरेशन की स्थापना है। यद्यपि १९५० में इस प्रकार के सगठन का विचार उत्पन्न हो चुका था, किन्तु उसकी स्थापना अब हुई है, जब वस्त्रोद्योग काफी संकट में पड़ गया। श्री कस्तूरभाई लाल भाई इसके अध्यक्ष चुने गये हैं। बम्बई, अहमदाबाद, पश्चिमी बंगाल, इन्दौर, बड़ौदा, नागपुर, कानपुर, सौराष्ट्र और राजस्थान के मिल मालिक संघ इसमें सम्मिलित हुए हैं। अभी तक दक्षिण भारतीय मिल मालिक संघ इसमे सम्मिलित नहीं हो सका। बहुत सम्भवतः इसका कारण दक्षिण और उत्तर भारत की मिलों के हितों में परस्पर विरोध है। दक्षिण में अधिकांश मिलें केवल

सूत कातने वाली हैं। ये हथकरघा उद्योग को सक्रिय सहायता पर विशेष जोर देना चाहती हैं, क्योंकि उससे उनका सूत बिकता है। उत्तर भारत की मिलें हथकरघा उद्योग को अपना प्रतिस्पर्धी मानती हैं। दृष्टिकोण के इस भेद के कारण वे इस नये एसोसिएशन में अभी तक सम्मिलित नहीं हुईं। नये एसोसिएशन को वस्त्रोद्योग के सामने आने वाली विविध समस्याओं का सामना करना है। एक ओर उसे भारत सरकार के नियंत्रणों तथा बन्धनों का एक सीमा तक विरोध करना है, दूसरी ओर वस्त्रोद्योग के विकास की विविध समस्याओं को हल करना है। मशीनों का आधुनिकीकरण, निर्यात में वृद्धि, वेतनों में एक समान रूपता आदि आज की मुख्य समस्याएं हैं। श्री कस्तूर भाई लालभाई के कथनानुसार यह एसोसिएशन प्रदर्शनियों का संगठन करेगा, उद्योग की समस्याओं को देश के सामने रखेगा, शोधकार्य तथा अध्ययन की व्यवस्था करेगा। और व्यापारिक हितों की रक्षा के लिए प्रयत्न करेगा परन्तु यह सब काम तभी हो सकेंगे, जब यह एसोसिएशन क्षेत्र की सीमा छोड़ कर विविध भागों के हितों को एक समान रूप से देखेगा, और छोटे बड़े उद्योगों पर सामान रूप से दृष्टि रखेगा।

उद्योग की आचरण संहिता

कुछ समय पूर्व सरकार, मिल मालिक और मजदूर-संघ में एक निर्णय हुआ था कि औद्योगिक शान्ति के लिए एक आचरण संहिता बनाई जाय, जिसका पालन सभी दल करें। अब मालूम हुआ है कि कर्मचारियों और मिल-मालिकों की अनेक संस्थाओं ने मालिकों के तीन केन्द्रीय संघों और ४ मजदूर संस्थाओं ने इसे स्वीकार कर लिया है। चारों मजदूर संस्थाएं २० लाख मजदूरों का प्रतिनिधित्व करती हैं। इस संहिता के अनुसार दोनों पक्ष समस्त विवादों और कठिनाइयों को परस्पर बातचीत, समझौते तथा पंच फैसलों द्वारा समझायेंगे। बल प्रयोग, दमन, धीरे कार्य करो, हड़ताल और ताला बन्दी आदि का आश्रय कोई पक्ष नहीं लेगा। किसी विवाद में एक पक्षीय कार्यवाही नहीं की जायेगी। मजदूर अनुशासन में रहकर काम करेंगे। तोड़ फोड़ आदि अनुशासनहीनता के कार्य नहीं करेंगे। अपराधियों के विरुद्ध भले ही वे मजदूर हों या प्रबन्धकर्त्ता, उचित कार्यवाही की जायगी। यह आचरण संहिता अत्यन्त उपयोगी है और यदि इस पर इमानदारी से दोनों पक्षों ने पालन किया तो इसमें सन्देह नहीं कि उद्योग की स्थिति बहुत अच्छी हो जायगी। पिछले कुछ समय से भारत सरकार एक बहुत बड़ा विनियोजक (एम्प-लायर) होती जा रही है। इसलिए उसके कर्मचारियों और अधिकारियों के जिम्मे विशेष उत्तरदायित्व आ गया है। उन्हीं के व्यवहार से सरकारी उद्योगों में काम करने वाले मजदूर भी अपना रूख बदलेंगे और समस्त देश को नयी प्रेरणा देंगे। आज स्थिति संतोषजनक नहीं है। मजदूरों को यह शिकायत है कि अनेक औद्योगिक सुविधाएं जो निजी उद्योग में कानूनन मजदूरों को मिलती हैं, सरकारी उद्योगों में नहीं मिलतीं। मध्य प्रदेश के रा० मजदूर संघ ने इसकी विशेष शिकायत की है। दूसरी तरफ हम मजदूर नेताओं से भी एक बात कहना चाहते हैं कि उनका उत्तरदायित्व भी आचार संहिता से बहुत बढ़ गया है। आज प्रत्येक नागरिक को यह समझना है कि उसके आलस्य और परिश्रम, नियमित अनुशासन और अनुशासनहीनता, ईमानदारी से मेहनत और शिथिलता—सबका प्रभाव देश की आर्थिक समृद्धि पर पड़ता है।

व्ययों में कटौती

कुछ समय पहले श्री घनश्यामदास बिड़ला के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मण्डल विदेशों में गया था। उसने अपनी रिपोर्ट देते हुए एक सलाह यह दी थी कि हमें अभी उत्पादन योजनाओं पर अधिक व्यय करना चाहिये; जिससे निकट भविष्य में हम कुछ कमा सकें, न कि समाज सुधार योजनाओं पर, जो वस्तुतः अधिक आय के बाद स्वयं किये जायेंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने इस परामर्श को स्वीकार कर लिया है। १९५८-५९ की योजना सम्बन्धी प्रवृत्तियों पर जो नोट प्रकाशित किया गया है, उससे यह प्रतीत होता है कि सरकार हथ-करघा और चरखा-उद्योग की राशि ८.३२ करोड़ को आधा कर रही है। प्रारम्भिक और बेसिक शिक्षा आदि पर भी व्यय ५०% कर दिया जायगा। विभिन्न राज्यों में शुरू होने वाली योजनाओं में भी ७० करोड़ रु० की कमी का

(शेष पृष्ठ २२८ पर)

हमारी पंचवर्षीय योजना : कुछ विचार व परामर्श

(श्री घनश्यामदास बिड़ला)

देश के प्रमुख उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिड़ला ने पचवर्षीय विकास योजना के सम्बध में एक भाषण देते हुए कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये थे। उसके कुछ आवश्यक अश नीचे दिये जा रहे है।

द्वितीय योजना की सफलता प्रति व्यक्ति की आमदनी में वृद्धि तथा अधिक रोजगार से मापी जायगी। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए योजना मे कुछ सशोधन होने चाहिए।

कृषि सम्बन्धी उत्पादनों तथा खाद के उत्पादन के प्रति अधिक ध्यान देना होगा। औद्योगिक क्षेत्र मे अधिक से अधिक भारी माल के उत्पादन के प्रति प्रयत्न करना होगा। उद्योग का हित आज वही है जो जनसामान्य का हित है। दोनों में कोई विरोध नहीं है। मैं इस बात पर प्रधान मत्री से सहमत हूँ कि हमारा लक्ष्य समाजवादी समाज की स्थापना है। समाजवादी समाज मे न सरकारी क्षेत्र के लिए स्थान है और न ही निजी क्षेत्र के लिए। समाजवादी समाज में एक ही सामाजिक क्षेत्र (सोशल सेक्टर) होगा— जिसका उद्देश्य समाज का कल्याण होगा तथा सभी साधन देश के कल्याण के लिए प्रयुक्त होगे।

° ° ° °

द्वितीय योजना के सम्बन्ध में काफी तर्क वितर्क चल रहा है। हम में से बहुत से यह भूल गये है कि योजना स्वय एक साधन मात्र है, वह साध्य या लक्ष्य नहीं है। योजना का लक्ष्य अधिक उत्पादन, अधिक समृद्धि तथा सम्पत्ति का न्याय पूर्ण वितरण है।

द्वितीय योजना मे ८० लाख लोगों के लिए रोजगार देने का मतलब यह नहीं है कि सिर्फ औद्योगिक क्षेत्र मे ही सब की खपत हो जाय। सिर्फ औद्योगिक तथा कृषि क्षेत्र में अधिक उत्पादन से नहीं, पढ़ाई, स्वास्थ्य तथा समाज कल्याण आदि क्षेत्रों में भी लोगों को अधिक रोजगार मिलेगा। सभी समुन्नत देशोंमे रोजगार इन्हीं अतिरिक्त सेवाओं के द्वारा दिया जाता है। यह ठीक है कि इससे उत्पादन की वृद्धि मे बहुत मदद नहीं मिलती। आज तक हम काफी लोगो को रोजगार नहीं दे पाये, इस दृष्टि से अभी समाजवादी समाज का लक्ष्य दूर की बात है। जहाँ तक निजी पूंजीका प्रश्न है, ७०० करोड रु० के विनियोजन का लक्ष्य बहुत पहले ही पूर्ण हो चुका है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अतर्गत निजी क्षेत्र ने अपने लक्ष्य को पूरा कर लिया है तथा अनेक क्षेत्रों में उत्पादन बढाने की दिशा मे वह तेजी से आगे बढ़ता जा रहा है। जहा तक सरकारी क्षेत्र का सवाल है, उस क्षेत्र का क़िस्सा कुछ अलग ही है।

° ° ° °

औद्योगिक उन्नति के अनुपात से प्रतिव्यक्ति की आय में भी वृद्धि नहा हुई, जिससे खपत में और उसके परिणाम स्वरूप उत्पादन मे क्रमश कमी हो गई। अगर उत्पादन के साथ साथ आमदनी मे भी वृद्धि होती तो अधिक उत्पादन तथा अधिक बिक्री में कोई कठिनाई नहीं हुई होती।

निजी क्षेत्र में जहा इतनी सफलता प्राप्त हुई है, वहा इसके विपरीत सरकारी क्षेत्र में सफलता बहुत कम मिली है। अगर पूंजी लागत के लक्ष्य में हम सफल भी हुए, मुझे सन्देह है कि उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति न होगी। सरकारी क्षेत्र में इस्पात के उत्पादन के लक्ष्य की पूर्ति सभव होगी, जब कि कोयले का उत्पादन का लक्ष्य पूर्ण रूप से असफल रहा। सिर्फ ३.५. मिलियन टन ही कोयले का उत्पादन हुआ, जबकि हमारा लक्ष्य १६ मिलियन टन का था। २२ लाख टन खाद की आवश्यकता थी जबकि केवल ५ लाख टन का ही उत्पादन हुआ। रेल्वे अमि वृद्धि सम्बन्धी योजनाओ मे उन्नति हुई, लेकिन हमने लक्ष्य ही बहुत कम रखा था इसे बहुत ऊचा करने की आवश्यकता है।

कृषि क्षेत्र

नियमित उत्पादन के सम्बन्ध में अधिक निराशा औद्योगिक क्षेत्र मे नहीं है, बल्कि कृषि क्षेत्र में है। कृषि

क्षेत्रमें उत्पादन लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में घोर निराशा हुई है। इस दिशा में हम लोग बुरी तरह विफल हुए हैं। देश की करीब २ आधी सम्पत्ति कृषि द्वारा पैदा की जाती है। अगर लक्ष्य की पूर्ति न हुई तो जनता में क्रय शक्ति क्षीण हो जायगी, जिससे उत्पादन पर और भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। कृषि में देश का विकास बहुत कम हुआ है। सूखे तथा बाढ़ से बचने के लिए बड़ी २ रकमें खर्च की गई, फिर भी काफी अधिक मात्रा में जल सुविधाओं का उपयोग नहीं हो रहा है। हमारी सारी योजना व कार्य पद्धति में कहीं नुक्स जरूर है। अगर कृषि क्षेत्र में हम लोग विफल हुए तो समस्त आयोजना ही चकनाचूर हो जायगी। कृषि क्षेत्र में भीषण भूलें की गई हैं। और तो और उत्पादन लक्ष्य का ठीक ठीक निर्देश तक नहीं किया गया है। वस्त्रोत्पादनके लक्ष्य के साथ साथ उसके लिए आवश्यक मात्रा से रुई के उत्पादन का लक्ष्य बहुत कम रखा गया है और हमें ४५ करोड़ रु० की लागत से १० लाख गांठों का आयात करना पड़ता है, ताकि हमारी मिलें चालू रह सकें। व्यापारिक फसलोंके बारे में भी यही बात है। चाय उत्पादन पर भारी निर्यात करों का बुरा प्रभाव पड़ रहा है। यदि हम लोगों ने कृषि उत्पादन की ओर अधिकाधिक ध्यान नहीं दिया तो हमारे सभी लक्ष्य अधूरे सिद्ध होंगे और हम लोग बिल्कुल विफल सिद्ध होंगे। भारत की उन्नति कृषि पर ही अवलम्बित है।

० ० ० ०

मैं कुछ उद्योगपतियों की इस बात से सहमत नहीं हूँ कि, बढनेके बजाय, राष्ट्रीय आय बहुत कम हो गई है। वास्तवमें जनता का जीवन स्तर—काफी मात्रा तक ऊंचा उठा है।

द्वितीय योजना की सफलता तथा कृषि सम्बन्धी उत्पादन की वृद्धि के लिए यह एक जरूरी बात थी कि देश के अन्दर जो जल सुविधाएं तथा साधन प्राप्त हैं उन का उचित उपयोग हो। खादों के अधिकाधिक उत्पादनको प्राथमिकता मिलनी चाहिए। निजी उद्योगको भी खाद-उत्पादन में भाग लेने का अधिकार दिया जाना चाहिए।

बिजली का उत्पादन

यह दुःख की बात है कि प्रान्तीय सरकारें बिजली के उत्पादन पर जो कि औद्योगीकरण का मुख्य साधन है अधिक कर का बोझ लाद रही हैं। वे अपने आप को नुकसान पहुँचा रही हैं, क्योंकि इस प्रकार के कर के बोझ से औद्योगिक विकास में रुकावट पैदा हो जाती है और एक ओर हम लोहे का उत्पादन बढ़ा रहे हैं, दूसरी ओर नये उद्योग खोलने की सुविधाएं नहीं दे रहे हैं। अब से उन कामों में पूंजी लगाने की प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिससे थोड़े समय के अन्दर ही अधिक प्रतिफल मिल जायगा। पूंजीगत माल के उत्पादन पर विशेष ध्यान देना होगा। इस्पात उत्पादन के केन्द्रों के चारों तरफ सैकड़ों कारखाने खुलने चाहिए, जिससे निजी पूंजी को भी लाभ होगा। सरकारी तथा निजी पूंजी के मध्य अधिक सहयोग व संगति होनी चाहिए। मुझे खुशी है कि देश इस दिशा में अग्रसर हो रहा है तथा निजी पूंजी के प्रति जो शंकाएं थीं, दूर हो रही हैं। हमें सरकारी क्षेत्र के भी महत्त्व को अनुभव करना चाहिए, तथा उसे सहयोग देना चाहिए।

० ० ० ०

आने वाले कुछ वर्षों तक विदेशी मुद्रा सम्बन्धी कठिनाइयां रहेंगी। मैं इस बात का स्वागत नहीं करता कि विदेशों से भारी मात्रा में ऋण लें, क्योंकि आखिर जब चुकाने का समय आयगा तो यह समस्या बहुत अधिक गम्भीर हो जायगी है। अच्छा तो यह है कि विदेशी पूंजी लगाने के लिए आवश्यक वातावरण पैदा करें।

सरकार को चाहिए कि इस मामले पर अधिक ध्यान दें। कोई भी देश विदेशी पूंजी की लागत के बिना समृद्ध नहीं हुआ है। विदेशों से सीधा ऋण लेने की बजाय यदि विदेशी पूंजी ली जाय, तो वह अधिक हानिकारक सिद्ध होगी, यह हमारा भ्रम है। विदेशी पूंजी से देश का उत्पादन व सम्पत्ति भी बढ़ेगी, और उसके चुकाने का सवाल बहुत समय तक नहीं उठेगा। दूसरी ओर लिये गये ऋण एक नियत समय चुकाने पड़ेगें।

अमेरिका में आर्थिक मन्दी ? आज की नई आर्थिक समस्या

कृष्णचन्द्र विद्यालकार

पिछले कुछ समय से समस्त संसार का ध्यान अमेरिका की आर्थिक स्थिति की ओर चला गया है। उसकी आर्थिक स्थिति का प्रभाव विश्व के बहुत बडे भाग पर पडता है, इसलिये उसकी आर्थिक स्थिति के सुधार या ह्रास की ओर ध्यान जाना स्वाभाविक भी है। पिछले कुछ समय से वहां आर्थिक मंदी बढ़ती जा रही है। यह ख्याल था कि फरवरी तक चरम सीमा पर पहुचने के बाद बेकारी कम होने लगेगी, किन्तु मार्च के मध्य तक भी स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ। उत्पादन भी लगातार कम हो रहा है। जनवरी मे बेकारों की संख्या ७ लाख बढ़ी थी। फरवरी में यह संख्या ११ लाख बढ़ गई। अब वहां ५२ लाख बेकार हैं। उत्पादनका सूचक अंक १३० है, जो कि १६५५ के बाद से न्यूनतम है।

विभिन्न देशों में

अमेरिका की आर्थिक मंदी का प्रभाव संसार के विभिन्न देशों पर भी पडने लगा है। बहुत से देशों मे बेकारी बढ़ती जा रही है। लन्दन के प्रसिद्ध पत्र "इकानामिस्ट" मे प्रकाशित एक लेख के अनुसार कुछ विभिन्न देशों की आर्थिक स्थिति संक्षेप से निम्नलिखित है.—

अमेरिका—फरवरी, ७.७ प्र० श० बेकारी (पिछले वर्ष ४.७ प्र० श०), जनवरी मे गत वर्ष की अपेक्षा कारखानों में उत्पादन ८.६ प्र० श० कम, विदेशी स्वर्ण मुद्रा मे ३० करोड डालर की कमी, ट्रैजरी बिलों का दर घटा दिया गया है। सरकारी व्यय मे वृद्धि और करो में कमी।

कैनाडा—जनवरी, ८८ प्र० श० बेकारी (५ ३ प्र० श०), दिसम्बर में ६ ७ प्र० श० उत्पादन मे कमी, अमेरिकन पूंजी के विनियोजन में कमी, करो मे कमी।

इंगलैंड—फरवरी, १ ६ प्र० श० बेकारी (१ ८ प्र० श०), उत्पादन मे १ प्र० श० कमी, ब्याज के ऊचे दर, स्वर्ण भण्डार में वृद्धि।

जापान—बेकारी की संख्या अस्पष्ट, औद्योगिक उत्पादन में ३ प्र० की वृद्धि, मई मे बैंक दर में वृद्धि।

जर्मनी—जनवरी, बेकारी मे थोडी सी कमी, औद्योगिक उत्पादन मे ५ प्र० श० वृद्धि, परन्तु निर्यात के आर्डर कम हो रहे हैं, स्वर्ण और विनिमय कोष में दिसम्बर से कमी, बैंक रेट में ३॥ प्र० श० तक कमी।

बैलजियम—फरवरी, बेकारी ६ प्र० श० (७ २ प्र० श०), उत्पादन मे ५ प्र० श० कमी, बैंक दर ४॥ प्रतिशत प्र० श० (३॥ प्र० श०) और कमी की संभावना।

इसी तरह एक और अखबार 'टाइम्स' (लन्दन) ने बढ़ती हुई बेकारी के अंक प्रकाशित किये हैं; जिनसे पता लगता है कि बैलजियम, ब्रिटेन, कैनाडा, डेनमार्क, फ्रांस, हालैण्ड और अमेरिका मे बेकारी बढ़ रही है। 'यू० एस० न्यूज एण्ड वर्ल्ड रिपोर्ट' के १६ फरवरी के अंक मे डैट्रायट (मोटर कारखानों का प्रसिद्ध नगर) के बारे में लिखा है कि इस शहर में ८ मजदूरो मे से १ मजदूर बेकार हो गया है और काम की तलाश में है। अमेरिकन संकट का असर अन्य देशों पर भी पड़ने लगा है, जैसा कि ऊपर लिखे आंकड़ो से स्पष्ट है।

अमेरिका के १२ फैडरल रिजर्व बैंकों को अपना डिस्काउंट रेट ७ मार्च को २॥। से २। प्र० श० करना पड़ा है। पिछले ५ महीनो में यह तीसरी बार बैंक दर में कटौती हुई है। नवम्बर में ३॥ से ३ प्र० श०, जनवरी में ३ से २॥। प्र० श० और अब ½ प्र० श० कमी की गयी है। सरकारी ट्रेजरी बिलो का रेट भी कम हुआ है। प्रमुख बैंको के डिपोजिट भी कम होते जा रहे हैं, क्योंकि बैंक दर कम हो गया है।

कृषि में कमी

अमेरिकन अर्थ व्यवस्था का एक और पहलू यह है कि कृषि पदार्थ बिक नहीं पा रहे है। उनका मूल्य यदि कम किया जाय तो समस्त अर्थ व्यवस्था मे भ्रांति होने का खतरा है। इसलिए अमेरिकन सरकार ने किसानोंको यह राय दी है कि वे अपनी सारी भूमि में खेती नहीं करें। प्रत्येक फार्म के मालिक को प्रति एकड़ भूमि में खेती न करने पर मुआवजा के रूप मे ५५ रु० दिये जायेंगे। अभी २०२७३ एकड़ मे खेती घटाने की यह योजना चालू की

गई है। इसका मुख्य उद्देश्य कृषि में हो रहे अति उत्पादन को रोकना है। हम भारतवासियों के लिए तो सचमुच यह आश्चर्य की चीज है। हम तो एक एक इंच भूमि में कृषि बढ़ाने की चेष्टा कर रहे हैं और अमेरिकन सरकार अच्छी जमीन को परती रखने की सलाह दे रही है।

शायद बहुत से पाठकों को यह पता न हो कि आज से २७-२८ वर्ष पूर्व भी अमेरिका में एक भयानक मंदी आगई थी और अति उत्पादन के दुष्परिणामों को रोकने के लिए हजारों टन रुई और अनाज जला दिया गया या समुद्र में डाल दिया गया था, क्योंकि गिरते हुए मूल्यों ने अमेरिका में एक भयानक आर्थिक संकट उत्पन्न कर दिया था और लगातार बड़े बड़े कारखाने और बैंक फेल हो रहे थे। उसी समय रिपब्लिकन गवर्नमेन्ट को हटा कर डैमोक्रेट दल के नेता श्री रूजवेल्ट ने शासन-सूत्र संभाला था। अब फिर डेमोक्रेट आज के आर्थिक संकट का नारा लगा रहे हैं कि रिपब्लिकन सरकार आर्थिक मन्दी को दूर करने में बिलकुल असफल हो रही है।

अमेरिकन सरकार की दृष्टि

यह बात नहीं है कि अमेरिकन सरकार का इस दिशा में कोई ध्यान नहीं है। यह ठीक है कि अभी तक अमेरिकन राष्ट्रपति श्री आइज़न हावर ने इस संकट को दूर करने के लिए कोई विशेष आदेश नहीं दिये। उनकी और उनके आर्थिक परामर्शदाताओं की सम्मति आज भी यह है कि वर्तमान स्थिति से घबराने की आवश्यकता नहीं है। संकट चरम सीमा पर पहुँच चुका है और अब उतार शुरू हो जायगा। अमेरिका के श्रममंत्री श्री मिचेल ने बताया है कि स्थिति में सुधार के लक्षण दिखाई देने लगे हैं और यदि आशा के अनुसार सुधार नहीं हुआ तो शासन उचित कार्यवाही अवश्य करेगा। टैक्सों में कमी आवश्यक होगी तो व्यवहार के प्रोत्साहन के लिए वह भी की जायगी। वित्तमंत्री श्री ऐंडरसन के कथनानुसार अनेक क्षेत्रों में दामों में कमी हो जाने से अधिक अच्छा सन्तुलन हो गया है तथा सभी पदार्थों के मूल्यों में स्थिरता आ गयी है। व्यक्तिगत आय अभी तक उच्च बनी हुई है। गृह निर्माण तथा विभिन्न उद्योगों के उत्पादन में वृद्धि हो रही है। १९४६ के बाद से कुल अमेरिकी उत्पादन और सेवाओं में लगभग ४५ प्र० श० की अर्थात् ३.३८ प्र० श० वार्षिक की वृद्धि हो चुकी है। १९०८ से १९४५ तक की औसत वृद्धि ३.२ प्र० श० प्रति वर्ष थी। यह ठीक है कि पिछले कुछ वर्षों से बहुत सी वस्तुओं की मांग पहले से कम हो रही है, किन्तु दूसरी ओर अनेक नयी वस्तुओं की मांग बहुत बढ़ रही है। मोटरों की संख्या में वृद्धि के कारण नयी सड़कों की और नये मकान बन जाने से रेफ्रीजेटर आदि घरेलू उपकरणों की मांग बढ़ भी गयी है। अमेरिका की बढ़ती हुई आबादी के कारण भी पदार्थों की मांग बढ़ रही है और इन बातों से यह अनुमान किया जा सकता है कि आर्थिक संकट की संभावनाएं बहुत अधिक नहीं हैं। १९५७ में वार्षिक उत्पादन की रफ्तार ४ खरब ३२ अरब ५० करोड़ डालर की थी, जबकि १९५६ में इससे १४ अरब डालर कम थी। उपभोग्य वस्तुओं की खपत भी १९५६ से इस वर्ष ५ प्र० श० अधिक रही। इस तरह सरकारी क्षेत्रों का यह विश्वास है कि आर्थिक संकट अभी तक नियंत्रण में है और यों तो अमेरिकन अर्थ-व्यवस्था "भीषण उतार-चढ़ावों से युक्त स्थिरता की व्यावस्था" है भारत स्थित अमेरिकी राजदूत श्री बंकर ने राष्ट्रपति के इस विचार का समर्थन किया है कि वर्तमान गिरावट एक अस्थायी घटना है, जिसका प्रभाव अधिक समय तक रहने वाला नहीं है। दीर्घकालीन स्थिरता का मुख्य कारण अमेरिकी आर्थिक क्रियाकलाप की असाधारण व्यापकता और विविधता है। यही कारण है कि कोरिया युद्ध के बाद फौजी खर्च में भारी कमी होने के बावजूद अर्थ व्यवस्था में कमी नहीं आई। यह ठीक है कि आज की स्थिति में कुछ संस्थाओं का व्यापार चौपट होगा और लोग बेकार हो जायंगे; किन्तु नये उद्योग उनका स्थान ले रहे हैं। सरकार ने पिछले २० वर्षों में अर्थ-व्यवस्था पर अनेक नियंत्रण अवश्य लगाये हैं, किन्तु पूंजीवादी स्वतन्त्र साहस की मूल प्रवृत्ति को नहीं बदला। सरकार समय-समय पर उद्योग और कृषि के लिए मार्गदर्शन पहले भी करती रही है और आगे भी करती रहेगी।

उपायों पर विचार

श्री बंकर के इस वक्तव्य से यह तो स्पष्ट है कि अमेरिका प्रतिकूल परिस्थितियों में से गुजर रहा है, किंतु यह भी मानना

पड़ेगा कि अमेरिकन अर्थशास्त्री स्थिति की वास्तविकता से अपरिचित नहीं हैं। उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए करों में कमी की सम्भावना जल्दी की जा रही है। निर्यात बहुत अधिक बढ़ाये जा रहे हैं। विभिन्न देशों को अधिकाधिक सहायता देकर भी निर्यात के लिए वातावरण उत्पन्न किया और उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। राष्ट्रपति बेकारी का मुआवजा बढ़ाने का विचार भी कर रहे हैं।

राष्ट्रपति ने कांग्रेस से १६५६ में नदियों व बन्दरगाहों के विकास तथा बाढ़ नियंत्रण के लिए १७१५ करोड़ डालर की मांग की है। सड़कों के निर्माण के लिए ६६० करोड़ डालर की योजना बनाई जा रही है जबकि, पहले ४०० करोड़ डालर व्यय करने का विचार था। घरों के निर्माण के लिए १८० करोड़ डालर व्यय करने की योजना पर सीनेट की स्वीकृति मिल चुकी है। डाकखानों, सरकारी इमारतों के निर्माण पर २०० करोड़ डालर की योजना बनाई गई है।

लोगों को अपने कारोबार बढ़ाने के लिए ३०० करोड़ डालर ऋण देने की व्यवस्था की जा रही है। रेल, जहाज तथा अन्य उद्योगों को सरकार विपुल राशि मे सहायता प्रदान कर रही है। वाशिंगटन के निर्यात आयात बैंक जिसकी पूंजी १ अरब डालर है और जिसे सरकार से ४ अरब डालर ऋण लेने का अधिकार है, इस दिशा मे बहुत सहायता कर रहा है। राष्ट्रपति को यह विश्वास है कि सरकार और जनता के सहयोग से देश सम्भावित आर्थिक संकट के खतरे को दूर करने में अवश्य सफल होगा।

कारण

अमेरिका के इस संकट का मूल कारण क्या है, इस संबंध मे मतभेद की पूरी गुंजाइश है। कुछ अर्थशास्त्री इसे अर्थचक्र की स्वाभाविक गति मानते है जो निश्चित अवधि के बाद आया करती है। साम्यवादके समर्थक इसे पूंजीवादी व्यवस्था का दुष्परिणाम मानते हैं, तो गांधीवादी अर्थशास्त्री इसे बड़े बड़े यन्त्रों द्वारा मांग की अपेक्षा अत्यधिक मात्रा मे उत्पादन मानते हैं। विभिन्न देशों में स्वावलम्बन की भावना बढ़ जाने तथा कुछ देशो में क्रय शक्ति कम हो जाने की वजह से अमेरिकन निर्यात मे कमी भी इसका एक कारण है। यदि अमेरिका ने इस संकट को शीघ्र पार न किया तो यह असम्भव नहीं है कि अन्य देशो पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़े। खतरा यही है कि १६२६-३० की व्यापक मन्दी की पुनरावृत्ति न होने पाये। किन्तु हमें विश्वास करना चाहिए कि यह खतरा व्यापक रूप में आने वाला नहीं है और यदि विदेशों मे मन्दी आई भी तो भारतीय नेता उसके प्रभाव को यथाशक्ति कम करने का प्रयत्न करेंगे, पर अभी तो देश मे उत्पादन अधिक से अधिक बढ़ाने और मूल्य कम करने की आवश्यकता है।

इस खर्च की पूर्ति के लिए डेढ़ रु० प्रति टन मूल्य वृद्धि से वस्तुतः अतिरिक्त उत्पादन व्यय भी पूरा नहीं होता। यदि ट्रिब्यूनल के नये फैसले पर अमल किया जाय तो उत्पादन व्यय प्रति टन १ रु० १२ आ० बढ़ जायेगा अर्थात ४ आ० प्रति टन मजदूरों को उद्योग अपने पास से देगा, जबकि मशीनरी तथा भवन निर्माण आदि सामग्री के मूल्य भी पहले से बहुत बढ़ गये हैं। इस तरह यह स्पष्ट है कि भारत सरकार की कोयला मूल्य-नीति उद्योग के लिए असंतोषजनक है। अभी तक सरकार इस सम्बन्ध में कोई अन्तिम निश्चय नहीं कर पाई है।

सरकारी नियंत्रण

कोयला उद्योग सरकार द्वारा अत्यन्त नियंत्रित है। विविध स्थितियों में कोयले पर सरकार नियंत्रण करती है—कोयले की उत्पादन विधि, वितरण, मूल्य निर्धारण मजदूरी की दर और मजदूरों को सुविधाएं आदि सब पर सरकार का नियंत्रण है। कोयले पर करीब १५ वर्ष से सरकारी नियंत्रण चले आ रहे हैं। इनके कारण उद्योग के विकास का प्रोत्साहन बहुत शिथिल पड़ता जा रहा है। सरकार का कर्तव्य है कि वह कोयला उद्योग पर लगी हुई पाबंदियां कछ शिथिल करे और सरकारी मशीनरी की पेचीदगियों को भी कम करे। आजकल कोयला उद्योग को निम्नलिखित सरकारी संस्थाओं से वास्ता पड़ता है। १—कोल बोर्ड, २—कोल कन्ट्रोलर, ३—माइन्स डिपार्टमेन्ट, ४—लोहा इस्पात मंत्रालय, ५—खान और ईंधन, ६—श्रम मंत्रालय, और ७—रेलवे आदि। सरकार के विभिन्न भागों में परस्पर संगति व सुव्यवस्था न होने के कारण किसी प्रश्न के निर्णय में बहुत देरी लग जाती है और कभी कभी इन विभागों के आदेशों में परस्पर विरोध भी होता है। इन सरकारी विभागों में परस्पर संगति होनी चाहिये।

परिवहन की कठिनाइयां

कोयला उद्योग के विकास में एक बड़ी बाधा परिवहन की है। जब तक परिवहन का उचित प्रबन्ध नहीं होता, तब तक उद्योग से यह आशा करना अनुचित होगा कि वह खानों से लगातार कोयला निकाल कर बाहर पहुँचाये। यद्यपि दूसरी योजना में रेलवे के विकास के लिए काफी राशि नियत की गई है तथापि आवश्यकता को देखते हुए वह कम है। १८०० लाख टन कोयला ले जाने की व्यवस्था १९६० तक आवश्यक होगी, जबकि अनुमानतः रेलवे १९६१ तक केवल १६०० लाख टन ढोने में समर्थ होगी। वस्तुतः परिवहन कठिनाइयां बहुत अधिक हैं। जितना कोयला खानों से निकाला जाता है, उतना कोयले का निकास नहीं हो पाता। यह अनुमान किया गया है कि १९५७-५८ में ४८६० माल गाड़ी के डिब्बे प्रतिदिन चाहियें और १९६०-६१ तक क्रमशः बढ़ते बढ़ते ६८०४ डिब्बों की दैनिक आवश्यकता पड़ेगी। सरकारी उद्योग के कोयले को परिवहन की सुविधाएं भी अधिक मिल रही हैं, जबकि निजी क्षेत्र के पास स्टाक में बहुत भारी मात्रा में कोयला मौजूद है और खरीदारों को सख्त जरूरत होने पर भी नहीं मिल रहा। जुलाई १९५७ के अन्त में निजी खानों के पास ३० लाख टन निकाला हुआ कोयला विद्यमान था, जबकि सरकारी खानों के पास केवल ३७११० टन कोयला था। वस्तुतः कोयले के परिवहन की समस्या बहुत गम्भीर है।

उद्योग के सभी अंगों का कर्तव्य है कि वे राष्ट्रीय महत्व के इस उद्योग की उन्नति में अपना अपना भाग अदा करें। जब तक खनक यथाशक्ति कोयला उत्पादन के लिए प्रयत्न नहीं करता, तब तक राष्ट्रीय विकास की समस्त योजनाओं पर उसका बुरा प्रभाव पड़ता रहेगा। कोयले का खनक आज २६ कार्य दिनों के महीने में ७८ रु० ४ आने न्यूनतम वेतन पाता है। अन्य अनेक सुविधाएं उसे मिलती हैं। उसके वेतन और सुविधाओं में आज किसी को भी कोई शंका नहीं है। परन्तु हमारी यह आशा पूर्ण नहीं हुई कि मजदूरी की दर में वृद्धि के साथ साथ उत्पादन भी बढ़ जायेगा। इसके विपरीत काम की शिथिलता और अनुशासनहीनता बढ़ी है। अधिकारों के साथ साथ अपने कर्तव्य की भी चिन्ता अवश्य करनी चाहिये। मजदूर संघ, सरकार तथा मिल मालिकों सबका कर्तव्य है कि वह मिल मजदूरों में यह भावना उत्पन्न करने का प्रयत्न करें।

स्वाधीन भारत में पोत-निर्माण

श्री शिवध्यानसिंह चौहान

पोत-निर्माण किसी देश की अर्थ-व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग गिना जाता है। इसकी गणना आधारभूत उद्योगों में की जाती है। सम्भवतः इसी कारण भारत सरकार ने पोत निर्माण को अपने औद्योगिक नीति प्रस्ताव १९५६ की 'ए' अनुसूची में स्थान दिया है और उसके विकास का सारा उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया है। यह सर्वमान्य है कि इस उद्योग की उन्नति से भारत को १५० करोड़ रुपए वार्षिक की बचत हो सकती है, जो कि अब जहाजी भाड़ों के रूप में हमें विदेशी कम्पनियों को देने पड़ते है।

जहाज-निर्माण भारत के ऐसे प्राचीनतम समुन्नत व्यवसायों में से हैं, जिस पर हम गर्व कर सकते है, किन्तु विदेशी सरकार ने हमारे इस सुसंगठित उद्योग के विनाश के सक्रिय प्रयत्न किए तथा कानून द्वारा भारतीय जहाजों का ब्रिटेन आना-जाना बन्द कर दिया। अतएव यह उद्योग पततोन्मुख होने लगा और १९ वीं शताब्दी के अन्त तक मृतप्राय हो गया। अनेक पोत-निर्माण घाट जो भारतीय तट पर थे, वे लुप्त हो गए और हमारे नामी जहाज निर्माताओं का नाम तक मिट गया+। विदेशी सरकार की घातक नीति से भारतीय पोत निर्माण कला का ह्रास अवश्य हो गया, किन्तु वह लुप्त नहीं हुई। अत्याचार से अवनति हो सकती है, किसी जीवित कला का प्राणान्त नहीं। भारतीय कलाकारों ने साहस नहीं छोड़ा और विषम परि-स्थितियों का सामना करते हुए प्रयत्न करते रहे। अब हमारे पोत-निर्माताओं और नाविकों के दुर्दिन की काली घटायें फट चुकी हैं और सुख-वैभव की सुहावनी घड़ियां आ गई हैं। तो भी अभी हमें एक लम्बा रास्ता तय करना है।

इस समय बम्बई, कलकत्ता और कोचीन में पांच जहाज बनाने वाली कम्पनियां हैं, किन्तु ये छोटे छोटे जहाज (लांच, टग, बजरा, ट्रालर आदि) बनाती है। ये कम्पनियां बड़े-बड़े धुआंकशों की मरम्मत भी करती हैं।

पाल-पोत (Sailng Vessels) बनाने के भारत के पूर्वी और पश्चिमी तट पर अनेक घाट (यार्ड) हैं, जहां उत्तम पोत बनते है। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण घाट ये हैं—माण्डवी, अंजार, सलाया, जोद्या, जामनगर (बेदी), सीका, नवलक्खी, पोरबन्दर, वीरावल, भावनगर, नवसारी, बुलसर, बिलीमोरा, डामन, बेसीन, थाना, ऊरन, पनवेल, अलीबाग, अंजनवल, जैगढ़, रत्नागिरि, देवगढ़, मलवां, वेंगुरला, मारमागोआ, मंगलौर, बेपुर (कालीकट) कोचीन, तूतीकोरिन, मछलीपट्टम, राजमन्द्री, काकानाडा और कलकत्ता आदि।

विशाखापटनम जहाजघाट

ये छोटे जहाज और पाल-पोत केवल तटीय व्यापार के लिए उपयोगी है, विदेशी व्यापार के लिए नहीं। वस्तुतः आज हमें बड़े जहाजों की विशेष आवश्यकता है। ऐसे जहाज बनाने का देश में केवल एक कारखाना है जिसकी स्थापना का श्रेय पूर्णतः सिंधिया कम्पनी को है।

सन् १९१९ में सिंधिया कम्पनी के बनने के साथ ही इस कम्पनी ने एक जहाज बनाने का कारखाना स्थापित करने का विचार किया, किन्तु कम्पनी द्वारा उस काम के लिए बुलाए गए विदेशी विशेषज्ञ की अनायास मृत्यु हो जाने के कारण यह सारी योजना ताक में रख गई। सन् १९३३ में इस योजना पर फिर विचार किया गया और कारखाने के लिए बम्बई अथवा कलकत्ता को उपयुक्त स्थान चुना गया। सरकार ने इन दोनों स्थानों में पोत-निर्माण का स्थापित करने की कम्पनी को आज्ञा न दी। द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने के उपरान्त सिंधिया कम्पनी ने विजगापट्टम स्थान को इस उद्देश्य के लिए चुना और [illegible]

+माण्डवी (कच्छ) भावनगर, बेसीन, अलीबाग, अगशी विजयदुर्ग, मलवा, कालीकट, ट्रिकोमली, मछली-पट्टम कोरिंगा पट्टम, बालासोर कलकत्ता, ढाका, सिल-हट, चिटगांव, इत्यादि जहाज बनाने के प्रसिद्ध केन्द्र थे और सिंध के जाट, कच्छ के नखवास, काठियावाड़ के घोघरी, गुजरात के कोली, अलीबाग, और मलवा के मरहठा तथा अय्यर, डोम और अनेक अन्य जातियां जहाज बनाने में नाम पा चुकी थी।

के जहाज बनाने का कारखाना बनाना प्रारम्भ कर दिया। २१ जून १९४१ को डा० राजेन्द्रप्रसाद ने इस घाट का उद्घाटन किया। किन्तु ६ अप्रैल १९४२ को जापान ने इस कारखाने पर बम्ब बरसाए। अतएव भारत सरकार ने इसका काम कुछ समय के लिए बन्द कर दिया। तुरन्त कुछ मशीनें बम्बई ले जाई गयीं। १९४२ के अन्त में फिर काम चालू किया गया, किन्तु आवश्यक साधन-सामग्री की कठिनाई के कारण काम अत्यन्त मन्दगति से चलता रहा। अनेक कठिनाइयों के उपरान्त १९४७ में कारखाना बनकर तैयार हो सका और निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया। आर्थिक कठिनाइयों और अन्य कारणों से मार्च १९५२ में कारखाने का प्रबन्ध भारत सरकार ने अपने हाथ में ले लिया। १४ मार्च १९४८ को प्रथम जहाज ने समुद्र में प्रवेश किया। यह दिवस भारतीय पोत-निर्माण कला के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा। यह दिन देश के आधुनिक पोत-उद्योग का ऊषा-काल माना जाता है जब कि गहन अंधेरी का अवसान हुआ और सुनहरी किरणों के साथ उषा का उदय हुआ। अनुकूल अवसर के अनुरूप ही हमने अपने उस जहाज का नाम "जल-उषा" रखा। "जलऊषा" ने अपनी आभा प्रस्फुटित की और २० नवम्बर १९४८ तक उसकी प्रभा सागरतल पर उतराती दृष्टिगोचर होने लगी अर्थात् "जल प्रभा" का जन्म हुआ। दो नवजात शिशु भारतीय समुद्र रूपी आंगन में क्रीड़ा करने लगे, जिनके तेज और मनोविनोद से जल-तल प्रकाशित हो गया और ८ अगस्त १९४९ को "जल-प्रकाश" नामक जलयान समुद्र में उतरा। इस भांति एक के उपरांत अनेक जहाज इस कारखाने में बनने लगे। १९५६ के अंत तक यहां १८ जहाज बन चुके थे, जिनके नाम नीचे दिए हैं—

जहाज का नाम	सागर प्रवेश तिथि
१. जल ऊषा	१४.३.१९४८
२. जल प्रभा	२०.११.१९४८
३. कुतुबतरि	१८.१२.१९४८
४. जल प्रकाश	८.८.१९४९
५. जल पंखी	६.१२.१९४९
६. जल पद्म	१४.९.१९५०
७. जल पालक	१७.१२.१९५०
८. भारत मित्र	२९.३.१९५१
९. जगरानी	१५.१२.१९५१
१०. जल प्रताप	२७.२.१९५२
११. जल पुष्प	६.७.१९५२
१२. भारत रत्न	२६.८.१९५३
१३. जल पुत्र	९.११.१९५३
१४. जल विहार	१६.८.१९५४
१५. जल विजय	२६.८.१९५५
१६. जल विष्णु	२.११.१९५५
१७. कच्छ राज्य	२६.३.१९५६
१८. अंडमन राज्य	२५.७.१९५६

इनमें से प्रथम १२ जहाज ८,००० टन माल लादने वाले बड़े जहाज हैं; तेरहवां ३६० टन का छोटा जहाज है; चौदहवें से सोलहवें तक के तीन ७,००० टन के तेल (Diesel) के जहाज हैं; तथा शेष दो क्रमशः ८,१९० टन और ४,००० टन के तेल के जहाज हैं।

इनके अतिरिक्त विभिन्न आकार के निम्नांकित ११ जहाजों पर निर्माण-कार्य जारी है। इस कार्य के १९६० तक समाप्त होने की संभावना है और इससे पूर्व कोई नए आदेश नहीं स्वीकार किए जा सकते।

दो—७,००० टन के माल ढोने के तेल के जहाज।

एक—४,००० टन का माल और यात्री ले जाने वाला मिश्रित जहाज।

एक—८,००० टन का माल ले जाने वाला तेल का जहाज।

एक—५,००० टन का माल ले जाने वाला तेल का जहाज।

दो—६,००० टन के माल ले जाने वाले तेल के जहाज।

एक—४,००० टन का माल और यात्री ले जाने वाला जहाज।

आठ—९,५०० टन के माल ले जाने वाले तेल के जहाज।

इस भांति यह कारखाना दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करता जा रहा है। द्वितीय योजना काल में इसकी निर्माण-क्षमता बढ़ाने और एक शुष्क निवेष

(Dry Dock) बनाने का विचार है ।

बढ़ते हुए यातायात और परिवहन सुविधाओं की कमी को ध्यान में रखकर एक दूसरा पोत-निर्माण घाट स्थापित करने का भी निश्चय कर लिया गया है और प्रारम्भिक कार्यक्रम चालू हो चुका है । यह कारखाना कोचीन में स्थापित किया जाएगा । इसके लिए विशाखापटनम कारखाने में पांच छः सौ व्यक्तियों को आवश्यक प्रशिक्षण दिया जा रहा है । भारत सरकार जहाजों के लिए डीजल इन्जन बनाने का एक कारखाना भी खोलना चाहती है ।

लागत व्यय

विशाखापटनम कारखाने के चालू होने के समय से अब तक कई कठिनाइयां और समस्यायें हमारे जहाज-निर्माताओं के सन्मुख उपस्थित हुई हैं । हमारे इस शिशु-उद्योग की भावी उन्नति के लिए इन समस्याओं का समाधान आवश्यक है । सबसे बड़ी समस्या इस कारखाने में बनने वाले जहाजों का ऊंचा मूल्य है। इसका कारण मजूरी में वृद्धि, कार्य की मन्दगति, आवश्यक सामग्री एवं उपकरणों का अभाव, तथा अनुभव की कमी है। जहाजों की मूल्य वृद्धि एक मात्र भारत की समस्या नहीं, अन्य पाश्चात्य देशों में भी युद्धोपरान्त काल में इसने सिर उठाया है । ब्रिटेन में जो कि विश्व का सबसे बड़ा जयाज निर्माता है, सन् १६४५ और १९५६ के बीच के दस वर्ष में नए जहाजों के मूल्य में १६ प्रतिशत वृद्धि हो गई है। द्वितीय युद्ध से पूर्व के मूल्यों को आधार मानकर देखें तो यह वृद्धि ३७५ प्रतिशत होती है। ६,५०० टन के जिस जहाज का मूल्य अगस्त १६३६ में १६.३३ लाख रुपए था, दिसम्बर १९४५ में उसका मूल्य ३६.३३ लाख रुपए और जनवरी १९५६ में १०३.०६ लाख रुपए था। दूसरे शब्दों में, यदि प्रतिटन मूल्य १६३६ में २०३ रुपए था तो १६४५ में ३७३ रुपए, दिसम्बर १६५० में ६१६ रुपए और अप्रैल १९५६ में १००३ रुपए हो गया। लाइबेरिया के १६४३ के बने ६,८६७ टन के एक जहाज की बिक्री ३८ लाख रुपए में हुई, किन्तु १९४८ में ऐसे ही जहाज का विक्रय मूल्य ६६ लाख रुपए था। ब्रिटेन जैसे प्राचीन और प्रसिद्ध जहाज-निर्माता देश के मूल्य इतने ऊंचे हैं और और भी ऊंचे होते जा रहे हैं, तो भारतीय जहाजों के मूल्य का ऊंचा होना कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि हमारा उद्योग अपनी बाल्यावस्था में है और न केवल हमारे पास अनुभव की ही कमी है, वरन् योग्य व्यक्तियों और आवश्यक साधन सामग्री एवं उपकरणों का भी भारी अभाव है, स्पात बायलर (Boilers) तथा प्लेट (Plates) हमें विदेश से मंगाने पड़ते हैं, जो बहुत महंगे पड़ते हैं । ब्रिटेन में नए जहाजों का मूल्य अन्य देशों की अपेक्षा ऊंचा है । किन्तु भारत में ब्रिटेन से भी लगभग २० प्रतिशत अधिक है। अतएव विशाखापटनम में बने हुए जहाजों के लिए मूल्य के २० प्रतिशत के बराबर भारत सरकार आर्थिक सहायता (Subsidy) देती है । भारतीय कम्पनियों ने एक भी जहाज बनने के लिए गत वर्षों में ब्रिटेन में आदेश नहीं दिया। सन् १९५५-५६ में सात जहाजों के लिए जर्मनी में और एक जहाज के लिए जापान में आदेश भेजे थे, क्योंकि इन देशों में ब्रिटेन की अपेक्षा सस्ते जहाज बनते हैं। जिस जहाज का मूल्य ब्रिटेन में ८० लाख रुपए हैं, जर्मनी में उसका मूल्य ६० लाख रुपए और जापान में इससे भी कम है। यह स्वाभाविक है कि जब अन्यत्र ६० लाख रुपए में जहाज मिल सकते हैं तो ८० लाख रुपए में विशाखापटनम से क्यों कोई कम्पनी जहाज लेने लगी ? अतएव सरकारी सहायता का आधार भी जर्मनी और जापान का मूल्य-स्तर होना चाहिए, न कि ब्रिटेन का।

भारत सरकार की जहाज-निर्माण सम्बन्धी सहायता भी अपर्याप्त बतलाई जाती है।+ जहाज-निर्माण के लिए जापान की सरकार ने स्पात का मूल्य बाजार भाव से १०० रुपए प्रति टन कम कर दिया है। स्पात और अन्य सामग्री का मूल्य कम करके भारत सरकार भी विशाखापटनम में बनने वाले जहाजों का मूल्य कम कर सकती है और जो धन अब विदेश से जहाज लेने में व्यय किया जाता है वह देश में ही रह सकता है तथा निर्माण-गति भी बढ़ाई जा सकती है। फ्रांस के विशेषज्ञों के स्थान पर जर्मनी और जापान के विशेषज्ञ रख कर भी विशाखापटनम में बनने

+ १९५६ मे ब्रिटेन ने ३० करोड रुपए और फ्रांस ने १५ करोड़ रुपए जहाज-निर्माण के लिए आर्थिक सहायता के रूप में बजट में रखे थे, किन्तु भारत सरकार ने केवल ६० लाख रुपए रखे थे।

वाले जहाजों का मूल्य कम किया जा सकता है। इस समय फ्रांस के विशेषज्ञों को ६ लाख रुपए वार्षिक दिया जाता है। यह कहा जाता है कि जर्मनी और जापान से ऐसे विशेषज्ञ २ लाख रुपए वार्षिक में मिल सकते हैं और संभवतः इन देशों के जहाज-निर्माता फ्रांसीसियों की अपेक्षा अधिक चतुर और अनुभवी भी हैं, क्योंकि १९५५ में फ्रांस में केवल ५५ जहाज बने, जबकि जर्मनी में ३८६ और जापान में १८८ जहाज बने।

लम्बा निर्माण-काल

दूसरी समस्या जो हमारे जहाज-निर्माताओं के सामने उपस्थित है, वह जहाजों के देरी से बनने की है। हमारे यहां किसी जहाज के पूरे होने में तीन-चार वर्ष का समय लगता है, जबकि जर्मनी में केवल दो वर्ष। इस देरी के कारण प्रबन्ध का ढीलापन, अनुभवी और योग्य विशेषज्ञों की कमी हो सकती है। अधिकारियों को इस ओर सचेत रहने की आवश्यता है।

प्रतिमानीकरण

विशाखापटनम में बनने वाले जहाजों के प्रतिमानीकरण की आवश्यकता पूर्णतः प्रगट हो गई है। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए भारत सरकार ने एक विशेषज्ञ समिति नियुक्ति की थी, जिसने निम्नांकित सुझाव दिए हैं:—

(क) विदेशी व्यापार के लिए ९,५०० टन के खुले और ११,००० टन के बन्द जहाज बनने चाहियें, जिनकी चाल १६ से १७ नॉट (Knots) हो;

(ख) तटीय व्यापार के लिए ८,००० टन के खुले और ९,५०० टन के बन्द जहाज हों, जिनकी चाल १२ नॉट हो;

(ग) तटीय व्यापार के लिए एक और छोटा आकार भी हो। ५,००० टन के खुले और ६,००० टन के बन्द जहाज जिनकी चाल १३ नॉट हो।

भारत सरकार ने इन सुझावों को मान लिया है और तदनुसार काम होने लगा है।

प्रशिक्षण सुविधायें

विशाखापटनम में अभी तक औद्योगिक प्रशिक्षण सम्बन्धी कोई सुविधायें नहीं थीं। झलाई करने वाले (welders) और चित्रकारों (draughtsmen) के लिए कुछ व्यवस्था अवश्य थी। शिक्षार्थियों के लिए भी संध्या समय कुछ व्याख्यानों का आयोजन किया जाता था। हाल में एक परीक्षण स्कूल की योजना बनाई गई है जहां कारखाने के पक्ष कर्मियों को प्रशिक्षण दिया जाएगा तथा दूसरे कारखाने के लिए कुछ दक्षकर्मी तैयार किए जायेंगे।

पोत-निर्माण-सम्बन्धी उपर्युक्त कार्यक्रम वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए बड़ा सराहनीय है, किन्तु आज विश्व में जहाज-निर्माण सम्बन्धी जो प्रतिस्पर्द्धा चल रही है और हमारे यातायात में जिस तीव्रगति से वृद्धि हो रही है, उसे देखते हुए यह कार्यक्रम अपर्याप्त प्रतीत होता है। ब्रिटेन के जहाजी बेड़े की शक्ति १९५६ में ११.२१ लाख टन थी। १९५५ में यह १४.७४ लाख टन हो गई। फ्रांस की सामुद्रिक शक्ति इसी अवधि में ०.२३ लाख टन से बढ़कर ३.२६ लाख टन, नीदरलैंड की ०.३३ लाख टन से ३.९७ लाख टन, स्वीडन की १.४७ लाख टन से २.२६ लाख टन, इटली की ०.६२ लाख टन से १.६७ लाख टन हो गई। इसी भांति जर्मनी ने अपने जहाजी बेड़े में १९५० की अपेक्षा ६-गुनी और जापान ने १९४९ की अपेक्षा साढ़े-पांच गुनी वृद्धि कर ली है। इस वृद्धि के उपरान्त भी उनके उत्साह में कमी नहीं आई। १ अप्रैल १९५६ को ब्रिटेन में ४५.३३ लाख टन के ४५८ जहाज, जापान में २३.५२ लाख टन के २०७ जहाज, जर्मनी में २९.२८ लाख टन के ३५८ जहाज तथा स्वीडन में १९.४५ लाख टन के १८६ जहाज बन रहे थे, जबकि भारत में उक्त तिथि को केवल ४४ हजार टन के ९ जहाज बन रहे थे। हमारा लक्ष्य २० लाख टन के जहाजी बेड़े का है, किन्तु अभी हमारी पोत-क्षमता केवल ६ लाख टन है। द्वितीय योजना के अन्त तक यह ९ लाख टन होने की संभावना है। यह प्रगति अति धीमी है। अतएव दो पोत-निर्माण घाटों से हमारा काम नहीं चल सकता। इतने ऊंचे लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें कम से कम पांच निर्माण केन्द्रों की आवश्यकता है। इस पर हमें गंभीरता से विचार करके भावी योजनायें बनानी चाहियें।

—

भारतीय अर्थव्यवस्था में ऊन का महत्व

प्रो० कैलाशबहादुर सक्सेना

भोजन के पश्चात सभ्य मनुष्य की प्रमुख आवश्यकता वस्त्र की होती है। कपास, रेशम व ऊन वस्त्र निर्माण के प्रमुख स्रोत हैं। ऊनका महत्व विभिन्न देशों में वहां की जलवायु निर्धारित करती है। कपास पृथ्वी से उत्पन्न की जाती है, रेशम कीड़े से व ऊन भेड़ से। ऊन प्राप्ति के लिए कृषि की फसलों की भांति भूमि की जुताई, वर्षा पर अधिक निर्भरता व फसल के समय कठिन परिश्रम नहीं करना पड़ता, क्योंकि भेड़ केवल घास व अर्द्ध-शुष्क भागों में रखी जा सकती हैं तथा देखभाल के लिए बहुत कम श्रम की आवश्यकता होती है। ठंडे जलवायु वाले देशों में गर्म देशों की अपेक्षा ऊन का अधिक महत्व है।

ऊन प्राप्ति का स्रोत—भेड़

नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों से ज्ञात होता है कि विश्व में ७० करोड़ से भी अधिक भेड़ें हैं, जिनमें से लगभग ५.७ प्रतिशत भेड़ें अथवा लगभग ४ करोड़ भेड़ें भारतीय संघ में ही हैं। दूसरे शब्दों में भारत की जनसंख्या का लगभग १० प्रतिशत भेड़ें हैं। विश्व में, भेड़ों की संख्या की दृष्टि से, भारत को चौथा स्थान प्राप्त है।

भेड़ों के पनपने के लिए शीतोष्ण जलवायु श्रेष्ठ होती है। ऊन देने वाली भेड़ों के लिए प्रायः ठंडी, शुष्क एवं समतापक्रम वाले प्रदेश आदर्श हैं। जिन भागों में ४० इंच वार्षिक वर्षा होती है वे प्रदेश भेड़ों के लिए अनुपयुक्त होते हैं। अधिक वर्षा वाले भागों में भेड़ों के खुर की व अन्य बीमारियों का भय रहता है। भेड़ का औसत जीवन लगभग १२ वर्ष होता है। सर्वश्रेष्ठ ऊन मेरिनो भेड़ से प्राप्त होता है।

भारत में भेड़ प्राप्ति की दो पट्टियां प्रमुख हैं। प्रथम पट्टी मध्य प्रदेश के लगभग मध्य के दक्षिण में है जिसके अन्तर्गत बम्बई का दक्षिणी भाग, मध्य हैदराबाद, पूर्वी मैसूर और मध्य तथा दक्षिणी मद्रास प्रमुख क्षेत्र हैं। दूसरी पट्टी उत्तरी भारत में है जिनमें काश्मीर, राजस्थान, पूर्वी पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश व मध्य-प्रदेश का उत्तरी भाग प्रमुख हैं। उड़ीसा, बिहार व पश्चिमी बंगाल में बहुत ही कम भेड़ें हैं और आसाम में तो बिल्कुल नहीं। ऊन की किस्म तथा मात्रा की दृष्टि से दूसरी पट्टी तथा भेड़ों की संख्या से प्रथम पट्टी महत्वपूर्ण है।

ऊन उत्पादक राज्य

उत्तरी भारत की भेड़ों का दक्षिण भारत की भेड़ों की अपेक्षा श्रेष्ठ तथा श्वेत ऊन होता है। राजस्थान (विशेषत: बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर व शेखावाटी और अजमेर में); गुजरात व काठियावाड़ प्रदेश, उत्तर प्रदेश (हिमालय क्षेत्र विशेषतः गढ़वाल, अलमोड़ा व नैनीताल—तथा आगरा व मिर्जापुर जिले में); मध्य प्रदेश (जबलपुर, चांदा, वर्धा, रायपुर आदि); दक्षिण भारत (बेलारी, करनूल, कोयम्बतूर, और मद्रास इस दिशा में प्रमुख हैं।

औसत रूप में देश में, योजना आयोग के अनुसार, ५.४ करोड़ पौंड ऊन प्राप्त होती है जिसमें से लगभग ३३ प्रतिशत ऊन केवल राजस्थान से ही प्राप्त होती है। भेड़ की वर्ष में दो बार—मार्च व अक्टूबर में—ऊन काटी जाती है। यहां यह उल्लेखनीय है कि भारत में प्रति भेड़ औसत रूप में दो पौंड प्रति वर्ष ऊन देती है, जो कि बहुत कम है।

देश विभाजन के फलस्वरूप श्रेष्ठ किस्म की ऊन प्राप्ति के अधिकांश क्षेत्र पाकिस्तान में चले गये हैं। सीमांत प्रदेश व सिंध में उत्तम किस्म की भेड़ें होती हैं। इस प्रकार फीरोजपुर, पेशावर, डेरा इस्माइल खां, मुलतान, रावलपिंडी, झेलम, झग आदि अच्छी किस्म के ऊन क्षेत्रों से भारत अब वंचित हो गया है।

भारतीय अर्थ व्यवस्था में ऊन का महत्व

ऊन का भारतीय अर्थव्यवस्था में पर्याप्त महत्व है। भेड़ चराने, ऊन काटने, ऊन का क्रय विक्रय, साफ करने व कातने बुनने में भारत के करोड़ों नर-नारी अपना जीवन यापन करते हैं। सूखे एवं पहाड़ी क्षेत्रों में जहां कृषि नहीं हो सकती, वहां भेड़ें चराकर उस क्षेत्रका उपयोग हो जाता है।

ऊन से बनाए गये कपड़ों का कोई प्रतिस्पर्द्धी ~ ~।

भारत में ऊन से संबंधित छोटे व बड़े कारखानों की संख्या लगभग ५३० है, जिनमें लगभग २४ बड़े कारखाने ऊनी वस्त्र बनाने के हैं। भारत में ऊनी वस्त्र बनाने की सर्वप्रथम मिल कानपुर में सन् १८७६ में व दूसरी मिल धारीवाल (पंजाब) में स्थापित की गई। कानपुर, पूर्वी पंजाब, बंबई, बंगलौर, ग्वालियर व इलाहाबाद आदि में भारत की प्रमुख ऊनी मिलें स्थित हैं। मुजफ्फरनगर, मद्रास, कलकत्ता व बंबई में सेना के लिए कंबल बनाने के कारखाने हैं। इन कारखानों में हजारों व्यक्ति कार्य पाते हैं।

कुटीर उद्योग के रूप में भी ऊन का बड़ा महत्व है। ग्रामीण क्षेत्रों में ऊन से नमदें, दरियां, वस्त्र, घोड़े व ऊंट की जीन, कम्बल, शाल, चादरें, कालीन व अन्य अनेक उपयोगी वस्तु बनाई जाती हैं। बीकानेर व जोधपुर क्षेत्र के नमदे व घोडे और ऊंट की जीनें; और काश्मीर की शाल दूर दूर तक प्रसिद्ध हैं। काश्मीर की शालों की भारत में ही नहीं, वरन् विश्व के अन्य देशों में भी मांग रहती है।

विदेशी व्यापार

दुर्लभ तथा नर्म विदेशी मुद्रा के अर्जन में ऊन पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है। भारत से प्रतिवर्ष औसतन ३१.६० करोड़ पौंड ऊन जिसका मूल्य लगभग ४३ करोड़ पौंड होता है—निर्यात की जाती है जिससे विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है। नीचे की तालिका में भारत से विदेशों को निर्यात होने वाली कच्ची ऊन की मात्रा व उसका मूल्य स्पष्ट है—

वर्ष	मूल्य (लाख रु०)	कच्ची ऊन (००० पौंड)
१९५०-५१	७८७	२५३७१
१९५१-५२	४६०	१८२६५
१९५२-५३	८४१	३७६६६
१९५३-५४	५८७	२०६६४
१९५४-५५	८६१	३०८०६
१९५५-५६	६७३	३३७४४

अन्यत्र उल्लेख किया जा चुका है कि भारत में श्रेष्ठ किस्म की ऊन अधिक मात्रामें नहीं होती है। अतः भारत कच्ची ऊनका आयातकर्त्ता भी है। यद्यपि पहले हम बड़ी मात्रा में कच्ची ऊन विदेशों से आयात करते थे किन्तु अब कच्ची ऊन के मूल्य में कमी हुई है, जो कि नीचे की तालिका से स्पष्ट है—

	मूल्य (लाख रु०)
१९५०-५१	५६२
१९५१-५२	२६०
१९५२-५३	६६
१९५३-५४	१७६
१९५४-५५	१००
१९५५-५६	१४२

ऊन का केवल भारत की अर्थ-व्यवस्था में ही नहीं, वरन् इंग्लैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका व आस्ट्रेलिया आदि देशों की अर्थव्यवस्था में भी पर्याप्त महत्वपूर्ण स्थान है। इंगलैंड के कुल निर्यात व्यापार में ५ प्रतिशत से भी अधिक मूल्य का ऊनी माल होता है और डालर अर्जन में चौथा महत्वपूर्ण साधन है।

भारतीय ऊन विकास में बाधाएं व निवारण

भारत में ऊन व ऊन उद्योग का संतोषजनक विकास अनेक कारणोंसे नहीं हुआ है, उनमेंसे प्रमुख कारणों का विवेचन यहां संक्षेप में किया गया है। देश में भेड़ों की ऊन काटने के प्राचीन एवं अवैज्ञानिक तरीके होने के कारण बहुत सी ऊन नष्ट हो जाती है। भेड़ को लिटाकर कैंची से ऊन काटते हैं, जिसके फलस्वरूप बहुत सी ऊन तो मिट्टी में गिर कर नष्ट हो जाती है, कुछ उड़ जाती है व कुछ भेड़ के शरीर पर ही लगी रह जाती है। पाश्चात्य देशों में ऊन काटने के लिए मशीनों का प्रयोग करते हैं, जिससे जरा भी ऊन नष्ट नहीं होने पाती है। भारत में मशीनों का इस सम्बन्ध में प्रयोग कुछ कठिन प्रतीत होता है, क्योंकि चरवाहे गरीब होते हैं और गांव आदि में ऊन खरीदने वाले आढ़तिये अनेक कारणों व कठिनाइयों से मशीन का प्रयोग नहीं कर सकते हैं। द्वितीय भारतीय भेड़ चराने वाले बिखरे हुए हैं तथा उनका कोई ऐसा संगठन नहीं है जो उनको समय समय पर ऊन की किस्म में व उनकी स्थितिमें संगठित रूप से प्रयत्न करें।

भारत में जलवायु के कारण ऊन तथा ऊनी माल की मांग केवल मौसमी ही है। इसके अतिरिक्त अनेक व्यक्ति विशेषतः ग्रामीण क्षेत्र में ऊनी वस्त्र आदि का उपयोग

नहीं करते। इसके अतिरिक्त ठंड से बचने के लिए कपास का भी प्रयोग किया जाता है, जो प्रायः अपेक्षाकृत अत्यन्त सस्ती होती है। इस कारण मांग कम होने के कारण पूंजीपतियों ने भी ऊन व्यापार व ऊन उद्योग की ओर कम ध्यान दिया है।

ऊन के क्रय विक्रय की दोषपूर्ण प्रणाली होनेके कारण मूल विक्रेताओं का शोषण होता जा रहा है, अत. ऊन की किस्म में वृद्धि करने की अपेक्षा उन्हें अपने पेट की ही अधिक चिंता रही। विदेशी शासकों अथवा देशी राजाओं ने भी भेड़ पालने वाले अथवा ऊन की उन्नतिके लिए उदासीन नीति अपनाई। देश में यातायात के अविकसित साधनों ने भी ऊनके विकासमें रुकावट ही डाली।

योरोप व आस्ट्रेलिया आदि देशों की तुलना मे भारतीय ऊन अच्छी नहीं होती, क्योंकि यह छोटे रेशे की होती है, अतः बढ़िया किस्म के कपड़े इससे नहीं बन पाते हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय भेड़ से प्रति वर्ष औसत रूप से २ पौंड ऊन ही प्राप्त होती है जो कि अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। देशमें इस सम्बन्ध की अनुसन्धानशालाएं एवं गवेषणशालाओं का पहले पूर्ण अभाव होने के कारण इसकी उन्नति की दिशामें कुछ न किया जा सका।

अच्छी किस्म की ऊन प्राप्ति के लिए उत्तम श्रेणी के नर-भेड़ से 'क्रास-ब्रीडिंग' लाभदायक है। अफगानिस्तान की दुम्बा नर भेड़ से प्रयोग करने पर उत्तम परिणाम प्राप्त हुए हैं। सहकारिता के आधार पर ऊन उत्पादकों के संगठन, वैज्ञानिक बिक्रीके साधन व ऊन काटने के नये तरीके प्रयोग करने चाहिए। इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसन्धान विभागके अन्तर्गत कार्य करने वाले 'ऊन व ऊन उद्योग अन्वेषण संगठन' के आधार पर भारत में भी अनुसन्धानशालाएं एवं गवेषणशालाओं की स्थापना करनी चाहिए। सरकार को ऊन प्रदर्शिनियां व प्रशिक्षण की ओर भी अधिक ध्यान देना चाहिए। भारत सरकार व कुछ राज्य सरकारें इस ओर अब ध्यान दे रही हैं।

—

सर्वोदय पृष्ठ—

सरकार के दो सिर

भारत सरकार का एक अजीब ढंग है। उसके दो सिर हैं। एक सिर से वह अम्बर चर्खे को उत्तेजन देती है और दूसरे से सोचती है कि बुनकरों को पावर लगाना चाहिए। अगर पहले सिर से पूछा जाय कि "तुम अम्बर को उत्तेजन क्यों देते हो, मिल का सूत तो बहुत है और उसे बढ़ाया भी जा सकता है?" तो उत्तर मिलेगा : "अम्बर चर्खे से ज्यादा लोगों को रोजी मिलेगी।" यह एक सिर का विचार हुआ। अब दूसरे सिर से पूछा जाय कि "तुम करघे को पावर लगाने के लिए क्यों कहते हो?" वह कहेगा, "हम बुनकरों की आमदनी बढ़ाना चाहते हैं। आज से चार-छः गुना अधिक आमदनी होगी।" किन्तु इससे सब बुनकरों को काम कैसे मिलेगा? पावर आयगी, तो पांच-छः करघों की जगह एक ही करघा चलेगा, बाकी बेकार हो जायेंगे। इसीलिए सेलम के बुनकरों ने कहा कि "सरकार को पावर वाली बात गलत है, उससे हमें लाभ न होगा।"

—विनोबा

सर्वोदय पात्र

सर्वोदय-पात्र क्या चीज है? सर्वोदय-पात्र रखने का मतलब है, घरमें एक बरतन रखना। इस बरतन में घर का बच्चा रोज एक मुट्ठी अनाज डालेगा। इसके लिए बड़ों की मुट्ठी नहीं चाहिए। इससे बच्चों को तालीम मिलेगी कि समाज को देना है। इस प्रकार महीने भर में जितना अनाज इकट्ठा होगा, लोग उसे कार्यकर्त्ता के पास पहुँचा देंगे। किसी पर इसका ज्यादा बोझ नहीं पड़ेगा। यदि लोग घर-घर में इस प्रकार का सर्वोदय-पात्र रखेंगे, तो उससे हिन्दुस्तान का एक बहुत बड़ा काम होगा। ग्रामदान का काम करने वाले उसका उपयोग करेंगे। इससे बहुत बड़ी ताकत पैदा होगी। अनाज से जो पोषण मिलेगा, उसका उतना महत्व नहीं है। उससे जो पैसा मिलेगा, उसका भी महत्व नहीं है। महत्व इस चीज का है कि घर-घर का लड़का तालीम पायेगा। आप जो 'कर' देते हैं, उससे सरकार राज्य चलाती है, कानून बनाती है। उसीसे वह सेना भी रखती है और आपके जीवन पर अनेक प्रकार का नियंत्रण भी। हम नहीं चाहते कि एक मुट्ठी प्रत्येक लड़के को मिले। हम तो हर परिवार की एक मुट्ठी चाहते हैं। हिन्दुस्तान में सात करोड़ परिवार हैं। सात करोड़ मुट्ठी हमें रोज मिलनी चाहिए। इसके आधार से कुल हिन्दुस्तानमें शान्ति-सेना स्थापित होगी और वह सेना हमेशा सेवा सेना का रूप लेगी।'

सर्वोदय और नेहरू जी का समाजवाद

"समाजवाद" एक विलक्षण शब्द है। उसके पचासों अर्थ होते हैं। हिटलर ने जर्मनी में एक "समाजवाद" चलाया था। उसे "राष्ट्रीय समाजवाद" कहते हैं। सोशलिज्म या समाजवाद, यह पश्चिम का शब्द है। उसके अनेक अर्थ होते हैं। इसलिए "सोशलिज्म" कहने से स्पष्ट अर्थ नहीं निकलता, किन्तु "सर्वोदय" कहने से अर्थ स्पष्ट हो जाता है।

सोशलिज्म जो चला है, उसे हम नहीं चाहते, सो नहीं। लेकिन समाजवाद की क्रिया ऊपर से नीचे आने की है और "सर्वोदय" तो नीचे से ऊपर जाता है। ग्राम में ग्राम-स्वराज्य होगा। उसमें एक ग्राम-सभा होगी। फिर ऐसे पचास गांव मिलकर एक सभा होगी। ऐसी कुछ सभाएं मिलकर जिला-सभा होगी। ऐसी अनेक सभाएं मिलकर प्रांत सभा होगी। सारांश, सारी ताकत नीचे रहेगी और ऊपर कम। हम इस तरह निर्माण करना चाहते हैं।

लेकिन उनकी हालत क्या है? दिल्ली में एक योजना बनेगी और फिर उसकी शाखाएं होंगी। फिर क्रमशः नीचे-नीचे के प्रांत, जिला, तालुका, गांव और गांवोंमें छोटे लोग। ऊपर से पानी डाला जाय, तो नीचे गिरते-गिरते आखिर कितना नीचे आयेगा? यहां बारिश हुई और जरा पानी गया, तो वहां थोड़ा गीला हुआ। उसके अन्दर और थोड़ा गया, तो थोड़ा और गीला हुआ, लेकिन आखिर सारा शुष्क ही रहेगा और नीचे कुछ भी नहीं। तो ऊपर से धन, पैसा, विद्या डालेंगे। सबसे बड़ी विद्या मिलेगी, दिल्ली, मद्रास, बम्बई में। उससे कम धारवाड़, हुबली में, उससे कम येल्लापुरमें और फिर इल्लापुर में, जहां कुछ भी

(शेष पृष्ठ २२२ पर)

दिल्ली के उद्योग की कुछ समस्याएं

श्री मुरलीधर डालमिया

बिजली कर

छोटे उद्योगों को दिल्ली प्रदेश में प्रोत्साहित करने के लिए कुछ कदम उठाये गये हैं, किन्तु इस प्रसंग में दिल्ली राज्य के बिजली बोर्ड ने जो निश्चय किये हैं, वे चिन्ता के कारण हैं। यदि नये दर लगाये गये तो छोटे-बड़े सभी उद्योगों को उससे नुकसान होगा। बड़े उद्योगों पर ६.०१ न० पै० प्रति यूनिट आजकल लिया जाता है, लेकिन अब ६.७६ न० पै० प्रति यूनिट लिया जायगा। इन्हीं प्रस्तावों के अनुसार मझोले उद्योगों से ७.२६ न० पै० से दर बढ़ाकर ११.६१ न० पै० लिये जायेंगे। छोटे उद्योगों से ७. ३४ न० पै० से बढ़ाकर नई दर १०.१२ न० पै० हो गई है। यदि पंजाब के बिजली दर से तुलना करें तो मालूम होगा कि दिल्ली में दर कितना भारी है। पंजाब का बिजली बोर्ड प्रति यूनिट क्रमशः ५.६२, ८.८४ और ८.८१ न० पै० वसूल करता है। नये भारी दरों से दिल्ली के उद्योगों को जरूर नुकसान होगा। दिल्ली के औद्योगिक विकास के लिए यह जरूरी है कि यहां भी बिजली के दर पंजाब जैसे लिये जायें। बिजली बोर्ड न भुगताये गये बिलों पर १२ प्रतिशत ब्याज लेता है, जबकि वह स्वयं उद्योगों की ओर से जमा राशि पर २ प्र० श० ब्याज देता है। इस भारी अन्तर के लिये बिजली बोर्ड के पास कोई उचित कारण नहीं है।

\+ \+ \+ \+

बिक्री कर

कपड़े पर बिक्री-कर यद्यपि अब उत्पादन कर में बदल गया है, तथापि इसके तुलनात्मक दरों पर एक दृष्टि डालना मनोरंजक होगा। उत्पादन कर में विलयन होने से पहले तक दिल्ली में बिक्री कर ३.१२ प्र० श० था। उत्तर प्रदेश, बंगाल या बम्बई, बिहार, केरल और उड़ीसा में १.५६ प्रतिशत तथा अन्य अनेक राज्यों में ३.१२ प्रतिशत था। अन्तः राज्यकीय बिक्री कर भी १ प्रतिशत था। दोनों को बिक्री के अनुपात से मिला दिया जाय तो यह बिक्री कर ३.६२ प्रतिशत पड़ता है। यदि मोटे औसत कपड़े की कीमत आठ आना प्रतिगज लगाई जाय तो प्रतिगज पर १.८० न० पै० बिक्री कर पड़ता है, किन्तु बिक्री कर को उत्पादन कर में मिलाकर ३ न० पै० कर दिया गया है।

उत्पादन कर में विलयन के बाद एक नई बात हुई है। उत्पादकों को यह सूचना दे दी गई है कि अब क्योंकि कपड़े पर बिक्री कर नहीं रहा है, इसलिए कच्चे माल पर बिक्री कर से छूट नहीं मिलेगी। कपड़ा उत्पादकों को कच्चे माल पर बिक्री कर से छूट मिली हुई थी, लेकिन बिक्री-कर के अधिकारियों ने कहा कि कपड़ा बिक्री कर से मुक्त हो गया है, इस आधार पर यह छूट वापिस लेनी चाहिये। परन्तु, वस्तुतः बिक्री कर समाप्त किया ही नहीं गया है, केवल उसे उत्पादन कर के साथ वसूल करने की व्यवस्था की गई है। इसलिए कच्चे माल पर छूट जारी रहनी चाहिये। आशा है, दिल्ली राज्य की सरकार इस सम्बन्ध में उद्योग के दृष्टिकोण को समझेगी।

\+ \+ \+ \+

समय समय पर कई क्षेत्रों से यह आवाज सुनाई देती है कि मिलें खूब नफा कमा रही हैं और अमीर ज्यादा अमीर हो रहा है तथा गरीब ज्यादा गरीब हो रहा है। कुछ भाई तो समय समय पर उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की आवाज भी उठाते हैं, परन्तु यह ख्याल बहुत ही भ्रान्त और निराधार है। निम्नलिखित उदाहरण से यह स्पष्ट हो जायगा। एक मिल की प्रदत्त पूंजी ७५ लाख रु० है। कारोबार में लगी हुई पूंजी ७० लाख रु० इसके अलावा है। कुल वार्षिक लाभ २० लाख रु० है। यदि इस रकम में से घिसाई की रकम निकाल दी जाय तो शुद्ध लाभ १५ लाख रु० रह जाता है। आय कर, निगम कर तथा सरचार्ज के रूप में ७ लाख २० हजार रु० सरकार को देना पड़ेगा। ५० हजार रु० सम्पत्ति कर के रूप में देना पड़ेगा। शेष ६ लाख ३० हजार रु० बचता है यह हिस्सेदारों में बांटा जाय तो इस वितरण पर ५० हजार रु० और कर के रूप में देना पड़ेगा। इस तरह

६० हज़ार रु० पहुँचेगा । भिन्न-भिन्न हिस्सेदार अपनी अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इस आमदनी पर और कर देंगे। यह कर भी करीब २ लाख ४० हजार रु० हो जाता है। तब उनके पास केवल ३ लाख ५० हज़ार रु० बच रहेगा।

आय-व्यय पत्र के अध्ययन से यह भी पता लगता है कि मजदूरों और कर्मचारियों को मंहगाई और बोनस के रूप में ७५ लाख रु० दिये गये। ५ लाख रु० खरीद विक्री पर एजेन्टों और दलालों को दिया गया। और ७५ लाख रु० सरकार को उत्पादन कर के रूप में देना पड़ा । इस तरह एक मिल की वास्तविक आमदनी में निम्नलिखित भागीदार हुए ।

१—३.५ लाख रु० हिस्सेदारों को।

२—७५ लाख रु० मजदूरों को।

३—५ लाख रु० एजेन्टों और दलालों को ।

४—८६ लाख रु० सरकार को (११ लाख रु० कर तथा ७५ लाख रु० उत्पादन कर)।

इन सबका कुल योग १६९.५० लाख रु० होता है । यदि इस कम्पनी के हिस्सेदार, जो ५० से अधिक हैं, लोहे और ईंटों में ७५ लाख रु० और ७० लाख रु० स्टाक व स्टोर सामग्री में लगाते हैं तथा सरकार तथा देशवासियों को १६६ लाख रु० बांट कर केवल साढ़े तीन लाख रु० कमाते हैं, तो क्या यह विभाजन अनुचित और असमान कहा जायगा ? कम्पनी को चलाने वाले हिस्सेदार असफलता या नुकसान का खतरा भी उठाते हैं और दिन रात व्यवसाय की चिन्ता और सतर्कता की परेशानियां भी उठाते हैं । क्या उन्हें इस राशि का भी अधिकार नहीं है। तटस्थ विचारक इसका उत्तर देंगे। ❀

—

❀ दिल्ली फैक्टरी ओनर्स असोसियेशन के अध्यक्षीय भाषण के कुछ अंश ।

दूसरे देशों में भूमि-सुधार

डा० ए० एन० खुसरो

अन्न संकट दूर करने के लिए योजना आयोग ने भूमि-सुधारों की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है। गोहाटी में कांग्रेस के अधिवेशन ने भूमि सुधारों को शीघ्र से शीघ्र क्रिया में परिणत करने का आग्रह किया है। पर यह भूमि सुधार है क्या?

भूमि सुधार में बहुत सी बातें आ जाती हैं, जैसे मध्यस्थ या जमीदारों को हटाना, जिनका काम केवल महसूल वसूल करना होता है और खेती की उन्नति से उनका कोई सीधा सम्बन्ध नहीं होता।

भूमि सुधार का दूसरा अंग किसान को अपनी जोत में अधिकार देना और बेदखली से बचाना है। इसी से उसे खेती की उन्नति करने और उसमें अधिक पूंजी लगाने की प्रेरणा मिलेगी। जब तक किसान दूसरों का खेत जोता बोया करता है, तब तक उसका उस खेत के साथ कोई लगाव नहीं होता, चाहे वह उसे आजीवन जोतता रहे।

भूमि सुधार में एक बात यह भी तय करने की होती है कि एक आदमी के पास अधिक से अधिक कितनी जमीन रहनी चाहिए। जिस देश में आदमी अधिक और भूमि कम हो, वहां तो यह बहुत ही जरूरी है। इस प्रकार अधिकतम सीमा से ऊपर जितनी जमीन होगी, उसे सरकार भूमिहीन या कम भूमि वाले किसानों को दे देगी।

अनेक देशों में भूमि के छोटे छोटे टुकड़ों की चकबन्दी करने की भी जरूरत अनुभव की जाती है। इससे खेती की उपज बढ़ती है तथा खर्च कम होता है।

भूमिसुधार कार्यक्रम भारत के अतिरिक्त अन्य अनेक देशों में भी आरम्भ किया गया है। इसके लिए उन्होंने अनेक तरह के तरीके अपनाये हैं और उन्हें सफलता भी मिली है। इन पंक्तियों में हम उन देशों में भूमि सुधार के प्रयत्नों पर एक विहंगम दृष्टि डालना चाहते हैं ताकि इनमें से कुछ तरीके हम अपने देश में अपना सकें, और कुछ की खराबियों से हम शिक्षा भी ले सकें।

रूस में

रूस ने अपने यहां १६२० और १६३० में अपनी दो पंचवर्षीय आयोजनाओं में भूमि सुधार का सबसे विशाल कार्यक्रम अपनाया था। इस कार्यक्रम के अनुसार खेती करने के पुराने घिसे पिटे तरीकों को समूल मिटाकर उन्नत तरीके चलाये गये। किसानों में निजी खेती के स्थान पर सरकारी खेती (कलेक्टिव फार्मिग) चलायी गयी।

निजी खेती से सरकारी खेती में परिवर्तन के समय रूसी सरकार ने बहुत कड़ाई से काम लिया, जिसके परिणामस्वरूप जनता और देश दोनों को ही आर्थिक हानि पहुँची। सरकार की कड़ाइयों की प्रतिक्रिया रूसी किसानों पर यह हुई कि उन्होंने जी जान से सरकार का विरोध किया। फसलों को जलाकर, पैदावार को छिपाकर तथा अपने ढोरों को मारकर उन्होंने सरकार के भूमि सुधारों को विफल बनाने की कोशिश की।

इस उथल पुथल के बाद भी सरकारी खेती से रूसी सरकार को आशा के अनुरूप सफलता नहीं मिली, क्योंकि सरकारी संस्था के नियम बड़े ही कठोर थे। सरकारी खेतों पर खर्च तो बहुत बैठता ही था, साथ ही उन खेतों के प्रबन्ध और निरीक्षण करने में उससे भी अधिक खर्च पड़ता था। दूसरी ओर खर्च के अनुपात से खेती की उपज नहीं बढ़ी। किन्तु यह मानना पड़ेगा कि इन आंशिक विफलताओं के बावजूद इस कार्यक्रम से रूस में गांवों की काया पलट हो गयी और गांव वालों को बहुत लाभ पहुँचा।

इस प्रकार रूस में जो भूमि-सुधार किये गये, उनका लोगों ने बहुत विरोध किया तथा इसके लिए उनका बड़ी कठोरता से दमन किया गया। रूस के भूमि सुधार कार्यक्रमों को देखकर हम इसी परिणाम पर पहुंचते हैं कि वहां के तरीके यहां लागू नहीं किये जा सकते तथा कोई भी कार्यक्रम जोर जबरदस्ती से नहीं चलाया जाना चाहिए। इनसे हमें यही शिक्षा मिलती है कि भूमि सुधार कार्यक्रमों में किसानों का हार्दिक सहयोग होना चाहिए तथा उन्हें इस बात का पूरा विश्वास होना चाहिए कि उनसे भूमि छीनी

नहीं जाएगी तथा उसकी मेहनत का पूरा-पूरा लाभ उसे मिलेगा। यदि हम देश में सहकारी खेती भी चलाना चाहें तो इसके लिए जबरदस्ती न करें, बल्कि किसानों को राजी करें तथा इस का पूरा ध्यान रखें कि किसान का उत्साह नष्ट न होने पाये।

चीन में

चीन के भूमि सुधार बहुत ही महत्वपूर्ण हैं और उनसे हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। चीन में भी वही कठिनाइयां थीं, जिनका सामना अब भारत को करना पड़ रहा है, जैसे, घनी आबादी, कम जमीन, भूमि का छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटना तथा कम उपज।

चीन में भूमि का बटवारा बहुत ही गलत और अन्यायपूर्ण था। भूमि पर अधिकार एक खास वर्ग का था, जो उसे गरीब काश्तकारों को जोतने को देता था तथा उससे बहुत अधिक लगान बदले में लाता था।

माऊ-त्से-तुंग की सरकार ने इन बुराइयों को जड़ से उखाड़ने का प्रयत्न किया। उसने खेती न करने वाले जमींदारों से उनकी सारी जमीन, खेती के जानवर, फालतू अनाज आदि छीनकर गरीब किसानों को बांट दी। जमींदारों के पास उनके निर्वाह लायक थोड़ी सी जमीन छोड़ दी गयी और उन्हें कोई भी मुआवजा नहीं दिया गया। इस तरह हरेक किसान परिवार के पास अपनी कुछ जमीन हो गयी। चीन में यह भी नियम बना दिया गया कि एक किसान नियत मात्रा से अधिक भूमि नहीं रख सकेगा।

भारत में चीन के इन तरीकों को ज्यों का त्यों अपनाया नहीं जा सकता। यहां सभी जमींदारों को अमीर तथा काश्तकारों को गरीब नहीं समझा जा सकता। हम जमींदारी का उन्मूलन तो कर सकते हैं, पर उसके बदले उन्हें मुआवजा भी देना चाहेंगे तथा उन्हें यह भी अनुमति देंगे कि वे खुद खेती के लिए शिकमी से जमीन निकाल लें। पर इसके साथ-साथ यदि किसान की परिभाषा ठीक की गई होती और अधिकतम जोत ठीक से निर्धारित की जाती तो जमींदारों को वे रियायतें देनेसे भी कोई नुकसान न होता और खेती न करने वाले जमींदारों को खेती के बहाने शिकमी काश्तकार को बेदखल करने का मौका न मिलता।

चीन में भूमि सुधार का काम भूमि के उचित बटवारे से ही समाप्त नहीं हो गया। उन्होंने उसके बाद किसानों की टोलियां बनायीं, जो मिलजुल कर खेती करें और बाद में इन टोलियों को सहकारी खेती का रूप दिया गया। पहले ये सहकारिता मामूली रूप में शुरू की गई। बाद में इन्हें यह रूप दे दिया गया, जिसमें मेहनत करने पर हिस्सा मिलता था न कि भूमि के स्वामित्व पर। सहकारी खेती के विकास के साथ-साथ केन्द्रीय सरकार ने उपज बढ़ाने के लिए बीज, खाद, खेती के औजार आदि भी दिये।

पूर्वी यूरोप

दूसरे महायुद्ध के बाद पूर्वी यूरोप के देशों में भी व्यापक भूमि सुधार किये गये। यहां भी जमींदारी समाप्त की गई, भूमि काश्तकारों को दी गई, अधिकतम जोत बांधी गई तथा किसानों को समझा बुझाकर या दबाकर सहकारी खेती के लिए राजी किया गया। यहां भी कठिनाइयां आयीं और खेती की उपज में आशानुरूप वृद्धि नहीं हुई।

सहकारी और सामूहिक ढंग से खेती करने में अब भी कई त्रुटियां हैं और कभी-कभी इनमें निजी खेतों से बहुत कम उपज होती है। सरकारी हस्तक्षेप और नौकरशाही कामकाज की खराबियां हटाने के ढंग पर इस समय काफी सोच-विचार और आत्म निरीक्षण चल रहा है। पर सहकारी पद्धति की अच्छाई के बारे में किसी को संदेह नहीं है।

[सम्पदा

समाजवाद राष्ट्रीयकरण का पर्याय नहीं

प्रो० विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

समाजवाद और पूंजीवाद में चुनाव करते समय यह उचित है कि आदि में ही एक भूल का निराकरण कर दिया जाय। साधारण धारणा के अनुसार समाजवाद राष्ट्रीयकरण का पर्याय है। किन्तु वस्तुतः राष्ट्रीयकरण समाजवाद का साधन है, स्वयं समाजवाद की सिद्धि नहीं। साधारणतः जिन कारणों से राष्ट्रीयकरण की पुकार होती है, उनके कुछ प्रमुख कारण निम्नांकित हैं:—

(१) समाजवादी व्यक्तिगत सम्पत्ति को जब्त कर लेना चाहते हैं क्योंकि समाज में अवसर और आय की जो असमानता है उसका प्रधान कारण व्यक्तिगत सम्पत्ति है। किन्तु यह सोचना उचित नहीं है कि राष्ट्रीयकरण से व्यक्तिगत सम्पत्ति का अनिवार्यतः अन्त हो जाता है। आज कल जिन देशों में 'संसदीय प्रजातन्त्र' (जैसे भारत और इंगलैंड) है वहां राष्ट्रीयकरण के बदले में उपयुक्त मुआवजा दिया जाता है। इस मुआवजे के देने के कई कारण हो सकते हैं। प्रथमतः यह कि सभी उद्योगों का राष्ट्रीयकरण एक साथ नहीं होता। अतः जब किसी एक उद्योग का राज्य अपहरण करता है और दूसरे को छोडता है तब समान न्याय की रक्षा के लिये अपहृत उद्योग के मालिक को क्षतिपूरक (मुआवजा) प्रदान करना वैध ही है। द्वितीयतः यदि मुआवजे के उद्योगों का राष्ट्रीयकरण क्रमशः प्रारम्भ हो तब प्रायः ऐसा होगा कि औद्योगिक अंचल मे आतंक छा जायेगा और अराष्ट्रीकृत (जिनकी बारी आगे आने वाली है) उद्योगों की प्रगति रुक जायेगी। अतः क्षति पूर्ति के रूप में मुआवजा (क्षति पूरक) देना इसलिये भी जरूरी है कि राष्ट्रीयकरण होने के पूर्व तक कम से कम इस विश्वास पर उनका संचालन पूंजीपति भलीभांति करते रहें कि स्वामित्व-विसर्जन के समय उन्हें उचित मूल्य मिल जायेगा।

जो हो, जिस कारण से भी मुआवजा दिया जाता हो या दिया जाना उचित हो, इससे व्यक्तिगत सम्पत्ति की मात्रा घटती तो नहीं अपितु ज्यों की त्यों रह जाती है। (यद्यपि यह आवश्यक है कि भावी आय, की असमानता का स्रोत कुछ बन्द हो जाता है।)

२. कभी-कभी ऐसा देखा जाता है कि पूंजीपति आवश्यक उद्योगों में पूंजी विनियोजन नहीं करता। जैसे १९२० से १९३९ तक इङ्गलैण्ड में कोयला, सूती वस्त्र-उद्योग कृषि और इस्पात के उद्योगों में पूंजी विनियोजन की कमी अनुभव हुई। किन्तु विचारणीय है कि पूंजीवाद का पूंजी अविनियोजन प्रधान लक्ष्य का गुण नहीं है। पूंजीपति पूंजी तभी विनियोजित नहीं करते जब उस उद्योग का भविष्य संदिग्ध होता है। और एक सामजवादी राज्य का राष्ट्रीयकरण के द्वारा उन उद्योगों मे पूँजी फंसाना शायद ही विवेकपूर्ण माना जाय, जिसका भविष्य अंधकारपूर्ण ज्ञात होता हो।

३. राष्ट्रीयकरण की मांग मजदूर और सर्वहारा वर्ग के उन्नयन के नाम पर भी की जाती है। किन्तु राष्ट्रीयकरण से यदि पूंजीवाद के स्थान पर 'राज्य पूंजीवाद' की ही स्थापना होती है जैसे रूस में, तो प्रसंग रूप से यह एक बहुत मंगलकारी घटना नहीं मानी जा सकती, क्योंकि जिन जिन देशों में उद्योगो का राष्ट्रीयकरण हुआ है उन देशों के राष्ट्रीय उद्योगों में मजदूरों की हड़तालें और क्षोभ असामान्य घटनायें नहीं हैं।

४. जिन उद्योगों की योग्यता का आधार एक 'सत्तात्मक नियंत्रण' (Unitary Control) है, उन उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की मांग बहुत ठोस भूमि पर खड़ी है। उदाहरण के लिये खनिज पदार्थों का स्वामित्व यदि हजारों व्यक्तियों के हाथ में हो और प्रत्येक असम्बद्ध ठेके के आधार पर विभिन्न ठेकेदारों को उनके उत्खनन का कार्य दे दिया जाय तो विविध अपव्ययों के अतिरिक्त राष्ट्रीय आय की हानि होगी। इसका कटु अनुभव भारत स्वयं करता है। इसीलिये कोयला तथा अन्यान्य खनिज पदार्थों के राष्ट्रीयकरण की बात सोची जा रही है।

कृषि के भी क्षेत्र में यही बात लागू है। किन्तु एकात्मक नियंत्रण का अर्थ पूर्ण राष्ट्रीयकरण नहीं है। किसी भी उद्योग के एक प्रमुख भाग को अपने नियंत्रण

में लेकर राज्य उस उद्योग पर अपना 'एकात्मक नियंत्रण' स्थापित कर सकता है; जैसे कुछेक औद्योगिक प्रतिष्ठानों के मालिक उस उद्योग के सभी प्रतिष्ठानों के मालिक न होते हुए भी उस उद्योग पर पूर्ण नियंत्रण रखते हैं। अस्तु !

राष्ट्रीयकरण व्यापक और निरपेक्ष रूप से समाजवाद का मुख्य रूप (Cult) नहीं बन सकता । परिस्थितियों व विभिन्न चिन्तनों की पृष्ठ भूमि में इसकी वैधता पर विचार करना होगा। ऊपर हमने राष्ट्रीयकरण का विरोध नहीं किया है, अपितु समाजवाद और राष्ट्रीयकरण के अनिवार्य पर्यायत्व को अस्वीकार किया है; क्योंकि ऐसा नहीं करना व्यावहारिक तथा समाजवाद के वर्तमान तथा भूत इतिहास की दृष्टि से गलत होगा । उदाहरणार्थ—शिल्प संघी तथा मजदूर संघी समाजवादी राष्ट्रीयकरण में नहीं अपितु क्रमशः शिल्पियों तथा मजदूरों के संघ द्वारा औद्योगिक अंचल के नियंत्रित होने में विश्वास करते हैं। राबर्ट ओवेन विलियम मोरिस, जे. एल. ब्रे आदि द्वारा निर्धारित समाजवादी कार्यप्रणाली में राज्य का बहुत कम काम है। उसी प्रकार ब्रिटेन के फेबियन समाजवादियों ने राज्य के गौरव को अतिरंजना नहीं प्रदान की है। सन् १८६४ ई० में बिट्रिस वेब ने लिखा था—'कभी-कभी मुझे आश्चर्य होता है कि हमारा समष्टिवादी सिद्धान्त हमें कहां ले जायेगा। ....व्यक्तिवादियों ने राज्य के अनुचित हस्तक्षेप का विरोध किया और हम समष्टिवादी व्यक्तिवाद के असामाजिक प्रवृत्तियों से ऊब कर उसका (व्यक्तिवाद का) विरोध करते हैं। किन्तु स्पष्ट ही यह संदिग्ध लगता है कि समष्टिवाद के सिद्धान्तों का व्यापक प्रयोग ४० वर्ष पूर्व के व्यक्तिवादी सिद्धान्तों की तरह ही समाज की सभी समस्याओं का हल कर सकेगा।' (आर्थर लेविस की पुस्तक से उद्धृत)

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से राज्य का गौरव मार्क्स, लेनिन और सिडनी वेब ने बढ़ाया और उन्हीं के प्रभाव में राष्ट्रीयकरण को समाजवाद का पर्याय आजकल कह दिया जाता है। समाजवाद मुख्य रूप से न तो सम्पत्ति का सिद्धांत है न राज्य का। समाजवाद समता का सिद्धान्त है। आजकल चूंकि आर्थिक वैषम्य का मुख्य कारण सम्पत्ति है, इसलिये सभी समाजवादी सम्पत्ति और उसके प्रधान नियंत्रण-सूत्र राज्य से सम्बन्ध रखते हैं । किन्तु सम्पत्ति की समता को छोड़कर समाजवादी सम्पत्ति के संचालन, वितरण और नियंत्रण के सिद्धान्तों पर एक मत नहीं। अस्तु। राष्ट्रीयकरण और समाजवाद को एक नहीं माना जा सकता क्योंकि—

१. जैसा कि मार्शल टीटो ने स्टालिन को सुझाया था, जब तक भूमि का वितरण आर्थिक जोत के रूप में न्यायपूर्ण रूप से होता है और जब तक इतनी जमीन है कि हर परिवार को समान मात्रा में दी जा सके, भूमि में व्यक्तिगत स्वामित्व की प्रतिष्ठा स्वीकार की जा सकती है और यह समाजवाद के विरुद्ध नहीं होगा।

२. १६ वीं शताब्दी के समाजवादी राष्ट्रीयकरण में नहीं अपितु सम्पत्ति पर सामुदायिक रूप से मजदूरों के संघों के स्वामित्व में विश्वास करते थे, जहां क्रियाशील उत्पादकों के रूप में मजदूर लाभ के समान भागी होते।

३. राष्ट्रीयकरण समाजवाद का साधन है और साधन को सिद्धि का पर्यायवाची नहीं कह सकते।

४. निजी क्षेत्र के उद्योगों में यदि मजदूर वर्ग को भी औद्योगिक शासन का पूंजीपतियों के समान ही साझीदार बना दिया जाय, बोनस की राशि से मजदूरों में कम्पनियों का शेयर खरीद कर बांटा जाय और उन्हें भी कुछ अंश में मालिक की संज्ञा प्रदान की जाय तथा पूंजीपतियों के अधिकतम आय पर सीमा निर्धारित कर दी जाय, तो मैं समझता हूँ यह समाजवादी सिद्धान्त के सर्वथा अनुकूल तो होगा ही साथ ही पूंजीवाद के सर्वथा प्रतिकूल। यह व्यवस्था राष्ट्रीयकरण की नहीं है पर समाजवादी अवश्य है। इसके स्पष्टतः दो सद्परिणाम होंगे । एक परिणाम तो यह होगा कि निर्देशक समितियों (Boords of dirictars) में मजदूरों के भी प्रतिनिधि स्थान पा सकेंगे जिससे वे मजदूरों के हित की रक्षा पहले से अधिक योग्यता और प्रभाव से कर सकेंगे। दूसरा यह कि मजदूर तब केवल नौकर ही नहीं, अपितु उद्योगों से मालिक और साझीदार भी माने जायेंगे जिससे आर्थिक उन्नति के साथ उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी एवं श्रम की गरिमा (Dignity of labour) व्यावहारिक स्तर पर सार्थक सिद्ध हो सकेगी।

(शेष पृष्ठ २२२ पर)

नया सामयिक साहित्य

नागरिक शास्त्र के सिद्धान्त—ले०–श्री राजनारायण गुप्त। प्रकाशक: – किताब महल प्रकाशन, इलाहाबाद। पृष्ठ सं०४६०। मूल्य ४)।

आजकल नागरिक शास्त्र सामाजिक विज्ञानों में अधिकाधिक महत्व प्राप्त करता जा रहा है और स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भारत के नागरिकों के लिए तो इसका ज्ञान प्राप्त करना बहुत आवश्यक हो गया है। मानव को समाज के लिए और समाज को मानव के लिए अधिक उपयोगी बनाने की विद्या और कला ही वस्तुतः नागरिक शास्त्र है। सामाजिक और राजनैतिक जीवन में आने वाली कठिन समस्याओं को हल करने में हम इस शास्त्र के अध्ययन से पर्याप्त सहायता पा सकते हैं। विद्वान लेखक ने नागरिक शास्त्र के सैद्धान्तिक पक्ष को उसके विविध पहलुओं का विवेचन करते हुए इस पुस्तक में लिखने का सुन्दर प्रयत्न किया है।

प्रस्तुत पुस्तक वस्तुत: एफ० ए० के विद्यार्थियों को सामने रखकर लिखी गई है, ताकि वे इस महत्वपूर्ण विषय से भली भांति परिचित हो जावें। नागरिक शास्त्र का महत्व, उसका अन्य शास्त्रों से सम्बन्ध, व्यक्ति और समाज, समाज के विविध रूप, नागरिक के अधिकार और कर्तव्य, राज्य और उसके तत्व, राज्य की उन्नति, उद्देश्य, कार्य और संप्रभुता संविधान, विभिन्न शासन पद्धतियां आदि सभी आवश्यक विषय सरल शैली में पाठक को पढ़ने को मिलेंगे

मूलतः पुस्तक विद्यार्थियों के लिए लिखी गई हैं, इसलिए प्रत्येक प्रकरण के अन्त में परीक्षार्थियों के लिए उपयोगी प्रश्न दे दिये गये हैं। अन्त में अंग्रेजी व हिन्दी पारिभाषिक कोष दिया गया है। छपाई सफाई अच्छी है।

★

भूदान गंगा (५) ले०–आचार्य विनोबा। प्रकाशक—अ० भा० सर्व सेवा संघ, राज घाट, बारांणसी। पृष्ठ संख्या ३३०। मूल्य १.५० रु०।

भूदान के सम्बन्ध में आचार्य विनोबा के समय-समय पर किये गये प्रवचनों का संग्रह भूदान गंगा के नाम से प्रकाशित किया जाता है। इस दिशा में यह पांचवां संग्रह है। इस खण्ड में कांचीपुरम् सम्मेलन के बाद की तामिलनाड यात्रा की अवधि में दिये गये ७० भाषण दिये गये हैं। इन भाषणों में केवल भूदान या सर्वोदय अर्थ शास्त्र ही नहीं है, नैतिक दार्शनिक व आध्यात्मिक उत्कृष्ट विचार भी हैं। विनोबा की बहुविज्ञता, बहु श्रुतता व बहुमुखी प्रतिभा के, जो मस्तिष्क को विचार करने के लिए नई सामग्री देती है, दर्शन इन लेखों में होते हैं।

★

शान्तिसेना—लेखक और प्रकाशक वही। मूल्य ५० नये पैसे।

आचार्य विनोबा का मानसिक विकास बहुत तीव्रगति से हो रहा है। वह जितना चिन्तन करते हैं, उतना ही उन्हें नया मार्ग स्पष्ट दिखाई देता है। शान्तिसेना का भी ऐसा ही विचार है। उनका विश्वास है कि आज अन्तर्राष्ट्रीय और आन्तरिक संघर्षों का उपाय दण्ड नहीं, शान्ति सेना की स्थापना है। क्षत्र पर ब्रह्म की विजय वे चाहते हैं। इस सम्बन्ध में उनके भाषणों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। उनकी योजना है गांव गांव में शान्तिसेना की स्थापना हो? ये सैनिक सब प्रकार के आक्रमण अपने ऊपर लें, प्राण त्याग तक के लिए तैयार रहें, तब आक्रमणकारी स्वयं ही अपनी हिंसक वृत्ति छोड़ देगा। भाषा, वर्ग, सम्प्रदाय और राजनीति के आधार पर चलने वाले संघर्षो के निराकरण के लिए शान्तिसेना होगी। आज के हिंसा प्रधान युग में शांतिसेना की सफलता का विचार अत्यन्त अव्यावहारिक प्रतीत होता है, परन्तु विनोवा इस क्रांतिकारी विचार को व्यावहारिक मानते हैं, भले ही इसके लिए पर्याप्त प्रतीक्षा हमें करनी पड़ेगी। दण्ड और हिंसा उनकी सम्मति में स्थायी समाधान नहीं है। शान्तिसेना के सैनिक किसी राजनैतिक या सांस्कृतिक दल के प्रति निष्ठा नहीं रखेंगे, मानवता मात्र उनका धर्म होगा और शान्तिपूर्वक त्याग और कष्ट सहन उनका अस्त्र होगा। आचार्य विनोवा का यह स्वप्न व्यावहारिक है या नहीं, इसमें मतभेद रखने वालों की भी आन्तरिक इच्छा उसकी सफलता की है।

★

सुबह के भूले (उपन्यास) ले०—श्री इलाचन्द्र जोशी, प्रकाशक—हिन्दी भवन, इलाहाबाद मूल्य ५ रु० ।

श्री इलाचन्द्र जोशी हिन्दी के उन गिने-चुने साहित्य-कारों में है जिनको प्रतिभा बहुमुखी है । जोशी जी कवि, समालोचक, निबन्ध लेखक के साथ साथ उपन्यासकार भी हैं । उपन्यासकार के रूप में उनकी निजी 'मान्यताएं' हैं, लेकिन प्रस्तुत उपन्यास उनकी मान्यताओं से कुछ भिन्न लगेगा । इसका कारण यह प्रतीत होता है कि यह उपन्यास "जन साधारण" के लिए नहीं वरन् "वर्ग" विशेष के लिए लिखा गया है और यह वर्ग है किशोर और तरुणों का वर्ग, जो कथा के मनोरंजन के साथ साथ उपदेश-लाभ भी प्राप्त कर सकें । इसीलिए कथावस्तु सरल है । उसमें जटि-लता नहीं । न ही पात्रों की भीड़-भाड़ है, और न ही मनोवैज्ञानिक गुत्थियों" को सुलझाने का प्रयास । उपन्यास की नायिका गुलबिया सुबह की भूली है, जो भटक कर "गिरिजा" बनती है । लेकिन सुबह की भूली गुलबिया "शाम" को वापस लौट आती है । तब गुलबिया और गिरिजा का एकाकार हो जाता है । गुलबिया और गिरिजा की इन दो सीमाओं में ही घटनाएं बंधी पड़ी हैं । कथा जितनी आकर्षक और रोचक है, भाषा भी उतनी ही सरल और प्रवाहपूर्ण है । निस्संदेह यह उपन्यास एक सफल रचना है ।

पुस्तक की छपाई-सफाई अच्छी है । लेकिन मूल्य ५) अधिक प्रतीत होता है ।

कुलदीप—ले० श्री रामाश्रय दीक्षित । मूल्य २५ न० पै० ।

माता पिताओं से—ले० महात्मा भगवानदीन । मूल्य ५० न० पै० ।

बालक सीखता कैसे है । लेखक वही । मूल्य ३७ न० पै० ।

उपर्युक्त तीनों पुस्तिकाएं सर्व सेवा संघ प्रकाशन राज-घाट वाराणसी द्वारा प्रकाशित हुई है । कुलदीप एक छोटासा नाटक है, जिसका उद्देश्य भूदान, समानता, मानवता आदि के विचार को जनसामान्य तक पहुँचाना है । श्री भगवान-दीन बाल मनोविज्ञान के पंडित हैं । उनकी दोनों पुस्तिकाएं बालकों के विकास से सम्बन्ध रखती हैं । पहली पुस्तक में बालकों से व्यवहार और उन्हें पढ़ाने के सम्बन्ध में बहुत सी उपयोगी और व्यावहारिक सूचनाएं संक्षेप में दी गई हैं । दूसरी पुस्तक में अपने वे अनुभूत प्रयोग दिये गये हैं, जिनसे उन्होंने बच्चों के स्वभाव को बदल दिया । यह पुस्तक भी माता पिता के लिए उपयोगी सिद्ध होगी ।

सर्वधर्म समभाव—ले० श्री रघुनाथ सिंह, प्रकाशक—अ० भ० कांग्रेस कमेटी, जन्तर मन्तर रोड, नई दिल्ली । मूल्य ७५ न० पै० ।

प्रस्तुत पुस्तिका में, जैसा कि नाम से स्पष्ट है, विभिन्न धर्मों में समानता और मूल उद्देश्य की एकता दिखाने का प्रयत्न किया गया है । आज से कुछ समय पूर्व इसकी राजनैतिक आवश्यकता भी थी । धर्म के विद्यार्थियों के लिए भले ही इसका बहुत महत्व न हो, सामान्य जन को विभिन्न धर्मों—हिन्दू, इस्लाम, ईसाई, जैन, बौद्ध धर्मों के सिद्धान्तों तथा विचारों का परिचय इससे प्राप्त हो जायगा ।

आयोजन (साप्ताहिक राष्ट्रीय बचत विशेषांक)—सम्पादक:—श्री सुमनेश जोशी, कार्यालय—नारनोली भवन, सांगानेरी दरवाजा, जयपुर ।

पिछले कुछ समय से श्री सुमनेश जोशी के सम्पादन में यह पत्र निकल रहा है । इसका मुख्य उद्देश्य समाज-वादी समाज की रचना है । देश की और विशेषकर राज-स्थान की विविध आर्थिक प्रवृत्तियों का परिचय और प्रचार इसकी विशेषता है । चित्रों व रेखा चित्रों से इसे अधिक आक-र्षक बनाने का भी प्रयास किया जाता है । बचत की प्रवृत्ति को प्रचार भावना से बचत विशेषांक निकाला गया है । बचत के सम्बन्ध में योजना आयोग, कांग्रेस देश व राज्य के नेताओं के विचार, बचत के नये उपाय, सरकारी योजनाएं आदि सामग्री अत्यन्त आकर्षक रूप में उपस्थित की गई है ।

"भारतीय समाचार" और "इंडियन इन्फौर्मेशन" प्रथमांक, प्रकाशक—प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय—भारत सरकार, दिल्ली—८ । मूल्य क्रमशः २० और २५ नये पैसे ।

सरकार की गतिविधियों की सूचना नियमित रूप से जनता को मिलती रहे, इस दृष्टि से ५, ७ साल पहले इन्हीं नामों से याने, भारतीय समाचार और इंडियन इन्फौ

मेशन पत्रिकाएं हिन्दी और अंग्रेजी में प्रकाशित होती थीं। लेकिन बीच में कारणवश इन्हें बन्द कर देना पड़ा। पाक्षिक रूप से इनका पुनः प्रकाशन स्वागत योग्य है। पत्रिकाएं सभी सरकारी विभागों की सूचनाएं, योजना और विकास सम्बन्धी विवरण तथा अन्य जानकारी नियमित रूप से देती रहेंगी। इनकी उपयोगिता असंदिग्ध है।

इतना सब होते हुए भी इन पत्रिकाओं को बढ़िया और मोटे कागज पर छापना उचित प्रतीत नहीं होता। साधारण कागज पर छापने से भी इन पत्रिकाओं के महत्व में कोई कमी न होगी। 'मितव्ययता' के लिए ऐसा करना ही होगा। फिर यदि सूचनाओं से सम्बन्धित चित्र आदि भी अन्दर के पृष्ठों में दिये जा सकें तो इनकी उपादेयता बढ़ सकती है।

विश्व ज्योति (नव वर्ष विशेषांक)—सम्पादक—श्री विश्वबन्धु और श्री सन्तराम। प्रकाशक—साधु आश्रम, होशियारपुर (पंजाब)। वार्षिक मूल्य ८) रु०।

इस अंक के साथ विश्व ज्योति ने सातवें वर्ष में प्रवेश किया है। इसका एक उद्देश्य भारतीय संस्कृतिपरक उत्कृष्ट व स्वस्थ साहित्य का प्रचार है। प्रस्तुत विशेषांक में दार्शनिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, सामाजिक और साहित्यक लेखों का सुन्दर संकलन है। कुछ लेख तो बहुत विद्वत्तापूर्ण हैं। स्वर्ण युग की संस्कृति, आध्यात्मिक जीवन के नियम, भारतीय मनन शक्ति का ह्रास, दर्शन की उपयोगिता आदि ऐसे ही लेख हैं। कहानियों व सुन्दर कविताओं से इसकी रोचकता बढ़ गई है। अङ्क संग्रहणीय है।

प्रवास और सफलताएं—मध्य प्रदेश शासन भोपाल द्वारा प्रकाशित।

इस पुस्तिका में मध्य प्रदेश शासन द्वारा राज्य के पुनर्गठन के बाद एक वर्ष में विकास योजना के विविध अंगों की प्रगति का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस वर्ष के विशेष कार्य चम्बल योजना, भिलाई—लोह संयंत्र, भोपाल के पास कोरवा विद्युत: गृह आदि की प्रगति है। तवा योजना नेपा मिल्स में कैमिकल मिल तथा भूमि सुधार, सिंचाई, शिक्षा, सामुदायिक विकास उद्योग आदि क्षेत्रों में की गई प्रगति का परिचय भी इस पुस्तिका से मिल जायगा।

विविध राज्यों में—

आर्थिक प्रवृत्तियां

द्वितीय योजना मे

बम्बई राज्य का औद्योगिक विकास

सहकारी शक्कर फैक्टरियां

राज्य में गन्ने के बढ़ते हुए विस्तारों में सहकारी शक्कर फैक्टरियों का विकास करने की दृष्टि मे बम्बई सरकार ने लगभग ऐसी १२ फैक्टरियों की शेयर पूंजी में रकम लगायी है, जिनको लायसेन्स प्राप्त है तथा गत वर्ष के दरमियान एक फैक्टरी ने तो उत्पादन को प्रारंभ कर दिया है। मध्यम तथा छोटे उद्योगों के विकास के कारण बम्बई राज्य का औद्योगिक विभाग महत्वपूर्ण बन गया। १९५६-५७ वर्ष के दरमियान औद्योगिक विभाग की सिफारिशों के आधार पर वाणिज्य तथा औद्योगिक मंत्रालय द्वारा १३४ लायसेन्स जारी किये गये। ए. सी. मोटर्स, इलेक्ट्रिक कन्ट्रोल गिअर्स, नट तथा बोल्ट, स्टील स्ट्रक्चरल, केबिल्स स्प्रिंग तथा रोक ड्रिल्स, एयर काम्प्रेश्अर, इन्टरनलकम्बुशन इंजीनों के लिए एयर फिल्टर आदि जैसे नये औद्योगिक प्रतिष्ठानों की स्थापना के लिए २७ लायसेन्स जारी किये गये। महत्वपूर्ण रासायनिक उत्पादन को भी आवश्यक सुविधाएं प्रदान की गयीं। इसके अलावा बिनौले की खली और तेल, कांच के प्याले तथा चिमनियां, शक्कर, वनस्पति तेल आदि के उत्पादन को भी प्रोत्साहन दिया गया।

इंजीनियरिंग तथा रासायनिक उद्योग

उद्योगों के विस्तार के फलस्वरूप ६५ लायसेन्सधारियों के उत्पादन में भी वृद्धि होने की संभावना है। इन लायसेन्सधारियों में नये सामान के निर्माण करनेवाले घटक भी शामिल है। १९५६-५७ वर्ष के दौरान में २१ लायसेन्स दिये गये।

ग्रामोद्योगों को अपने माल को बेचने की दिशा में विभिन्न प्रकार की सहायताएं प्रदान की जाती हैं। १९५६-५७ वर्ष के दौरान में बम्बई के उद्योग विभाग के केन्द्रीय स्टोर खरीद संगठन ने ६.७४ करोड़ रुपये का सामान खरीदा, जिसमें १.२५ करोड़ रुपये की खरीद बम्बई राज्य में की गयी तथा १०.४ लाख रुपये का खर्च कुटीर और ग्रामोद्योगों के माल पर किया गया। खरीद करते समय सरकार की यह नीति रही है कि राज्य औद्योगिक सहकारी संस्था, व्यवसाय, प्रशिक्षण केन्द्र, कल्याण, जेल की फैक्टरियो, पुनर्वास उत्पादन केन्द्रों आदि के मूल्यों मे २५ प्रतिशत प्राथमिकता दी जाय। इसके अलावा आयात किये हुए माल की (तट कर सहित) कीमतों की अपेक्षा देशी माल की कीमतो पर १५ प्रतिशत प्राथमिकता दी जाती है। यह संरक्षण संरक्षित उद्योगों पर भी लागू किया जाता है। लेकिन जहां कीमतो में १५ प्रतिशत प्राथमिकता भी पर्याप्त नहीं होती, वहां पर सरकार की स्वीकृति से निर्दिष्ट श्रेणी के सामानों पर प्राथमिकता दी जाती है।

छोटे उद्योगों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के अलावा कुछ उद्योगों के उत्पादन के कार्यक्रम को *निर्धारित*

द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना के दौरान मे औद्योगिक विकास पर अधिक बल देने से एवं बृहत्तर बम्बई राज्य के निर्माण होने के फलस्वरूप औद्योगिक प्रवृत्तियों का काफी विस्तार हुआ है। यदि सभी आयोजित विकास कार्यों का हिसाब लगाया जाय तो इससे अन्दाजन १६,००० कामगरों को रोजगार मिलेगा तथा २२-२४ करोड़ रुपये की पूंजी लगायी जायगी। १९५६-५७ के दौरान मे ४१ छोटे घटकों के लिए कुल १४.१३ लाख रुपये के कर्ज स्वीकृत किये गये, जिनमे से ३१ पार्टियों को मशीनों की खरीद तथा चालू पूंजी के लिये १.८५ लाख रुपये वितरित किये गये। जीप, सायकिल के हिस्से, रसायन, इंजीनियरिंग तथा वस्त्र उत्पादन एव फाउण्ड्री कार्य के उद्योगों को कर्ज दिये गये।

करने के लिए आवश्यक कदम उठाये जाते हैं और इस प्रकार लघु उद्योग मण्डल नई दिल्ली के विकास आयुक्त के पास छः पार्टियों की सिफारिश साइकिलों को एकत्रित करने के लिए की गयी । ये दल जब पूर्ण रूप से कार्य करने लगेंगे तब वे बाजार में २४५०० बायसिकलें सालाना रख सकेंगे । इसी प्रकार बम्बई के उद्योग विभाग ने एक और निर्माता की सिफारिश की है जो सिलाई की ६००० मशीनें सालाना तयार करेगा । इसके अलावा सामुदायिक योजना विस्तार कर्जत में छातों के निर्माण के केन्द्रों की स्थापना की एक योजना को भी बम्बई के उद्योग विभाग ने तैयार किया है ।

बिजली की पूर्ति

ट्राम्बे के प्रथम थर्मल सेट द्वारा कार्य आरंभ करने के फलस्वरूप वृहत्तर बम्बई में बिजली पूर्ति में काफी सुविधा हुई है । औद्योगिक कार्यों के लिए अब अधिक बिजली की पूर्ति की जा सकेगी । अभी बम्बई राज्य में पैदा की जानेवाली बिजली का लगभग ६० प्रतिशत भाग औद्योगिक उपयोग में लाया जाता है । यह हिस्सा देश में औद्योगिक प्रयोजनों से प्रयोग में लायी जानेवाली बिजली का ३३ प्रतिशत होता है ।

सरकार ने कल्याण के निकट अटाले स्थान पर भारी और बुनियादी उद्योगों का एक औद्योगिक प्रतिष्ठान कायम करना भी निश्चय किया है । १९५६-५७ वर्ष के दौरान में इस दिशा में जाँच कार्य जारी रहा । द्वितीय पंचवर्षीय आयोजन के अन्तर्गत औद्योगिक प्रतिष्ठानों के स्थापनार्थ १६६.५२५ लाख रुपयों का प्रबन्ध किया गया है ।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के दौरान में बम्बई की औद्योगिक शोध प्रयोगशाला माटुंगा में एक सरकारी प्रयोगगृह, पूना में औद्योगिक प्रतिष्ठान प्रयोगशाला की स्थापना और बड़ोदा की प्रयोगशाला को विस्तृत करना प्रस्तावित किया गया है । माटुंगा और बड़ौदा की औद्योगिक रसायन प्रयोगशालाओं में महत्वपूर्ण औद्योगिक समस्याओं पर जांच कार्य है तथा राज्य के रासायनिक उद्योगों के लिए प्रकियाओं का कार्य भी किया जाता है ।

★

राजस्थान

संसार में सबसे लम्बी नहर

राजस्थान नहर के निर्माण का श्रीगणेश इस मास राजस्थान के आर्थिक इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण घटना है, जो पूर्ण होने पर राजस्थान की अर्थ व्यवस्था में क्रांतिकारी प्रभाव डालेगी । इसकी खुदाई का श्रीगणेश ३० मार्च को श्री गोविन्दवल्लभ पन्त ने किया है । यह नहर संसार की सबसे लम्बी नहर होगी ।

इस ४२६ मील लम्बी नहर के निर्माण पर अनुमानतः साढ़े ६६ करोड़ रुपया व्यय होगा । इस योजनाके पूर्ण हो पर १० लाख टन अनाज प्रति वर्ष उत्पन्न होगा, जिसका मूल्य ३० करोड़ रुपया होगा । इस नहरके निर्माण के कार्य में ५० हजार से अधिक लोगों को रोजगार मिलेगा ।

यह नहर पंजाब में फिरोजपुर के समीप हरिके स्थान से सतलुज नदी से निकलेगी और ११० मील तक पंजाब में होती हुई राजस्थान में प्रवेश करेगी । राजस्थान में १५० लाख एकड़ भूमि रेगिस्तान है ।

राजस्थान में यह नहर हनुमानगढ़ के समीप प्रवेश करेगी और नचाना से जिला जेसलमेर तक चली जायेगी । यह दस वर्ष में तैयार हो जाएगी । इसके तैयार हो जाने पर न केवल राजस्थान के उत्तर पश्चिमी विभाग के लोग भुखमरी और अकाल के प्रकोप से बच जायंगे, प्रत्युत, सारा राजस्थान समृद्ध हो जाएगा । अभी इस क्षेत्र में बहुत कम जनसंख्या है । नहर के तैयार होने पर जब खेतीवाड़ी बढ़ेगी तो अन्य क्षेत्रों के लोगों को यहां आबाद किया जा सकेगा । इस बड़ी नहर से अन्य नहर भी सिंचाई के लिए निकाली जायेंगी । इसका एक लाभ होगा कि रेगिस्तान का फैलाव रुक जायेगा ।

इस नहर के पानी के परिणामस्वरूप अमरीकी कपास यहां विशेष रूप से पर्याप्त मात्रा में उगाई जा सकेगी । यह भूमि इस कपास के लिए अच्छी है ।

१९५१ में राजस्थान की खेतीहर भूमि का क्षेत्रफल केवल ११ लाख एकड़ था और १९६६ तक सभी सिंचाई योजनाओं के पूर्ण हो जाने पर यह क्षेत्रफल ६६ लाख हो जायगा ।

राजस्थान की राजधानी

राजस्थान के पुनर्गठन के साथ ही राजधानी किस नगर में हो, यह प्रश्न गंभीर विवाद का रूप धारण कर गया था, पर अब इस प्रश्न का निर्णय हो गया दीखता है। इस प्रश्न पर पड़ताल करके विगत जुलाई में श्री राव के सभापतित्व में जो कमेटी बनाई गई थी, उसने जयपुर, जोधपुर, अजमेर, उदयपुर, बीकानेर और माउंट आबू और कोटा के दावों पर प्रशासनिक सुविधा, अर्थात उनकी भौगोलिक स्थिति और संचार की अच्छी सुविधाएं, उपलब्ध राजकीय इमारतों और सरकारी अधिकारियोंके आवास के लिए निजी मकानों की संख्या, उनके भावी विकास की सम्भावनाएं, आबहवा, जीवन की आवश्यकताओं के लिए साधनों की उपलब्धि, शिक्षा और डाक्टरी सुविधाएं व उनका ऐतिहासिक एवं राजनीतिक महत्त्व और उनकी सांस्कृतिक परम्पराओं की दृष्टि से विचार किया।

उसने मत व्यक्त किया है कि चूंकि चंडीगढ़ और भुवनेश्वर की तरह नई राजधानी बनाने पर भारी खर्च करना पड़ेगा, इसलिए एक ऐसे स्थान को, जो राजधानी बननेकी अधिकांश शर्तें पूरी करता है, छोड़ना और नई राजधानी बनाना अनुचित होगा। उपर्युक्त सातों शहरों में उपलब्ध सुविधाओं के तुलनात्मक अध्ययनसे पता चलता है कि जयपुर कई तरह से राजधानी बनने की आवश्यकताएं पूरी करता है। यहां सरकारी भवन काफी हैं, पानी और बिजलीकी उपलब्धि बढ़ाई जा सकती है। शिक्षा और चिकित्सा सुविधा उपलब्ध है, शानदार इतिहास है और सबसे ऊपर वह योजनाबद्ध रूप से बसा हुआ है। वह राज्यका सबसे बड़ा शहर है और उसकी आबादी तेजी से बढ़ने के साथ साथ निजी मकान भी बड़ी संख्या में बन गए हैं। यहां की आबहवा अच्छी है। जनमत भी जयपुर को राजधानी रखने के पक्ष में है।

अब आशा है, राजधानी के विवाद को न उठाकर समस्त राजस्थानी राज्य के विकास में लग जायंगे, किन्तु शासन को यह तो ध्यान रखना ही होगा कि राजस्थान के अन्य नगरों का भी आर्थिक, सामाजिक विकास होते रहना चाहिए।

★

उत्तर प्रदेश

राजकीय सूक्ष्म यंत्र निर्माणशाला

उत्तरप्रदेश के सूक्ष्म यंत्र निर्माण कारखाने में १९५१-५२ के वर्षमें केवल ४२४ जलमापक यंत्रोंका निर्माण हुआ और १९५५-५६ में अर्थात् प्रथम पंचवर्षीय आयोजना के अन्तिम वर्षमें उत्पादन संख्या बढ़कर १३,३३१ हो गई। द्वितीय पंचवर्षीय आयोजना में प्रति वर्ष ३६,००० जलमापक यन्त्रों और तीन सौ अणुवीक्षण यंत्रोंका निर्माण करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया, जो प्रथम पंचवर्षीय आयोजनाके लिए निर्धारित लक्ष्य से लगभग ३०० प्रतिशत अधिक है।

स्थान की कमी के कारण कारखाने के पुराने अहाते में इस दिशा में अधिक प्रगति न की जा सकी। कारखाने की सभी मशीनों आदि का स्थानान्तरण नए भवन में किया जा चुका है। नई भूमि में कारखाने की प्रत्येक शाखा के पास काफी जगह है। आवश्यकता पड़ने पर कारखाने का चौगुना विस्तार किया जा सकता है।

देश के सूक्ष्म यन्त्र-निर्माण कारखानों में इस कारखाने ने अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है। नीचे दिए गए आंकड़ों से ज्ञात होगा कि इस कारखाने ने प्रति वर्ष अधिकाधिक प्रगति की है। फरवरी १९५८ के अन्त तक इस कारखाने ने कुल ७३,६६५ जल मापक यन्त्रों और ४६० अणुवीक्षण यन्त्रों का उत्पादन कर लिया है। केवल जल-मापक यन्त्रों का मूल्य ५० लाख रुपए के करीब है।

	जल मापक यंत्र	अणुवीक्षण यंत्र
१९५१-५२	४२४	—
१९५२-५३	३,६२७	५४
१९५३-५४	६,८०१	११२
१९५४-५५	९,८८३	९७
१९५५-५६	१,३३१	५२
१९५६-५७	१९,००४	७६
१९५७-५८		
फरवरी १९५८ के अन्त तक	२०,९२५	११६
	कुल ७३,६६५	कुल ४६०

सूक्ष्म यंत्र निर्माण शाला को १९५४-५५ वर्ष से लाभ होने लगा। यह उल्लेखनीय है कि १९५६-५७ के वित्तीय वर्षमें ६१,६०१ रु० का लाभ हुआ। इस कारखाने पर कुल १३,९९,३३४ रु० की पूंजी लगी हुई है और इसकी राजस्व सम्पत्ति कुल १४,८२,१९३ रु० की है।

इस समय इस कारखाने में विशेष प्रकार के आधा इन्ची, पौन इन्ची और एक इन्ची जल-मापक यंत्रोंका निर्माण हो रहा है। अन्य यंत्रोंमें, विद्यार्थियों तथा अनुसन्धान के काम में आने वाले और "बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्रोंका निर्माण भी हो रहा है। 'बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्र का निर्माण देश में प्रथम बार खुफिया विभाग की वैज्ञानिक शाखा के उपयोगके लिए यहां किया गया है। यहां के अणुवीक्षण यंत्र की सहायता से वस्तुओं को ३७५० गुने बड़े आकार में देखा जा सकता है। 'बुलेट कम्पेरिजन' अणुवीक्षण यंत्र की कीमत केवल २,५०० रु० है जबकि विदेशों से आयात किये गये इसी प्रकार के यंत्र का मूल्य ६,००० रु० है।

जिन नये यंत्रोंका निर्माण इस कारखाने में अब हो रहा है, उनमें गैस, पानी और भाप के 'प्रेशर गाज' तथा आत्म चिकित्सा के कुछ उ करण भी सम्मिलित हैं। इनमें से कुछ यंत्र आगामी दो महीने की अवधि के भीतर बाजार में बिक्री के लिए उपलब्ध हो जायंगे। कारखाने के अधिकारियों ने प्रति वर्ष १२,००० 'प्रेशर गाज' का उत्पादन करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इन सभी यंत्रों की डिजाइनें आदि तैयार कर ली गई हैं।

अनुमान है कि इस कारखाने ने कुल ४२ लाख रुपये की विदेशी मुद्रा की अब तक बचत की है जो प्रति वर्ष बढ़ती जायगी।

मध्यप्रदेश

चम्बल-योजना प्रगति के पथ पर

यदि राजस्थान में नई नहर के खुदाई कार्य के उद्घाटन से नई हलचल जारी हो गई है, तो मध्यप्रदेश व राजस्थान की चम्बल योजनाभी निरन्तर प्रगति कर रही है।

मध्यप्रदेश की चम्बल जल विद्युत् और सिंचाई योजना के एक प्रगति-प्रतिवेदन के अनुसार माह फरवरी १९५८ में गांधी सागर बांध पर ७६११० बोरी से अधिक सीमेन्ट, १८२ टन इस्पात और २५ टन कोयले का उपयोग किया गया। आलोच्य अवधि में, बांध पर ६.०८ लाख घनफुट चिनाई और कांक्रीट का कार्य और ०.४१ लाख घनफुट चिनाई का कार्य गांधी सागर शक्ति केन्द्र पर पूरा किया गया। प्रदर्शनी, कैंटीन और क्लब भवन तथा विदेशी लोगों तथा निर्माताओं के ठहरने के लिये विश्राम गृह का कार्य प्रगति पर था और ८० प्रतिशत से अधिक कार्य पूरा हो चुका है।

उक्त मास में बैचिंग प्लान्ट ने ३१,३९१ घनफुट कांक्रीट को मिलाया। बकेट एलीवेकेटर ६२५० बोरे सीमेन्ट और सुरखी लाये। जा-क्रशर और कोन क्रशरों ने २२२१ टन सामग्री का चूरा किया। ५ तथा १० टन वाले केवल वेजों के द्वारा ५१२ वार में २२३१ टन कांक्रीट, चूना, पत्थर, सीमेन्ट, रेत, तथा अन्य सामग्री ढोई गई।

मुख्य दाहिनी नहर

इस मास मुख्य दाहिनी नहर क्षेत्र में २८२.४० लाख घनफुट मिट्टी बिछाने का काम, ५.६७ लाख घनफुट मिट्टी इमारती और कांक्रीट का काम तथा ५.४२ लाख चट्टानों की कटाई का काम किया और पार्वती, अहेली, रतडी, सीप, अमराल, दावरा, धातरी, दोनी, परम, सरारी १ तथा २ और कुनू एक्विड्क्ट में प्रमुख नालियों को बनाने का कार्य ठीक ढंगसे चल रहा है।

वरोडिया विंडी, श्रीपुरा, बरोडा, शियपुर और सबलगढ में आवास तथा गैर आवास के लिए अस्थायी भवनों का निर्माण समाप्त हो चुका है। और धोती, कलहरनी, सिल्लीपुर, तीरभकलन, गिरधरपुर, सेभरदा, इसीलपुर, कुनुकादायां विनारा, वीरपुर और टेन्द्रा की नहरी उप बस्तियों में निर्माण कार्य चल रहा है।

बांध और नहर क्षेत्र में प्रतिदिन औसतन कुल १००० और १६००० मजदूर क्रमशः कार्यरत हैं।

—

[क्रमशः

विभिन्न देशों की राष्ट्रीय आय

देश	वर्ष	आबादी (लाखों में)	करोड़ रुपयों में आय	प्रति व्यक्ति आय रु० में
भारत	५५-५६	३८३०.०	१०,४२०	२७२
	५६-५७	,,	११४१०	२८४.३
			वर्तमान मू० के आधार पर	
पाकिस्तान	५६-५७	८८५.०	२,०७९	२४६
बर्मा	१९५५	१९४.३	४०९	२१०
श्री लंका	१९५५	८३.८	४७५	५६७
जापान	१९५५	९००.०	९,२८३	१,०३१
आस्ट्रेलिया	१९५५	९४.०	४,६२३	४,९१८
इंग्लैंड	१९५५	५१२.०	२१,९५३	४,२८७
अमेरिका	१९५५	१६८०.०	१६३,५५४	९,७३१
कनाडा	१९५५	१६०.०	१०,७८७	६,७४२
फ्रांस	१९५६	४३६.०	१७,६४०	४,०४६
पश्चिमी जर्मनी	१९५६	५१५.०	१६,८८९	३,२७९
इटली	१९५५	४८१.०	८,७६०	१,८२१
स्वीडन	१९५५	७३.०	४,१२७	५,६५१
स्विट्ज़रलैण्ड	१९५५	५०.०	२,७१४	५,४२८
नार्वे	१९५५	३४.६	१,४०८	४,३५८

विभिन्न चुने हुए उद्योगों का उत्पादन

		१९५१	१९५६	१९५७
कोयला	००० टन	३४२०८	३९४३२	४३४५२
आयरन ओर	,,	३६६०	४२४८	४४६८
कच्चा लोहा	,,	१७०१	१८०७	१७८०
तैयार इस्पात	,,	१०७६	१३१६	१३३७
अलमुनियम	टन	३८४८	६५००	७८१२
ताम्बा	,,	७०८४	७६२८	७८१९
चीनी	००० टन	१११५	१८५४	२०६७
काफी	,,	१८०९६	३४४४०	४०८४१
चाय	लाख पौंड	८६१०	६६४०	६७७०
बनस्पति घी	००० टन	१७२	२५६	२१८
सिमेंट	10 लाख	२१४४१	२६१५८	२८८३०
सूत	लाख पौण्ड	११०४४	१६७१६	१७७४०
कपड़ा	लाख गज	४०७६४	५३०७६	५३१७२
जूट सामान	००० टन	८७५	१०९३	१०३०
ऊनी सामान	००० पौंड	१७७००	२५४४०	२७५९८
कागज, गत्ता	००० टन	१३२	१९३	२०९
कास्टिक सोडा (टन)		१४७२४	३९४२०	४२०४४
सोडा ऐश	,,	४७५३२	८४२९०	९१३६५
दिया सलाई	००० डब्बे	५७८	५८९	५६३
साबुन	(टन)	८३४३६	१०९९०८	१०४१४७
सीमेन्ट	००० टन	३१९६	४९२८	५६५२
रेज़र ब्लेड	(लाख)	२२९	२६५१	३३९५
हरीकेन लालटेन (०००)		३९७७	५१७९	३८३९
डीज़ल इंजन (संख्या)		७२४८	११९४०	१६२८८
सिलाई मशीन	,,	४४४६०	१३०३९२	१६४८००
मशीन टूल (००० रु० मूल्य)		४७३०	८२०३	२१७६४
बिजली के पंखे (०००)		२१२	३३८	५२१
रेडियो रिसीवर्स (संख्या)		८२७८८	१५००००	१८४१६२
मोटरें	,,	२२२७२	२९८३६	३३०००
बाइसिकल (पूरे) (०००)		११४	६५७	७५९

(पृष्ठ २१२ का शेष)

स्पष्ट है यह व्यवस्था औद्योगिक प्रजातन्त्र की व्यवस्था होगी, जो पूंजीवाद से दूर और समाजवाद के सर्वथा निकट होगी।

कहने का तात्पर्य यह है कि समाजवाद मानव समाज के संश्लिष्ट विकास में विश्वास करता है। यह मानता है कि व्यक्ति के विकास के लिये राज्य जैसी राजनीतिक संस्था के अभिभावकत्व की अपेक्षा है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं होता कि उत्पादन वितरण और विनिमय के साधनों का सामूहिक राष्ट्रीय स्वामित्व ही समाज का भाग्य तय कर डालेगा और समाजवाद के ध्येय की पूर्ति का दूसरा कोई तरीका ही नहीं। सत्य यह है कि जब तक हमारे सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक जीवन के विभिन्न अंगों का संचालन समता और सामाजिक न्याय के आधार पर होगा, हमारा विरोध समाजवाद से नहीं होगा और इनके इस प्रकार के संचालन का राष्ट्रीयकरण ही एकमात्र आय है, यह पूर्ण सत्य नहीं है। इसीलिये श्री आर्थर लेविस ने कहा है कि—

'साधारण धारणा के विपरीत समाजवाद अपने इतिहास तथा दर्शन किसी भी दृष्टि से राज्य के गौरव की अतिरंजना करने (Glorification of state) तथा उसके शक्ति प्रसार के लिये बचन-बद्ध नहीं है।"

(पृष्ठ २०६ का शेष)

नहीं है। पर छोटे-छोटे गांवों में विद्या कहां चुकती है? ऊपर से डालने से नीचे कुछ नहीं मिलता।

किन्तु सर्वोदय फुहारे-सा स्रोत है। नीचे खूब पानी रहेगा और फिर नीचे से ऊपर थोड़ा-थोड़ा उड़ेगा। उससे ऊपर कम उड़ेगा। इस तरह ऊपर कम-कम होता जायगा। यह बहुत बड़ा फरक है।

योजना प्रथम दीन, दरिद्र, दुखी लोगों के लिए ही होनी चाहिए। बाद में ऊपर वालों की योजना हो। यही सर्वोदय है। वे भी चाहते हैं कि सबको मिले और हम भी चाहते हैं कि सबको मिले। लेकिन वे ऊपर से आरम्भ करते हैं और हम नीचे से। दोनों की अलग-अलग प्रक्रिया है।

पश्चिम रेलवे की आर्थिक गतिविधि

गत कुछ वर्षों की आर्थिक गतिविधियों के तुलनात्मक सख्याओं से ज्ञात होता है कि पश्चिम रेलवे सम्बन्धी प्रवृत्तिया बढती जा रही हैं। उसके व्यय सम्बन्धी आकड़े इस प्रकार हैं—

१९५२ ५३	१०७.४४ करोड रु०
१९५३-५४	१०६,१४ ,,
१९५४ ५५	११३ १३ ,,
१९५५ ५६	१२२ १७ ,,
१९५६ ५७	१३६.२२ ,,

१९५६ ५७ में कुल आमदनी ५५ ७० करोड रु० हुई है।

कुल आमदनी की वृद्धि १९५२-४३ में ४१ ५० करोड रु० की तुलना में १९५६-५७ में ५५ ७० करोड़ रु० तक हुई है। कुल आमदनी में से ४० प्रतिशत आय यात्रियों से हुई है जबकि यात्रियों से प्राप्त आय में से ८० प्रतिशत आय तीसरे दर्जे के यात्रियों से हुई है।

यातायात की घनता

प्रथम पचवर्षीय योजना की सफल पूर्ति तथा द्वितीय योजना के प्रारम्भ के साथ साथ रेल्वे यात्रा मे भी काफी वृद्धि हुई है, जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होगी।

बड़ी लाइन	१९५६ ५७ में
माल गाड़ी (मील-हजारों में) ५६२	६,४२६
पैसेंजर ट्रेन ,,	७,५९३
ट्रेन मील प्रति रूट तथा प्रतिदिन के लिए	२६ . ५
प्रतिदिन माल डब्बे के ट्रेन मील	२०. ४६
छोटी लाइन	
माल गाड़ी (मील-हजारों मे)	६,६०३,
पैसेंजर ट्रेन ,, ,,	७,७४२
ट्रेन मील प्रति रूट तथा प्रति दिन	१०, ९९
प्रतिदिन माल-डब्बे के ट्रेन मील	१०, ९३

यातायात का प्रबन्ध

रेल्वे की तरफ से जो यातायात सम्बन्धी प्रबन्ध हुआ है, वह निम्न प्रकार है।

	१९५२ ५३,	१९५३ ५४,	१९५४ ५५,	१९५५-५६,	१९५६-५७,
यात्रियों की सख्या (हजारों में)	२,५७ ८७८,	२,५६,३२७,	२,८७,००१,	३,०५,०८३,	३,१७,८५१,
पैसेन्जर मील	६,०३३,२६५,	६,०४७,२०४,	६,४०३,५६८,	६,६९६,७०९,	७,२८८,००६;
माल की रवानगी (टनों में)	१३,२३३,	१४,२१२,	१५,३०१,	१७,६४१,	१९,२३८,
ट्रेन मील	३,४२९,८५३,	३,६४४,३०७,	३ ८९८,५४२,	४,६५८,०८८,	५,१५५,०८८,

१९५६-की दुनिया

सयुक्त राष्ट्रसघ की ओर से १९५७ की आकड़ा सबधी 'इयरबुक' प्रकाशित की गई है। उसमे बताया गया है कि १९५६ में विश्व की औद्योगिक गतिविधियों और अतरराष्ट्रीय व्यापार के युद्धोत्तरकाल के पिछले सभी रेकार्ड टूट गये हैं।

इस पुस्तक में बताया गया है १९५६ में विश्वभर की खानो और कारखानों ने १९३८ की अपेक्षा २॥ गुना उत्पादन किया। उसी वर्ष (१९५६) मे जहाजों ने १९३८ की अपेक्षा दूना माल ढोया, विमानों ने ८

गुनी दूरी तक की उड़ानें भरीं और निर्यात ८० प्रतिशत अधिक रहा।

उसमें बताया गया है कि १६४० से १६५६ के बीच विश्व की आबादी में २० प्रतिशत वृद्धि हुई है।

१६५६ के मध्य में दुनिया की कुल आबादी २ अरब ७३ करोड़ ७० लाख होने का अनुमान था जबकि १६५० में दुनिया की आबादी २ अरब ४६ करोड़ ५० लाख, १६४० में २ अरब २४ करोड़ ६० लाख और १६२० में १ अरब ८१ करोड़ थी।

एशिया की आबादी (रूस को छोड़कर) इस समय दुनिया में सबसे अधिक दुनिया की कुल आबादी के आधे से भी अधिक है।

यूरोप (रूस को छोड़कर) दुनिया में सबसे घनी आबादी वाला देश है। १६५० से ५६ के बीच दुनिया की आबादी प्रतिवर्ष १.६ प्रतिशत की गति से बढ़ी है। कुछ देशों, खास तौर से पूर्वी जर्मनी और आयरलैंड में, आबादी घटी है।

विश्व उत्पादन (रूस, पूर्वी यूरोप और चीन को छोड़ कर) सम्बन्धी आंकड़ों में बताया गया है कि १६५६ में उत्पादन उसके पिछले वर्ष की अपेक्षा ४॥ प्रतिशत, १६५० की अपेक्षा ४० प्रतिशत और १६३८ की अपेक्षा १२७ प्रतिशत अधिक था।

रूस और पूर्वी यूरोप के देशों के लिए वहां की सरकारों द्वारा प्रकाशित आंकड़ों में बताया गया है कि रूस, पोलैंड, बलगेरिया, चेकोस्लोवाकिया, रूमानिया और हंगरी में उत्पादन निरन्तर बढ़ रहा है।

उत्तरप्रदेश में खनिज

ज्ञात हुआ है कि उत्तर प्रदेश में हाल में हुए भूगर्भ सर्वेक्षण से कोयला, जिप्सम, चूने का पत्थर, खड़िया मिट्टी, ऐसबेस्टस, सीसा, मेग्नेसाइट, गन्धक और कुछ अन्य खनिज पदार्थों के सम्बन्ध में ऐसे संकेत मिले हैं, जिनका समुचित लाभ उठाने से करोड़ों रुपये का लाभ हो सकता है और सदा से अभावग्रस्त पहाड़ी तथा पूर्वी जिलों का तो भाग्योदय हो जायगा।

लोहा-तांबा

मात्रा तो अधिक नहीं होगी, पर बहुत अच्छी किस्म का कुछ लोहा भी मिला है जिसके बने औजार—छुरी, कैंची इत्यादि जर्मन माल से मुकाबला कर सकेंगे। यह लोहा पर्वतीय अंचल में चट्टानों के साथ मिला है। मिरजापुर से मिली हुई विजवार पहाड़ी पर जो लोहा पाया गया है उसकी भी किस्म 'उत्तम' बतायी जाती है।

इसी प्रकार अच्छी किस्म का तांबा अलमोड़ा जिले के कुछ भागों में मिला है। खान की खोदाई का काम सम्भवतः शीघ्र हाथ में लिया जायगा।

मिरजापुर में कोयला खान

राज्य के दक्षिण पूर्वी भाग मिरजापुर जिले में कुछ समय पूर्व जब कोयले की खान का पता चला था तो अन्दाज था कि इसकी मात्रा करीब २० लाख टन होगी। बाद में कुछ और परीक्षण से प्रकट हो रहा है कि यह मात्रा इससे अधिक हो सकती है। यह खान सिंगरौली कोयला क्षेत्र से मिली हुई है और ऐसा समझा जाता है कि मिरजापुर जिले से विन्ध्य प्रदेश के अन्दर तक गयी है। परन्तु झरिया, आसनसोल इत्यादि कोयला क्षेत्रों के मुकाबले मिरजापुर का क्षेत्र बहुत मामूली समझा जाता है, फलस्वरूप उत्तर की समृद्धि की दृष्टि से इसका जो भी महत्व हो, देशव्यापी दृष्टि से इस हलके का हक पीछे पड़ जाता है।

चूने का पत्थर

चूने का पत्थर इतनी अधिक मात्रा में मिला है कि मीरजापुर की सरकारी चुर्क सीमेंट फैक्ट्री के अलावा ३ छोटी-छोटी सीमेंट फैक्ट्रियां और खोली जा सकती हैं।

मीरजापुर में रोहतास का पत्थर चुर्क फैक्ट्री में काम आता है। इसका एक नाला मकरीबरी और रुदौली में है जिसकी मोटाई २५ से १०० फुट तक है। दूसरा पटौध पहाड़ पर बताया जाता है, जो उत्तम कोटिका है और जिसकी मोटाई १५० फुट तक होगी। कधौरा और महौना के बीच १७ मील चूने से पत्थर का क्षेत्र है, जिसकी मोटाई १०० फुट होगी। महोबा और बसहारी में बीच के ११ मील के इलाके में १२५ फुट मोटाई का सीमेंट बनाने योग्य

[सम्पदा

पत्थर मिला है। कजराइट पहाड़ के निकट कोटा में अब तक की जानकारी के अनुसार इतना पत्थर बताया जाता है कि २५० टन नित्य पैदा करने वाली फैक्टरी १०० साल तक बेखटके चल सकती है।

मैगनेसाइट, ग्रेफाइट, सल्फर, खड़िया मिट्टी, रेह, जिप्सम, एसबेस्टस, सैंड-स्टोन, सीसा आदि देहरादून, अलमोड़ा, मीरजापुर, बांदा, गाजीपुर, गढ़वाल, नैनीताल आदि स्थानों में मिलने का संकेत मिला है।

चीनी की मात्रा बढ़ाने का नया तरीका

कानपुर की राष्ट्रीय चीनी गवेषणाशाला ने कुछ समय पूर्व गन्ने का रस साफ करने का नया तरीका निकाला है। इससे अधिक और अच्छी चीनी बनेगी। राष्ट्रीय गवेषणा विकास निगम के अन्तर्गत, एक साल से अधिक इस विषय में खोज होती रही, जिससे पता चला कि नये तरीके से पुराने तरीके के मुकाबिले ५ से १० प्रतिशत तक अधिक चीनी तैयार हो सकती है।

प्रचलित तरीके से गन्ने के रस से जो चीनी बनती है, वह गन्ने के तोल का दसवां भाग होती है। इस तरीके से कुछ चीनी खांड बन जाती है। इसलिए ऐसा तरीका निकालने का प्रयत्न किया गया, जिससे खांड न बनकर अधिक से अधिक चीनी ही तैयार हो सके।

कुछ ऐसे कृत्रिम गोंद (रेजिन) बनाये गये हैं, जो गन्ने का रस साफ करने और उसमें से शर्करा तत्त्व को अलग करने में बहुत उपयोगी हैं। इस गोंद को तैयार करने के लिए प्रायोगिक कारखाने का डिजाइन तैयार किया जा चुका है। यह कारखाना परीक्षा के तौर पर गवेषणाशाला में खोला जायगा। इसके बाद देश में चीनी के कारखानों के लिए यथेष्ठ मात्रा में उक्त गोंद को तैयार करने का काम उठाया जाएगा।

देश में २० लाख टन चीनी और ७ लाख टन खांड बनती है। यदि यह नया तरीका सफल हुआ तो उतने ही गन्ने से १ लाख ४० हजार टन और चीनी तैयार होने लगेगी।

राष्ट्रीय आमदनी में वृद्धि

भारत की राष्ट्रीय आमदनी वर्तमान भावों के अनुसार १९५६-५७ में ११,४१० करोड़ रु० तथा १९५५-५६ में ६,९६० करोड़ रु० थी। ये दोनों सख्याएं १९५४-५५ की तुलना में १,८०० तथा ३८० करोड़ रु० अधिक हैं।

वर्तमान भावों के अनुसार प्रति व्यक्ति आमदनी क्रमशः १९५५-५६ में २६०.८ तथा १९५६-५७ में २९४.३ रु० रही, जबकि १९५४-५५ में २५४.२ रु० ही आमदनी रही। इस आय वृद्धि का एक मुख्य कारण पदार्थों के मूल्यों में वृद्धि है।

१९५५-५६ के आंकड़े, उस विवरण पूर्ण पद्धति पर आधारित हैं जो कि इससे पहले वर्षों के लिए स्वीकृत थी। ये आंकड़े बताते हैं कि गत वर्ष प्रकाशित आंकड़ों से किस प्रकार इसमें क्रमशः वृद्धि हुई है। १९५६-५७ के के आंकड़े प्राप्त अपूर्ण सामग्री पर आधारित हैं और इनमें परिवर्तन सम्भव हैं।

इन आंकड़ो से ज्ञात होता है कि प्रथम योजना के १९५१-५२ तथा १९५५-५६ की अवधि में १८.४ प्रतिशत राष्ट्रीय आय बढ गई है। द्वितीय योजना के प्रथम वर्ष १९५६-५७ में ५.१ प्रतिशत आमदनी बढी है।

प्रति व्यक्ति आमदनी मे जो वृद्धि हुई है, वह क्रमशः ११.१ तथा ३.८ प्रतिशत है।

१९५५-५६ का वर्ष कृषि उत्पादन में कुछ मन्द रहा। १९५६-५७ में जो राष्ट्रीय आय में वृद्धि हुई, उसमें कृषि तथा अन्य क्षेत्रों से उत्पादन समान रूप से बढ़ा है। १९४८-४९ के भावों के आधार पर जो सुधार हुआ वह कृषि क्षेत्र में २४० करोड रु० तथा अन्य क्षेत्रों में २६० करोड रु० थी। इन आंकड़ो से स्पष्ट है कि हमारा जीवन-स्तर बढ़ रहा है और हम आगे बढ़ रहे हैं। यद्यपि यह इतनी धीमी प्रगति दीखती है कि हम इसे विशेष रूप से अनुभव नहीं कर पाते।

उत्पादकता में वृद्धि

भारत सरकार ने कुछ समय से यह अनुभव किया है कि देश के विविध उद्योगों में जितना उत्पादन होना चाहिये,

इससे स्पष्ट है कि उक्त मामलों में ब्याज की जो दर निर्धारित की गई है, वह २० सितम्बर १९५७ को बैंक की दर से अधिक है। अन्य मामलों में ब्याज की दर नहीं दी गई है, बल्कि केवल इस बात का उल्लेख किया गया है कि कितनी किश्तों में माल का मूल्य चुकाया जाए। इसलिए यह कहना बहुत कठिन है कि ब्रिटेन के बैंकों में ब्याज की दर बढ़ने से उक्त मामलों पर क्या प्रभाव पड़ेगा।

२० मार्च १९५८ से बैंक आफ इङ्गलैण्ड ने ब्याज की दर घटाकर ६ प्रतिशत कर दी है।

आयात-निर्यात बैंक से एशिया को १ अरब डालर का ऋण

अमेरिकी आयात-निर्यात बैंक के अध्यक्ष सैम्युअल सी० वौ का कथन है कि अधिकृत ऋणों के रूप में बैंक की १ अरब डालर की राशि एशिया के देशों में लगी हुई है।

आपने प्रतिनिधि सभा की बैंकिंग और मुद्रा समिति से मांग की है कि बैंक का ऋण देने अधिकार २ अरब डालर तक बढ़ा दिया जाए। यह राशि वर्तमान नीतियों और क्रियाकलापों को ध्यान में रखते हुए उनको चालू रखने की दृष्टि से आवश्यक है। प्रस्तावित वृद्धि के बाद बैंक को ७ अरब डालर तक ऋण देने का अधिकार प्राप्त हो जाएगा।

१९५७ में

जीवन बीमा निगम की प्रगति

१९५७ जीवन बीमा निगम के लिए महत्वपूर्ण वर्ष सिद्ध हुआ है। अभी अन्तिम आंकड़े उपलब्ध न होने पर भी अब तक प्राप्त अंकों से ज्ञात होता है कि १९५७ में जीवन बीमा निगम का २५६ करोड़ रु० का कारोबार पूरा हुआ है।

गत वर्ष के मध्य जीवन बीमा निगम के अध्यक्ष ने संकेत किया था कि १९५७ में निगम का पूरा कारोबार २५० करोड़ रु० तक पहुँच जायगा, जबकि १९५४ में २३६ करोड़ तथा १९५५ में १३८ करोड़ रु० तक ही हुआ था। यह भी जानने योग्य है कि १९५६ में राष्ट्रीयकरण के प्रथम वर्ष में, कारोबार केवल १८ [illegible] का था।

जीवन बीमा निगम के केन्द्रीय कार्यालय [illegible] विवरण के अनुसार अब तक संग्रहीत आंक[illegible] होता है कि निगम अपने लक्ष्य से आगे [illegible] तथा १९५७ का कारोबार २५९ करोड़ रु० [illegible] करोड़ रु० का कारोबार और भी हुआ है, [illegible] लिख पढ़ की कार्रवाई पूरी होने में अभी कुछ [illegible] बीमे के प्रस्ताव ३२० करोड़ रु० से भी ज्यादा हु[illegible]

१९५७ का अन्तिम पूर्ण विवरण [illegible] शाखाओं से प्राप्त विशेष विवरणों के बाद [illegible] २५६ करोड़ रु० सिर्फ भारत में हुए कारोबार [illegible] करते हैं। विदेशी कारोबार का विवरण [illegible] किया जायगा।

एक और ज्ञातव्य बात यह है कि [illegible] प्रकाशित विवरण के अनुसार ३० जून [illegible] कुल ब्योरा ७५ करोड़ रु० था, और आगे [illegible] में ७३ करोड़ रु० का अतिरिक्त कारोबार हुआ। नवम्बर तथा दिसम्बर में आय अधिक हुई और [illegible] में ११७ करोड़ से भी अधिक कारोबार हुआ [illegible] साप्ताहिक विवरणों से भी यह पता लगता है कि [illegible] तथा नवम्बर की अवधि में औसत कारोबार [illegible] से भी अधिक था। दिसम्बर के चारों हफ्तों [illegible] कारोबार बढ़ता गया, जिसका विवरण निम्न प्रकार [illegible]

९ दिसम्बर तक समाप्त सप्ताह में					
			द्वितीय	,, ,,	[illegible]
१६	,,	,,	तृतीय	,, ,,	[illegible]
२३	,,	,,	चतुर्थ	,, ,,	[illegible]
३१	,,	,,			

निगम के निवेदन के अनुसार [illegible] जीवन पालिसी से सम्बन्ध रखते हैं। [illegible] कारोबार का विवरण इन आंकड़ों [illegible]

राष्ट्र की दिन प्रतिदिन बढती हुई आवश्यकताओ को पूरा करने के लिए द्वितीय पचवर्षीय आयोजना के अन्तर्गत कम से कम १५५ लाख टन अधिक अन्न उपजाना आवश्यक है ।

गहन कृषि, अधिक खाद और उर्वरको, खेती के अच्छे तरीको, सुधरे बीजो और सिचाई के श्रेष्ठतर साधनो द्वारा यह लक्ष्य पूरा किया जा सकता है ।

आयोजना

सफल बनाइये

प्रगति और समृद्धि के लिए
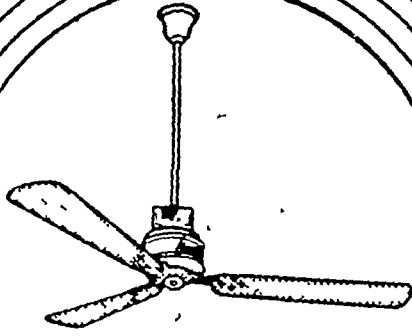
DA 57/197

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा
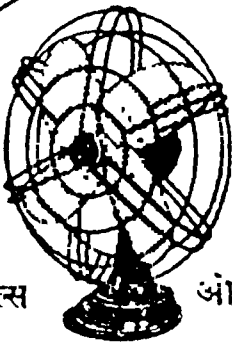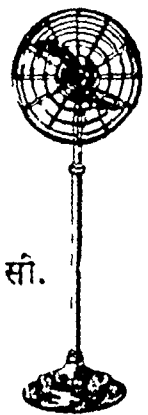
मई, १९५८
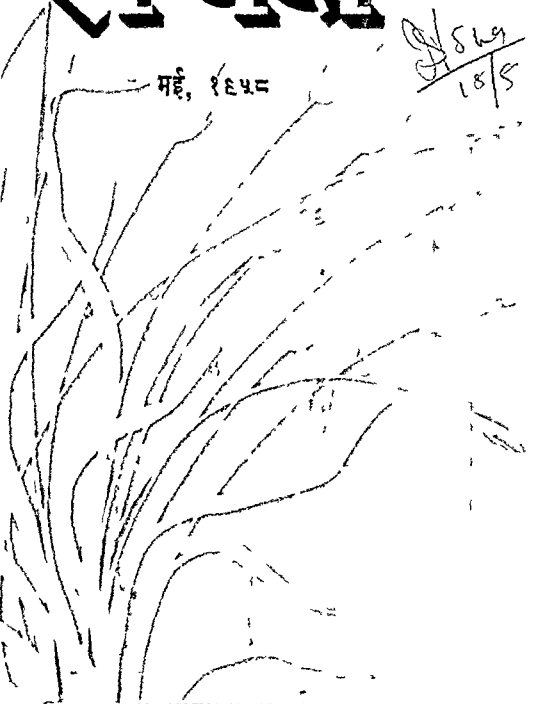
ा प्रकाशन मन्दिर रोशनारा रोड दिल्ली

प्रथम विजय

अपने बच्चे की प्रथम विजय पर पिता का हृदय आनन्द तथा गर्व से खिल उठता है—क्यों कि उसने अपने होनहार बच्चे को हमेशा उत्साहित करके, उसकी सफलता में अपना योग दिया है।

क्या आप उसकी प्रगति और उन्नति के लिये उसे हमेशा सहारा दे सकेंगे? आप अपनी ये ज़िम्मेदारियाँ लाइफ इन्श्योरन्स को सौंप दें। लाइफ इन्श्योरन्स की कई ऐसी पॉलिसियाँ भी हैं, जो कि आप की आवश्यकता के अनुकूल हैं।

एक प्रकार से होल लाइफ़ (संपूर्ण जीवन) पॉलिसी ही लीजिये। यह पॉलिसी, जीवन बीमा का सब से आसान और कमखर्चीला रूप है। उदाहरण के तौर पर, यदि आप की आयु आज २८ वर्ष की है तो १६ रु. माहवार प्रीमियम के हिसाब से आप का बीमा १०,००० रु. का हो सकता है। बीमा की पूरी रक़म मृत्यु के बाद ही परिवार को दी जाती है।

आप ५ रु. या ५० रु. माहवार, जो भी खर्च कर सकें, उसे होल लाइफ़ (संपूर्ण जीवन) पॉलिसी में ही खर्च कीजिये। यह कम से कम खर्च में आप के प्रिय-जनों की सुरक्षा है।

योगक्षेमं वहाम्यहम्
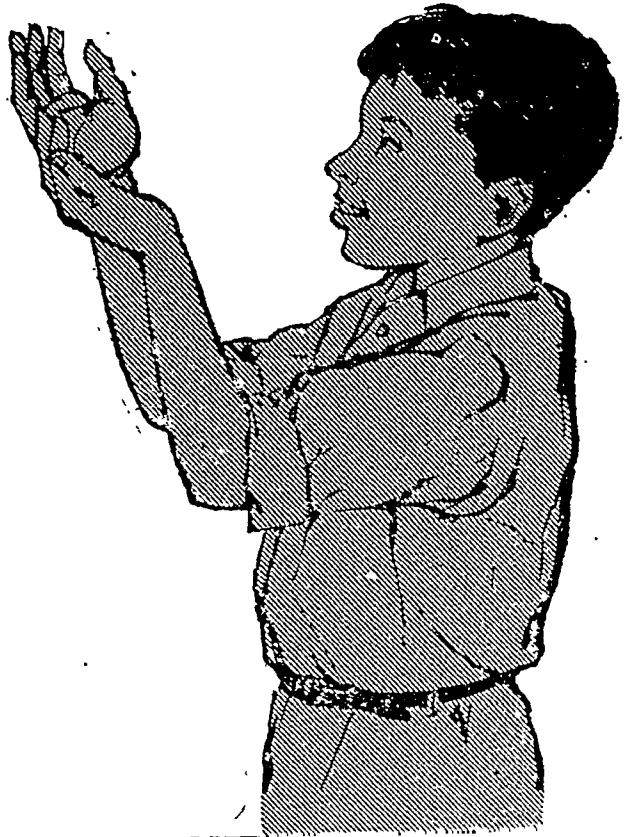
लाइफ़ इन्श्योरन्स कॉर्पोरेशन ऑफ़ इन्डिया

सेन्ट्रल ऑफिस: "जीवन केन्द्र", जमशेदजी टाटा रोड, बम्बई–१

विषय-सूची

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक

२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, २री मंजिल, टुलक रोड, बम्बई--१

वर्ष : ७] मई, १९५८ [अङ्क : ५

योजना क्या है ?

योजना क्या चीज है ? एक छोटी सी किताब, जिसमें बहुत सी बातें लिखी हैं । इससे मालूम होता है कि देश में कितने-कितने तरह के काम हैं, जो हमें करने हैं । परन्तु इस योजना के पीछे क्या है ? आपको नजर आवेंगे ३७-३८ करोड़ गरीब पुरुष व बच्चे और योजना का उद्देश्य है आगे बढ़ना ।

आप किधर जा रहे हैं ? क्या क्या बोझ उठाने होंगे । तो एक तस्वीर सामने आएगी—वह तस्वीर है करोड़ों लोगों की यात्रा की—मुश्किल सफर है । इस सफर में एक दो, तीन, चार नहीं, केवल इन्हीं के पहुँचने का सवाल नहा है । करोड़ों को साथ जाना है । हम सब हम सफर हैं । यात्रा करनी है । उसमें सभी प्रकार के लोग हैं—लगड़े, लूले, कमजोर, मजबूत—सबको साथ ले जाना है । इसी दृष्टि से हम देखें ।"

हमें देश की दरिद्रता को दूर करना है । हमें अपने देश को उठाना है । काम से उठेगा । देश गरीब है । धन दौलत, सोना चादी—रुपया पैसा नहीं होता, साहूकारा नहीं होता । आज धन दौलत है—मेहनत । किसान जमीन से पैदा करता है, वह धन है । घर के धधे (घरेलू उद्योग) से माल बनाओ, वह धन है, कारीगरी से कमाओ ।

"योजना का पहला अर्थ है—जमीन से पैदा हो । गल्ला, चावल, गन्दम की पैदावार बढ़े । नये कारखाने खुलें । सवाल है—कैसे करें और वह धन जो पैदा हो, वह कहां जाए ? हमने भारत में कुछ किया है । जमींदारों को हटाया है और दूसरे उपाय भी निकाले जा रहे हैं, और जो धन पैदा हो वह कुछ जेबों में न जाए, वह फैले । जो पैदा हो, जनता में उसका ठीक बटवारा हो । यही योजना का सारांश है ।

उत्तर प्रदेश में, बिहार में विशेषकर जो प्रति एकड़ पैदावार है, उससे तिगुनी मद्रास में होती है । बिहार में इतने मजबूत तगड़े व्यक्ति हैं—इस ढग से कार्य करते हैं कि बस बस कहना पड़ता है । आस्मान की ओर देखते हैं । सोचते हैं क़िस्मत में ऐसा ही लिखा होता है । पर हमें क़िस्मत को काबू में लाकर, गर्दन मोड़कर अपनी तरफ लाना है । यह समझिए कि पचवर्षीय योजना में परिश्रम जितना हम करेंगे, उतना फल पाएंगे । देश में गरीबी है बेरोजगारी है । पर नई जड़ डाली जा रही है देहातों में शहरों में—बड़े-बड़े लोहे व बिजली की ताकत आ रही है । लोहे व बिजली दोनों की ताकत से, दोनों के मेल पर देश की प्रगति निर्भर है ।

जवाहरलाल नेहरू

सहकारिता आन्दोलन की नई दिशा

किसी भी देश के लिए गर्व और सन्तोष की बात यह है कि वह अपने अनुभवों से लाभ उठावे और अपनी भूलों को स्वीकार कर अपनी नीति में यथोचित परिवर्तन करे। इस दृष्टि से हम भारत सरकार की नीति का स्वागत करते हैं। देश के स्वाधीन होने पर भारतीयों के हाथ में शासन आते ही यह संभव नहीं था कि वह अपनी नीति निर्धारण करते समय अपने प्राचीन अनुभवों से लाभ उठाये। अनुभवों के नाम पर उसके पास कुछ नहीं था। उसके पास था अपने राष्ट्र को उन्नत करने के लिए महत्त्वाकांक्षापूर्ण उत्साह, आदर्श या कुछ नारे। विदेशी शासन की कुछ दूषित परम्पराएं उसको विरासत में मिली थीं। विदेशों ने जो परीक्षण किये, उनका भी अध्ययन भारतीय नेताओं ने किया और इस सब मिली-जुली अपूर्ण सामग्री के आधार पर उन्होंने अपनी आर्थिक नीतियों का निर्माण किया। कुछ वर्षों के अनुभव के बाद उन्होंने अपने कार्यक्रम तथा नीति में परिवर्तन प्रारम्भ किया है। प्रारम्भ में उन्होंने जिन आलोचनाओं को अनसुना कर दिया था, उन्हें अब उनकी भी सचाई कहीं कहीं अनुभव हो रही है और वे स्पष्ट या अस्पष्ट रूप से अपनी भूलों को स्वीकार कर रहे हैं। उन्नति और जीवन का यह मूल मंत्र है कि पूर्वाग्रह को छोड़कर अनुभवों से लाभ उठाया जाय। इसका एक उदाहरण देश का सहकारी आन्दोलन है।

राष्ट्र की विकासशील योजनाओं को अधिक तीव्रता के साथ पूर्ण करने तथा समाजवादी समाज के लक्ष्य को प्राप्त करने की अभिलाषा और साम्यवादी आतंकपूर्ण शासन से बचने की सतर्कता ने देश में सहकारी आन्दोलन को बहुत तेजी के साथ चलाने के लिए प्रेरित किया। हमने यह समझ लिया कि पूंजीवाद और साम्यवाद के बीच का मार्ग सहकारिता पद्धति है। इसलिए पिछले कुछ वर्षों में सहकारिता आन्दोलन बढ़ाने और सहकारी समितियों की स्थापना में हम लग गये। इसके लिए सरकार ने अधिकारियों के नियंत्रण में सहकारी समितियों की देश में बाढ़ ला दी। किन्तु इस उत्साह में हम मूलभूत उद्देश्य को भूल गये। समाजवादी समाज की स्थापना के नारे ने राष्ट्रीयकरण या नियंत्रण के रूप में अधिकारियों को देश की आर्थिक प्रगति में अधिकाधिक सरकारी हस्तक्षेप के लिए प्रेरित किया है। पिछले दिनों द्वितीय भारतीय सहकारिता कांग्रेस में इस कमी को बहुत तीव्रता के साथ अनुभव किया गया। राष्ट्र की प्रत्येक आर्थिक प्रवृत्ति के राष्ट्रीयकरण या सरकारी नियंत्रण ने जनता में आत्म विश्वास और आत्म निर्भरता की भावना नष्ट कर दी है। पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपने भाषण में इस कमी को स्वीकार करते हुए कहा है कि "सरकारी नियंत्रण की नीति स्वीकार करने के लिए मैं भी उतना ही उत्तरदायी हूँ, जितना अन्य कोई व्यक्ति। किन्तु इस सम्बन्ध में जैसे-जैसे सोचता हूं वैसे-वैसे यह अनुभव करता हूं कि ग्रामीण ऋण जांच समितिका रुख बहुत ही ठोस न था, क्योंकि इसमें साधारण जनता और उसकी योग्यता में अविश्वास करने की प्रवृत्ति है। यह प्रवृत्ति बहुत ही खराब है और हमें इससे यथाशीघ्र छुटकारा पाने का यत्न करना चाहिये।

"वह नीति अच्छी नहीं जिससे बराबर कदम-कदम पर जनता को सरकारी सहायता से ही आगे बढ़ने का प्रोत्साहन मिले, क्योंकि भारत में सबसे बड़ी चीज हम यही चाहते हैं कि जनता में आत्मनिर्भरता तथा आत्म विश्वास की भावना घर करे। सहायता करना सरकार का कर्तव्य है परन्तु सहायता करना एक बात है और कदम-कदम पर सहायता लेना दूसरी बात है।"

भारत में सहकारिता आन्दोलन का विकास जनता की आकांक्षा या आवश्यक अनुभूति के आधार पर नहीं हुआ। जन सामान्य की अपेक्षा नेताओं और सरकारी अधिकारियों ने सरकारी स्तर पर अपनी साधन सम्पन्नता के सहारे देश भर में इसे फैलाने का प्रयत्न किया। इसका परिणाम यह हुआ कि जनता में स्वावलम्बन और आत्म विश्वास की भावना का विकास नहीं हुआ। तरह तरह की सुविधाएं देकर सरकार ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाने का यत्न अवश्य किया, किन्तु वास्तविक सहकारिता-आन्दोलन जन सामान्य में जड़ नहीं जमा सका। सरकारी सहायता और

नियन्त्रण ने सारे आन्दोलन की दिशा ही बदल दी। उक्त सम्मेलन के अध्यक्ष श्री केशवदेव मालवीय ने ठीक ही कहा है कि सहकारिता आन्दोलन उस समय सहकारी आदोलन नहीं रहेगा, जबकि उसे सरकारी अधिकारी ही चलाने लग जायेंगे। सहकारिता आन्दोलन की सबसे बड़ी विशेपता उसका प्रजातन्त्रवादी और आत्मनिर्भरता का स्वरूप है। वह वस्तुत जनता का आन्दोलन है।" भारी राशि में दी गयी सरकारी सहायता और इसके फलस्वरूप अधिकारियों के अत्यन्त हस्तक्षेप के कारण सहकारिता आन्दोलन कुछ पथ भ्रष्ट हो गया है। "सहकारिता का विकास ग्रामीणों की स्वेच्छा और स्वप्रयास से होना चाहिये, वह उन पर लादा नहीं जा सकता। सरकार मदद कर सकती है किन्तु मदद देना और बात है और "बौस बन जाना अलग। सरकार द्वारा सचालित सहकारी समितियो में छोटा कर्मचारी भी बड़े से बड़ा "बौस" बन जाता है।' प० नेहरू के इन शब्दो में सरकार की जिस भूल की ओर सकेत किया गया है, सहकारिता सम्मेलन ने अपने प्रस्तावो में इसी को दूर दूर करने की माग की है। और लाभाश, मताधिकार अथवा घाटे या घिसाई के हिस्से से कोई सुविधा का बन्धन न रखने, प्रबन्धक मण्डल में तीन से अधिक सरकारी सदस्य न रखने, सहकारी बैंकों और अन्य सहकारी सस्थाओं को अपना गैर सरकारी अध्यक्ष चुन लेने आदि की मागें इसी दिशा में की गयी हैं।

आज से ६ वर्ष पूर्व ग्रामीण ऋण जाच समिति ने यह अनुभव किया था कि ग्रामीण किसानों की अवस्था तब तक नहीं सुधर सकती जब तक कि सरकार उनकी सहायता के लिए न आये। कमेटी की जाच के अनुसार किसानों की ऋण सम्बन्धी केवल ३०.१ प्र० श० आवश्य कता ही सहकारी समितिया पूर्ण करती थीं। शेष ६९.९ प्र० श० आवश्यकता जमीदार और महाजन पूरी करते थे। इसलिए उक्त समिति ने यह सिफारिश की थी कि रिजर्व बैंक सहकारी बैंको की स्थापना करें और इसके लिए अधि कतम सहायता करें। इम्पीरियल बैंक को स्टेट बैंक बनाते समय यह आवश्यकता विशेप रूप से ध्यान में रखी गयी थी। सरकारी सहायता के साथ साथ उक्त समिति ने सर-कारी हस्तक्षेप की आवश्यकता पर जोर दिया था। इस सरकारी नीति का परिणाम यह हुआ कि सहकारी समितियों के लिए ऋण की राशि दूसरी पचवर्षीय योजना में ४३ करोड़ रुपये से बढ़ाकर २२५ करोड़ रुपये की नियत कर दी गयी। यह सहायता २२०० समितियो को दी जानी थी, जिनमें १६० कपास ओटने और चीनी बनाने के कार-खाने शामिल थे। ४५०० गोदाम तथा ३५० बड़े गोदाम (वेयर हाउस) स्थापित करने और समितियों के सदस्यों की सख्या ५० लाख से डेढ़ करोड़ तक बढ़ाने के लक्ष्य भी नियत किये गये थे। किन्तु इतनी तेजी के साथ चलते हुए हम यह भूल गये कि सहकारिता आन्दोलन का मूल उद्देश्य जनता में स्वावलम्बन और आत्म विश्वास की भावना उत्पन्न करना है। आर्थिक प्रवृत्तियों पर सरकारी नियन्त्रण और हस्तक्षेप की वृद्धि उसी मूल उद्देश्य को नष्ट कर देगी। श्री मालकम डार्लिंग ने इस सम्बन्ध में कुछ सूचनाएं दी थीं, जिनकी चर्चा हम अपने मार्च के अक में कर चुके हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि सरकार ने पिछले कुछ वर्षो के अनुभव से अपनी नीति में कुछ सशोधन करने की बात स्वीकार कर ली है। हमें आशा करनी चाहिये कि अन्य आर्थिक नीतियों के सम्बन्ध मे भी सरकार अपने अनुभवों से पूर्ण लाभ उठायेगी और यथो-चित परिवर्तन करने में सकोच नहीं करेगी।

नासिक प्रेस से

भारत के नये वित्तमन्त्री श्री मुरारजी देसाई ने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घोपणा करके देश को चकित कर दिया है। पचवर्षीय योजना में यह विचार प्रकट किया गया था कि १२०० करोड़ रु० के नोटों का सहारा लिया जायगा। किन्तु पिछले वित्तमन्त्री ने यह घोपणा की थी कि हम ६०० करोड़ रु० से अधिक कागजी मुद्रा नासिक के प्रेस से नहीं लेंगे। किन्तु अब श्री देसाई ने घोपणा की है कि ६०० करोड़ रु० की सीमा हम नहीं स्वीकार करेंगे और १२०० करोड़ रु० तक की मुद्रा घाटे की अर्थ व्यवस्था से प्राप्त करेंगे।

भारत सरकार ने योजना के प्रथम दो वर्षो में ७०२ करोड़ रु० की मुद्रा नासिक के प्रेस से प्राप्त की है। इसका परिणाम देश में निरन्तर महगाई के रूप मे हुआ है। १९५५-

४६ में जो मूल्य ९२.५ थे, वे मार्च १९४८ में १०८.४ हो गये। अर्थात् १७ प्रतिशत मूल्य बढ़ गया। नीचे की मूल्य तालिका से मूल्य वृद्धि किस तरह हुई, यह मालूम हो जायगा।

आधार १९५२-५३ = १००

	१९५५-५६	१९५६-५७	१९५७-५८
सामान्य अंक	९२.५	१०५.३	१०८.४
खाद्य पदार्थ	८६.६	१०२.३	१०६.४
शराब और तम्बाकू	८१.०	८४.३	९४.०
ईंधन, शक्ति, प्रकाश और तेल	९५.२	१०४.६	११३.६
औद्योगिक कच्चा माल	९९.०	११६.०	११६.५
कारखानों में तैयार माल	९९.७	१०६.३	१०८.१

एक ओर भारत सरकार अधिकतम कर लगाकर मुद्रा प्रसार को रोकना चाहती है, दूसरी ओर स्वयं भारी संख्या में नोट निकाल कर महंगाई को बढ़ाना चाहती है। इन दोनों में कैसे संगति बैठेगी? हमारी नम्र सम्मति में योजना के कुछ लक्ष्यों को स्थगित कर देना अधिक अच्छा होगा, बजाय नासिक प्रेस के निर्मर्यादित प्रयोग के। स्वयं सरकार योजना के वर्तमान स्वरूप को कम करने पर विचार कर रही है। इसीके साथ योजना के व्यय पर भी विचार कर लेना चाहिए।

फिर से विदेशी जहाज कम्पनियां

यह आश्चर्य की बात है कि भारत सरकार ने अपनी योजना के आठवें वर्ष में फिर से "इण्डिया लिमिटेड" की उसी दूषित व्यवस्था को जिसका हमने ब्रिटिश शासन काल में भी सफलता के साथ विरोध किया था, लागू करने का निश्चय किया है। जहाजी उद्योग-सम्बन्धी विधेयक में 'इण्डियन लिमिटेड' की जो नई परिभाषा की गई है, उससे विदेशियों को भारतीय अर्थ व्यवस्था पर अधिकार ही नहीं प्राप्त होगा, बल्कि भारतीय नौका निर्माण की नीति में उनका प्रभाव भी जम जायगा।

वर्तमान जहाज उद्योग की नीति की घोषणा जुलाई १९४७ में हुई थी। उस नीति के अनुसार "भारतीय जहाज उद्योग का अर्थ है:—जहाज रानी के मालिक भारतीय होंगे तथा अधिकार और संचलन भी भारतीयों द्वारा होगा। "भारतीय जहाज रानी कम्पनी" कहलाने के लिए जो शर्तें हैं, वे इस प्रकार हैं :

(१) कम्पनी के जहाजों की रजिस्ट्री भारतीय बन्दरगाहों पर होनी चाहिए।

(२) कम से कम ७५ प्रतिशत शेयर भारतीयों के अधिकार में रहने चाहिए।

(३) सभी डायरेक्टर भारतीय ही हों।

(४) मैनेजिंग एजेन्ट भी भारतीय ही हों।

गत दस वर्ष की अवधि में भारतीय जहाज उद्योग ने उपर्युक्त नीति से प्रशंसनीय उन्नति की है। आज कोई भी व्यक्ति जो भारतीय नहीं है, भारतीय जहाज के तौर पर जहाज को रजिस्ट्री नहीं करा सकता, परन्तु नये बिल की भारतीय जहाज की नई परिभाषा के अनुसार, कोई भी विदेशी किसी भी जहाज की रजिस्ट्री भारतीय जहाज के नाम से करा सकता है।

नये कानून की १२ वीं धारा में भारतीय जहाज होने के लिए ३२ प्रतिशत भारतीय शेयर या इण्डियन कम्पनी एक्ट के मातहत भारत में रजिस्टर्ड कम्पनी का मालिक होना आवश्यक है। इसके अनुसार ४८ प्रतिशत विदेशी विदेशी शेयर वाला जहाज अथवा शत प्रतिशत विदेशी पूंजी से भारत में रजिस्टर्ड कम्पनी का जहाज भारतीय जहाज कहलायगा, भले ही उसका प्रबन्ध व नियंत्रण विदेशियों के हाथ में हों। आजकल की परिपाटी के अनुसार भारत सरकार भारतीय जहाजों को विदेशी जहाजों की अपेक्षा अधिक सुविधा देती है। किन्तु इस नयी प्रस्तावित १२ वीं धारा के पास होने के बाद भारतीय जहाजों को विशेष सुविधा मिलनी बन्द हो जायगी। भारतीय जहाज मालिक संघ की अध्यक्षा श्रीमती सुमति मुरारजी ने ठीक ही पूछा है कि क्या इस तरह हम भारतीय जहाज उद्योग के हितों का बलिदान करने तो नहीं जा रहे हैं, जबकि विदेशी जहाज भी भारतीय जहाज के नाम से पर्याप्त सुविधाएं उठाएंगे। क्या जहाजों के तेजी से निर्माण के लिए विश्व बैंक से ३८ करोड़ रु० ऋण लेकर हम भारतीय उद्योग को खतरे में जाने से बचा नहीं सकते?

एक बार विदेशी जहाजी कम्पनियों के बन जाने के बाद

यह बहुत स्वाभाविक है कि वे देश की जहाजी नीति पर प्रभाव डालेंगे और स्वभावतः उनका हित भारत की अपेक्षा अपने २ देशों के साथ होगा। इसलिए भारत सरकार को प्रस्तावित बिल में उचित परिवर्तन कर लेना चाहिए।

भारतीय जहाज निर्माण अभी तक ६ लाख टन के लक्ष्य तक भी नहीं पहुँचा है। भारतीय समुन्द्री व्यापार में से छः प्रतिशत से अधिक व्यापार इससे नहीं हो रहा है। इस उद्योग में अभी काफी उन्नति की आवश्यकता है। उधर सरकार ने विदेशी कम्पनियों के लिए अपने दरवाजे खोल दिये हैं। अधिक समृद्धिशाली अमेरिका तथा नार्वे जैसे देशों ने भी शत प्रतिशत अधिकार तथा सचालन विदेशियों पर नहीं छोड़ा है। भारत ही एक ऐसा देश है, जो विदेशियों के साथ भारतीय जैसा बर्ताव करने जा रहा है।

चाय का संकट

भारतवर्ष की राष्ट्रीय आय का एक बहुत बड़ा स्रोत चाय है। विदेशी मुद्रा के उपार्जन में इसका प्रमुख स्थान है। किन्तु अन्य कठिनाइयों के साथ साथ चाय के निर्यात व्यापार में भी कमी शुरू हो गई है १९५६ में ५३२६ लाख पौंड चाय का निर्यात हुआ था। किन्तु १९५७ में यह घटकर ४४७० लाख रह गया। इंगलैंड हमारी चाय का सबसे बड़ा ग्राहक है। १९५६ में उसने उत्तरी भारत की चाय ३०८२ लाख पौंड मंगवाई थी। इस वर्ष केवल २४७२ लाख पौंड मंगवाई है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा और मिश्र ने भी चाय बहुत कम मंगवाई है। इन सब के परिणामस्वरूप १९५६ में १४३ करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा की बजाय १९५७ मे १०७ करोड़ रु० की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई है। यदि चाय का निर्यात इसी तरह कम होता गया तो हमारी विदेशी मुद्रा की समस्या और कठिन हो जायगी। चाय संघ के अध्यक्ष श्री घोष ने कहा है कि भारत में चाय उद्योग संकट में से गुजर रहा है और हमें लागत खर्च से भी कम पर चाय बेचनी पड रही है। अफ्रीका और लंका में चाय का उत्पादन बहुत बढ़ गया है। भारत में चाय का उत्पादन व्यय अनेक कारणों से बढ़ गया है। श्री घोष ने बताया है कि चाय उद्योग पर तरह-के नये टैक्स लग गए हैं। मजदूरों के असन्तोष के कारण भी बहुत वेतन बढ़ाने पड़े हैं। उनकी अनुशासन हीनता के कारण भी उत्पादन बहुत कम हो पाता है। कारणों में मत-भेद हो सकता है; किन्तु यह सच्चाई है कि चाय उद्योग को और विशेषकर उसके निर्यात को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है और उसके मार्ग की बाधाओं को तुरन्त दूर कर देना चाहिए।

अल्प बचत योजना : एक उपहास

भारत सरकार की जो योजनाएं सबसे कम सफल हुई हैं, उनमे अल्प बचत योजना शायद प्रथम है। योजना आयोग ने प्रथम दो वर्षों में २०० करोड रु० छोटी बचतों द्वारा मिलने की आशा की थी। किन्तु केवल १२० करोड़ रु०, अर्थात् ६० प्रतिशत मिले है। लेकिन उत्तर प्रदेश से जो समाचार मिले हैं इनसे यह प्रतीत होता है कि वस्तुतः इतनी रकम भी प्राप्त नहीं हुई। 'आज' के एक संवाददाता के अनुसार १५ मार्च १९५८ तक अर्थात् ११½ महीने में वहां २१ करोड़ रु० की कुल बचत-लक्ष्य में से सवा छः करोड रु० भी इकट्ठा नहीं हुआ। कुछ जिलों से तो गत वर्ष के बचत मे से भी लाखो रु० निकाले जा चुके थे। लेकिन १६ मार्च से ३१ मार्च तक सिर्फ पन्द्रह दिनों में न जाने कैसा छूमतर हुआ कि मेरठ, इटावा और जौनपुर में ही ८५ लाख रु० से अधिक जमा हो गया। अन्य जिलों में भी इन पिछले पन्द्रह दिनों में करीब तीन करोड़ रुपया जमा हो गया, जबकि साढ़े ग्यारह महीनों में सवा छः करोड़ भी नहीं हुआ था। वाराणसी जिले में ७५ प्रतिशत बचत केवल आखिरी पन्द्रह दिनों में एकत्र हुई है। आखिर इन पन्द्रह दिनो में कौन-सा जादू होगया है? 'आज' के संवाददाता के कथनानुसार स्थानीय अधिकारी तकावी की रकम अल्प बचत योजना में जमा करवा लेते हैं। कुछ अधिकारी अमीर लोगों से एक बार किसी तरह रुपया जमा करा कर अपने जिले का कोटा पूरा करनेकी कोशिश करते हैं, भले ही वे सब १ अप्रैल के प्रारम्भ होते ही रु० निकलवा लें। इस तरह सरकार की बचत योजना निरन्तर धोखा है। वस्तुत गांवों में और शहरों में बचत योजना का प्रचार जिस तरह चल रहा है, हमें संदेह है कि यह भी बचत योजना पर एक भार ही है।

इस सम्बन्ध में हम अपने विचार किसी आगामी अंक में प्रकाशित करने की चेष्ठा करेंगे ।

इंगलैण्ड का नेतृत्व

भारत की अर्थ पद्धति ब्रिटिश अर्थ नीति के साथ एक सीमा तक सम्बद्ध है। स्टर्लिंग और रुपए का सम्बन्ध ब्रिटिशी शासन समाप्त होने के बाद भी किसी अन्य देश के सिक्के की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ है। दोनों देशों के बीच होने वाला व्यापार और लन्दन में हमारी स्टर्लिंग निधि इस सम्बन्ध को बनाए हुए है। ब्रिटेन की अर्थ परम्पराओं का भी हमारे देश पर विशेष प्रभाव पड़ता है। कुछ वर्ष पहले ब्रिटेन के मुद्रा अवमूल्यन के साथ ही हमें भी अपनी मुद्रा की कीमत कम करनी पड़ी थी। इन कारणों से यह स्वाभाविक है कि हम ब्रिटेन की अर्थनीति में रुचि लें। जब भारत के वित्त मंत्री विविध कारणों से करों में विशेष कमी करने को तैयार नहीं होते तब ब्रिटेन के वित्त मंत्री ने नये वर्ष के बजट में १० करोड़ पौंड करों में कमी कर दी है। किसी देश में एक वर्ष में करों में इतनी भारी कमी का उदाहरण ढूंढने के लिए परिश्रम करना पड़ेगा। ४ करोड़ पौंड खरीद-कर में कमी की गई है। मनोरंजन कर में करीब ५० प्रतिशत कमी की गई है। बुजुर्गों के लिए आयकर में भी कुछ कमी की गई और भी अनेक करों में कमी करके पूंजी निर्माण को प्रोत्साहित किया गया है। क्या भारत का शासन इस दिशा में विचार करेगा ?

मुख्य प्रश्न

उत्तर प्रदेश सरकार की मितव्ययता समिति ने अपनी रिपोर्ट देते हुए कहा है कि राज्य में नशा बंदी का प्रसार संभव नहीं है, क्योंकि जिन ४० जिलों में आज नशा बंदी नहीं है, उनसे सरकार को आबकारी में ५ करोड़ रुपये की आय होती है। इस आमदनी को आज किसी तरह छोड़ना संभव नहीं है। हम यह स्वीकार करते हैं कि सरकार आज के खर्च करते हुए इस आमदनी को छोड़ने की स्थिति में नहीं है, परन्तु यही दलील ब्रिटिश सरकार तब दिया करती थी, जब कांग्रेस के नेता सरकार से शराब बंदी की मांग किया करते थे। महात्मा गांधी कहा करते थे कि शराब के द्वारा पैसा इकट्ठा कर, स्कूल खोलने की अपेक्षा मैं यह पसंद करूंगा कि बच्चों को २-४ साल और न पढ़ाया जाय और सड़कें तथा हस्पताल न खोले जायें। मानव की नैतिक और भौतिक आवश्यकताओं में आज हम किसे प्राथमिकता देते हैं, मुख्य प्रश्न यही है। आज हमारे देश के नेता और शासक इस दृष्टि को भूल चुके हैं। वे संस्कृति प्रचार के नाम से लोक नृत्य और लोक गीतों पर लाखों रुपया बरबाद कर सकते हैं, सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों के भत्तों पर करोड़ों रुपये व्यय कर सकते हैं किन्तु मद्य निषेध की उस आधार भूत मांग को स्वीकार नहीं करते, जिसके लिए हजारों कांग्रेसी स्वयं सेवक और स्वयं सेविकाएं जेल और लाठी की शिकार हुई थीं। हमारी नम्र सम्मति में यदि मद्य निषेध के कारण आमदनी कम होती है तो अपने सब खर्च कम कर देने चाहिएं न कि शराब की आमदनी से पंचवर्षीय योजना को पूर्ण करने का यत्न करें। आखिर जनता को शराब पिलाकर २ पैसे भी लेना पाप है, क्योंकि शराबी जब शराब पीता है तो न केवल वह अपना नैतिक पतन करता है, बल्कि अपने गरीब बाल बच्चों के मुंह का कौर भी छीन लेता है। सरकार शराब की आमदनी लेकर इस पाप में हिस्सेदार होती है। मद्य निषेध से जन-सामान्य का नैतिक स्तर ऊंचा होगा तथा गरीब बाल बच्चों को दूध मिलेगा, इसलिए यह स्कूल खोलने और सड़कें बनाने से कहीं ज्यादा उपयोगी है।

योजना आयोग का संगठन

लोक सभा की लेखा-आकलन समिति ने यह सिफारिश की है कि योजना-आयोग के संगठन में कुछ परिवर्तन किये जावें। इसके अनुसार भारत सरकार के मंत्रियों को आयोग का सदस्य नहीं होना चाहिए। योजना आयोग ऐसे विशेषज्ञों का संगठन होना चाहिए जो राजनीतिक प्रभावों से स्वतन्त्र रह कर विशुद्ध आर्थिक दृष्टिसे प्रत्येक प्रश्न पर विचार कर सरकार को निष्पक्ष राय दें। इसमें सन्देह नहीं कि योजना आयोग पर बहुत से मंत्री छा गए हैं और वे केवल यथार्थ से प्रत्येक प्रश्न पर विचार करने के आदी नहीं होते। उन्हें अनेक राजनीतिक दलों के विचारों से प्रभावित होना पड़ता है। इसलिए हमें आशा है कि इस सिफारिश पर सरकार शान्तिपूर्वक विचार करेगी।

दूसरी योजना का लक्ष्य ४५ अरब रुपये रह गया !

विकास योजना के ऊंचे तथ्यों और साधनों की कठिनाइयों पर पिछले कुछ समय से निरन्तर विचार होता रहा है। देश में ऐसे विचारकों व अर्थ शास्त्रियों की कमी नहीं है, जो यह प्रारम्भ से मानते रहे हैं कि योजना के लक्ष्य अत्यन्त महत्त्वाकांक्षापूर्ण हैं, जिन्हें प्राप्त कर लेना देश की क्षमता से बाहर है। योजना आयोग व शासन के अधिकारी इस विचार का विरोध करते रहे हैं और इसे निराशाजनक मनोवृत्ति बताकर आशा व उत्साह का संदेश देते रहे हैं। किन्तु अब वे भी वस्तु-स्थिति को देखकर धीरे धीरे विपक्ष की सचाई को स्वीकार करने लगे हैं। पहले ५५-६० अरब रु० की बात करते थे, फिर ४८ अरब रु० पर उतर आये और योजना को पूर्ण करने पर जोर देने लगे। फिर अनिवार्य योजनाओं (कोर आफ दी प्लैन) को अवश्य पूर्ण करेंगे, यह कह कर दवी जवान से प्राथमिकता के अनुसार कुछ कम आवश्यक योजनाओं पर पुनर्विचार की बात की जाने लगी, फिर भी लक्ष्य को पूर्ण करने का नारा लगाया जाता रहा है। किन्तु अब स्थिति की गंभीरता को समझकर योजना ही ४५ अरब रु० की कर दी गई है, यद्यपि ४८ अरब रु० की संख्या के शब्दों को अभी तक वे छोड़ नहीं पाये हैं। राष्ट्रीय विकास परिषद् (नेशनल डिवैलपमैण्ट कौंसिल) ने मई के प्रथम सप्ताह में जो प्रस्ताव पास किया है, वह वस्तुतः स्थिति के बहुत निकट है और स्वागत के योग्य है। परिषद् ने यह भी अनुभव किया है कि ४५ अरब रु० की योजना के लिए भी २४० करोड़ रु० के साधन अभी तलाश करने होंगे, जो करों द्वारा पूरे किये जायंगे। इसका स्पष्ट अर्थ है कि योजना का लक्ष्य ४८ अरब रु० की बजाय ४५ अरब रु० ही रहेगा, यद्यपि उसके लिए भी पर्याप्त साधन उपलब्ध नहीं हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद ने इस आशय का एक प्रस्ताव पास किया है कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना का ४८०० करोड़ रु० का लक्ष्य कायम रहे, लेकिन विभिन्न प्राथमिकताओंको दृष्टि में रखते हुए इसे दो भागों में विभाजित करने को कह दिया जाय।

प्रस्ताव में कहा गया है कि योजना के 'क' भाग पर ४५०० करोड़ रु० खर्च होगा और उसमें कृषि-उत्पादन से सम्बन्धित बुनियादी परियोजनाओं, 'मुख्य परियोजनाओं', अपरिहार्य परियोजनाओं तथा उन परियोजनाओं को जो कि बहुत कुछ आगे बढ़ चुकी हैं शामिल किया जाए।

यह भाग व्यय के उस स्तर को सूचित करेगा, जिस पर कि साधनों के वर्तमान आकलन को दृष्टि में रखते हुए योजना-काल के शेष भाग के लिए वचनबद्ध हुआ जा सकता है। शेष परियोजनाएं भाग 'ख' में शामिल होंगी।

उन पर व्यय ३०० करोड़ रु० होगा। इसमें शामिल परियोजनाएं इस हद तक कार्यान्वित होंगी, जिस हद तक अतिरिक्त साधन उपलब्ध होंगे।

साधन-संग्रह

प्रस्ताव में कहा गया है कि यह निश्चित हुआ है कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें अतिरिक्त करों, छोटी बचत योजनाओं तथा बचत योजना व आयोजना-सम्बन्धी खर्चों में कमी करके अधिकतम साधन संग्रह करने का प्रयत्न करें। मद्रास के वित्तमंत्री ने प्रस्ताव प्रस्तुत किया था कि छोटी बचत परियोजना के अतिरिक्त इनामी बांड जारी किए जाएं। इन पर कोई ब्याज न दिया जाएगा और इन पर जो ब्याज उचित है, उसका हिसाब लगा कर इनाम दिए जाएंगे। समय-समय पर 'लाटरी' खुलती रहेगी और बांड वालों में से जो कोई जीतेगा, उसे इनाम दिया जाएगा। बताया जाता है कि इस प्रस्ताव के पक्ष तथा विपक्ष में समान मत आये। गृह-मंत्री पं० गोविन्द वल्लभ पन्त तथा मध्य-प्रदेश के मुख्य मंत्री डा० काटजू इस सुझाव के विरोधी थे। उनका कहना था कि इससे जुए की भावना को प्रोत्साहन मिलेगा। अन्त में यह निश्चय हुआ कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारें इस प्रस्ताव पर विचार कर सकती हैं।

यह सुझाव भी पेश किया गया कि प्राविडेन्ट फंड सब उद्योगों व श्रमजीवियों वाले संस्थानों में जारी किया जाए। श्री गुलजारी लाल नन्दा ने कहा कि प्राविडेन्ट फंड योजना को इन उद्योगों के संस्थानों में जारी करने के लिए यह
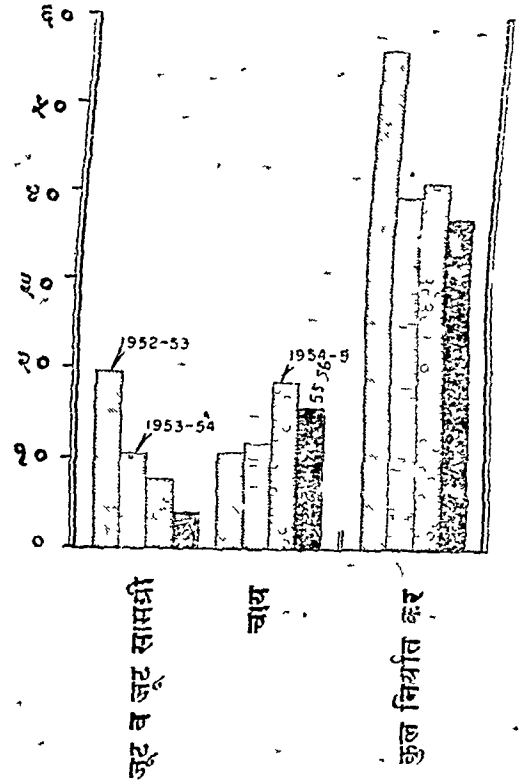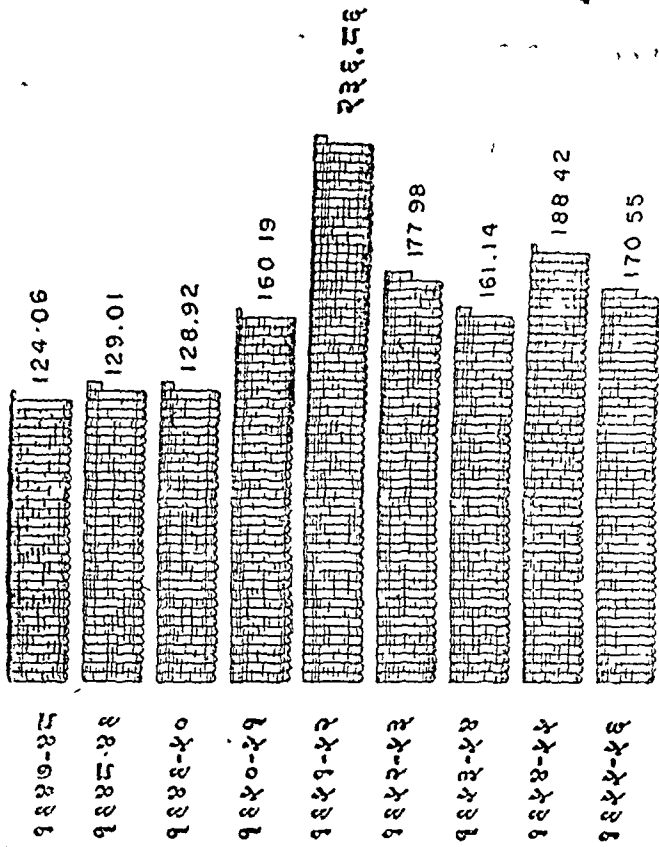
उपयुक्त समय है।

आयोग का ज्ञापन

द्वितीय योजना के सम्बन्ध में आयोजना आयोग के ज्ञापन में कहा गया है कि वर्तमान अनुमानों के अनुसार योजना काल में कुल ४२६० करोड़ रु० के साधन उपलब्ध हैं। इनमें से,

घरेलू बजट-साधन २०२२ करोड़ रु० के,

बाह्य सहायता-साधन १०३८ करोड़ रु० के, तथा

घाटे की अर्थव्यवस्था के साधन १२०० करोड़ रु० के हैं। आयोग ने कहा है कि ४५०० करोड़ रु० के न्यूनतम साधनों को एकत्र करने के लिए २४० करोड़ रु० की अतिरिक्त व्यवस्था करनी होगी। इनमें से १०० करोड़ रु० अतिरिक्त करों से, ६० करोड़ रु० कर्ज तथा छोटी बचत योजनाओं से तथा ८० करोड़ रु० खर्च में बचत तथा बकाया करों व ऋण की वसूली से मिल सकते हैं।

योजना आयोग ने ४८०० करोड़ रु० के कुल व्यय के पुनर्निर्धारण का सुझाव रखा है, ताकि औद्योगिक परियोजनाओं की आवश्यकताएं पूरी हो सकें। यह सुझाव रखा गया है कि जब तक अधिक साधन दृष्टिगोचर न हों, तब तक वचनबद्धता ४५०० करोड़ रु० तक सीमित रखी जाए। आयोग ने इस रकम को भी विभाजित करने का सुझाव रखा है।

योजना सम्बन्धी कुल व्यय के बारे में स्वीकृत प्रस्ताव में कहा गया है कि योजना के दो भागों में निहित परियोजनाओं की सूची पर आयोजन आयोग, केन्द्रीय व राज्य सरकारों में विचार-विमर्श होगा। परियोजनाओं के वितरण में इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि अल्पविकसित क्षेत्रों की जरूरतों की उपेक्षा न हो तथा सामाजिक सेवाओं तथा सामुदायिक विकास को प्राथमिकता मिले। योजना को कार्यान्वित करने में आवश्यक हेर फेर किये जा सकते हैं।

आर्थिक विकास की नीति

कृषि और उद्योग—निजी व सरकारी उद्योग—विदेशी पूंजी के लिए वातावरण—निर्यात व्यापार में वृद्धि।

(श्री घनश्यामदास बिडला)

भारतीय अर्थ व्यवस्था की समीक्षा करते हुए मुझे द्वितीय पचवर्षीय योजना के बारे में कुछ विचार प्रकट करने हैं। आजकल द्वितीय योजना के बारे में काफी तर्क-वितर्क चल रहा है। कुछ लोग इस बात पर अड़े हुए हैं कि महगाइ बढ़ने तथा साधन प्राप्त न होने पर भी योजना में परिवर्तन नहीं होना चाहिए, जबकि और कुछ लोग—इस बात की जिक्र किये बिना कि कैसे और किस सीमा तक ?—कहते हैं कि फिर से योजना में परिवर्तन करना होगा। अक्सर लोग इस बात को भूल जाते हैं कि योजना स्वयं कोइ लक्ष्य नहीं है। जैसे अधिक उत्पादन, समान वितरण तथा रोजगार में वृद्धि आदि कुछ उद्देश्यो की पूर्ति के लिए योजना साधन मात्र है।

योजनाके अनुसार ४,८०० करोड रु० सरकारी क्षेत्र में तथा २,४०० करोड रु० निजी क्षेत्र म व्यय करना है। अर्थात् कुल मिलाकर ७,२०० करोड रु० व्यय किया जाना है, जो आगामी मूल्य निरूपण में बढ़े हुए खर्च तथा योजनाओं में वृद्धि के लिए और अधिक बढ़ा दिया गया है। लेकिन सरकारी क्षेत्रो में से मूलभूत योजना के व्यय का जो अनुमान किया गया है, उसका विवरण इस प्रकार है—२,३०० करोड रु० यातायात, बिजली तथा सिंचाई के लिए, तथा ६६० करोड रु० उद्योग तथा खानो के लिए (कुल २,३३० करोड रु०)। निजी क्षेत्र में ७०० करोड रु० उद्योग, खानों तथा कारखानों के लिए। इन सब के लिए जो पैसा निर्धारित किया गया है, वह योजना के महत्वपूर्ण अंश ही है। शेष योजना व्यय विकास केन्द्रों तथा समाज कल्याण आदि के लिए है।

इस पर जोर देते हुए कि योजना को किसी भी तरह सफल बनाना है, सरकार कार्यक्रम में सजग होने की बजाय आंकड़ों पर ज्यादा ध्यान देती है तथा रोजगार बढ़ाने एव निर्धारित उत्पादन बढ़ाने की बजाय, योजना व्यय पर अधिक ध्यान देती है। सरकारी क्षेत्र को लक्ष्य सीमा तक व्यय करने, उत्पादन और रोजगार के लक्ष्यो को हासिल करने में बहुत कठिनता का सामना करना पड़ रहा है।

निजी क्षेत्र में सफलता

दूसरी तरफ यह साफ दिखाई दे रहा है कि निजी क्षेत्र में निर्धारित लक्ष्य पूर्ण हो रहे हैं, तथा द्वितीय योजना पूर्ण होने के बहुत पहले ही उसके अपने सारे लक्ष्य पूरे हो जायगे। श्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने वित्तमन्त्री पद से जिनके पदत्याग से मुझे बहुत अफसोस है—२५ सितम्बर १९५७ को विश्व बैंक के वार्षिक अधिवेशन में भाषण देते हुए कहा था।

"भारत में निजी कारोबार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। सचमुच गत दस वर्ष की अवधि में इसकी जितनी वृद्धि हुई है और जितने अधिक क्षेत्रों में यह विकसित हुआ है, उतना इससे पहले कभी नहीं हुआ है। हमारी कुछ कठिनाए तो उद्योग के अत्यन्त विस्तार के कारण ही उत्पन्न हुई हैं। हमें इस उद्योग-वृद्धि के लिए दु ख नहीं है, क्योंकि इससे हम जीवनस्तर ऊंचा करने के अपने लक्ष्यों के निकट पहुँचते हैं।"

निजी पूंजी के क्षेत्र में निर्धारित स्थूल लक्ष्य शीघ्र ही पूर्ण होने वाले हैं। औद्योगिक वृद्धि १९५१ में १०० से जून १९५७ में १६८.५ तक हुई है। प्राइवेट खानों के मालिक पहले से ही प्रतिवर्ष ४१० लाख टन कोयला उत्पादन कर रहे हैं, जब कि १९६१ का लक्ष्य ४८० लाख टन उत्पादन का है। सूती मिलें योजना का लक्ष्य ८,५००० लाख गज कपड़ा-उत्पादन के प्रति निरन्तर प्रयत्नशील हैं। लेकिन इस परिमाण में कपड़ा उत्पादन के लिए रुई की बड़ी कमी है। आन्तरिक खपत तथा निर्यात में कमी हो जाने के कारण योजना के लक्ष्यों में कुछ कटौती करनी पड़ेगी। विदेशी पूंजी प्राप्त न होने के कारण सिमेंट की उत्पादन शक्ति भी पिछड़ती जा रही है। फिर भी आसानी से सीमेंट की प्राप्ति करने के क्षेत्र में सफलता मिली है। इस्पात का उत्पादन भी बढ़ रहा है। आंतरिक पूंजी तथा विदेशी सहायता की कमी के कारण औद्योगिक उन्नति के कार्यक्रम मन्द गति से चल रहे हैं तथा ८० लाख लोगों को रोजगार देने का लक्ष्य पूर्ण होता प्रतीत नहीं हो रहा है। सरकार को चाहिए कि वह स्थिति को संभाले, तथा निर्यात को बढ़ाकर विदेशी पूंजी की वृद्धि करे।

विदेशी पूंजी की आवश्यकता

आने वाले वर्षों में विदेशी सहायता की जो आवश्यकता होगी, वह हमारी अपनी आमदनी से बहुत अधिक होगी। लेकिन मैं दूसरे देशों से लगातार ऋण लेने के विरुद्ध हूँ, क्यों कि आखिर जब ऋण चुकाने का समय आयगा, तो समस्या गम्भीर बन जायगी। हमने इतनी भारी मात्रा में ऋण ले लिया है कि १९६०-६१ से शुरू होने वाले चार वर्षों में किश्तों में ९० करोड़ रु० की भारी राशि हमें चुकानी पड़ेगी।

इसलिए यह अच्छा होगा कि हम अनुकूल वातावरण पैदा करें, जिससे प्रोत्साहन पाकर विदेशी पूंजीपति हमारे देश के कारोबार में अपना धन लगाएं। भारतीय पूंजी के के साथ इस प्रकार विदेशी पूंजी के सम्मिश्रण से नई समृद्धि की वृद्धि होगी और जब तक विदेशी पूंजी के लिए स्वतन्त्रता सिर्फ नाममात्र को रहेगी, उस पर कठोर प्रतिबन्ध लगे रहेंगे, विदेशी पूंजी को भारत में प्रोत्साहन कठिन है। इस सम्बन्ध में मैं एक बात भारत सरकार के ध्यान में लाना चाहता हूँ। भारतीय औद्योगिक प्रतिनिधि मण्डल के सामने पिछले दिनों में वाशिंगटन के व्यापार विभाग ने एक आवेदन पत्र प्रस्तुत किया था, जिसमें कहा गया है कि अमेरिका की पूंजी भारत में लगने के लिए जो अवरोध व रुकावटें हैं, उन्हें दूर करना होगा।

कृषि

द्वितीय योजना का सबसे बड़ा कमजोर अंग उद्योग तथा कृषि में असमानता है। हमारी अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। द्वितीय योजना के अन्त तक हमारी कुल राष्ट्रीय आय १३.५०० करोड़ रु० तक बढ़ने की आशा है, जिसमें से ४६ प्रतिशत आय सिर्फ कृषि से आशा की जाती है। अगर कृषि-उत्पादन में क्रमशः वृद्धि नहीं हुई, तो जनता की क्रयशक्ति कम हो जायगी तथा साथ ही औद्योगिक उत्पादन भी घट जायगा। खाद्य पदार्थों के अधिक उत्पादन से अभाव या संकट की स्थिति दूर हो जायगी और सामान्य जनता को और अधिक उत्पादन वृद्धि की प्रेरणा मिलेगी। इस पर एक और दृष्टि से भी जोर देना चाहिए।

विदेशी मुद्रा की कमी के कारण प्रतिवर्ष २० या ३० लाख टन खाद्य पदार्थों का लगातार आयात करना हमारी शक्ति से बाहर है। आंकड़ों के अनुसार अन्न का उत्पादन कम तो नहीं हो रहा है, लेकिन आबादी के अनुपात में उत्पादन नहीं बढ़ रहा है। देश के कुछ भागों में सूखा तथा अनावृष्टि होने पर भी, अन्य भागों में जहां पानी की सुविधा प्राप्त है, उसका अच्छी तरह उपयोग किया जा सकता था तथा खेती पर अधिक ध्यान देकर प्रति-एकड़ अन्न का अधिक उत्पादन किया जा सकता था। लेकिन बदकिस्मती से खादों के आयात में कटौती होने के कारण कृषि उत्पादन में और अधिक कमी की संभावना हो जायगी। खाद्य पदार्थों के उत्पादन को खतरे में डालकर हम लोहे के कारखाने खड़े करना सहन नहीं कर सकते। हमें कम से कम यह तो देखना ही चाहिए

(शेष पृष्ठ २८२ पर)

निकट भविष्य का प्रमुख उद्योग : अणुशक्ति

संसार अणुशक्ति के युग में प्रविष्ट हो चुका है। अणु से बिजली पैदा करने, अणु से जहाज और हवाई जहाज चलाने के काम शुरू हो चुके हैं। अगले वर्षों के लिए विभिन्न देशों ने अणु विज्ञान संबंधी विशाल योजनाएं बनाई हैं। व्यापारियों, इन्जीनियरों एवं वैज्ञानिकों ने इस समय जो अनुमान लगाये हैं, उनके अनुसार इस शताब्दी के शेष काल में अणुशक्ति के विकास को सबसे बड़े एवं प्रमुख विकासशील उद्योगों में समझा जायेगा।

१९६० से लेकर १९७० तक के अगले १० वर्षों के बारे में जो अनुमान लगाये गये हैं उनसे पता चलता है कि लोकतंत्री देशों में लगभग १० अरब डालर के व्यय से आणविक बिजली उत्पादन-केन्द्रों की स्थापना की जायेगी। *१९७० के बाद आणविक बिजली घरों के निर्माण पर* और अधिक व्यय किया जायेगा।

अमेरिका की बिजली कम्पनियां १९६२ तक लगभग १० लाख किलोवाट बिजली तैयार करने की योजनाएं बना रही हैं। इसके बाद के पांच वर्षों में ये कम्पनियां ६५ लाख किलोवाट बिजली तैयार करने वाले अन्य आणविक बिजली घरों की स्थापना करेंगी।

अनुमान है कि १९६७ से १९७२ तक पांच वर्षों की अवधि में ३ करोड़ ४० लाख किलोवाट की विद्युत्-उत्पादन क्षमता वाले आणविक बिजली घर हो जायेंगे।

इस निरन्तर वृद्धि के कारण यह विश्वास किया जाता है कि १९८० तक अमेरिका में होने वाली लगभग ८० प्रतिशत बिजली आणविक बिजलीघरों से पैदा की जाने *लगेगी।*

रूस इस दिशा में भी असाधारण प्रगति कर रहा है, जिसकी सूचना समय-समय पर पाठक पढ़ते रहते हैं।

ब्रिटेन और अन्य यूरोपीय देशों की योजनाएं

ब्रिटेन इस दिशा में पहले से ही काफी आगे है। उसने १९६२ तक १४ लाख ७५ हजार किलोवाट बिजली और १९६५ तक ६० लाख किलोवाट बिजली के उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित कर रखा है।

अणुशक्ति के पावर स्टेशन, अथवा बिजलीघर, को यथार्थ में वाणिज्यिक आधार पर चलाने वाला संसार का पहला राष्ट्र ब्रिटेन है, जिसे आगामी पन्द्रह वर्षों की अवधि में ऐसे बिजलीघरों के विश्वव्यापी हाट के अधिकांश की प्राप्ति की आशा है। अबसे लेकर १९७५ तक जितने बिजली संयन्त्र विदेशों के हाथों उसके द्वारा बेचे जाने की सम्भावना है उनका मूल्य १,३७,६०,००,००० पौंड आंका गया है।

ये तथ्य ब्रिटिश उद्योग संघ, अथवा फेडरेशन आव ब्रिटिश इन्डस्ट्रीज के एक प्रपत्र में दिये गये हैं। इसके अनुसार जिन आठ से लेकर दस बिजलीघरों—विशेष तौर पर महाद्वीपीय योरप में—के लिये १९६० तक 'आर्डर' *मिलने की सम्भावना है,* उनमें से ६ से लेकर ८ तक की प्राप्ति का सबसे उपयुक्त और सम्भावित स्रोत ब्रिटेन होगा। यह आशा की जाती है कि १९६० और १९६५ के मध्य अणुशक्ति-संयन्त्रों के लिये ब्रिटेन के निर्यात बाजार एक निश्चित प्रकृति—एक निश्चित रंगढंग—ग्रहण करने लग जायेंगे। उद्योग-धन्धों से सत्वर गति से सम्पन्न हो रहे राष्ट्रमंडल-देशों से मांगों की प्राप्ति सम्भवतः होने लग जायेगी; और १९६६-७५ तक अणुशक्ति के संयन्त्रों के विश्व निर्यात बाजार में काफी अनेकरूपता आ जायेगी। जर्मनी तथा अमेरिका जैसे प्रतिस्पर्द्धियों की ओर से—तथा सम्भवतः फ्रांस की ओर से भी—प्रतिस्पर्द्धा अनपेक्षित नहीं है।

'यूरेटम' कार्यक्रम—जिसमें फ्रांस, इटली, लक्सम बर्ग, बेल्जियम, हालेंड तथा पश्चिमी जर्मनी भी शामिल हैं—के अन्तर्गत १९६७ तक कुल १ करोड़ ५० लाख किलोवाट बिजली तैयार करने वाले बिजलीघरोंके निर्माणकी व्यवस्था की गई है।

अनुमान है कि १९६५ के आसपास तक जापानके आणविक बिजलीघरोंमें १० लाख किलोवाट बिजली तैयार होने लगेगी और १९८० तक आणविक बिजली का उत्पादन १ करोड़ या १॥ करोड़ किलोवाट तक पहुँच जाने

की संभावना है।

भारत तथा अन्य एशियाई देशों और दक्षिणी अमेरिका के कुछ देशों ने १९६० से १९७० तक आणविक बिजलीघरों द्वारा बिजली तैयार करने की योजनाएं बना ली हैं।

अणुशक्ति-चालित जहाजों का निर्माण

अणुशक्ति द्वारा व्यापारी जहाजों तथा नौसेना के जहाजों के निर्माण-क्षेत्र में विशेष महत्वपूर्ण योग दिये जाने की सम्भावना है।

आणविक शक्ति से जहाज चलाने के भारी प्रारम्भिक खर्चे ऐसे जहाज के अन्य महत्वपूर्ण लाभों से बहुत कुछ सन्तुलित हो जायेंगे। अणुशक्ति को इस्तेमाल करने से जहाज में ईंधन (तेल या कोयले) रखने के गोदाम की आवश्यकता नहीं रहेगी और इस स्थान को माल ढोने के लिए प्रयुक्त किया जा सकेगा। दूसरे, इन जहाजों को बन्दरगाह पर ईंधन भरने के लिए रुकना नहीं पड़ेगा, इसलिए समय की बचत होगी। तीसरे, अणुशक्ति-चालित इंजनों के कारण ये जहाज अधिक तेज चलेंगे और इसके परिणामस्वरूप हर वर्ष अधिक सफर कर सकेंगे।

'नौटिलस' तथा इसी तरह की अन्य अणुशक्ति चालित पनडुब्बियों के निर्माण की सफलता से उत्साहित होकर अमेरिकी नौसेना-विभाग ने वर्तमान जहाजों को अणुशक्ति चालित जहाजों में परिवर्तित करने की योजना तैयार की है। अनुमान है कि अगले ८ या १० वर्षो में अमेरिकी नौसेना-विभाग को, उक्त योजना की पूर्ति के लिए सम्भवतः ७५ से १०० आणविक भट्टियों की जरूरत पड़ेगी। इन अणुशक्ति-चालित समुद्री जहाजों के निर्माण में ब्रिटेन भी रुचि ले रहा है।

भारत में अणुशक्ति का उद्योग

भारत में यद्यपि अणु शक्ति के प्रयत्न अभी बहुत प्रारंभिक अवस्था में हैं, तथापि इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है। पश्चिमी यूरोप के उन्नत देशों में भी केवल दो वर्ष पूर्व ही इस दिशा में कुछ प्रभावकारी कदम उठाये गए हैं।
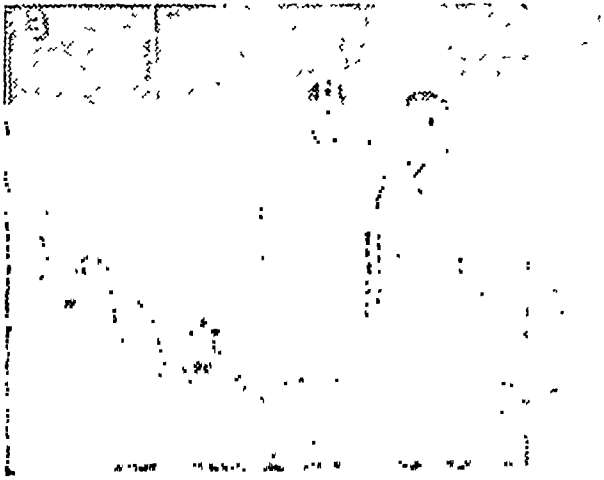
"१९५६ में बम्बई के पास ट्राम्बे में जो अणु भट्टी लगाई गई है, उसके माडल के साथ भारत के अणुशक्ति आयोग के अध्यक्ष, डा० एच० जे० भाभा।"

अणु शक्ति विभाग की १९५७-५८ की रिपोर्ट से पता लगता है—भारत का पहला रि-एक्टर 'अप्सरा' दो साल से काम कर रहा है। इसके निर्माण से आइसोटोप का बनाना तथा विविध विज्ञान संस्थाओं को रेडियो सक्रियता की सुविधाएं देना सम्भव हो गया है। रेडियो सल्फर रेडियो फोस्फरस, और रेडियो आयोडिन आदि पदार्थ अल्प मात्रा में बनाये भी गए हैं। रासायनिक अनुसन्धान के लिए भी इस रि-एक्टर (प्रतिक्रिया वाहक) का उपयोग किया गया है। कनाडा-भारत के रि-एक्टर में भी प्रगति हो रही है और १९५९ तक यह पूर्ण हो जाने की आशा है। मार्च १९५७ में जैलिना रि-एक्टर इस वर्ष के अन्त तक काम करने लगेगा। एक यूरेनियम प्लांट भी इस वर्ष अन्त तक काम शुरू कर देगा। इसी तरह से अन्य भी अनेक दिशाओं में काम हो रहा है। ताम्बे के मिश्रण से यूरेनियम निकालने का प्लांट भी बन चुका है। ट्राम्बे में थोरियम्-यूरेनियम प्लांट १९५५ से काम कर रहा है। टाटा अनुसन्धान संस्था इस दिशा में बहुत प्रयत्न कर रही है।

(शेष पृष्ठ २८४ पर)

साहित्याकाश का नवीन
जाज्वल्यमान नक्षत्र
सोवियत भूमि
सचित्र पाक्षिक पत्र
१२ भाषाओं में
सोवियत राष्ट्र के जीवन, कला और संस्कृति का चित्र
मूल्य :
वार्षिक रु. ४.०० — अर्द्ध वार्षिक रु. २.०० — त्रैमासिक। रु. १.१० — प्रति अंक २० नए पैसे
सम्पादन विभाग: सोवियत भूमि

खाद्य समस्या और भारत सरकार

श्री ओमप्रकाश तोषनीवाल

अन्न की समस्या प्रत्यक्ष रूप से सन् १९४२ में सामने आई और तभी से सरकार अन्न के सम्बन्ध में सर्व प्रथम अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक हुई है। अब तक इस समस्या पर कभी भी देशव्यापी आधार पर वैज्ञानिक विधि से नहीं सोचा गया था। लेकिन इस समय में आकर दिसम्बर १९४२ में केन्द्र खाद्य विभाग की स्थापना की गई। इसके बाद जुलाई सन् १९४३ में एक 'खाद्यान्न नीति समिति' की नियुक्ति की गई। समिति की प्रमुख सिफारिशों के अनुसार ही सरकार ने 'अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन' द्वारा (१९४३-४७) योजना को कार्यान्वित किया। यद्यपि आन्दोलन के उद्देश्य अच्छे थे तथापि इससे कृषकों को जो लाभ पहुँचना चाहिए था, वह नहीं पहुँच सका। इसके बाद सन् १९४३ के बंगाल दुर्भिक्ष के बाद सरकार ने अन्न पर नियंत्रण लगाने का कार्य किया। इस नीति के अनुसार अन्न के मूल्य नियंत्रण, उनकी उचित वितरण व्यवस्था, गांवों से अनिवार्य रूप में गल्ला वसूली, विदेशों से अनाज का आयात करना तथा देश में व्यापारियों की संग्रह प्रवृत्ति तथा काला बाजार को रोकने आदि के कार्य किये गये। इसके साथ ही किसी भी समय तत्कालीन खाद्यान्न की कमी को दूर करने के लिए सरकार खाद्यान्न का संग्रह रखने लगी।

स्वतंत्र भारत में खाद्य-नीति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राष्ट्रीय सरकार ने देश की खाद्य समस्या पर नये सिरे से विचार शुरू किया। दिसम्बर सन् १९४७ में सरकार ने महात्मा गांधी के परामर्श से देश में खाद्यान्न के ऊपर से नियंत्रण हटा लिये। लेकिन कुछ समय बाद २४ सितम्बर सन् १९४८ को भारत सरकार ने अपनी खाद्य-नीति की घोषणा करते हुए खाद्यान्न पर मूल्य नियंत्रण और वितरण की व्यवस्था को पुनः लागू किया। अन्न विक्रेताओं के लिए अनिवार्य रूप से लाईसेंस लेने की व्यवस्था की गई। देश को ऐसे क्षेत्रों में बांटा गया जिनमें अति उत्पादन क्षेत्र, कमी वाले क्षेत्र और आत्म-निर्भर क्षेत्रों की सीमायें निर्धारित कर दी गयी थीं।

'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन

सितम्बर सन् १९४७ में सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास की अध्यक्षता में 'खाद्यान्न नीति समिति' (The Food-grains Policy Committe) की नियुक्ति की गई। इस समिति ने 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन की विफलताओं की जांच करते हुए अपना यह निष्कर्ष दिया कि अन्न उत्पादन बढ़ाने के उपाय अच्छे होते हुए भी उनको कार्य में लाने की पद्धति दोषपूर्ण थी। साथ ही समिति ने अन्न-उत्पादन बढ़ाने के लिए अपने सुझाव भी दिये। उस समय यह लक्ष्य रक्खा गया कि सन् १९५१ तक देश को आत्म-निर्भर बना लिया जायेगा। फरवरी सन् १९५२ में यह जानने के लिए पिछले ५ वर्षों में क्या कार्य हुआ, इसकी जांच के लिए तथा भविष्य में देश को अन्न में स्वावलम्बी बनाने के लिए 'अधिक अन्न उपजाओ जांच समिति' (Grow More Food Enquiry Committee) की नियुक्ति की गई। समिति ने खाद्य समस्या के मूल कारणों पर प्रकाश डाला, 'अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन' के अन्तर्गत चालू योजनाओं का मूल्यांकन किया और आन्दोलन की असफलता के कारणों पर भी संकेत किया। साथ ही समिति ने अपने कुछ सुझाव भी रक्खे।

पंचवर्षीय योजनाएं

१ अप्रैल सन् १९५१ को जब प्रथम पंचवर्षीय योजना को चालू किया गया, यह वर्ष खाद्यान्न उत्पादन का सबसे बुरा वर्ष था। कारण सूखा, बाढ़ व टिड्डियों के कारण फसलें खराब हो गई थीं तथा खाद्यान्न की काफी कमी थी। १९५२ में दशा सुधरने लगी और धीरे-धीरे सरकार 'आत्म-निर्भरता की मनोवृत्ति' के निर्माण करने में लग गई। १९५२-५३ में वर्षा अनुकूल रही और १९५३-५४ में तो खाद्यान्नों के उत्पादन में काफी वृद्धि हुई। अतः सन् १९५४ में आकर अनाजों पर से नियंत्रण हटा लिये

(शेष पृष्ठ २८५ पर)

योजना का खतरा टल गया ?

श्री विष्णुशरण

हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना खतरेमें पड़ गई है। खतरे से तात्पर्य यह नहीं है कि योजना की प्रगति का मार्ग पूर्ण रूपसे अवरुद्ध हो गया है, बल्कि यह कि हम उतनी तेज गति से प्रगति नहीं कर पाये, जितनी गति से हम करना चाहते हैं तथा जो हमारे लिए आवश्यक है। पहला खतरा है बढ़े हुए मूल्य व दूसरा है विदेशी विनिमय की अत्यधिक कमी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना का आधार यही है कि मुद्रा-स्फीति से उत्पन्न दबाव सुदृढ़ नियन्त्रण में रहेंगे और वे प्रभावशील नहीं हो पाएंगे। भुगतान तुला इन दबावों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील होती है व देश में बढ़ते हुए मूल्यों से आयातों की नई मांगें उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार निर्यातों के मार्ग में कठिनाइयां पैदा हो जाती हैं व उपलब्ध धनराशि में कमी आ जाती है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए ४८०० करोड़ रुपए की वित्त व्यवस्था में ८०० करोड़ अथवा १।६ भाग विदेशों से प्राप्त होने वाले धन के लिए रखा गया था। यह भी अनुमान लगाया गया था कि योजना के पंचवर्षीय काल के द्वितीय व तृतीय वर्षों में व्यापार तुला भारत के सबसे अधिक विपरीत होगी, क्योंकि इन्हीं वर्षों में आयात भी सबसे अधिक होंगे। इन्हीं वर्षों में मशीनरी व अन्य सामान, रेलवे के विस्तार व पुनर्सज्जा के समान के आयात बहुत होंगे। इस्पात के कारखानों पर—जो कि योजना का एक प्रमुख अंग है, सबसे अधिक व्यय योजना के तृतीय वर्ष में होगा। आने वाला वर्ष विदेशी मुद्रा की दृष्टि से सबसे अधिक कठिनाई का वर्ष होगा।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में विदेशी मुद्रा की इतनी अधिक मात्रा में आवश्यकता न थी। स्टर्लिंग निधि की जिस मात्रा में व्यय होने की सम्भावना थी, उतनी भी व्यय नहीं हुई। पहले योजना ही इतनी विशाल न थी और फिर उसका लक्ष्य कृषि उत्पादन की वृद्धि था। नई मशीनरी के आयात भी आशा से कम थे। दूसरी ओर द्वितीय योजना का एक प्रमुख लक्ष्य भारी व आधारिक उद्योगों की स्थापना है, ताकि भावी आर्थिक विकास के लिए एक सुदृढ़ आधार का निर्माण हो सके व भारतीय आर्थिक व्यवस्था की एक भारी दुर्बलता दूर हो सके।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना पर ४८०० करोड़ रुपए की धनराशि व्यय होनी थी—बाद में लगभग ६००-७०० करोड़ रुपए की धनराशि और बढ़ा दी गई। पर जब धन की कमी होने लगी तो पुनः यह निश्चित किया गया कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य ४८०० करोड़ रुपए ही रखा जाए। बाह्य साधनों व विदेशी मुद्रा की कमी तो है ही—परन्तु आन्तरिक साधन भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो रहे। १२०० करोड़ रुपए की घाटे की अर्थव्यवस्था करने के बाद भी आन्तरिक साधनों में ४०० करोड़ रुपए की कमी आती है। लोक सभा के अंतिम सत्र में वित्तमन्त्री ने घोषित किया कि वर्तमान आर्थिक परिस्थितियों को देखते हुए घाटे से अर्थ-व्यवस्था की सीमा को ९०० करोड़ रुपए से अधिक नहीं मानना चाहिए।* इस प्रकार आन्तरिक साधनों की कमी बढ़कर ७०० करोड़ रु ए हो जाती है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के शेष काल के लिए एक कठोर आयात नीति व विदेशी मुद्रा का व्यय वाली कुछ विकास परियोजनाओं को छोड़ देने के बाद भुगतान तुला में १६०० करोड़ रुपए की कमी होने का अनुमान है। द्वितीय योजना के प्रारम्भ से अब तक ४४० करोड़ रुपए की बाह्य सहायता मिली है अथवा उसके लिए वचन मिले हैं, यद्यपि मूल योजना में ८०० करोड़ रु० विदेशी ऋणों से मिलने का अनुमान लगाया गया था। पौंड पावना और विदेशी व्यापार के प्रतिकूल होने और अन्न तथा मशीनरी के भारी आयात के कारण विदेशी [illegible] कम होती गई, और विदेशों से सहायता भी [illegible] नहीं मिली। जो वचन मिले हैं, उनमें से कुछ द्वितीय योजना में व्यय किये जा [illegible]। स्टर्लिंग निधि बहुत [illegible] से खर्च होती जा रही है। [illegible] ५६ में भुगतान तुला के [illegible] में [illegible] करोड़ [illegible]

---

*इधर [illegible] ने इस सीमा को १२०० [illegible] घोषित किया है।

अधिकता थी पर द्वितीय योजना के प्रथम वर्ष अर्थात् १९५६-५७ में ही २९२.५ करोड़ रुपए की कमी हो गई।

विदेशी विनिमय की इस बढ़ती हुई कमी को देखकर ही सरकारी क्षेत्रों में चिन्ता प्रकट की जा रही है कि ४८०० करोड़ रुपए की योजना की पूर्ति में भी संदिग्धता है। इस कारण विकास की कुछ योजनाओं को कार्यान्वित नहीं किया जा सकता—यद्यपि इसकी रूपरेखा अभी निश्चित नहीं की गई है। पर सरकार यह भी चाहती है कि ऐसी कोई परियोजना छूटने न पावे, जिससे भावी विकास की गति अवरुद्ध हो अथवा उसकी सम्भावनाओं में कमी आवे। ऐसी परियोजनाओं में लोहा व इस्पात, शक्ति, रेलवे, बड़े बन्दरगाह व कोयला खनन की परियोजनाएं आती हैं, जिन्हें हम "योजना का हृदय" अथवा भावी विकास का आधार कह सकते हैं। इन परियोजनाओं को किसी भी प्रकार पूर्ण करने के लिए सरकार विशेष रूप से चिन्तित है—यद्यपि इनके लिए अभी कुछ और विदेशी विनिमय के व्यय वाले सौदे करने पड़ेंगे। इनके साथ कुछ ऐसी भी परियोजनाएं हैं, जिनको क्रियान्वित करना आवश्यक समझा गया है—यथा जिन पर पर्याप्त प्रगति हो चुकी है तथा जिन पर विदेशी माल की खरीद के सौदे हो चुके हैं, अथवा जो न्यूनतम अनिवार्य आवश्यकताएं हैं।

इन सब की पूर्ति के लिए ही ७०० करोड़ रुपए की विदेशी सहायता की आवश्यकता है। इसी कमी के कारण सरकार विदेशी विनिमय का कोई नया खर्च नहीं बढ़ा रही, जब तक कि मूल्य का भुगतान भविष्य के लिए स्थगित न कर दिया गया हो। योजना की सफलता के लिए आने वाले १६ महीने अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ७०० करोड़ रुपए की बाह्य सहायता अधिकांश में इन्हीं १८ महीनों के लिए चाहिए। ये १८ महीने देश व देशवासियों की क्षमता के परीक्षक सिद्ध होंगे।

विदेशी मुद्रा की यह कमी क्या एकाएक ही उत्पन्न हो गई? योजना के निर्माता साधनों की कमी की गम्भीरता को तो पहले से ही समझते थे, पर कुछ नए कारण भी पैदा हो गए:—

१. प्रतिरक्षा व्यय में वृद्धि—प्रतिरक्षा के लिए केवल ३० करोड़ डालर का विदेशी विनिमय रखा गया था। बाद में ५५ करोड़ डालर का अतिरिक्त प्रावधान करना पड़ा।

२. कुछ अनिवार्य परियोजनाओं—यथा विद्युत व तेल विकास—पर अपर्याप्त प्रावधान। इस्पात परियोजनाओं में बस्तियों के लिए प्रावधान नहीं रखा गया—बाद में रखने से लोहा, इस्पात, सीमेंट आदि की आयात आवश्यकताएं बढ़ गईं।

३. विदेशी वस्तुओं के मूल्यों में वृद्धि जो कि कहीं-कहीं ३३ प्रतिशत तक है। विशेषकर लोहा व इस्पात व विविध प्रकार की मशीनरी के मूल्यों में।

४. अन्नोत्पादन की असन्तोषजनक स्थिति।

५. देश की आन्तरिक बचत के संग्रह में कमी।

६. खाद्यान्नों के बढ़े हुए आयात जो १९५५-५६ में ४ लाख टन से बढ़कर १९५६-५७ में २० लाख टन से अधिक हो गए।

७. विदेशी व्यापार में भारतीय वस्तुओं की स्थिति में गिरावट। १० प्रतिशत गिरावट से ही ८० करोड़ रुपए का असंतुलन हो जाएगा।

८. व्यक्तिगत क्षेत्र में आशा से अधिक विनियोग।

९. स्वेज नहर बन्द हो जाने से किराये में १५ प्रतिशत तक वृद्धि।

वांछित मात्रा में सहायता न मिलने से कुछ परियोजनाओं का मोह तो छोड़ना ही पड़ेगा, पर यह आसान कार्य सिद्ध न होगा—योजना आयोग को पुनः प्राथमिकताएं निर्धारित करनी पड़ेंगी—उर्वरक के कारखाने तथा विद्युत शक्ति के बीच कौन अधिक आवश्यक है? किसी बड़े बन्दरगाह के विकास को स्थगित किया जाए अथवा कोयला खनन की किसी परियोजना को? जिस राज्य में अशांति होगी, केन्द्र को उसी का कोपभाजन बनना पड़ेगा। जिन परियोजना में प्रगति हुई है और ठेके दे दिए गए हैं, उन्हें रद्द कराने में सरकार को हर्जाना देना पड़ेगा और उस दिशा में अब तक हुई प्रगति लगभग शून्य प्राय हो जाएगी। राजनैतिक समस्याएं खड़ी होंगी सो अलग। पुनः यदि यह निश्चय कर लिया जाए कि विदेशी विनिमय के व्यय वाली कोई भी नई परियोजना हाथ में नहीं ली जाएगी तो इससे प्राथमिकताओं का समुचित निर्धारण नहीं हो सकेगा।

भूतपूर्व वित्तमंत्री के विदेश यात्रा से लौटने के बाद विदेशी मुद्रा की स्थिति में सुधार के लक्षण दिखाई पड़े हैं। अमेरिका ने २२.५ करोड डालर (१०६ अरब रुपये) की सहायता अगले १२-१५ महीनों के लिए दी है। जापान ने भारत को १८०० करोड येन (२४ करोड रुपये) का ऋण ३ वर्षों के लिए दिया है। फ्रांस ने २५०० करोड फ्रैंक (२८ करोड़ रुपये) का ऋण स्थगित भुगतान व्यवस्था पर देने की घोषणा की है। अगले ३-४ महीनों में विश्व बैंक से १० करोड़ डालर का ऋण मिलने की आशा की जाती है। पश्चिम जर्मनी के साथ रूरकेला तथा अन्य उद्योगों के लिए भुगतान स्थगित करने पर अन्तिम निर्णय करना मात्र ही शेष है।

अपने संकटकाल मे सहायक इन सब देशों का भारत आभारी है। निश्चय ही यह सहायता धन की कमी से उत्पन्न संकट को कम करेगी। पर यह सहायता आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है। वस्तुतः वांछित मात्रा में मिल जाती तब भी वह आदर्श स्थिति न होती क्योंकि उससे आत्मनिर्भरता, आत्म विश्वास व स्वावलम्बन की भावनाओं की हानि होती। पुनः यह भी सोचने की बात है कि लम्बी-लम्बी वार्त्ताओं को चलाने में धन व समय के व्यय के अतिरिक्त ब्याज के रूप मे भी अधिक भुगतान करना पड़ता है।

यह निर्विवाद है कि पंचवर्षीय योजना पर छाया हुआ खतरा टला नहीं है, भले ही उसकी गम्भीरता कम हो गई हो।

इस नई स्थिति से उत्पन्न कठिनाइयों का मुकाबला करने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। यह "योजना के हृदय" को क्रियान्वित करने के लिए विशेष रूप से उत्सुक है। १९५६ के द्वितीय वर्ष मे विदेशी विनिमय के नियन्त्रण को केन्द्रित कर दिया गया। प्रत्येक मन्त्रालय विदेशी मुद्रा के व्यय की स्वीकृति देने से पूर्व उसकी सूक्ष्म जांच करता है। अदृश्य वस्तुओं के विदेशी मुद्रा व्यय को कम किया जा रहा है। आयात नीति के प्रतिबन्ध कठोर होते जा रहे हैं। विदेशी विनिमय व्यय का कोई नया सौदा जुलाई-सितम्बर १९५७ में नहीं किया गया। पूंजीगत माल का आयात करने वालों को परामर्श दिया गया है कि वे विदेशी पूंजी के सहयोग को आमन्त्रित कर अथवा स्थगित भुगतान की इन शर्तो पर आयात कर विदेशी मुद्रा व्यय को कम से कम करें। भारत सरकार ने निश्चय किया है कि एक सामान्य नीति के रूप में आयात लाइसेंस वही दिए जावेंगे, जहां कि प्रथम भुगतान १ अप्रैल १९६१ के बाद आता हो। स्थगित भुगतान की शर्त से समस्या को केवल टाला ही जा सकता है। उसके सम्यक् हल करने के लिए आवश्यक है कि इसी बीच में देश का उत्पादन बढ़ जावे तथा भुगतान का समय आने तक वह उतनी ही विदेशी मुद्रा के उपार्जन में सक्षम हो सके। पुनः स्थगित-भुगतान में कुल व्यय भी अधिक पड़ता है। एक अध्यादेश द्वारा रिजर्व बैंक की विदेशी प्रतिभूतियां व स्वर्ण की न्यूनतम परिनियत मात्रा २०० करोड़ रुपए कर दी गई है। सरकार निर्यातो में अधिकतम वृद्धि के लिए प्रयत्नशील है। कारखानों का विस्तार किए बिना ही, जहां तक संभव हो पारियां बढ़ाकर उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। ऐसे उद्योगो को प्राथमिकता दी जाए जिनके उत्पादन से निर्यात की सम्भावनाएं हों। अपने देशी साधनों का अधिकतम उपयोग किया जाए।

क्या विदेशी मुद्रा के उपार्जन अथवा इस समस्या के हल में हमारा भी कुछ योग हो सकता है?

१. समस्त आर्थिक उन्नति का आधार अधिक उत्पादन है। देश में उत्पादन अधिक से अधिक हो—चाहे वह उत्पादन खेतों में होता हो, अथवा विशाल कल कारखानों में अथवा कुटीर उद्योगों में।

२. हर एक व्यक्ति अधिकतम उत्पादन में पूर्ण सहयोग दे—उत्पादन वृद्धि में आफिस में काम करने वाले व्यक्ति का सहयोग उतना ही आवश्यक है, जितना एक मशीन चलाने वाले का।

३. बचत की मात्रा बढ़ाई जाए—छोटी से छोटी धनराशि को भी जोड़ा जाए। किसी भी परियोजना के क्रियान्वयन के लिए विदेशी विनिमय के साथ साथ आन्तरिक साधनों का होना अनिवार्य है।

४. यदि विदेशों से अधिक ... नहीं होती

ते अपने स्वर्ण के बदले ही इस

आर्थिक व्यवस्था साधन है, साध्य नहीं

डा० एन० ए० शाह

आर्थिक पद्धति भी अन्य व्यवस्थाओं की तरह एक लक्ष्य का साधन है। यह अनुभव ही बता सकता है कि किसी विशेष प्रकार के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जो साधन अपनाये गये हैं, वे पर्याप्त हैं या नहीं। इसलिए यह आवश्यक है कि इन साधनों पर समय समय पर पुनर्विचार हो; और अगर यह सिद्ध हो कि ये साधन हमें अभीष्ट लक्ष्य तक नहीं पहुँचा सकते, तो इन साधनों में उचित परिवर्तन लाना चाहिए। इन साधनों को ही सर्वेसर्वा समझ लेना आपत्ति को मोल लेना है।

सदा परिवर्तन होने वाले इस संसार में, कोई निश्चित लक्ष्य भी अन्तिम रूपसे निर्धारित नहीं हो सकते। जैसे-जैसे संसार बदलता है, नई नई विचार धाराएं निकल आती हैं। इस लिए यह स्पष्ट है कि ऐसे समय जब कि विचार-धाराएं बदलती रहती हैं, अगर हमें आगे बढ़ना है तो साधनों पर निरन्तर पुनर्विचार होते रहना आवश्यक है।

असल में देखा जाय तो वर्तमान स्थिति तथा जिस लक्ष्य तक हम पहुँचना चाहते हैं, उससें निरन्तर संघर्ष चल रहा है। इतिहास यह बताता है कि वे सब जो वर्तमान स्थिति के लाभों का उपभोग कर रहे हैं, पूरा जोर लगाकर कोशिश करते हैं कि उनके अपने विशेष अधिकार बने रहें। कई लोग वर्तमान स्थिति को ही सही समझकर सतुन्ष्ट हो जाते हैं। इस स्थिति को बदलने की उनके अन्दर न इच्छा पैदा होती है और न उनमें सामर्थ्य ही होता है। बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो वर्तमान स्थिति को बुरी और असह्य समझते हैं। वे जनता को प्रेरित करने तथा विशेष अधिकार प्राप्त लोगों का विरोध करने की अपनी सामर्थ्य पर विश्वास रखते हैं।

मनुष्य बन्धन रहित होकर पैदा हुआ है, लेकिन वह हर जगह बन्धनों में जकड़ा हुआ है। फिर भी उसके अन्दर धधकती हुई आग है जो कि सदा के लिए इन बन्धनों में जकड़ा न रहने देगी। यह ठीक है कि मनुष्य सिर्फ खाने के लिए ही नहीं जीता। लेकिन इससे भी ज्यादा सत्य है कि वह रोटी के बिना जी भी नहीं सकता।

हर देश का यह प्रथम कर्तव्य है कि अपने देश की जनता को पर्याप्त खाना, कपड़ा तथा मकान की सुविधा दे। यही मूलाधार है। इसी नींव पर पढ़ाई, स्वास्थ्य सेवाएं, यातायात, तथा सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा आदि का क्रमशः निर्माण हो ताकि प्रत्येक व्यक्ति पर्याप्त विकास के लिए पूर्ण अवसर प्राप्त कर सके।

अगर यह मत स्वीकार कर लें तो आर्थिक व्यवस्था में ऐसा परिवर्तन लाना पड़ेगा कि प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण विकास करने की सुविधा प्राप्त हो। चाहे वह पूंजीवाद हो अथवा साम्यवाद; मुक्त अर्थ-व्यवस्था हो अथवा नियंत्रित; हमें किसी भी व्यवस्था का दास बनकर रहना ठीक नहीं है। वह व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए, जिससे हमारे उद्देश्य पूर्ण हों।

हमारे देश ने समाजवादी समाज की स्थापना का निश्चय कर लिया है। समाजवादी समाज की परिभाषा अभी तक कहीं भी स्पष्ट नहीं हुई है। फिर भी इस विषय पर सभी सहमत हैं कि गरीबी समाप्त हो तथा देश समृद्धि

का क्रय करने के लिए तत्पर रहें।

५. उपभोग की मात्रा कम करें—विशेष कर ऐसी वस्तुओं की, जिनकी निर्यात सम्भावनाएं पर्याप्त हैं।

६. यथाशक्ति स्वदेश निर्मित वस्तुओं का ही उपयोग करें।

७. विदेशी सहायता का तो स्वागत हो—पर उस पर निर्भर बन कर निष्क्रिय न बन जाएं। स्वावलम्बन की भावना ही सफलता का बीजमन्त्र है।

८. आय कर, बिक्रीकर व भूमि लगान की बकाया की पूरी वसूली हो।

विदेशी विनिमय की कमी से उत्पन्न खतरे से बचने व भारत और अपनी सर्वांगीण प्रगति की दृष्टि से निर्मित पंचवर्षीय योजना को सफल बनाने में हमारा यही सर्वाधिक मूल्यवान योग है।

——

के पथ पर अग्रसर हो। सम्पत्ति तथा आमदनी की वर्तमान असमानता को मिटाना होगा। पढ़ाई, स्वास्थ्य, घरबार, नौकरी, चिकित्सा, कानून—संक्षेप में सामाजिक तथा आर्थिक सुरक्षा, जितनी जल्दी हो सके सबको देनी होगी। इसमें जितना विलम्ब होगा—समस्या उतनी ही गम्भीर हो जायगी। कुछ लोगों के अनुसार वर्तमान कांग्रेस सरकार बहुत तेजी से आगे बढ़ रही है, और कुछ के मत में इसके बिलकुल विरुद्ध। जहां तक मेरा विचार है असमानता को मिटाने के प्रति देश की उन्नति की जो गति है वह बहुत मन्द है। यहां तो निहित स्वार्थों का जाल बहुत पैमाने पर बिछा हुआ है। प्रजातंत्र व्यवस्था होने पर भी राष्ट्रीय हित की बजाय किसी वर्ग विशेष के हितों का बोल बाला है।

यह सब इसलिये हो रहा है कि हमारे देश के अधिकांश लोग धन के उपासक हैं तथा उसके सामने सिर झुकाते हैं। इतनी ही भयंकर चीज यह है कि लोग एक सूत्र में बंधे हुए नहीं हैं। इस में से अधिकांश लोग उनके साथ ताल बजाने वाले हैं, जो सत्तारूढ़ हैं। इसमें यह बहुत बड़ी कमजोरी है, जो समाजवादी समाज के निर्माण में बाधा डालती है। यहां इस बात का जिक्र करना होगा कि किसी भी देश में आर्थिक व्यवस्था न ही पूर्ण रूपेण स्वतंत्र है न ही पूर्ण नियंत्रित। हर जगह संयुक्त अर्थ-व्यवस्था अमल में हैं। हर एक आदमी देश की रक्षा के लिए धन को त्याग ने के लिए तैयार है। लेकिन कई लोगों को रोटी के बजाय तोप चुनने के लिए विवश किया जाता है। मेरे विचार में मौलिक मतभेद सरकार के रुख में है। प्रत्येक देश की अर्थ-व्यवस्था उसके राजनीतिक संगठन के अनुसार चलती है।

अगर देश की सरकार तानाशाही के मार्ग पर चलती है तो वह निरन्तर अर्थ-व्यवस्था पर नियंत्रण बढ़ाने का प्रयत्न करेगी। इस विचार से नहीं कि जनता का जीवन स्तर निरन्तर बढ़े, बल्कि इस विचार से कि उसके अपने हाथों में सत्ता केन्द्रीकृत हो जाय। ऐसी व्यवस्था देश को निर्जीव तथा कमजोर बना देगी।

अगर देश की सरकार पूर्णरूपेण प्रजातंत्रात्मक है, तो वह अर्थ व्यवस्था का ऐसा नियंत्रण करेगी जिससे जनता का जीवन-स्तर निरन्तर बढ़ेगा, सम्पत्ति तथा आय की असमानता शीघ्र समाप्त हो जायगी तथा लोग अपनी उन्नति के लिए अपनी सुविधा के अनुसार आय साधन, तथा अवसर को प्रयोग करने में पूर्ण स्वतन्त्र रहेंगे।

अर्थ व्यवस्था को नियन्त्रण में रखने की कसौटी राष्ट्रीय हितों की वृद्धि है और इसे मापने के लिए कोई विशिष्ट मान दण्ड नहीं है। इस सिद्धान्त पर विभिन्न प्रकार की विचारधाराएं हो सकती हैं। उन सबको प्रगट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए, और उचित तथा वैधानिक पद्धति पर उनका निर्माण होना चाहिए। प्रजातन्त्रात्मक निर्णय प्रयोग में लाने चाहिएं। जो इनसे भिन्न मत रखते हैं, उन्हें चाहिए कि वे सहिष्णुता तथा योग्यता से मतदाताओं को समझाएं और वैधानिक पद्धति से उनको अपनी तरफ कर लें। इस प्रकार सत्ता को अपने हाथ में लें और अपनी नीति के अनुसार आर्थिक व्यवस्था को चलाएं। प्रजातन्त्रात्मक तथा विचार पूर्ण समाज के निर्माण के लिए इससे बढ़कर और कोई रास्ता नहीं है।

कोई भी अर्थ व्यवस्था, चाहे वह स्वतन्त्र हो अथवा योजनाबद्ध, अपने व्यवहार में अगर देश को निश्चित आर्थिक लक्ष्यों तक पहुँचाने में असफल होती है तो वह निकम्मी है। चालू अर्थ-व्यवस्था का पूर्ण अध्ययन होते रहना चाहिए तथा देश की आर्थिक आवश्यकताओं के अनुसार उसमें फेर बदल करते रहना चाहिए।

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास और प्रगति

प्रो० चतुर्भुज मामोरिया

प्राचीन अवस्था

भारत प्राचीन समय में कला-कौशल में बहुत अधिक उन्नति कर चुका था, जैसा कि औद्योगिक आयोग के इन शब्दों से ज्ञात होगा, "उस समय जब कि पश्चिमी यूरोप में, जो आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का जन्मदाता है, असभ्य लोग निवास करते थे, भारत अपने राजा नवाबों की सम्पत्ति और अपने कारीगरों के कौशल के लिये विख्यात था। इसके बहुत समय बाद भी, जबकि पश्चिम के व्यापारी पहले पहल यहां आये, यह देश औद्योगिक विकास की दृष्टि से पश्चिम के जो अधिक उन्नत राष्ट्र हैं उनसे यदि आगे बढ़ा हुआ नहीं तो किसी प्रकार कम तो नहीं था।" अत्यन्त प्राचीनकाल से भारतवासी अपने विभिन्न प्रकार के कला कौशल—सुन्दर ऊनी वस्त्रों के उत्पादन, अलग-अलग रंगों के समन्वय, धातु और जवाहरात के काम तथा इत्र आदि अर्कों के उत्पादन के लिए विश्व विख्यात रहे हैं। इस बात का प्रमाण मिलता है कि सन् ई० पू० ३०० में भारत और बेबीलोन में व्यापारिक सम्बन्ध थे। सन् ई० १—२००० तक की पुरानी मिश्र की कब्रों में जो शव हैं वे भारत की बहुत बढ़िया मलमल में लिपटे हुए पाये गये हैं। लोहे का उद्योग भी बहुत उन्नत अवस्था में था। यहां इस्पात से ब्लैड अच्छे बनते थे। किन्तु भारत की यह औद्योगिक उन्नत अवस्था अधिक समय तक न रह सकी। भारत में ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के स्थापित होने के साथ ही साथ भारत के उद्योग धन्धों के विनाश का श्रीगणेश हुआ। इस कम्पनी ने ब्रिटिश कारखानों के लिए आवश्यक कच्चे माल को भारत से निर्यात करने पर जोर दिया और उसके बदले में विलायत से तैयार माल आने लगा। इस समय की तत्कालीन सरकार भी यही प्रचार करती रही कि "भारत की उपजाऊ भूमि और वहां की जलवायु ही ऐसी है कि वहां कच्चे माल का उत्पादन हो और उसके बदले में बाहर से तैयार माल मंगवाया जाय। भारतीय मजदूर बहुत ही अयोग्य हैं तथा उनमें साहस की कमी है, इसलिए इस देश में आधुनिक उद्योगों का विकास नहीं हो सकता।" इसके लिए जनता में यह विश्वास पैदा किया गया कि भारत औद्योगीकरण की दृष्टि से अनुपयुक्त है।

हमारे उद्योगों के ह्रास के कई और कारण भी थे। विलायत में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप वहां बड़े-बड़े पुतलीघर और कारखाने स्थापित हुए, जिनमें बड़े परिमाण में और सस्ता सामान उत्पन्न किया जाने लगा। यह सामान भारत सरकार की मुक्त द्वार नीति (Free Trade Policy) अपनाने के कारण भारत में सस्ता पड़ने लगा। इसके विपरीत भारतीय उद्योगों का माल काफी महंगा पड़ता था, अतः लोगों ने इस सस्ते माल का हार्दिक स्वागत किया। देश के कई भागों में देशी नवाबों और राजाओं की आर्थिक अवनति के साथ-साथ कई देशी उद्योग-धन्धों का भी विनाश हो गया। रेलवे कम्पनियों ने भी अत्यन्त दोष पूर्ण किराये की नीति को अपना रखा था। इस नीति के अनुसार जो माल देश के भीतरी भागों से बन्दरगाह की ओर तथा बन्दरगाह से भीतर की ओर जाता था, उस पर कम किराया लिया जाता था। इस नीति का उद्देश्य यह था कि इङ्गलैंड का तैयार माल कम खर्च में आ जाय और भारत का कच्चा माल बाहर चला जाय। इस प्रकार औद्योगिक उन्नति के प्रति सरकार की उदासीनता होने से तथा कुछ सहायक कारणों से उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारत का औद्योगिक महत्व समाप्त होने लगा और वह केवल एक कृषि-प्रधान देश बना दिया गया। इस प्रकार भारत का आर्थिक पतन अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था।

आधुनिक उद्योगों का विकास

आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हुई। आरम्भ में ये उद्योग कलकत्ते के आस-पास में स्थित थे, क्योंकि यूरोपीय व्यवसायी इस प्रदेश में सबसे अधिक थे। बाद को क्रमशः देश

के भीतरी भागों में भी भारतवासियों ने कारखाने स्थापित करना आरम्भ किया। सन् १९१४ के यूरोपीय महायुद्ध आरम्भ होने के समय तक भारत में सूती वस्त्रों के कारखाने, बंगाल के जूट के कारखाने, उड़ीसा और बंगाल का कोयले का उद्योग और आसाम में चाय के उद्योग को छोड़कर अन्य कारखाने स्थापित नहीं हुए थे। सूती कपड़े के उद्योग को छोड़कर बाकी सब उद्योग विदेशियों के हाथ में थे। यूरोपिय महायुद्ध के उपरान्त देश में लोहे और इस्पात तथा सीमेंट के उद्योगों, कागज, दियासलाई, शक्कर, कांच और वस्त्र तथा चमड़े के उद्योगों की उन्नति शीघ्रता से हुई। दूसरे महायुद्ध के समय भारत के औद्योगिक विकास के मार्ग में कई प्रमुख कठिनाइयां उपस्थित थीं—यथा उपयुक्त मशीनों और टैकनीकल लोगों की कमी, यातायात के साधनों की अपूर्ण उन्नति, तथा विदेशी सरकार की बड़े-बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन देने की नीति आदि। इस कारण जितनी औद्योगिक उन्नति इस देश में हो सकती थी उतनी अवश्य नहीं हो सकी, किन्तु फिर भी कुछ हद तक इस युद्ध से भारतीय उद्योग धन्धों को काफी सहायता मिली। कई उद्योगों में अधिक से अधिक उत्पादन होने लगा। कई कद्योगों में नई मशीनें लगाई गयीं और कुछ आधारभूत उद्योगों की स्थापना हुई। छोटे पैमाने पर चलने वाले उद्योगों का काफी प्रसार हुआ और अनेकों प्रकार का सामान तैयार होने लगा। इस प्रकार वस्त्र, जूट, कागज, चाय, सीमेंट, इस्पात, शक्कर आदि के उद्योगों को काफी प्रोत्साहन मिला। कई नये उद्योगों का भी युद्धकाल में विकास हुआ, जैसे हवाई जहाज तैयार करने वाली हिन्दुस्तान एअर क्राफ्ट कम्पनी, अल्यूमीनियम उद्योग, युद्ध सामग्री और शस्त्रों के उद्योग आदि। रोजर मिशन (Roger Mission) ने जो सन् १९४० में भारत आया था, युद्ध सम्बन्धी उद्योग धन्धों के विकास की रिपोर्ट दी, जिसके परिणामस्वरूप कई

नीचे की तालिका में भारतीय उद्योग-धन्धों की उत्पत्ति का विस्तार बताया गया है :—

भारत में औद्योगिक उत्पत्ति

वस्तु	मात्रा	१९३९	१९४३	१९४५	१९४७
पक्का लोहा	(००० टनों में)	७०२	९४७	९५४	८९३
सूत	(लाख पौंड में)	१,२८९	१,६८५	१,९४४	१,२९६
सूती कपड़े	(लाख गज में)	४,३०६	४,७५१	४,७११	३,७६२
जूट का सामान	(००० टनों में)	१,२९६	१,०८४	१,०८६	१,०५२
कागज	(००० हंडर वेट)	१,१६४	१,७९२	१,९६४	१,८६२
गन्धक का तेजाब	(,,)	४८५	८६४	७३४	१,२००
अमोनियम सलफेट	(००० टनों में)	१४.५	२,१०७	२२०	२१३
वारनिश	(००० हंडर वेट)	५७२	१,१०५	१,०३०	७७२
दियासलाई	(१० लाख ग्रोस)	२१.६	१,६०८	२२.८	२३.३
शक्कर	(००० टनों में)	९९४	१,०७५	९६७	९०१
सीमेंट	(,,)	१,४०४	२,११८	२,२०९	१,४४८
नमक	(००० मन)	४३,९६८	५३,५१८	५४,६०२	५१,६०२
कोयला	(००० टनों में)	२८,३४४	२५,५१२	२८,७१६	३०,०००
			३,५७६	४,११६	४,०७३
बिजली	(१०,००,००० किलोवाट)		३,०१२	३,४३९	३,४१५
घासलेट	(००० गेलन)	२८,२८४	१९,८९४	११,११०	१३,९९४

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास और प्रगति

प्रो० चतुर्भुज मामोरिया

प्राचीन अवस्था

भारत प्राचीन समय में कला-कौशल में बहुत अधिक उन्नति कर चुका था, जैसा कि औद्योगिक आयोग के इन शब्दों से ज्ञात होगा, "उस समय जब कि पश्चिमी यूरोप में, जो आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का जन्मदाता है, असभ्य लोग निवास करते थे, भारत अपने राजा नवाबों की सम्पत्ति और अपने कारीगरों के कौशल के लिये विख्यात था। इसके बहुत समय बाद भी, जबकि पश्चिम के व्यापारी पहले पहल यहां आये, यह देश औद्योगिक विकास की दृष्टि से पश्चिम के जो अधिक उन्नत राष्ट्र हैं उनसे यदि आगे बढ़ा हुआ नहीं तो किसी प्रकार कम तो नहीं था।' अत्यन्त प्राचीनकाल से भारतवासी अपने विभिन्न प्रकार के कला कौशल—सुन्दर ऊनी वस्त्रों के उत्पादन, अलग-अलग रंगों के समन्वय, धातु और जवाहरात के काम तथा इत्र आदि अर्कों के उत्पादन के लिए विश्व विख्यात रहे हैं। इस बात का प्रमाण मिलता है कि सन् ई० पू० ३०० में भारत और बेबीलोन में व्यापारिक सम्बन्ध थे। सन् ई० १—२००० तक की पुरानी मिश्र की कब्रों में जो शव हैं वे भारत की बहुत बढ़िया मलमल में लिपटे हुए पाये गये हैं। लोहे का उद्योग भी बहुत उन्नत अवस्था में था। यहां इस्पात से ब्लैड अच्छे बनते थे। किन्तु भारत की यह औद्योगिक उन्नत अवस्था अधिक समय तक न रह सकी। भारत में ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के स्थापित होने के साथ ही साथ भारत के उद्योग धन्धों के विनाश का श्रीगणेश हुआ। इस कम्पनी ने ब्रिटिश कारखानों के लिए आवश्यक कच्चे माल को भारत से निर्यात करने पर जोर दिया और उसके बदले में विलायत से तैयार माल आने लगा। इस समय की तत्कालीन सरकार भी यही प्रचार करती रही कि "भारत की उपजाऊ भूमि और वहां की जलवायु ही ऐसी है कि वहां कच्चे माल का उत्पादन हो और उसके बदले में बाहर से तैयार माल मंगवाया जाय। भारतीय मजदूर बहुत ही अयोग्य हैं तथा उनमें साहस की कमी है, इसलिए इस देश में आधुनिक उद्योगों का विकास नहीं हो सकता।" इसके लिए जनता में यह विश्वास पैदा किया गया कि भारत औद्योगीकरण की दृष्टि से अनुपयुक्त है।

हमारे उद्योगों के ह्रास के कई और कारण भी थे। विलायत में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप वहां बड़े-बड़े पुतलीघर और कारखाने स्थापित हुए, जिनमें बड़े परिमाण में और सस्ता सामान उत्पन्न किया जाने लगा। यह सामान भारत सरकार की मुक्त द्वार नीति (Free Trade Policy) अपनाने के कारण भारत में सस्ता पड़ने लगा। इसके विपरीत भारतीय उद्योगों का माल काफी महंगा पड़ता था, अतः लोगों ने इस सस्ते माल का हार्दिक स्वागत किया। देश के कई भागों में देशी नवाबों और राजाओं की आर्थिक अवनति के साथ-साथ कई देशी उद्योग-धन्धों का भी विनाश हो गया। रेलवे कम्पनियों ने भी अत्यन्त दोष पूर्ण किराये की नीति को अपना रखा था। इस नीति के अनुसार जो माल देश के भीतरी भागों से बन्दरगाह की ओर तथा बन्दरगाह से भीतर की ओर जाता था, उस पर कम किराया लिया जाता था। इस नीति का उद्देश्य यह था कि इङ्गलैंड का तैयार माल कम खर्च में आ जाय और भारत का कच्चा माल बाहर चला जाय। इस प्रकार औद्योगिक उन्नति के प्रति सरकार की उदासीनता होने से तथा कुछ सहायक कारणों से उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही भारत का औद्योगिक महत्व समाप्त होने लगा और वह केवल एक कृषि-प्रधान देश बना दिया गया। इस प्रकार भारत का आर्थिक पतन अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका था।

आधुनिक उद्योगों का विकास

आधुनिक ढंग के कारखानों की स्थापना भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हुई। आरम्भ में ये उद्योग कलकत्ते के आस-पास में स्थित थे, क्योंकि यूरोपीय व्यवसायी इस प्रदेश में सबसे अधिक थे। बाद को क्रमशः देश

के भीतरी भागों में भी भारतवासियों ने कारखाने स्थापित करना आरम्भ किया। सन् १९१४ के यूरोपीय महायुद्ध आरम्भ होने के समय तक भारत में सूती वस्त्रों के कारखाने, बंगाल के जूट के कारखाने, उड़ीसा और बंगाल का कोयले का उद्योग और आसाम में चाय के उद्योग को छोड़कर अन्य कारखाने स्थापित नहीं हुए थे। सूती कपडे के उद्योग को छोड़कर बाक़ी सब उद्योग विदेशियों के हाथ में थे। यूरोपिय महायुद्ध के उपरान्त देश में लोहे और इस्पात तथा सीमेंट के उद्योगों, कागज, दियासलाई, शक्कर, कांच और वस्त्र तथा चमडे के उद्योगों की उन्नति शीघ्रता से हुई। दूसरे महायुद्ध के समय भारत के औद्योगिक विकास के मार्ग में कई प्रमुख कठिनाइयां उपस्थित थीं—यथा उपयुक्त मशीनों और टैकनीकल लोगों की कमी, यातायात के साधनों की अपूर्ण उन्नति, तथा विदेशी सरकार की बड़े-बड़े उद्योगों को प्रोत्साहन देने की नीति आदि। इस कारण जितनी औद्योगिक उन्नति इस देश में हो सकती थी उतनी अवश्य नहीं हो सकी, किन्तु फिर भी कुछ हद तक इस युद्ध से भारतीय उद्योग धन्धों को काफी सहायता मिली। कई उद्योगों में अधिक से अधिक उत्पादन होने लगा। कई उद्योगों में नई मशीनें लगाई गयीं और कुछ आधारभूत उद्योगों की स्थापना हुई। छोटे पैमाने पर चलने वाले उद्योगों का काफी प्रसार हुआ और अनेकों प्रकार का सामान तैयार होने लगा। इस प्रकार वस्त्र, जूट, कागज, चाय, सीमेंट, इस्पात, शक्कर आदि के उद्योगों को काफी प्रोत्साहन मिला। कई नये उद्योगों का भी युद्धकाल में विकास हुआ, जैसे हवाई जहाज तैयार करने वाली हिन्दुस्तान एअर क्राफ्ट कम्पनी, अल्यूमीनियम उद्योग, युद्ध सामग्री और शस्त्रों के उद्योग आदि। रोजर मिशन (Roger Mission) ने जो सन् १९४० में भारत आया था, युद्ध सम्बन्धी उद्योग धन्धों के विकास की रिपोर्ट दी, जिसके परिणामस्वरूप कई

नीचे की तालिका में भारतीय उद्योग-धन्धों की उत्पत्ति का विस्तार बताया गया है :—

भारत में औद्योगिक उत्पत्ति

वस्तु	मात्रा	१९३९	१९४२	१९४५	१९४७
पक्का लोहा	(००० टनों में)	७०२	९४७	९५४	८९३
सूत	(लाख पौंड में)	१,२८९	१,६८५	१,६४४	१,२९६
सूती कपड़े	(लाख गज में)	४,३०६	४,७५१	४,७११	३,७६२
जूट का सामान	(००० टनों में)	१,२६६	१,०८४	१,०८६	१,०५२
कागज	(००० हंडर वेट)	१,१६४	१,७९२	१,९६४	१,८६२
गन्धक का तेजाब	(,,)	४८५	८६४	७३४	१,२००
अमोनियम सलफेट	(००० टनों में)	१४.५	२,१०७	२२०	२१३
वारनिश	(००० हंडर वेट)	५७२	१,१०५	१,०३०	७७२
दियासलाई	(१० लाख ग्रोस)	२१.६	१,६०८	२२.८	२३.३
शक्कर	(००० टनों में)	९९४	१,०७५	९६७	९०१
सीमेंट	(,,)	१,४०४	२,११८	२,२०९	१,४४८
नमक	(००० मन)	४३,९६८	५३,५१८	५४,६०२	५१,६०२
कोयला	(००० टनों में)	२८,३४४	२५,५१२	२८,७१६	३०,०००
			३,५७६	४,११६	४,०७३
बिजली	(१०,००,००० किलोवाट)		३,०१२	३,४३९	३,५१५
घासलेट	(००० गेलन)	२८,२८४	१९,८९४	११,११०	१३,५९४

करोड़ रुपये खर्च करके वर्तमान कारखानों का विस्तार किया गया और कई नये कारखाने बन्दूकों, गोलों, कारतूसों, बमगोलों आदि का उत्पादन करने के लिए स्थापित किये गये। रासायनिक पदार्थ, गन्धक का तेजाब, क्लोरीन, बोरिक एसिड, एल्कली आदि के उत्पादन को भी बड़ा प्रोत्साहन मिला। मशीनों के भाग, हल्के ढंग की कृषि और शक्कर की मशीनरी और टूल, लोहे की चद्दरें, छड़ें, कीलियें तथा बाईसिकल के उत्पादन के लिये कई नये कारखानों का भी श्रीगणेश हुआ।

विभाजन का प्रभाव

सन् १९४७ ई० में देश का बंटवारा हुआ। इसका हमारे आर्थिक जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। कपास और जूट जैसे महत्वपूर्ण कच्चे माल के लिए भारत को बहुत हद तक पाकिस्तान पर निर्भर होना पड़ा। जूट की सब मिलें भारतीय संघ में आ गयीं, पर जूट पैदा करने वाली अविभाजित भारत की केवल एक तिहाई भूमि ही भारत को मिली। इसी प्रकार अविभाजित भारत की ९९ प्रतिशत सूती वस्त्र की मिलें भी भारत में हैं तथा इनके लिये १० लाख लम्बे और मध्यम धागे वाली कपास की गांठों के लिए पाकिस्तान पर निर्भर रहना पड़ा है। नीचे की तालिका में औद्योगिक बंटवारे की स्थिति बतलाई गई है :—

कारखानों की संख्या

उद्योग धन्धे	भारत में	पाकिस्तान में
सूती वस्त्र	४१९	१२
जूट के कारखाने	९७	०
लोहा व इस्पात	२४	०
इन्जीनियरिंग	५६३	२७
सीमेंट	२०	३
रासायनिक पदार्थ	५५	३
ऊनी वस्त्रों के कारखाने	१६	२
रेशम ,,	६	०
कागज ,,	२०	०
शक्कर ,,	१६६	२
दियासलाई ,,	१६	३
शीशा ,,	७९	०

राष्ट्रीय सरकार की औद्योगिक नीति

युद्ध के समय भारतीय उद्योग-धन्धों को जो प्रोत्साहन मिला वह देश के बंटवारे के बाद में स्थायी नहीं रह सका। इसके कई कारण थे—यातायात की कठिनाई, उद्योगपतियों और श्रमिकों के आपसी सम्बन्धों में खिचाव और बिगाड़, कच्चे माल की कमी, मशीन आदि पूंजीगत वस्तुओं के प्राप्त करने और इमारत के सामान मिलने की कठिनाई तथा टैक्नीकल लोगों की कमी आदि। इसका परिणाम, देश में धीरे-धीरे औद्योगिक संकट का अविर्भाव के रूप में हुआ। देश के स्वतन्त्र होने के समय हमारी औद्योगिक स्थिति अच्छी नहीं थी, अतः दिसम्बर १९४७ में उद्योग-धन्धों के सचिवों का सम्मेलन हुआ, जिसमें देश की औद्योगिक स्थिति पर विचार किया गया और कुछ प्रस्ताव उपस्थित किये गये। इसके फलस्वरूप अप्रैल १९४८ ई० राष्ट्रीय सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। सरकार ने उद्योग धंधों को चार श्रेणियों में बांटा—(१) पहली श्रेणी में वे उद्योग धंधे गये हैं जो केवल राज्य द्वारा ही संचालित किये जायेंगे—जैसे शस्त्र और सैनिक सामग्री (arms and ammunitions) संबंधी उद्योग, एटामिक शक्ति का उत्पादन और नियंत्रण, तथा रेलवे यातायात। (२) दूसरी श्रेणी में उन उद्योगों की गिनती की गई जो जहां तक उनके क्षेत्रों में नये कारखाने खोलने का प्रश्न है, राज्य के लिए ही सुरक्षित रखे गये, यद्यपि राज्य को (यदि राज्य के हित में आवश्यक मालूम पड़े तो) आवश्यक नियंत्रण के साथ व्यक्तिगत उत्पादन का सहयोग लेने का भी अधिकार दिया गया। कोयला, लोहा, इस्पात, हवाई जहाज निर्माण, जहाज निर्माण, टेलीफोन, टेलीग्राफ और वायरलेस औजारों का उत्पादन और मिट्टी का तेल निकालने के सम्बन्धी उद्योग इस श्रेणी में आते थे। इन उद्योगों से सम्बन्ध रखने वाले जो वर्तमान कारखाने आदि थे, उनका दस वर्ष तक राष्ट्रीयकरण नहीं होगा और उनको भली प्रकार चलने और उचित विस्तार के लिए सब प्रकार की सुविधाएं दी जायंगी। (३) तीसरी श्रेणी में ऐसे आधारभूत धंधे रखे गये जिनका आयोजन और नियंत्रण राष्ट्रीय हित में केन्द्रीय सरकार द्वारा होना आवश्यक समझा

(शेष पृष्ठ २७४ पर)

भारतीय अर्थव्यवस्था पर जनसंख्या-वृद्धि का प्रभाव

श्री ज्योतिप्रकाश सक्सेना एम० ए०

पूर्व काल में अब से बहुत कम उर्वरा भूमि-भाग भारत देश में होते हुए भी पुराणों के अनुसार यहाँ ५६ करोड़ की आबादी का निर्वाह भली भांति होता था।[1] पता नहीं यह सच है या झूठ, परन्तु जब हम यह सोचते हैं कि इस देश में संतान पैदा करना एक परम आवश्यक धर्म, पितृ-ऋणसे मुक्त होने का एक-मात्र उपाय माना जाता है, तो इस बात को सही मानने को जी करने लगता है। इसी प्रकार की विशाल जनसंख्या वाली बात आज से लगभग ५४० वर्ष पूर्व एक विदेशी यात्री निकोलो कॉन्टी ने दक्षिण भारत के विजयनगर के बारे में लिखी थी। उसके अनुसार उक्त राज्य में "इतने लोग निवास करते हैं कि जिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता।"[2] प्राचीन ग्रन्थों में केवल इसी प्रकार का वर्णन मिलता है। कुछ भी हो, इससे यह तो निश्चित हो ही जाता है कि जनसंख्या के मामले में हम कभी पीछे नहीं रहे।

भारत में जनसंख्या की वृद्धि

सन् १८८१ में, जब भारत की प्रथम किन्तु अपूर्ण जनगणना हुई, तो भारतवर्ष की आबादी २५.४० करोड़ थी। पचास वर्ष पश्चात्, सन् १९३१ में, यही आबादी बढ़कर ३५.३० करोड़ हो गई। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार उस वर्ष भारत की आबादी ३८.९० करोड़ थी।[3] पिछली गणना ने फिर इसी प्रकार की वृद्धि को इंगित किया है। उसके अनुसार सन् १९५१ में स्वतंत्र भारत की जनसंख्या ३६ करोड़ की सीमा पार कर गई। इस प्रकार पिछले दशक (१९४१-५१) में भारत की जनसंख्या में ४.३० करोड़ की वृद्धि हुई।[4]

इस प्रकार भारत की जनसंख्या को कभी भी स्थिर संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती। परन्तु वृद्धि की दर ऊँची होने पर भी असाधारण नहीं रही है। उदाहरणार्थ, १८७२ और १९४१ के बीच संयुक्त भारत की जनसंख्या में ५४ प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि इसी बीच इंग्लैंड की आबादी ५९ प्रतिशत और जापान की १३६ प्रतिशत बढ़ी।[5] इस प्रकार समस्या वृद्धि दर की नहीं, बल्कि प्रति वर्ष बढ़ने वाली संख्या की है। चूंकि देश की आबादी पहले ही बहुत काफी है, इसलिए १०–१५ प्रतिशत की मामूली वृद्धि ही लगभग ५ करोड़ की हो जाती है जो इंग्लैंड की आबादी के बराबर या आस्ट्रेलिया की आबादी की छः गुनी है। पिछले दशक में होने वाली वृद्धि के अनुसार भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष १½ प्रतिशत की दर से बढ़ती है, जिसका अर्थ हुआ वर्ष में ५० लाख या दिन में १२०००।[6]

जनसंख्या की वृद्धि का आर्थिक प्रभाव

एक आदर्श और कार्यकुशल जनसंख्या किसी भी देश के लिए महान् सौभाग्य की बात हो सकती है, क्योंकि यह उसकी आन्तरिक शक्ति का सूचक है।[7] इससे प्रायः देश के प्राकृतिक उपहारों का समुचित शोषण होता है जिससे देश में उत्पादन बढ़ता है, राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है और देश के निवासियों का जीवन-स्तर ऊँचा उठ जाता है। परन्तु यही जनसंख्या जब एक निश्चित सीमा को लांघ जाती है, तब यह राष्ट्र के रक्त को पी जाती है,

१. ज्यूलियन हक्सले : कितने दाँत - कितने चने, 'नवनीत', जुलाई, ५६, पृ० ३३।

२. ईस्टर्न इकानॉमिस्ट वार्षिकांक १९५१, पृ० १००५।

३. १९४१ तक के आँकड़े संयुक्त भारत के हैं। विभाजन के पश्चात् जो भू-भाग भारत में रह गया है, उसकी आबादी सन् १९४१ में ३१.६९ करोड़ होती है।

४. एस० चन्द्रशेखर : हंग्री पीपुल एंड एम्प्टी लैण्ड्स, पृ० १५२-५३।

५. वही : पृ० १५३।

६. मृत्युंजय बनर्जी : इंडियाज़ रिसोर्सेज़ एंड पॉपुलेशन, ईस्टर्न इकानॉमिस्ट, १४ जनवरी १९५३, पृ० ३०४।

७. ज्ञानचन्द : द प्रॉब्लम ऑफ पॉपुलेशन, पृ० ४।

करोड़ रुपये खर्च करके वर्तमान कारखानों का विस्तार किया गया और कई नये कारखाने बन्दूकों, गोलों, कारतूसों, बमगोलों आदि का उत्पादन करने के लिए स्थापित किये गये। रासायनिक पदार्थ, गन्धक का तेजाब, क्लोरीन, बोरिक एसिड, एल्कली आदि के उत्पादन को भी बड़ा प्रोत्साहन मिला। मशीनों के भाग, हल्के ढंग की कृषि और शक्कर की मशीनरी और टूल, लोहे की चद्दरें, छड़ें, कीलियें तथा बाईसिकल के उत्पादन के लिये कई नये कारखानों का भी श्रीगणेश हुआ।

विभाजन का प्रभाव

सन् १९४७ ई० में देश का बंटवारा हुआ। इसका हमारे आर्थिक जीवन पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा। कपास और जूट जैसे महत्वपूर्ण कच्चे माल के लिए भारत को बहुत हद तक पाकिस्तान पर निर्भर होना पड़ा। जूट की सब मिलें भारतीय संघ में आ गयीं, पर जूट पैदा करने वाली अविभाजित भारत की केवल एक तिहाई भूमि ही भारत को मिली। इसी प्रकार अविभाजित भारत की ९९ प्रतिशत सूती वस्त्र की मिलें भी भारत में हैं तथा इनके लिये १० लाख लम्बे और मध्यम धागे वाली कपास की गांठों के लिए पाकिस्तान पर निर्भर रहना पड़ा है। नीचे की तालिका में औद्योगिक बंटवारे की स्थिति बतलाई गई है :—

कारखानों की संख्या

उद्योग धन्धे	भारत में	पाकिस्तान में
सूती वस्त्र	४१९	१२
जूट के कारखाने	९७	०
लोहा व इस्पात	२४	०
इन्जीनियरिंग	५६३	२७
सीमेंट	२०	३
रासायनिक पदार्थ	५५	३
ऊनी वस्त्रों के कारखाने	१६	२
रेशम ,,	६	०
कागज ,,	२०	०
शक्कर ,,	१६६	२
दियासलाई ,,	१६	३
शीशा ,,	७९	०

राष्ट्रीय सरकार की औद्योगिक नीति

युद्ध के समय भारतीय उद्योग-धन्धों को जो प्रोत्साहन मिला वह देश के बंटवारे के बाद में स्थायी नहीं रह सका। इसके कई कारण थे—यातायात की कठिनाई, उद्योगपतियों और श्रमिकों के आपसी सम्बन्धों में खिचाव और बिगाड़, कच्चे माल की कमी, मशीन आदि पूंजीगत वस्तुओं के प्राप्त करने और इमारत के सामान मिलने की कठिनाई तथा टैकनीकल लोगों की कमी आदि। इसका परिणाम, देश में धीरे-धीरे औद्योगिक संकट का अविर्भाव के रूप में हुआ। देश के स्वतन्त्र होने के समय हमारी औद्योगिक स्थिति अच्छी नहीं थी, अतः दिसम्बर १९४७ में उद्योग-धन्धों के सचिवों का सम्मेलन हुआ, जिसमें देश की औद्योगिक स्थिति पर विचार किया गया और कुछ प्रस्ताव उपस्थित किये गये। इसके फलस्वरूप अप्रैल १९४८ ई० राष्ट्रीय सरकार ने अपनी औद्योगिक नीति की घोषणा की। सरकार ने उद्योग धंधों को चार श्रेणियों में बांटा—(१) पहली श्रेणी में वे उद्योग धंधे गये हैं जो केवल राज्य द्वारा ही संचालित किये जायेंगे—जैसे शस्त्र और सैनिक सामग्री (arms and ammunitions) संबंधी उद्योग, एटामिक शक्ति का उत्पादन और नियंत्रण, तथा रेलवे यातायात। (२) दूसरी श्रेणी में उन उद्योगों की गिनती की गई जो जहां तक उनके क्षेत्रों में नये कारखाने खोलने का प्रश्न है, राज्य के लिए ही सुरक्षित रखे गये, यद्यपि राज्य को (यदि राज्य के हित में आवश्यक मालूम पड़े तो) आवश्यक नियंत्रण के साथ व्यक्तिगत उत्पादन का सहयोग लेने का भी अधिकार दिया गया। कोयला, लोहा, इस्पात, हवाई जहाज निर्माण, जहाज निर्माण, टेलीफोन, टेलीग्राफ और वायरलेस औजारों का उत्पादन और मिट्टी का तेल निकालने के सम्बन्धी उद्योग इस श्रेणी में आते थे। इन उद्योगों से सम्बन्ध रखने वाले जो वर्तमान कारखाने आदि थे, उनका दस वर्ष तक राष्ट्रीयकरण नहीं होगा और उनको भली प्रकार चलने और उचित विस्तार के लिए सब प्रकार की सुविधाएं दी जायंगी। (३) तीसरी श्रेणी में ऐसे आधारभूत धंधे रखे गये जिनका आयोजन और नियंत्रण राष्ट्रीय हित में केन्द्रीय सरकार द्वारा होना आवश्यक समझा

(शेष पृष्ठ २७४ पर)

भारतीय अर्थव्यवस्था पर जनसंख्या-वृद्धि का प्रभाव

श्री ज्योतिप्रकाश सक्सेना एम० ए०

पूर्व काल में अब से बहुत कम उर्वरा भूमि-भाग भारत देश में होते हुए भी पुराणों के अनुसार यहां ५६ करोड की आबादी का निर्वाह भली भांति होता था।[१] पता नहीं यह सच है या झूठ, परन्तु जब हम यह सोचते हैं कि इस देश में संतान पैदा करना एक परम आवश्यक धर्म, पितृ-ऋणसे मुक्त होने का एक-मात्र उपाय माना जाता है, तो इस बात को सही मानने को जी करने लगता है। इसी प्रकार की विशाल जनसंख्या वाली बात आज से लगभग ५५० वर्ष पूर्व एक विदेशी यात्री निकोलो कॉन्टी ने दक्षिण भारत के विजयनगर के बारे में लिखी थी। उसके अनुसार उक्त राज्य में "इतने लोग निवास करते हैं कि जिस पर विश्वास नहीं किया जा सकता।"[२] प्राचीन ग्रन्थों में केवल इसी प्रकार का वर्णन मिलता है। कुछ भी हो, इससे यह तो निश्चित हो ही जाता है कि जनसंख्या के मामले में हम कभी पीछे नहीं रहे।

भारत में जनसंख्या की वृद्धि

सन् १८८१ में, जब भारत की प्रथम किन्तु अपूर्ण जनगणना हुई, तो भारतवर्ष की आबादी २५.४० करोड थी। पचास वर्ष पश्चात्, सन् १९३१ में, यही आबादी बढ़कर ३५.३० करोड़ हो गई। सन् १९४१ की जनगणना के अनुसार उस वर्ष भारत की आबादी ३८.९० करोड़ थी।[३] पिछली गणना ने फिर इसी प्रकार की वृद्धि को इंगित किया है। उसके अनुसार सन् १९५१ में स्वतंत्र भारत की जनसंख्या ३६ करोड की सीमा पार कर गई। इस प्रकार पिछले दशक (१९४१-५१) में भारत की जनसंख्या में ४.३० करोड की वृद्धि हुई।[४]

इस प्रकार भारत की जनसंख्या को कभी भी स्थिर संज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती। परन्तु वृद्धि की दर ऊंची होने पर भी असाधारण नहीं रही है। उदाहरणार्थ, १८७२ और १९४१ के बीच संयुक्त भारत की जनसंख्या में ५४ प्रतिशत वृद्धि हुई जबकि इसी बीच इंग्लैंड की आबादी ५६ प्रतिशत और जापान की १३६ प्रतिशत बढ़ी।[५] इस प्रकार समस्या वृद्धि दर की नहीं, बल्कि प्रति वर्ष बढ़ने वाली सख्या की है। चूंकि देश की आबादी वैसे ही बहुत काफी है, इसलिए १०–१५ प्रतिशत की मामूली वृद्धि ही लगभग ५ करोड की हो जाती है जो इंग्लैंड की आबादी के बराबर या आस्ट्रेलिया की आबादी की छः गुनी है। पिछले दशक में होने वाली वृद्धि के अनुसार भारत की जनसंख्या प्रतिवर्ष १¼ प्रतिशत की दर से बढ़ती है, जिसका अर्थ हुआ वर्ष में ४० लाख या दिन में १२०००।[६]

जनसंख्या की वृद्धि का आर्थिक प्रभाव

एक आदर्श और कार्यकुशल जनसंख्या किसी भी देश के लिए महान् सौभाग्य की बात हो सकती है, क्योंकि वह उसकी आन्तरिक शक्ति का सूचक है।[७] उसके द्वारा देश के प्राकृतिक उपहारों का समुचित शोषण होता है जिससे देश में उत्पादन बढ़ता है, राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है और देश के निवासियों का जीवन-स्तर ऊंचा उठ जाता है। परन्तु यही जनसंख्या जब एक निश्चित सीमा को लांघ जाती है, तब वह राष्ट्र के रक्त को पी डालती है,

---

१. ज्यूलियन हक्सले : कितने दांत - कितने चने, 'नवनीत', जुलाई, ५६, पृ० ३३।

२. ईस्टर्न इकानॉमिस्ट वार्षिकांक १९५१, पृ० १००५।

३. १९४१ तक के आंकडे संयुक्त भारत के हैं। विभाजन के पश्चात् जो भू भाग भारत में रह गया है, उसकी आबादी सन् १९४१ में ३२.६६ करोड़ होती है।

४. एस० चन्द्रशेखर : हंगरी पीपुल एंड एम्पटी लैन्डस, पृ० १५२-५३।

५. वही : पृ० १५३।

६. मृत्युंजय बनर्जी : इंडियन फुड रिसोर्सेज़ एंड पॉपुलेशन, ईस्टर्न इकानॉमिस्ट, १४ अगस्त १९५३, पृ० ३०४।

७. ज्ञानचन्द : द प्रॉबलम ऑफ पॉपुलेशन, पृ० ४।

गरीबी, बीमारी और मृत्यु को देश के कोने-कोने में फैला देती है और उत्पादन में वृद्धि कर जनताके रहन सहन के स्तर को ऊंचा उठाने के स्वप्न को धूल में मिला देती है। इसीलिए, ऊंचा जीवन-स्तर और जनाधिक्य सदा एक दूसरे के विरोधी के रूप में हमारे सामने आते हैं और हमारे समक्ष एक बड़ा-सा प्रश्नवाचक चिन्ह बनकर खड़े हो जाते हैं। आज माल्थस की बहुत-सी बातें गलत सिद्ध हो गई हैं, लेकिन उसका यह कथन कि जनसंख्या खाद्य-पूर्ति से अधिक तीव्र गति से बढ़ती है, वर्तमान भारतीय परिस्थितियों में अक्षरशः लागू होता है। और यही सबसे बड़ी समस्या है, देश के लिए, सरकार के लिए, क्योंकि अपनी जनता के कल्याण को ध्यानमें रखने वाली कोई भी सरकार इस ओर से उदासीन नहीं हो सकती।

जनसंख्या और खाद्य-पूर्ति :

जन संख्या की समस्या की मूल बात यह है कि उसने खाद्य-पूर्ति को काफी पीछे ढकेल दिया है। पिछली जन-गणना के अनुसार सन् १९५१ में भारत की जनसंख्या (जम्मू और कश्मीर और आसाम के कबायली इलाकों को छोड़कर) ३५६,८९१,६२४ थी। और यदि १०० आद-मियों को ८६ वयस्कों के बराबर मान लिया जाय, जैसा कि माना जाता है, तो इसका अर्थ यह हुआ कि सन् १९५१ में भारत में लगभग ३० करोड़ वयस्क मौजूद थे, [८] जिनको १४ औंस प्रतिदिन प्रति व्यक्ति के हिसाब से खिलाने के लिए लगभग ४.४ करोड़ टन खाद्यान्नों की आवश्यकता थी।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार भारत में सन् १९४९-५० से खाद्यान्नों के उत्पादन का स्वरूप इस प्रकार रहा है : [९]

वर्ष	खाद्यान्नों का उत्पादन (करोड़ टनों में)			
	चावल	गेहूँ	ज्वार-बाजरा	कुल
१९४९-५०	२.२८	०.६५	१.६२	४.५५
१९५०-५१	२.२१	०.६७	१.५४	४.४२
१९५१-५२	२.२८	०.६२	१.५४	४.४४

उपर्युक्त आंकड़ों के अनुसार भारत का खाद्यान्न-उत्पादन लगभग ४.४ करोड़ टन के रखा जा सकता है। इसमें से बीज और बरबादी के रूप में १० से १२॥ प्रतिशत कटौती कर, कुल खाद्यान्न जो उपभोग के लिए उपलब्ध होता है, वह लगभग ४ करोड़ टन के आता है। इस प्रकार लगभग ४० लाख टन की कमी पड़ती है। और जो बात सन् १९५१ के लिए ठीक उतरती है, वह आज भी ठीक है। आखिर, इन वर्षों में स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि भारत में बढ़ते हुए दांतों को खिलाने के लिए पर्याप्त चने उपलब्ध नहीं हैं।

इस समस्या का गुणात्मक स्वरूप और भी भयंकर है। यह असंदिग्ध सत्य है कि आदमी को केवल पर्याप्त भोजन ही नहीं मिलना चाहिये, बल्कि उस भोजन में पर्याप्त प्रोटीन, मिनरल साल्ट और विटामिन भी होने चाहिये। परन्तु अपने निम्न रहन सहन के स्तर के कारण भारत के अधिकांश लोग इस प्रकार का भोजन नहीं कर सकते। वास्तव में, सर जॉन मेगा के सर्वेक्षण के अनुसार सन् १९३३ में भारत में केवल ३९ प्रतिशत लोग हीअच्छा खाना खाते थे। [१०] यही हाल आज भी है। निम्न तालिका[११] से विभिन्न देशों की भोजन-सम्बन्धी स्थिति स्पष्ट हो जाती है : और इससे हमारे गुण पर बड़ा विपरीत प्रभाव पड़ता है। हमारी कार्यक्षमता कम हो जाती है और लोग यह कहने के लिए विवश हो जाते हैं कि 'भारतवर्ष के निवासी रहते नहीं, बल्कि रह लेते हैं।'

---

८. प्रथम पंचवर्षीय योजना (वृहद् अंग्रेजी संस्करण) पृ० १५७।

९. इन्डिया एट ए ग्लान्स (औरियन्ट लौंगमैन्स) पृ० २८१।

१०. जे० मेगा : एन इन्क्वायरी इन्टु सरटेन पब्लिक हैल्थ आस्पैक्ट्स ऑफ विलेज लाइफ इन इंडिया—पृ० १०।

११. ईस्टर्न इकानौमिस्ट वार्षिकांक १९५६—पृ० ९८७।

कैलोरीज और प्रोटीन का उपयोग
(प्रति व्यक्ति, प्रति दिन)

देश	कैलोरी की संख्या युद्ध के पूर्व	कैलोरी की संख्या ५४-५५	प्रोटीन (ग्रामों में) युद्ध के पूर्व	प्रोटीन (ग्रामों में) ५४-५५
अमरीका	३१५०	३०६०	८६	९२
इंग्लैंड	३११०	३२३०	८०	८६
आस्ट्रेलिया	३३०५	३०४०	१०३	९१
जापान	२१८०	२१६५	६४	५८
भारत	१९७०	१८४०	५६	५०

जनसंख्या और कृषि-अर्थ व्यवस्था

कृषि ही भारतवर्ष की समृद्धि की आधारशिला है। यही उसकी विशाल जनसंख्या के लगभग ७० प्रतिशत भाग की रोटी-रोजी की समस्या को हल करती है। दूसरे शब्दों में, भारत के राष्ट्रीय ढांचे में कृषि का स्थान सर्वोपरि है और हमारी आर्थिक उन्नति उसके विकास पर ही निर्भर है। परन्तु यह सब होते हुए भी भारतीय कृषि पिछड़ी हुई अवस्था में है। जैसा कि डा० क्लाउस्टन ने कहा है: "भारत में दलित जातियां हैं, दलित उद्योग भी हैं, और दुर्भाग्य से कृषि उनमें से एक है।" [१२]

और इसका प्रमुख कारण है भूमि पर जनसंख्या का अत्यधिक दबाव। भारत की अर्थ-व्यवस्था की यह विशेषता रही है कि उसकी जनसंख्या सदा ही खाद्य पूर्ति से आगे रही है दूसरे प्रगतिशील धन्धों के अभाव में लोगों ने सदा ही खेती को अपने जीविकोपार्जन का साधन बनाया। इस प्रकार भूमि पर दबाव बढ़ता ही गया। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार जहां पोलैन्ड, चेकोस्लोवेकिया, हंगरी, रूमानिया, यूगोस्लाविया और इंग्लैंड में १०० एकड़ भूमि क्रमशः ३१, २४, ३०, ३०, ४२ और ६ आदमियों को आश्रय देती है, वहां, भारत में, उसे १४८ आदमियों का भार वहन करना पड़ता है। [१३] इसीलिए यहां प्रति एकड़ उपज विदेशों के मुकाबले बहुत कम है। इस प्रकार जनसंख्या के भार ने कृषि की उत्पादन शक्ति को कम करने के साथ ही साथ उसके रूप को भी बदल डाला है [१४] और भारतीय कृषि एक 'घाटे की अर्थ-व्यवस्था' [१५] बन गई है।

जनसंख्या और उद्योग

कृषि के अलावा बढ़ती हुई जनसंख्या का दूसरा आघात उद्योगों पर हुआ है। यह प्रहार अप्रगतिशील कृषि और कार्य-अकुशलता के शस्त्रों द्वारा किया गया है। यह प्रकट ही है कि उद्योग और कृषि अन्तःनिर्भर हैं। कृषि उद्योग के लिए कच्चे माल की पूर्ति करती है, और उद्योग कृषि-उत्पादन की मांग का सृजन कर किसानों की आय में वृद्धि करता है। परन्तु जैसा अभी कहा जा चुका है, कि जनसंख्या के दबाव के कारण कृषि एक अलाभकारी व्यवसाय बन गई है, क्योंकि उसमें लगे हुए आदमियों का भली प्रकार जीवन-निर्वाह नहीं हो पाता और इसका प्रभाव उद्योगों पर भी पड़ता है।

फिर, रहन-सहन का स्तर, श्रम की कार्यक्षमता और औद्योगिक विकास साथ साथ चलते हैं। रहन-सहन के ऊंचे स्तर से कार्यक्षमता में वृद्धि होती है, जिससे औद्योगिक विकास सम्भव होता है। परन्तु दुर्भाग्यवश, जनाधिक्य के कारण, भारत के निवासियों का जीवन-स्तर दूसरे देशवासियों के मुकाबले में बहुत ही नीचा है। इसीलिए भारत की फैक्टरी में काम करने वाला श्रमिक पश्चिमी देशों या जापान में काम करने वाले श्रमिकों से समय की प्रति इकाई कम काम करता है, [१६] जिससे कुल उत्पादन कम होता है; राष्ट्रीय आय कम होती है। वस्तुतः यह सिद्ध हो जाता है कि जनाधिक्य भारत के औद्योगिक विकास में भी बाधक सिद्ध हुआ है।

जनसंख्या और बेरोजगारी

यही जनाधिक्य भारत में बढ़ती हुई बेरोजगारी के

---

१२. कृषि आयोग रिपोर्ट, साक्ष्य अभिलेख, खण्ड १।

१३. जे० ई० रसैल : एग्रेरियन प्रॉबलम्स फ्रॉम बाल्टिक टू एजियन।

१४. डी० घोष : प्रैशर आफ पॉपुलेशन एंड इकॉनोमिक एफीशियैन्सी इन इंडिया—पृ०५१-५२।

१५. रिजर्व बैंक ऑफ इन्डिया।

१६. डी० घोष : प्रैशर ऑफ पॉपुलेशन एंड एफीशियैन्सी इन इंडिया—पृ० ३५।

लिए भी जिम्मेवार है। स्थिति यह है कि युद्ध-काल को छोड़कर भारत में बेरोजगारी बढ़ती ही रही है, क्योंकि आर्थिक कार्यकलाप बढ़ती हुई जनसंख्या की बराबरी नहीं कर सके। यदि हम भारत में जनसंख्या की वृद्धि को ४० लाख प्रति वर्ष मान लें, तो इस हिसाब से हमको लगभग २५ लाख वयस्कों के लिए रोजगार का प्रबन्ध प्रति वर्ष करना पड़ेगा। इस प्रकार यदि योजना कमीशन के रोजगार सम्बन्धी आशावादी आंकड़े पूरे भी हो जांय, तब भी हमें बढ़ती हुई बेरोजगारी की समस्या का सामना करना पड़ेगा क्योंकि भारत में जहां जनसंख्या ४०-५० लाख प्रति वर्ष के हिसाब से बढ़ती है वहां रोजगार में वृद्धि की दर इससे बहुत कम होती है। अस्तु बढ़ती हुई बेरोजगारी बराबर हमारी नई जीती हुई आज़ादी के लिए हिंसात्मक उपद्रवों का खतरा पेश कर रही है।

वस्तुतः, शक्ति के एक अपरिमेय साधन के रूप में जो जनसंख्या हमारे लिए एक महान् वरदान सिद्ध हो सकती थी, आज राष्ट्र के सामने एक विकट समस्या बनकर आ खड़ी हुई है, जिसका समाधान देश के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य है। जब तक यह नहीं होता, हम अपने जीवन-स्तर को ऊंचा कर देश के अधिकाधिक कल्याण के स्वप्न को कभी भी साकार नहीं कर सकते, चाहे इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम कितनी ही पंचवर्षीय योजनाएं क्यों न पूरी कर डालें।

विकास योजनाओं के लिए विदेशी सहायता

के. सी. खत्री, सु. इंजीनियर
केन्द्रीय जल व विद्युत आयोग

देश में अनेक नदी घाटी योजनाएं शुरू की गयी हैं और उन्हें पूरा किया जा रहा है। परन्तु लोगों को अभी इस काम का विशेष अनुभव नहीं है। अमेरिका, कनाडा, प० जर्मनी जैसे अधिक उन्नत देशों ने इन योजनाओं को पूरा करने में बहुत सहायता दी है। प्रस्तुत लेख में बताया गया है कि किन-किन देशों ने क्या-क्या सहायता दी है।

देश में हाल ही में बहुद्देशीय नदी-घाटी योजनाएं शुरू की गयी हैं। इनके लिये स्थानों की जांच करनी पड़ती है, योजनाओं के नक्शे बनाने पड़ते हैं और नक्शों के अनुसार काम करना पड़ता है। इन सब कामों के लिये काम जानने वाले विशेषज्ञों की आवश्यकता है। अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, प० जर्मनी आदि कुछ देश ऐसे हैं जो इस विषय में बहुत उन्नत हैं। इन देशों ने भारत की विकास योजनाओं को पूरा करने के लिये बहुत सहायता दी है। इन देशों ने काम जानने वाले विशेषज्ञ यहां भेजे, यहां के इंजीनियरों को काम सिखाने की व्यवस्था की, आवश्यक यंत्र आदि भेजे और अपनी प्रयोगशालाओं में अनुसंधान करने की व्यवस्था की।

अमरीकी सहायता

नदी-घाटी योजनाओं के लिये अमेरिका ने सबसे अधिक सहायता दी है। भारत और अमेरिका के बीच १९५२ में एक समझौता हुआ था। इसके अनुसार अमेरिका भारत की सहायता के लिये विशेषज्ञ भेजता है, भारतीय इंजीनियरों को अमेरिका में काम सिखाया जाता है और विभिन्न योजनाओं के लिये आवश्यक यंत्र आदि मिलते हैं। इसके अलावा अमेरिका भारत को योजनाओं के सम्बन्ध में आवश्यक शिल्पिक सलाह आदि भी देता है। इस प्रकार की सलाह का प्रबन्ध करने पर जो खर्च आता है, वह भी अमेरिका ही उठाता है। इसके लिये अमेरिका ने एक लाख डालर रखे हैं।

पहली पंचवर्षीय आयोजना में अमेरिका ने ३२ शिल्पिक विशेषज्ञ यहां भेजे। इनमें से दस दामोदर घाटी निगम के लिये, दो हीराकुड योजना के लिये और बाकी केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के लिये थे। यहां से सत्रह इंजीनियर अमेरिका में काम सीखने गये।

अमेरिका ने भारत को ट्रैक्टर, डंपर, कंकरीट बनाने वाले यंत्र आदि भेजे। पहली पंचवर्षीय आयोजना में हीराकुड, चंबल, काकरापार, माही, पथरी आदि योजनाएं बनायी गयी थीं, जिन पर १२९ करोड़ से भी अधिक खर्च होने वाला था। अमेरिका ने इन योजनाओं के लिये ६८,२०,१२८ डालर दिये।

अमेरिका ने भारत सरकार को बाढ़-नियंत्रण की योजनाओं के लिये २,०२,००० डालर के यंत्र भेजे और वहां से कुछ विशेषज्ञ भी आये।

अमेरिका ने रेंड-योजना के लिये भी सहायता देना स्वीकार किया है। इसके लिये आवश्यक मशीनों और शिल्पिक सहायता के लिये अमेरिका ६४,१३,०१९ डालर और बांध के निर्माण के लिये ७ करोड़ रु० खर्च करेगा। रेंड-योजना पर कुल ४८ करोड़ रु० खर्च होगा।

भारत सरकार ने अमेरिका की सहायता से कोटा में और नागार्जुन सागर के पास दो केन्द्र खोले हैं जिनमें बुलडोजर जैसी जमीन साफ करने वाली भारी मशीनों की देखरेख करने और उनको चलाने की ट्रेनिंग दी जाती है। इन केन्द्रों में हर साल ४० मशीन चलाने वालों तथा मिस्तरियों को ट्रेनिंग दी जाती है।

कोलम्बो योजना के अन्तर्गत सहायता

कोलम्बो योजना के अन्तर्गत कनाडा, आस्ट्रेलिया और ब्रिटेन भारत को सहायता देते हैं। इनमें कनाडा ने भारत को सबसे अधिक सहायता दी है।

कनाडा ने पहली आयोजना के पहले दो वर्षों में देश को जो सहायता दी, वह मुख्यतः जिन्सों के रूप में थी। कनाडा के साथ जो करार हुआ था, उसमें यह तय हुआ था

कि कनाडा भारत को एक करोड़ पचास लाख डालर (कनाडा) का गेहूँ भेजेगा और इसकी बिक्री से जो रुपया मिलेगा, वह मयूराक्षी योजना (प० बंगाल) पर खर्च किया जायगा। इसके अलावा कनाडा ने योजना के लिये ३० लाख डालर (कनाडा) के बिजली के यंत्र भी दिये। कनाडा द्वारा दी गई सहायता के स्मरणार्थ मयूराक्षी बांध का नाम कनाडा बांध रखा गया है।

इसके अलावा कनाडा ने आसाम की बिजली योजना के लिये भी १२ लाख डालर के यन्त्र दिये। केवल तार उद्योग के लिये ५० लाख डालर का जो माल कनाडा ने दिया था, उसकी बिक्री से मिलने वाले रुपयों से इस योजना के निर्माण का खर्च निकाला गया।

कनाडा ने दो भारतीय इन्जीनियरों को वहां काम सिखाने की व्यवस्था की है।

आस्ट्रेलिया से सहायता

आस्ट्रेलिया ने ३ करोड़ ७२ लाख रु० का गेहूं और आटा यहां भेजा और उसकी बिक्री से जो धन मिला, उसका उपयोग तुंगभद्रा योजना के खर्च के लिये किया गया। इसके अलावा आस्ट्रेलिया ने तुंगभद्रा योजना और आंध्र की रामगुंडम योजना के लिये १ करोड़ ६० लाख रु० की मशीनें और बिजली का सामान दिया। दो भारतीय इन्जीनियरों को आस्ट्रेलिया में काम सिखाने की व्यवस्था की गई।

ब्रिटेन द्वारा सहायता

ब्रिटेन ने भारत को चार विशेषज्ञ भेजे और लगभग ४५,००० रु० के अनुसंधान के उपकरण भेजे। इसके अलावा केन्द्रीय जल और विद्युत आयोग के सात अधिकारियों को ब्रिटेन में ट्रेनिंग देने की व्यवस्था की।

संयुक्त राष्ट्र संघ से सहायता

संयुक्त राष्ट्र संघ और उसके विशेष संगठनों ने भी भारत को शिल्पिक सहायता दी है। यहां बांधों के डिजाइनों की जांच के लिये और जहाजों के नमूनों की जांच के लिये दो केन्द्र खोले गये हैं। शिक्षा-विज्ञान-संस्कृति संगठन ने इन केन्द्रों के लिये चार विशेषज्ञ यहां भेजे और केन्द्रीय जल-विद्युत अनुसंधान केन्द्र पूना के लिये १,५०,००० रु० के और फोटो-इलेस्टिक प्रयोगशाला के लिये ८०,००० रु० के उपकरण दिये।

इसके अलावा केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के चार अधिकारियों को फ्रांस, स्विटजरलैंड, ब्रिटेन और स्वीडन की प्रयोगशालाओं में काम सिखाने की व्यवस्था की। संयुक्त राष्ट्र संघ के शिल्पिक सहायता संगठन ने भी जल-विद्युत आयोग के आठ अधिकारियों को विभिन्न देशों में काम सिखाने की व्यवस्था की।

प० जर्मनी से सहायता

प० जर्मनी की सरकार ने वहां की फर्मों के जरिये भारतीय इन्जीनियरों को उनमें काम सिखाने की व्यवस्था की है। केन्द्रीय जल-विद्युत आयोग के दो अधिकारी वहां काम सीखने गये थे।

अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग

इस तरह भारत को शिल्पिक और आर्थिक दृष्टि से उन्नत देशों से उदारतापूर्वक सहायता मिलती रहती है। यह सही है कि देश की नदी घाटी योजनाएं अपने साधनों के सहारे ही चल सकती हैं और विदेशों से धन के रूप में जो सहायता मिलती है वह इन योजनाओं के लिए आवश्यक पूंजी की तुलना में बहुत थोड़ी है। परन्तु यह भी सत्य है कि इस बारे में विदेशों को जो अनुभव है वह इन योजनाओं की प्रगति में बहुत सहायक सिद्ध हो रहा है। अंतर्राष्ट्रीय सहयोग से पिछड़े देशों की उन्नति होगी और वे आगे चलकर अन्य जरूरतमंद देशों को इसी प्रकार का सहयोग देने के काबिल हो जायेंगे। इस प्रकार एक दूसरे की सहायता करने से विश्व बन्धुत्व की भावना को बढ़ावा मिलता है।

"भगीरथ के सौजन्य से"

फोन : २३१११
तार : 'ग्लोबशिप'
न्यू ग्लोब शिपिंग सर्विस लिमिटेड
खताऊ बिल्डिंग्स
४४ ओल्ड कस्टम हाउस रोड, फोर्ट बम्बई
सब प्रकार का क्लियरिंग, फारवर्डिंग, शिपिंग
का काम शीघ्र व सुविधापूर्वक
किया जाता है ।
सेक्रेटरी—
श्री बी० आर० अग्रवाल
बी० काम:० एल० एल० बी०
मैनेजिंग डायरेक्टर—
श्री सी. डीडवानिया

नया सामयिक साहित्य

(१) अर्थशास्त्र का प्रारम्भिक ज्ञान।

(२) आर्थिक भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान--दोनों के लेखकः—श्री लालता प्रसाद शुक्ल, प्रकाशकः—इंडस्ट्रियल एण्ड कमर्शियल सर्विस, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या क्रमशः ४०८ और ३५२, मूल्य २.७० और २.२५ रु०।

उपर्युक्त दोनों पुस्तकें उत्तर प्रदेश शिक्षा बोर्ड के, हाई स्कूल के कला के विद्यार्थियों के लिए अर्थशास्त्र के प्रथम और द्वितीय प्रश्न पत्र के निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार लिखी गई हैं।

प्रथम पुस्तक के दो भाग हैं। पहले भाग में अर्थशास्त्र के सिद्धांतों का प्रारम्भिक ज्ञान कराया गया है। दूसरे भाग में ग्रामीण समस्याओं और उसके विभिन्न पहलुओं जैसे ग्राम्य ऋण, सहकारिता, कृषि आदि पर १६ अध्यायों में प्रकाश डाला गया है।

दूसरी पुस्तक में भारत के भूगोल का आर्थिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है। भारत की प्राकृतिक रचना, जलवायु, वनस्पति, खनिज पदार्थ आदि का भारत के अर्थतंत्र से क्या सम्बन्ध है और किस प्रकार उसको प्रभावित करती है, इसकी विवेचना की गई है। साथ ही भारत की आर्थिक समस्याएं क्या हैं और आर्थिक योजनाओं द्वारा किस प्रकार इन समस्याओं को हल करने का प्रयत्न किया जा रहा है—इसका भी वर्णन किया गया है।

दोनों पुस्तकें विद्यार्थियों के अनुकूल सरल भाषा और बोधगम्य शैली में लिखी गई हैं। प्रत्येक अध्याय के अन्त में अभ्यास के लिए प्रश्न तथा पुस्तकों के अन्त में हाईस्कूल परीक्षा के पिछले ५ वर्षों के प्रश्न पत्र भी विद्यार्थियों की सुविधा के लिए दे दिये गये हैं। इतना होते हुए भी एक अभाव खटकता है। वह यह कि आर्थिक भूगोल के पुस्तक में जहां पर्याप्त चित्र नक्शे आदि दे दिये गये हैं, वहां अर्थशास्त्र की पुस्तक में ऐसे चित्र आंकड़े आदि कम हैं, जो हैं भी वे अनुपयोगी हैं। अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक ज्ञान में चित्रों व आंकड़ों आदि से काफी सहायता मिलती है। इनका होना अनिवार्य है।

म० मो० विष्ट

★

स्वदेश—हिन्दी मासिक। वार्षिक मूल्य ८) रुपये। एक प्रति ७५ नए पैसे। सम्पादक—स्वदेशाभरण। प्रकाशन:—स्वदेश कार्यालय, ५४, हीवेट गेट, इलाहाबाद-३

'स्वदेश' मार्च १९५८ से निकलने लगा है। सर्वश्री सुमित्रानन्दन पन्त, वासुदेवशरण अग्रवाल, वृन्दावनलाल वर्मा, हरिभाऊ उपाध्याय, देवेन्द्र सत्यार्थी, प्रभाकर माचवे आदि उच्च कोटि के विद्वानोंके लेख, प्रहसन तथा निबन्ध आदि संकलित हैं।

हिन्दी में मासिक पत्रों की कमी नहीं है, परन्तु अधिकांश पत्र उच्च कोटि के नहीं निकलते। 'स्वदेश' में रचनाओं का स्तर काफी अच्छा है। इसकी विशिष्टता इसकी विविधाता में है। निबन्ध, लोकगीत, प्रहसन, यात्रा, गजल, नीति, उद्धरण, एकांकी तथा कहानी आदि कार्यालय रोचक सामग्री है।

विकास किरण—सम्पादक—दत्ता वामन काले। प्रकाशन—खेतान भवन, मिर्जा इस्माइल रोड, जयपुर। वार्षिक मूल्य ८), एक प्रति २५) नए पैसे।

"विकास किरण" जनवरी १९५८ से प्रकाशित होने लगा है। उद्योग, वाणिज्य तथा सहकारिता आदि के सम्बन्ध में विभिन्न समस्याओं पर प्रकाश डालना इसका मुख्य विषय है। विकास सम्बन्धी अनेक विषयों पर भी पूर्ण जानकारी देने का प्रयत्न किया गया है। वर्तमान गतिविधियों का परिचय देते हुए देश की समृद्धि के लिए सहयोगदेने की भी प्रेरणा दी गई है। लेखों का चयन प्रशंसनीय है। पत्र की सफलता के लिए हमारी मंगल कामनाएं।

—रघुराम

मिलिक का बाल साहित्य—श्री सत्यप्रकाश मिलिक अकस्मात् ही बाल साहित्य के लेखक के रूप में हमारे सामने आये हैं। इनकी पुस्तकें विशेष रूप से बालकों के लिए लिखी गई हैं।

हम पहले और अब—मैं भारत के प्राचीन से

आज का अमेरिकन पूंजीवाद

"आजका अमेरिकी पूंजीवाद उस पूंजीवादसे सर्वथा भिन्न है, जिसका साम्यवादियों द्वारा अपने प्रचारमें उल्लेख किया जाता है। यह उस पूंजीवादसे भी सर्वथा भिन्न है, जो पूंजीवादके शुरूमें उसका रूप था। तब स्वामित्व व्यक्तिगत वस्तु थी और निर्णय लोग अपनी इच्छाके कर सकते थे। लोगोंको अधिक समय तक काम करना पड़ता था। और वेतन बहुत कम मिलता था। रोजगारके अवसर भी कम मिलते थे तथा उनके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता था। एक समय वह भी था, जब उद्योगपति जनताकी तनिक भी परवाह नहीं करते थे। पर अब वे दिन लद गए हैं।

आज प्रबन्धक लोग संचालक मण्डलके प्रति उत्तरदायी हैं और वे जनता के रवैये, कर्मचारियों के अधिकारों तथा उनकी आवश्यकताओं की ओर अधिकाधिक ध्यान देने लगे हैं। जनता की भी इसके अनुकूल प्रतिक्रिया व्यवसायों के एक नए विकास के रूप में हुई है।

स्वामित्व तेजी से बंटता जा रहा है

स्वामित्व तेजी के साथ बंटता जा रहा है। अमेरिकी व्यवसायों में एक तिहाई से अधिक ऐसे हिस्सेदार हैं, जिनकी वार्षिक आय ५ हजार डालर से कम है। इसमें बीमा कम्पनियों में जमा पूंजी तथा पेन्शन फण्ड शामिल नहीं हैं, जिनके द्वारा अधिकांश अमेरिकी सामान्य जन अप्रत्यक्ष रूप से व्यवसायों के स्वामी बने हुए हैं।

"कर सम्बन्धी व्यवस्था से आज के अमेरिकी पूंजीवादकी रूप रेखा प्रकट हो जाती है। इसके अन्तर्गत हजार डालर की आय वाले ४ सदस्यों के एक परिवार से संघीय आय-कर के रूप में केवल १० प्रतिशत, २५ हजार डालर की आय वाले परिवार से २५ प्रतिशत और १ लाख डालर की आय वाले परिवार से आय का आधेसे भी अधिक भाग वसूल किया जाता है। इससे यह भी प्रकट होता है कि ६० प्रतिशत अमेरिकी परिवारों के पास अपने मकान हैं, ७२ प्रतिशत के पास टैलिविजन सैट हैं।

"इन सबमें शायद सब से महत्व पूर्ण बात यह है कि शिक्षा प्राप्त लोगों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है, जिससे भविष्य में विस्तृत पैमाने पर अवसर प्राप्ति का मूल आधार स्थापित हो रहा है। १९५५ के बाद के वर्षों में हर वर्ष १९०० की तुलना में १० गुणा अधिक छात्र स्नातकीय उपाधियां प्राप्त कर रहे हैं, जबकि जन-संख्या में दुगने से कुछ ही अधिक वृद्धि हुई।

बहुत से सुधार शेष

यह ठीक है कि जनताकी आम दशा में सुधार करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। जरूरतमंद लोगों के लिए पर्याप्त चिकित्सा व्यवस्था, विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वालों के लिए आर्थिक बाधाओं को दूर करने, मकानों की अच्छी व्यवस्था करने और रोजगार में अधिक स्थिरता लाने की अभी तक आवश्यकता है। सभी लोगों को रोजगार तथा उन्नति सम्बन्धी समान अवसर प्रदान करने में अभी और भी अधिक विस्तार किया जाना आवश्यक है।"

(शेष पृष्ठ २८२ पर)

अर्वाचीन इतिहास पर एक सिंहावलोकन किया गया है। इसके पढ़ने से देश का समस्त इतिहास आंखों के आगे आ जाता है। यह अच्छा होता कि यह पुस्तक कुछ बड़े टाइप में प्रकाशित होती और कुछ भाषा को सरल कर दिया जाता। ८७ पृष्ठों की पुस्तिका का मूल्य १।) अधिक है।

★

हमारी योजनाएं—इस पुस्तिका में दोनों पंचवर्षीय योजनाओं का संक्षेप से सार दिया गया है। ७२ पृष्ठों की इस पुस्तिका में प्रथम योजना की सफलता व दूसरी योजना के विविध पहलुओं की जानकारी हो जाती है। पृष्ठ संख्या ७२। मूल्य ७५ नये पैसे।

मन्दिर प्रवेश—दलितों के मन्दिर प्रवेश के समर्थन में यह छोटा सा एकांकी लिखा गया है। इस नाटिका को अच्छी तरह खेला जा सकता है।

सबका बहिरंग आकर्षक है और सबके प्रकाशक दास ब्रादर्स, निकलसन रोड, अम्बाला हैं।

रेलवे-प्रगति के कुछ दृश्य

सर्वप्रमुख राष्ट्रीय उद्योग रेलवे

उन्नति व प्रगति के
कुछ तथ्य

चितरंजन कारखानेकी डायरी

चित्तरंजन के रेल इंजन के कारखाने में दिसम्बर १९५७ के अंत तक यानी उत्पापन शुरू होने के करीब ८ साल के अन्दर यहां ६२५ इंजन बने । २६ जनवरी, १९५० को यह कारखाना चालू हुआ था और ४ साल बाद, ६ जनवरी, १९५४ को यहां से १०० वां इंजन बनकर निकला । इसके बाद उत्पादन तेजी से वढ़ा और ५ फरवरी १९५५ को २०० वां, ३० नवम्बर १९५५ को ३०० वां १२ अगस्त १९५६ को ४०० वां, २५ मार्च, १९५७ को ५०० वां और नवम्बर, १९५७ में ६०० वां इंजन वन कर निकला ।

\+ + + +

रेलें कितना कोयला खाती हैं

भारत में जितना कोयला निकाला जाता है, उसका एक तिहाई हमारी रेलों के काम आता है । १९५६-५७ में ४ करोड़ ३ लाख १० हजार टन कोयला निकाला गया, जिसमें से १ करोड़ ३२ लाख टन रेलों में भस्म हुआ । इसके पहले साल ३ करोड ८४ लाख ६० हजार टन में से १

करोड़ २३ लाख टन कोयला रेलों के हिस्से आया।

\+ + + +

छःगुने मार्ग पर बिजली की रेलें

दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में, रेलों के विकास के कामों में बिजली से रेलें चलने की योजना सबसे बड़ी है। क्यों न हो। आखिर आजकल जितने मार्गों में बिजली की रेलें चलती हैं, उसको छः गुना जो बढ़ाना है। इस समय केवल २४० २४ मील में बिजली की रेलें दौड़ती हैं और दूसरी आयोजना के अन्त में इनका मार्ग १,४२४ मील और बढ़ जायगा।

भारत में सबसे पहली बिजली की रेल ३ फरवरी, १९२५ को चली और तीन साल बाद यानी ८ जनवरी, १९२८ को पुरानी बी. बी. सी. आई. रेलवे पर बिजली की रेलों का पहला मार्ग बना। इसके तीन साल बाद ११ मई, १९३१ को पुरानी साउथ इंडियन रेलवे पर भी बिजली की रेलें चलने लगीं। लेकिन पूर्वी क्षेत्र में बिजली की रेलों का श्रीगणेश काफी समय बाद, १४ दिसम्बर, १९५७ को हावड़ा से हुआ।

फौलाद की सड़क

अब भारत के रेलमार्ग की लम्बाई ३५ हजार मील से ऊपर पहुँच गयी है। एशिया में अब भी हमारी रेलों का पहला और संसार भर में चौथा स्थान है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से देश में ५,०१६.७ मील में रेलें और निकाली गयी हैं।

यात्रा-प्रेमी भारतीय

क्या भारत के लोग बहुत यात्रा करते हैं?

भारत की एक प्रतिशत आबादी, यानी लगभग ३८,००० ०० लोग हर रोज रेल से यात्रा करते हैं। सन् १९५६-५७ में इन लोगों ने जो यात्रा की, उसका औसत हर रोज १२ करोड़ मील रहा। इतने में ४,८०० बार दुनियां की परिक्रमा की जा सकती है।

सन् १९४१-४२ में हर दस लाख आदमियों में से ४,३९० लोग यात्रा करते थे। सन् १९५६-५७ में यह अनुपात ढाई गुना बढ़ा, यानी हर दस लाख में से १०,६५० लोग प्रतिदिन रेल से यात्रा करने लगे।

\+ + + +

रेल गाड़ियां कितना काम देती हैं

भारत की रेलगाड़ियों से कितना अधिक काम लिया जाता है?

सन् १९५६-५७ में मुसाफिर गाड़ियों ने हर रोज ३,२५,००० मील और मालगाड़ियों ने हर रोज २,३७,००० मील सफर किया। दूसरे शब्दों में भारत की रेलगाड़ियां प्रतिदिन इतना चलीं, जिससे संसार की हर रोज २५ परिक्रमाएं हो जातीं।

\+ + + +

रेल यात्री और मुनाफा

भारत की रेलों ने १९५६-५७ में एक यात्री को एक मील ले जाने पर औसतन ५.३४ पाइयां कमायीं, जबकि एक टन माल एक मील तक ढोने पर उन्हें ११ ३ पाइयां यानी दुगने से भी अधिक रकम मिली।

सन् १९५६-५७ में रेलों को जो आमदनी हुई, उसका एक तिहाई हिस्सा १ अरब, ३८ करोड़, २० लाख यात्रियों
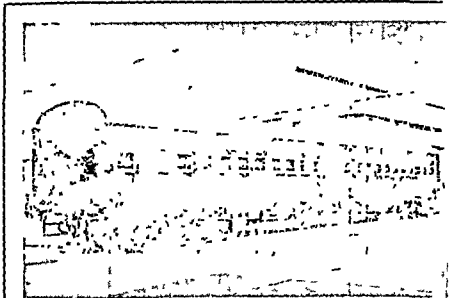
इंटेग्रल कोच फैक्टरी द्वारा निर्मित एक तृतीय श्रेणी का इस्पात निर्मित कोच
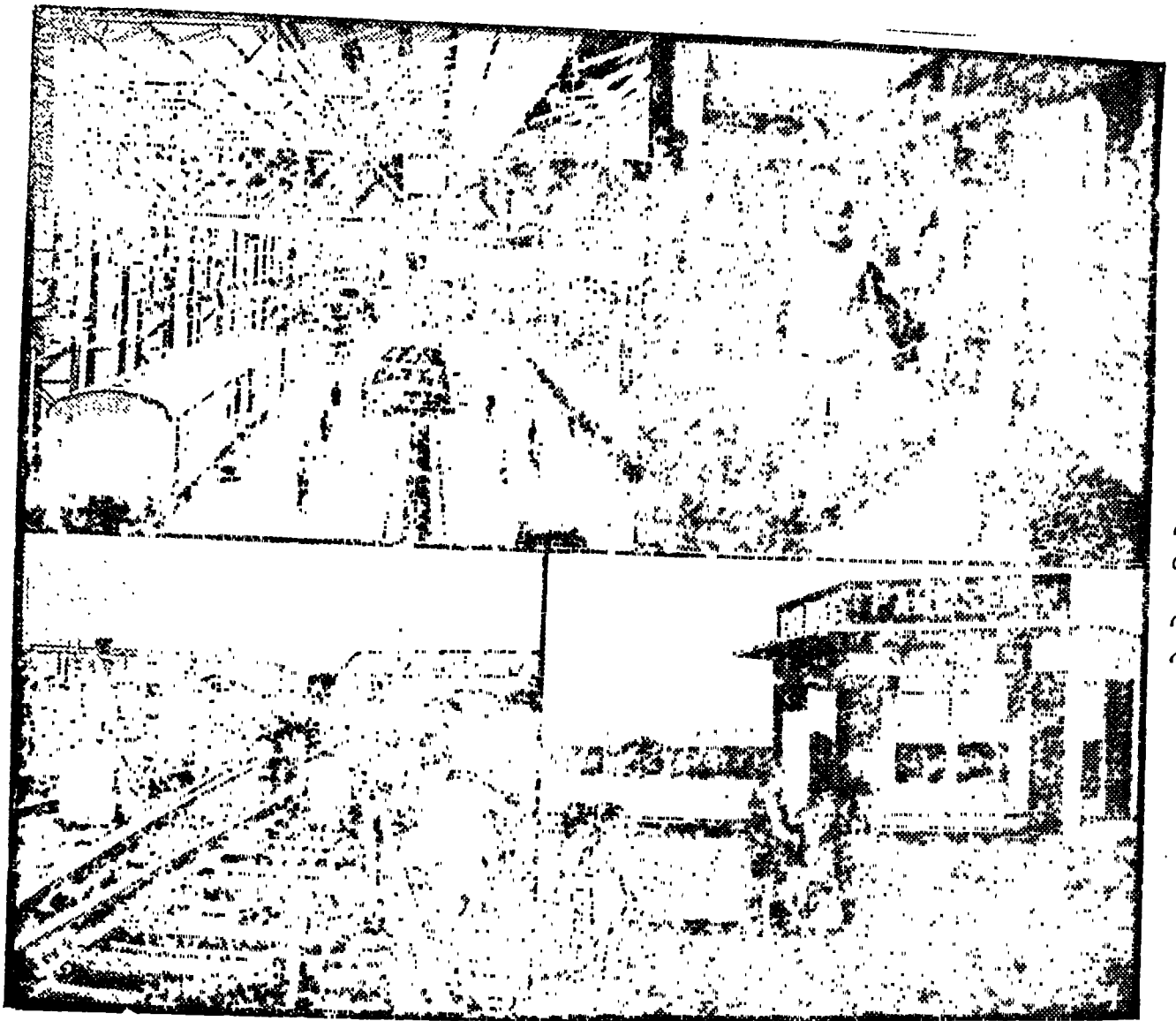
रेलवे-प्रगति के कुछ दृश्य

सर्वप्रमुख राष्ट्रीय उद्योग रेलवे

उन्नति व प्रगति के कुछ तथ्य

चितरंजन कारखानेकी डायरी

चित्तरंजन के रेल इंजन के कारखाने में दिसम्बर १९५७ के अंत तक यानी उत्पापन शुरू होने के करीब ८ साल के अन्दर यहां ६२५ इंजन बने । २६ जनवरी, १९५० को यह कारखाना चालू हुआ था और ४ साल बाद, ६ जनवरी, १९५४ को यहां से १०० वां इंजन बनकर निकला । इसके बाद उत्पादन तेजी से बढ़ा और ५ फरवरी १९५५ को २०० वां, ३० नवम्बर १९५५ को ३०० वां १२ अगस्त १९५६ को ४०० वां, २५ मार्च, १९५७ को ५०० वां और नवम्बर, १९५७ में ६०० वां इंजन बन कर निकला ।

\+ + + +

रेलें कितना कोयला खाती हैं

भारत में जितना कोयला निकाला जाता है, उसका एक तिहाई हमारी रेलों के काम आता है । १९५६-५७ में ४ करोड़ ३ लाख १० हजार टन कोयला निकाला गया, जिसमें से १ करोड़ ३२ लाख टन रेलों में भस्म हुआ । इसके पहले साल ३ करोड ८४ लाख ६० हजार टन में से १

करोड़ २३ लाख टन कोयला रेलों के हिस्से आया।

\+ + + +

छःगुने मार्ग पर बिजली की रेलें

दूसरी पंचवर्षीय आयोजना में, रेलों के विकास के कामों में बिजली से रेलें चलने की योजना सबसे बड़ी है। क्यों न हो। आखिर आजकल जितने मार्ग में बिजली की रेलें चलती हैं, उसको छ गुना जो बढ़ाना है। इस समय केवल २४०.२४ मील में बिजली की रेलें दौड़ती हैं और दूसरी आयोजना के अन्त में इनका मार्ग १,४२४ मील और बढ़ जायगा।

भारत में सबसे पहली बिजली की रेल ३ फरवरी, १९२५ को चली और तीन साल बाद यानी ८ जनवरी, १९२८ को पुरानी बी. बी. सी. आई. रेलवे पर बिजली की रेलों का पहला मार्ग बना। इसके तीन साल बाद ११ मई, १९३१ को पुरानी साउथ इंडियन रेलवे पर भी बिजली की रेलें चलने लगी। लेकिन पूर्वी क्षेत्र में बिजली की रेलों का श्रीगणेश काफी समय बाद, १४ दिसम्बर, १९५७ को हावड़ा से हुआ।

फौलाद की सड़क

अब भारत के रेलमार्ग की लम्बाई ३५ हजार मील से ऊपर पहुँच गयी है। एशिया में अब भी हमारी रेलों का पहला और संसार भर में चौथा स्थान है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से देश में १,०१६.७ मील में रेलें और निकाली गयी हैं।

यात्रा-प्रेमी भारतीय

क्या भारत के लोग बहुत यात्रा करते हैं?

भारत की एक प्रतिशत आबादी, यानी लगभग ३८,००० ०० लोग हर रोज रेल से यात्रा करते हैं। सन् १९५६ ५७ में इन लोगों ने जो यात्रा की, उसका औसत हर रोज १२ करोड़ मील रहा। इतने में ४,८०० बार दुनिया की परिक्रमा की जा सकती है।

सन् १९५१-५२ में हर दस लाख आदमियों में से ४,३६० लोग यात्रा करते थे। सन् १९५६-५७ में यह अनुपात ढाई गुना बढ़ा, यानी हर दस लाख में से १०,६२० लोग प्रतिदिन रेल से यात्रा करने लगे।

\+ + + +

रेल गाड़ियां कितना काम देती हैं

भारत की रेलगाड़ियों से कितना अधिक काम लिया जाता है?

सन् १९५६ ५७ में मुसाफिर गाड़ियों ने हर रोज ६,२५,००० मील और मालगाड़ियों ने हर रोज २,३७,-००० मील सफर किया। दूसरे शब्दों में भारत की रेल-गाड़ियाँ प्रतिदिन इतना चलीं, जिससे संसार की हर रोज २५ परिक्रमाएं हो जातीं।

\+ + + +

रेल यात्री और मुनाफा

भारत की रेलों ने १९५६-५७ में एक यात्री को एक मील ले जाने पर औसतन ५.२४ पाइया कमायीं, जबकि एक टन माल एक मील तक ढोने पर उन्हें ११२ पाइया यानी दुगने से भी अधिक रकम मिली।

सन् १९५६-५७ में रेलों को जो आमदनी हुई, उसका एक तिहाई हिस्सा १ अरब, ३८ करोड़, २० लाख यात्रियों

इंटेग्रल कोच फैक्टरी द्वारा निर्मित एक तृतीय श्रेणी का इस्पात निर्मित कोच

को ढोने पर मिला । रेलों को माल की ढुलाई से कुल आमदनी का ५७.३७ प्रतिशत हिस्सा मिला।

सन् १९५६-५७ में मुसाफिर गाड़ियां कुल ११ करोड़ ६० लाख मील चलीं, जबकि मालगाड़ियां कुल ८ करोड़ ७० लाख मील चलीं।

इसके बावजूद मुसाफिर गाड़ियों की अपेक्षा, रेल विभाग को मालगाड़ियों से ८४ करोड़ रु० की अधिक आमदनी हुई।

प्रति दिन ७,००० रेलें

देश में हर रोज लगभग ७,००० मुसाफिर तथा माल गाड़ियां औसतन ५,६२,००० मील चलती हैं। इतने में दिल्ली से मद्रास तक ४ सौ बार यात्रा की जा सकती है।

रेलों पर १९५६-५७ में जितना बोझ पड़ा, उतना पहले कभी नहीं पड़ा था।

मांसाहार बहुत मंहगा पड़ता है

सम्पदा अर्थशास्त्र की पत्रिका है, इसलिए मांसाहार के नैतिक और धार्मिक दृष्टि से औचित्य व अनौचित्य के विषय पर हम कुछ नहीं कहना चाहते। किन्तु निरामिष भोजियों के अन्तर्राष्ट्रीय संघ ने स्वास्थ्य सम्बन्धी दृष्टिकोण के अतिरिक्त आर्थिक दृष्टि से भी मांसाहार के प्रश्न पर विचार किया है। इसके अनुसार मांसाहार अन्नाहार की अपेक्षा बहुत अधिक खर्चीला तथा देश की अर्थ व्यवस्था को नुक्सान पहुँचाने वाला है। इस संघ ने अपने मत की पुष्टि में जो संख्याएं दी हैं, वे बहुत मनोरंजक हैं। यद्यपि वे संख्याएं भारत में भिन्न हो सकती हैं, किन्तु बहुत संभवत. उनका अनुपात भारत में भिन्न नहीं होगा।

मांस के लिए अन्न की अपेक्षा कम जमीन की अधिक आवश्यकता है। इसके परिणाम स्वरूप हम कम अन्न उत्पादन कर सकते हैं। मांस के लिए पैसा अधिक खर्च होता है जबकि इसमें पुष्टिकारक तत्व कम है। वास्तवमें शारीरिक रचना की दृष्टि से भी मनुष्य फलाहारी है, न कि मांसाहारी। यह खतरनाक चीज है। भोजनके अधिकांश विष इसमें विद्यमान होते हैं। इसे प्राप्त करना ही कठिन व हिंसा पूर्ण है। इसे दूसरी जगह भेजना, जमा करना तथा वितरण करना भी बहुत कठिन है। इसलिए मांसाहार का मतलब है जमीन, समय, सुविधा तथा पैसे का महान् अपव्यय। इनकी तुलना कीजिए—

प्रति टन का मूल्य

गेहूं	३१ पौ०	गो मांस	१३३ पौ०
ओट	२६ पौ०	भेड़ का मांस	३२२ पौ०
जव	२४ पौ०	सुअर का मांस	३०३ पौ०

उपर्युक्त मूल्य ब्रिटिश सरकार द्वारा १९५५ में किसानों से खरीद के लिए निश्चित किये गए थे। इन पदार्थों की भोजन की दृष्टि से उपयोगिता मूल्यों के बिलकुल विपरीत है। इंग्लैण्ड में मांस तथा शाकाहार सम्बन्धी खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए आधुनिक वैज्ञानिक साधन विद्यमान हैं। इसलिए यह तुलना मूल्यों के वास्तविक सम्बन्ध को बतलाती है।

खाद्य पदार्थों की तुलनात्मक उपयोगिता

खाद्य पदार्थ	पानी,	प्रोटीन	चर्बी	कैलरी	कारबोनेट
पनीर	३७	२५	३४	४१०	—
मटर	४	२८	४६	५८४	७.७
बादाम	५	२०	५३	५७६	३.९
मसूर की दाल	६	२६	—	२८७	४८.०
सोयाबीन	७	४०	२३	४२६	१३.३
भुना हुआ मांस	६५	१७	१६	२१२	—
भेड़ का मांस	६४	१६	१९	२३५	—

ये आंकड़े ब्रिटिश सरकार के एक कार्यालय से प्राप्त किये गए हैं। इन अंकों से यह स्पष्ट है कि अन्न की अपेक्षा एक समान वजन के मांस पदार्थ पुष्टि के लिए निम्नतर श्रेणी के हैं और इस प्रकार इस पर खर्च किया अधिकांश पैसा मांस के कलुषित पानी को ही खरीदने में व्यर्थ ही जाता है।

आवश्यक भूमि

आबादी की निरन्तर वृद्धिने मनुष्य जाति के भविष्य को खतरे में डाल दिया है। इस समय हिसाब लगाया गया है कि दुनियां में प्रति व्यक्ति के पीछे एक एकड़ उपजाऊ जमीन है जो सब तरह के खाद्य पदार्थों के उत्पादन के लिए उपलब्ध है।

एक शाकाहारी के लिए .५ या .६ एकड़ जमीन की आवश्यकता है, जिसमें दूध, मक्खन, उत्पादनका स्थान भी शामिल है।

एक मांसाहारी के लिए १.६३ एकड़ जमीन की आवश्यकता है, जिसमें से १.३ एकड़ जमीन सिर्फ मांस पदार्थों के लिए चाहिए।

कम उत्पादन वाले देश में ये आंकड़े कुछ ऊंचे होंगे। जब हम मांस तथा शाक खाद्य पदार्थों के औसत प्रति एकड़ उत्पादन की तुलना करते हैं तो स्पष्ट होता है कि ये आंकड़े बहुत कम परिवर्तन शील हैं। जमीन के उपजाऊपन, जलवायु तथा कृषि की पद्धति आदि से होने वाले परिवर्तनों की इन अंकों में चिन्ता नहीं की।

प्रति एकड़ खाद्य पदार्थों का वार्षिक उत्पादन

कृषि खाद्य पदार्थ	
गेहूँ, जौ, ओट	२,००० से २,५०० पौं०
सीम, मक्की,	३ से ४,००० ,,
चावल	४ से ५,००० ,,
आलू	२०,००० ,,
गाजर	२५,००० ,,
शलगम	३०,००० ,,
माँसाहार पदार्थ	
गो मांस	१६८ पौं०
भेड़ तथा भेड़ के बच्चे का मांस	२२८ ,,
सुवर का सब तरह का मांस	३०० ,,
अंडे (मुर्गी तथा दूसरे पक्षी)	४०० ,,

कम्युनिस्ट पार्टी का नया संविधान

पिछले दिनों अमृतसर में कम्युनिस्ट पार्टीके एक सम्मेलन में पार्टी का संविधान बदला गया था। उसकी प्रधान विशेषता यह थी कि उसका रूप कुछ जनतांत्रिक कर दिया, विरोधी राजनैतिक दलों की स्थिति और सत्ता को भी स्वीकार किया गया और समाजवाद की स्थापना के लिए भी शान्तिपूर्ण तथा लोकतन्त्रीय साधनों को अपनाना स्वीकृत हुआ।

इस सम्मेलनके निश्चयों पर प्रायः सभी अखबारों व नेताओं ने अपने विचार प्रकट किए हैं। यहां केवल दो मत दिए जाते हैं। पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा है—

पं० नेहरू

मुझे खुशी है कि साम्यवादी दल ने अपने अमृतसर अधिवेशन में कुछ हद तक एक ऐसी दिशा की ओर मोड़ लिया है, जिसे मैं भारतीय दृष्टि से युक्तियुक्त मार्ग कह सकता हूँ। यदि साम्यवादी लोग भारत की दृष्टि से सोचने लगें तो वे उस मार्ग पर और भी अधिक अभिमुख होते जायंगे। वास्तव में यदि साम्यवादी दल और भी अधिक विचार करेगा तो वह अन्तर्राष्ट्रीय ढंग का साम्यवादी दल रह ही नहीं जाएगा।

साम्यवादी लोगों का मन इस हद तक नक्काल बन गया है कि उसमें मौलिक चिन्तन रहा ही नहीं है। उनके सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व आदि के नारे अब पुराने पड़ गए हैं और समयानुकूल नहीं रहे। हमें पश्चिमी देशों, सोवियत रूस, चीन तथा अन्य देशों से, जो वैज्ञानिक और टैक्निीकल दृष्टि से आगे बढ़े हुए हैं, सीखना है, किन्तु जिस क्षण हम यह भूल जायंगे कि हमारी जड़ें भारत में हैं और जिस क्षण हम यह सोचने लगेंगे कि हमें दूसरों का पिछलग्गू बनना है, उसी क्षण अपनी यह सृजनात्मक शक्ति खो देंगे। मुझे अपने साम्यवादी मित्रों की एक चीज नापसन्द है और वह यह है कि उनमें किसी अन्य देश द्वारा की गई किसी भी चीज को एक दम खुले मुंह स्वीकार कर लेने की प्रवृति है।

पश्चिमी जर्मनी एक पूंजीवादी देश है और सोवियत रूस साम्यवादी, किन्तु दोनों ने ही युद्ध जन्य विनाश से अपना बहुत बड़े पैमाने पर उद्धार कर लिया है। इसका कारण यह है कि दोनों देशों में प्रशिक्षित और गुणी आदमी हैं। इसलिए अन्ततः महत्व इस या उस नीतिके बारे में बड़े बड़े नारे लगाने का नहीं है। बल्कि प्रशिक्षित और गुणी नर-नारियों और उनकी कठोर श्रम करने की क्षमता का है।

श्री श्रीमन्नारायण

कांग्रेसके मुख्य मंत्री श्री श्रीमन्नारायण लिखते हैं—

भारत के लोग अपनी प्राचीन विरासत और परम्पराओं के मुताबिक यह विश्वास नहीं करते कि नफरत, हिंसा और संघर्षों के जरिए स्थायी नतीजे हासिल हो सकते हैं। भारत की विचारधारा जरूरी तौर पर वस्तु के ऊपर आत्मा के प्रभुत्व की धारणा पर आधारित है, जबकि साम्यवाद यह मानता है कि खुद दिमाग भी भौतिक वातावरण की उपज है। इसी से गांधी जी को यह विश्वास हो गया था कि कम्यूनिस्ट विचारधारा भारत की मिट्टी में कामयाबी से

[क्रमशः

थ पनप नहीं सकती। यह विचारधारा हमारे राष्ट्र की अन्दरूनी प्रतिभा के लिए परायी है।

साम्यवाद बुनियादी तौर पर लोकतन्त्र और सर्वोदय बुनियादी सिद्धान्तों का विरोधी है। कम्युनिस्ट पार्टी अपने मकसदों को और अपने संविधान की भूमिका को तब्दील कर सकती है। लेकिन कोई भी उन पर संजीदगी से तब तक यकीन नहीं कर सकता, जब तक कि वे मार्क्सवादी तरीकों और ढंगों में अपने विश्वास का परित्याग नहीं कर देते।

बेशक कार्ल मार्क्स एक महान विचारक थे। लेकिन मार्क्स भारत और दूसरे देशों की कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की तरह मार्क्सवादी नहीं थे। उनका सिद्धान्त औद्योगिक क्रान्ति के बाद यूरोप में फैली हुई सामाजिक और आर्थिक दशाओं पर आधारित था। वे अच्छी तरह उन दूरगामी परिवर्तनों की कल्पना नहीं कर सके थे, जो कि पूंजीवादी देशों के आर्थिक ढांचे में धीरे धीरे होने वाले थे। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का मार्क्सवादी दर्शन रूस और यूरोप के दूसरे हिस्सों के तत्कालीन दर्शनों पर आधारित था। लेकिन सभी आर्थिक आधुनिक स्थितियों की व्याख्या मार्क्सवादी विचारों के रूप में, जो कि सौ वर्ष पहले लिखे गये थे, करने की कोशिश करना बेवकूफी होगी। पूंजीवाद और स्वेच्छाचारिता की विचारधारा की तरह ही मार्क्सवाद भी पुराना और बेकार हो चुका है और उसमें क्रांतिकारी तब्दीलियों की जरूरत है। इस समय वर्ग-संघर्ष की धारणा की जगह सहकारी जीवन और कोशिशों का आदर्श कायम होता जा रहा है। जमींदारों से जमीन छीनने के लिए हत्याओं और खूनी आन्दोलनों की जगह अब हम भूदान और ग्रामदान के रूप में एक महान् अहिंसक क्रान्ति का शानदार दृश्य देख रहे हैं। हिंसा को एक सामाजिक आर्थिक क्रान्ति की "धाय" मानने की बजाय, आचार्य विनोबा भावे हृदय और मस्तिष्क के परिवर्तन को सही माने में किसी भी आर्थिक क्रान्ति का आधार मानते हैं। हिंसा और अहिंसा के बीच यह बुनियादी फर्क सिर्फ सैद्धांतिक बात नहीं है। जैसा कि गांधी जी ने कहा है, यह बुनियादी फर्क "मार्क्सवादी सिद्धांत का मूलोच्छेद कर देता है।"

चीन के देहातों की उपेक्षा

चीनी समाचार-पत्रोंके एक विद्यार्थी ने २२ मार्च १९५८ के न्यू स्टेटस मैन में यह लिखा है कि कम्युनिस्ट चीन में भी औद्योगिक मशीनों को अधिक से अधिक प्रोत्साहन और महत्व देने के फलस्वरूप किसानों और देहातों की उपेक्षा हुई है और वे काफी हद तक भुला दिये गये हैं। वहां पर आजकल कारखानों मजदूर को ही अधिक प्रतिष्ठा प्राप्त है। पिछले साल चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने इस बात को मंजूर किया था कि देहातों पर, औद्योगीकरण पर ज्यादा जोर देने का बुरा प्रभाव पड़ा है। कृषि क्षेत्र पर ध्यान न देने के कारण दूसरी गम्भीर समस्यायें, जैसे ज्यादा से ज्यादा संख्या में देहाती लोगों का नगरों की ओर प्रवास, पैदा हो गयी है। चीन की सरकार गांवों से इस प्रवास को किसी तरह रोकने की कोशिश कर रही है। गांव के लोगों के शहरों की ओर प्रवास को रोकने की कुंजी यह है कि किसान और ग्राम जनता को विचारधारा सम्बन्धी अधिक से अधिक शिक्षा दी जाय। केन्द्रीय और राज्य समितियों ने अभी हाल में इस विषय पर एक आदेश पत्र जारी किया है जिसके फलस्वरूप ५ प्रांतों में, जहां पर कि ग्रामीण प्रवास की समस्या काफी तीव्र है, रेलवे लाइन से लगे हुए क्षेत्रों पर प्रतिरोधक अधिकारी नियुक्त कर दिये गए हैं और स्थानीय अधिकारियों को भी इसलिए नियुक्त कर दिया गया है कि वे किसानों को उनके घर वापस भेज सकें। सभी कम्युनिस्ट देशों ने अविवेकपूर्ण औद्योगीकरण को आर्थिक विकास की कुंजी बनाई है। किन्तु चीन जैसे देश में, जहां पर कि खेती सबसे बड़ा आर्थिक क्षेत्र है, यदि किसानों की ओर पर्याप्त ध्यान न दिया गया, तो आखिर में चलकर, उससे स्वयं औद्योगिक विकास खत्म हो जाएगा। (आर्थिक समीक्षा से)

कुछ ज्ञातव्य अंक

विश्व की जानकारी

सं०	वस्तु		१९५२	१९५३	१९५४	१९५५	१९५६	१९५७ जन-सितंबर
१.	आबादी	दस लाखों में	२५६०	२६०३	२६४७	२६९१	२७३४	
२.	कृषि उत्पादन	१९३४-३८=१००	१२५	.१३०	१३१	१३५	१३८	
३.	खाद्य पदार्थों का उत्पादन	,,	१२६	१३२	१३२	१३५	१३९	
४.	औद्योगिक उत्पादन	१९५३=१००	९४	१००	१००	१११	११६	१२०
५.	विश्व के आयात	१००००— अमेरिकन डालर	७९.२	७५.८	७९.०	८८.०	९६.९	७९.५
६.	,, निर्यात	,,	७२.३	७३ ३	७६.१	८२.८	९१.९	७३.७
७.	आयात मात्रा	१९५३=१००	९४	१००	१०५	११५	१२४	१३०
८.	आयात का मूल्य	,,	१०५	१००	९९	९९	१०१	१०४
९.	उपयोग में बस व कारें	दस लाखों में	५८.२	६२ ६	६७.०	७२.९	७७.८	
१०.	व्यापारी गाड़ियां	,,	१७.२	१९.४	१९.०	२०.२	२१.३	
११.	रेल्वे माल परिवहन	१००००००००० टन किलोमीटर	२१८८	२२४९	२२४१	२५१५	२७१३	

अन्न का उत्पादन—१९५६-५७ में अन्नों का उत्पादन—दालों को भी गिन कर—गत वर्ष की अपेक्षा ५.४ प्रतिशत अधिक रहा। देश के कुछ भागों में खरीफ की फसल बिगड़ जाने पर भी समस्त उत्पादन में वृद्धि हुई।

भारत में अन्नों का उत्पादन

(परिमाण लाख टनों में)

	५५-५६	५६-५७	५६-५७ में ५५-५६ से अधिकता का प्रतिशत
चावल	२६८.५	२८१.४	४.८
गेहूं	८५.७	९०.७	५.८
अन्य अनाज	१९०.४	२००.४	५.३
सब अनाज	५४४.६	५७२.५	५.०
दालें (चनों को भी गिनकर)	१०८.३	११४.४	५.३
समस्त अन्न	६५२.९	६८६.९	५.४

अन्नों का आयात

आयात—इस वर्ष १६२.२ करोड़ मूल्य का ३५.८ लाख टन अनाज विदेशों से मंगवाया गया। इसकी तुलना में, १९५६ में ५६.३ करोड़ रु० मूल्य का १४.२ लाख टन मंगवाया गया था।

(परिमाण लाख टनों में)

	१९५७	१९५६
गेहूँ	२८.४	१०.९
चावल	७.४	३.३
योग	३५.८	१४.२

इस वर्ष इतना अधिक आयात करने में सुगमता इस कारण हुई कि अमरीका की सरकार ने अपने सहायता-कार्यक्रम के अन्तर्गत बड़ी मात्रा में सहायता दी। अन्य भी कई देशों ने सहायता दी। २८.४ लाख टन गेहूँ में से

लगभग २६.७ लाख टन तो अमरीका के पी० एल० ४८० और पी० एल० ६६५ कार्यक्रमों के अन्तर्गत आया और ०.११ लाख टन कैनाडा से आया, जो कि उससे कोलम्बो योजना के अन्तर्गत प्राप्तम्य ७० लाख डालर मूल्य के १.१२ लाख टन का एक भाग था। शेष १.६ लाख टन गेहूं आस्ट्रेलिया से खरीदा गया। चावल लगभग १.६४ लाख टन तो अमरीका से पी० एल० ४८० कार्यक्रम के अन्तर्गत आया, ४.७६ लाख टन बर्मा से आया जो कि उसके साथ किए हुए पांच वर्ष में २० लाख टन चावल खरीद लेने के समझौते का एक भाग था, ०.१४ लाख टन चीन से लिया गया, ०.३३ लाख टन रूस-सरकार की मारफत बर्मा से मिला, ०.१२ लाख टन पाकिस्तान से ऋण की अदायगी में वसूल हुआ, और लगभग ७ हजार टन उत्तरी वियतनाम से खरीदा गया।

चीनी का तल-पट

(परिमाण हजार टनों में)

	१६५५-५६ (संशोधित)	१६५६-५७
पहली नवम्बर को मौजूद माल	५४३	५३२
मौसम में उत्पादन	१,८६२	२,०२६
आयात	६५	—
कच्ची खांड साफ करके चीनी बनाई गई	३	—
उपलब्ध माल का योग	२४७३	२५६१
३१ अक्तूबर को वर्ष की समाप्ति पर मौजूद	५३२	४३५
भर का उठाव	१,६४१	२१२१

इस तालिका से प्रकट है कि १६५६-५७ में सब मिलाकर, १६५५-५६ की अपेक्षा, लगभग एक लाख टन माल अधिक उपलब्ध हो गया था।

थोक मूल्यों के सूचक अंक

अगस्त ५६ में सूचक अंक चरम सीमा पर बढ़ कर कुछ घटने शुरू हुए हैं।

(१६५२-५३ के मूल्यों को १०० मानकर)

वर्ष और माह	चावल	गेहूं	ज्वार	सब अनाज	दालें
जुलाई	१०८	८६	१२८	१०५	८७
अगस्त	१११	८६	१२२	१०६	८७
सितम्बर	१०८	८७	११२	१०३	८३
अक्टूबर	१०७	८८	११३	१०२	८३
नवम्बर	१०७	८७	११५	१०२	८३
दिसम्बर	१०२	८६	१०६	६८	८०
१६५८					
जनवरी	१०१	८६	१०३	६७	८०

आर्थिक समानता

आर्थिक समानता के लिए काम करने का मतलब है–पूंजी और मजदूरी के बीच के झगड़ों को हमेशा के लिए मिटा देना। ...अगर धनवान लोग अपने धन को और उसके कारण मिलने वाली सत्ता को खुद राजी-खुशी से छोड़कर और सब के कल्याण के लिए सब के साथ मिलकर बरतने को तय्यार न होंगे तो यह तय समझिए कि हमारे मुल्क में हिंसक और खूंखार क्रान्ति हुए बिना नहीं रहेगी। — म० गांधी

(पृष्ठ २५८ का शेष)

गया। नमक, मोटर, ट्रेक्टर, इलैक्ट्रिक इन्जीनियरिंग, मशीन टूल्स, भारी रासायनिक पदार्थ, खाद, ऊनी-सूती वस्त्र उद्योग, सीमेंट, शक्कर, कागज खनिज पदार्थ, रक्षा से सम्बन्ध रखने वाले उद्योग, हवाई और समुद्री यातायात, अलोह धातु आदि उद्योगों का समावेश इसी श्रेणी में होता है। (४) चौथी श्रेणी में बाकी के सब उद्योग शामिल थे और व्यक्तिगत उत्पादन के लिए इनमें पूरी स्वतन्त्रता दी गई, परन्तु राज्य भी इस क्षेत्र में अधिकाधिक भाग ले सकेगा और यदि उद्योग-धंधों की भावी उन्नति के लिए आवश्यक मालूम पड़ा तो राज्य को हस्तक्षेप करने में भी कोई संकोच नहीं होगा। (क्रमशः)

सरकारी कर्मचारी व मैनेजर

शुरू में सारे मनुष्य श्रमजीवी थे। सब लोग श्रम द्वारा उत्पादन करके अपना गुजारा करने के साथ-साथ मिल-जुल कर अपनी व्यवस्था कर लेते थे। समाज छोटे-छोटे झुंडों में बंटा हुआ था। सहकार के आधार पर जिन्दगी चलती रहने के कारण सामाजिक समस्या में जटिलता नहीं थी, तो यह तरीका ठीक से चल जाता था। लेकिन प्रतिद्वन्द्विता के आविर्भाव से वह मर्यादित रहे और समय-समय पर उसमें से निकली हिंसा नियंत्रित रहे, इसलिए राज्य की सृष्टि हुई। राज्य की सृष्टि के साथ ही अनुत्पादक उपभोक्ता के रूप में एक वर्ग का जन्म हुआ और वह बढ़ता गया। पहले राज्य का काम था : "दुष्ट का दमन और शिष्ट का पालन।" फिर इतनी तादाद में राज्यकर्ता थे, जितने उस काम के लिए आवश्यक थे। लेकिन लोक-तंत्र के युग में राज्य का कर्म-क्षेत्र बढ़ता गया और आज जन-कल्याणकारी राज्यवाद के नाम से सर्वव्यापी होता गया। फलस्वरूप समाज में रहने वाला एक और समाज की व्यवस्था करने वाला दूसरा वर्ग हो गया। इसके नतीजे से दुनिया के सामने एक विराट नौकरशाही की फौज खड़ी हो गयी, जो कहने को उत्पादक-वर्ग की सेवक है, लेकिन वस्तुतः वह वर्ग मालिक बन गया है। इतना ही नहीं, बल्कि उत्पादक-वर्ग के उत्पादन का मुख्य हिस्सा यही उपभोग कर लेते हैं। दूसरी तरफ वैज्ञानिक प्रगति के साथ-साथ केन्द्रीय उत्पादन-पद्धति बढ़ी, उसमें से व्यापार बढ़ा और इसके फलस्वरूप समाज में जन-जीवन की आवश्यकता की पूर्ति के सिलसिले में एक दूसरी जाति अनुत्पादक उपभोक्ता वर्ग की सृष्टि हुई। इस प्रकार यद्यपि मनुष्य ने राजा और पूंजीपति को समाप्त किया, लेकिन राज्यवाद और पूंजीवाद के जमाने में मैनेजर रूपी बुद्धिजीवी और उत्पादक-रूपी श्रमजीवी, ये दो वर्ग खड़े हो गये हैं। प्रकृति का नियम है कि जिस चीज का जन्म होगा, उसका विकास होता रहेगा—जब तक कोई शक्ति उनको न रोके। तो, आज मैनेजरवाद का निरन्तर विकास ही होता चला जा रहा है। सत्ता, उद्योग तथा व्यवसाय के क्षेत्र बढ़ते चले जा रहे हैं और इस त्रिधारा विकास के नीचे उत्पादक-वर्ग निरन्तर संकुचित और निष्पेषित होता चला जा रहा है। यही है आज के वर्ग-विषमता का स्वरूप। इसी के निराकरण में आपको वर्ग-परिवर्तन की प्रक्रिया ढूंढ़नी होगी।

वर्ग-परिवर्तन के माने यह नहीं है कि श्रमजीवी आज जहां है, वहीं रहे और बुद्धिजीवी उनकी समान भूमिका पर पहुँच जाय; बल्कि वर्ग-परिवर्तन की क्रांति सारे समाज के लिए है, किसी एक वर्ग के लिए नहीं। वर्ग-हीन समाज का मनुष्य न आज का श्रमजीवी रहेगा और न आज का बुद्धिजीवी ही। वह एक बुद्धिपूर्ण सांस्कृतिक श्रमिक होगा। इसलिए यह आवश्यक है कि आज के बुद्धिजीवी जीवन में श्रम की साधना में लगें और श्रमजीवी को बौद्धिक और सांस्कृतिक विकास का अवसर मिले।

— धीरेन्द्र मजूमदार

केवल ५ लाख परिवार

"...ग्रामदान के कारण मेरा काम अब बहुत सहज हो गया है, पांच लाख देहातों के करोड़ों परिवारों का विचार करने के स्थान पर मुझे अब पांच लाख परिवारों का ही विचार करने की आवश्यकता है, क्योंकि ५ लाख ग्रामदान याने ५ लाख परिवार। ग्रामदान-आन्दोलन की ओर मैं बड़ी आशा और सूक्ष्म दृष्टि से देख रहा हूँ।

—प्रो० महालनोबिस (प्रख्यात अंक-शास्त्रज्ञ)

सर्वोदय के लक्षण

"सबै भूमि गोपाल की।
घर घर चरखा चाले।
गांव गांव सुथरा हो।
झगड़ा नहीं, व्यसन नहीं।
सब मिलकर एक परिवार हो।
मुख में है नाम, हाथ में रे काम।
यह है सर्वोदय का सच्चा नाम।"

—विनोबा

विदेशी विनिमय और विकास

(श्री शांतिप्रसाद जैन)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अभी तीन वर्ष शेष हैं। हमें अपना अंतिम लक्ष्य प्राप्त करना है। हमें समझ लेना चाहिये कि हमारा विकास कार्यक्रम अच्छी खासी विदेशी सहायता के बिना पूरा नहीं हो सकता। हमारे देश के कुछ वर्गों की धारणा है कि अब विदेशी सहायता से भारी विकास व्यय करना अपनी तीसरी योजना को गिरवी रखना है। किन्तु विदेशी सहायता से हमारे विकास कार्यक्रम को अधिक तेजी से आगे बढ़ाने में वास्तव में कोई हानि नहीं है। यदि प्राप्त किया हुआ विदेशी विनिमय भारतीय रुपये के निर्मित ऋण के मिश्रण के साथ भी विकास कार्यों में लगाया जाय तो भी ऐसा विकास स्वयमेव मुद्रास्फीति को रोकने वाला कदम होगा।

विदेशी पूंजी किसी भी रूप में आवे, हमारे विकास कार्यक्रम की पूर्ति के लिए उसका उपयोग हमारे देश के अन्दर से आवश्यक धन पाने की हमारी योग्यता से सम्बन्धित है।

कृषि और उद्योग के लिए सहायता

इस प्रकार समस्या की मूल पहेली आंतरिक साधन, और बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय में उपभोग तथा बचत के मध्य महत्वपूर्ण सन्तुलन स्थापित करना है।

यद्यपि कृषि और औद्योगिक उत्पादन पिछले वर्ष अधिक रहा है, तथापि वह दुर्बलता के लक्षण दिखा रहा है। इन वर्षों में ग्रामीण ऋण का विस्तार अच्छा रहा है, किन्तु बढ़े हुए उत्पादन के लिए कृषक की आवश्यकताओं पर विचार करते हुए ग्रामीण ऋण विस्तार के लिए प्रयत्न बढ़ाने की अधिक आवश्यकता है। व्यापारिक बैंकों की सेवाओं का इस क्षेत्र में लाभप्रद उपयोग किया जा सकता है। इससे व्यापारिक बैंकों को भी ग्रामीण क्षेत्रों में ब्रांच बैंकिंग में सहायता मिलेगी।

उद्योग द्वारा भूत काल में एकत्रित किये गये आर्थिक साधन अधिकतर समाप्त हो चुके हैं। भारी करों ने चालू लाभ से पर्याप्त धन प्राप्त करने की उनकी क्षमता को और भी प्रभावित किया है। प्राप्त होने वाली विदेशी पूंजी के दक्ष और प्रभाव पूर्ण उपयोग के लिए आवश्यक भारतीय रुपये की पूंजी को भी ऊंचा उठाना होगा। आशा है, कि फाइनेंस कार्पोरेशन कुछ साधनों के साथ कुछ महीनों में अपना कार्य प्रारम्भ कर देगा। ये विनियोग-निगम कुछ सीमा तक ही उद्योग को ऋण दे सकते हैं, पूरी आवश्यकता की पूर्ति के लिए नहीं। आर्थिक अधिकारियों को विकास के लिए आंतरिक साधनों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए। इसके लिए व्यक्तिशः अथवा बैंकों की संस्था के द्वारा कमर्शियल बैंकों की सेवाओं का उपयोग किया जा सकता है। हमारी आर्थिक समस्याओं के इस मूलभूत रूप को पूर्णतः समझ कर विशाल दृष्टिकोण से श्री आयंगार ऐसी नीति को जन्म देने में योग देंगे, जो हमारे अर्थतंत्र को सुदृढ़ कर सके, ऐसा मुझे विश्वास है।

योजना के लिए प्रयत्न और करनीति

श्री नेहरू ने अपने बजट भाषण में कहा था, "जिस संकट में से हम गुजर रहे हैं, वह विकास का संकट है साधनों का संकट है। हमें चाहिए कि हम अधिक उत्पादन करें और योजना की पूर्ति के लिए साधन जुटाने के हेतु अधिक बचत करें।" जनता भी योजना की पूर्ति के लिए चिंतित है। स्वभावतः योजना की सफलता विकास में सहायक परिस्थितियों के निर्माण पर और ऐसी नीतियों तथा शक्तियों से बचने पर निर्भर करती है जो हमारे लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयत्नों को निर्बल करने वाली हों। इस माप दंड से हमें सरकारी कर-नीति और अन्य नीतियों का मूल्यांकन करना चाहिए।

यह ख्याल किया गया था कि योजना व्यय को पूरा करने के लिए राज्य जो नये कर लगायेंगे, उनके परिणाम-स्वरूप ८०० करोड़ रु० विकास कार्यों के लिए बच

जायगा। इसमें सन्देह नहीं कि कर बहुत लगाये गये और आमदनी भी बढ़ी, किन्तु विकास भिन्न कार्यों में वह रुपया खर्च हो रहा है। ११३० करोड़ रु० वार्षिक अनुमान व्यय था किन्तु १९५६-५७, १९५७-५८ और १९५९ में ये संख्याएं—११२६, १३९० और १५०० करोड़ रु० तक जा पहुँची हैं। वस्तुतः योजना के अधीन विकास के लिए लगाये साधनों के हिसाब को केन्द्र और राज्यों दोनों ने अत्यधिक बढ़े हुए विकास भिन्न और योजनेतर व्ययों ने उलट दिया है। राज्य निरन्तर घाटे के बजट दिखा रहे हैं। केन्द्र ने निधि की खोज में धड़ाधड़ कर लगाने आरम्भ कर दिये हैं, जिसने योजना प्रयत्नो में उत्तेजन या सहायता दिये बिना पूंजी लगाते रहने की क्षमता और पहल को नष्ट कर दिया है। इसने अनेक समस्याओं को उत्पन्न कर दिया है, जो विशेषत. बचत के परिमाण पर प्रभाव डालती हैं और फलस्वरूप प्रजा की बचत की मनोवृत्ति पर, जो योजना की सफल कार्यान्विति के लिए विशेष महत्व रखती है। सरकारी सेक्योरिटियों का मूल्य पिछले अनेक वर्षों में निम्नतम धरातल तक गिर गया है। प्रिफ्रेंस शेयरों और साधारण शेयरों में भी तेजी से गिरावट आई है।

नीचे की तालिका से शेयरों के मूल्यों में गिरावट का अन्दाजा हो जायगा।

सप्ताहों का औसत १९४९-५०=१००

वर्ष	सेक्योरिटी मूल्य: सरकारी सेक्योरिटी	प्रेफेरेन्स शेयर	प्रतिशत वृद्धि या कमी: सरकारी सेक्योरिटी	प्रेफेरेंस शेयर
१९५५	९०.८	८७.७	०.४४	०६८
१९५६	९०.८	८४.६	—	३.६०
१९५७	८९.५	७६.७	१.५२	१५.२९

स्पष्ट है कि जनता को बचत के लिए तभी प्रेरित किया जा सकता है, जबकि उसे यह विश्वास दिलाया जा सके कि उसकी बचत का मूल्य बढ़ेगा, गिरेगा नहीं।

सरकार और योजना आयोग को योजना की पूर्ति पर पड़ने वाले गत वर्ष की कर नीति के प्रभाव का अध्ययन करना चाहिये और यदि उसे हानिकारक पाया जाय तो राष्ट्रीय हित में उसमें सुधार करना चाहिए या उसे बदल देना चाहिए।❀

❀ प० ने० बैंक के अध्यक्षीय भाषण से।

पंजाब नेशनल बैंक की प्रगति

पंजाब नेशनल बैंक के गत वर्ष के विवरण से मालूम होता है कि इस वर्ष में छुट्टी फंड ट्रस्ट के लिए ९.३२ लाख रु० की व्यवस्था के बाद बैंक को ११०.२७ लाख रु० लाभ हुआ है, जबकि गत वर्ष ९०.२० लाख रु० का लाभ हुआ था। ५० लाख रु० करों के लिए, २२.५ लाख रु० रिजर्व के लिए १८ लाख रु० कर्मचारियों के बोनस के लिए निकालने के बाद ढाई रु० प्रति शेयर डिविडेंड बांटा जायगा अर्थात् २० प्रतिशत वार्षिक तक यह मिलेगा।

इस वर्ष प्रदत्त पूंजी गत वर्ष (८७.५ लाख रु०) से बढ़कर १.२५ करोड़ हो गई। डिपोज़िट भी १२५ करोड़ तक हो गये हैं। १९५६ में डिपोज़िटों में १६ करोड़ की वृद्धि हुई थी, इस वर्ष १८ करोड़ रु० की वृद्धि हुई है। इन अंकों से यह स्पष्ट है कि बैंक संतोषजनक प्रगति कर रहा है। रिजर्व बैंक की ऋण कम देने की नीति के कारण इस वर्ष केवल ६६.६६ करोड़ रु० ऋण दिया जा सका, यद्यपि यह राशि भी गत वर्ष से १३ करोड़ रु० अधिक है। इस वर्ष बैंक की १३ नई शाखाएं खुलने से शाखाओं की संख्या कुल २५३ हो गई है।

विश्व बैंक की आय में वृद्धि

विश्व बैंक को ११ मार्च १९५८ तक पिछले ९ महीनें में ३२,४००००० डालर की खालिस आय हुई, जबकि १९५७ में ९ महीनों में २६,२००,००० डालर की आमदनी हुई थी।

जीवन बीमा निगम की प्रगति

१९५७ और १९५८ में जीवन बीमा निगम द्वारा किए गए बीमा की रकम का क्षेत्रवार विवरण निम्न लिखित है :

(करोड़ रुपयों में)

	उत्तर क्षेत्र	मध्य क्षेत्र	पूर्व क्षेत्र	दक्षिण क्षेत्र	पश्चिम क्षेत्र
१९५७— जनवरी से दिसम्बर तक	३३.९०	३५.७१	६८.०५	७४.१४	६४ ७०
१९५८— जनवरी से २४ मार्च तक	३.६९	२.४१	४.७२	६.८७	५.७५

हमारे उद्योग—

विकास कार्यों के लिए ऋणों में छूट

नयी मशीनें आदि लगाने पर जो विकास छूट दी जा रही है, वह नयी रियायत नहीं है। कर जांच आयोग की सिफारिशों के अनुसार यह १९५५ से ही लागू है।

किसी उद्योग में ७ लाख रुपए का मुनाफा हुआ। नियमानुसार उस उद्योग के मालिक को लगभग ३॥ लाख रु० आयकर देना होगा। अगर वह नयी मशीनें आदि लगाने पर किसी साल १० लाख रुपया खर्च करता है तो उसे २½ लाख रु० की छूट मिलेगी। अर्थात् ७ लाख रु० के मुनाफे से २॥ लाख रु० घटा कर आयकर लगाया जाएगा। इस प्रकार आयकर ४॥ लाख रु० पर ही लगेगा, और मोटे तौर पर उसे ३॥ लाख रु० की बजाय २,२५,००० रु० आय कर देना होगा। इससे उसे सवा लाख रु० की बचत होगी। यह छूट केवल एक बार मिलेगी, हर साल नहीं।

लेकिन नयी कम्पनी की स्थिति कुछ भिन्न है। मान लीजिए, किसी नयी कम्पनी ने १९५६ में १० लाख रु० की मशीनें लगायीं और पहले वर्ष उसे कुछ लाभ नहीं हुआ। आय न होने की स्थिति में वह छूट का कैसे लाभ उठाये। नयी कम्पनियों को अगले ८ साल में कभी भी यह छूट मिल सकती है। इन ८ सालों में अगर वह मुनाफा कमावें तो इस छूट का उन्हें भी लाभ पहुँचेगा क्योंकि उनके मुनाफे में विकास-छूट की रकम कम करके आय-कर लिया जायगा।

विकास छूट इसलिये दी गयी है कि इससे कम्पनियों को अपना विस्तार करने और नई मशीनें आदि लगाने का प्रोत्साहन मिले। मशीनों आदि की कीमतें बढ़ जाने पर भी कम्पनियां, इस छूट के कारण, नई मशीनें आदि खरीदने और लगाने के लिये तत्पर हो जायेंगी।

वित्त विधेयक का उद्देश्य केवल यह है कि कम्पनियों को जो विकास की छूट मिले, उसे वह लाभांश के रूप में न बांट दें, बल्कि उसे अपनी वित्तीय स्थिति मजबूत करने में लगाएं। इसके लिए जो नयी शर्तें लगाई गयीं, वह ये थीं: १. जो कम्पनी विकास-छूट मांगे, वह कम-से-कम दस वर्ष तक विकास-छूट के बराबर रुपया संरक्षित राशि के रूप में रखे, २. जो नयी मशीनें और यंत्र आदि लगाने पर कम्पनी को विकास-छूट मिली है, उन्हें कम्पनी दस वर्ष तक न बेचे।

वित्त विधेयक या नये संशोधनों को कम्पनियों द्वारा भुगताये जाने वाले कर से कुछ लेना-देना नहीं। इनका उद्देश्य वास्तव में कम्पनी की वित्तीय हालत को ही अच्छा बनाना है और यह देखना है कि जो छूट दी जाय, उसका उचित उपयोग हो।

☆

उद्योग उत्पादन बढ़ गया

१९५७ में देशके २८ प्रमुख उद्योगोंके रजिस्टर्ड कारखानों में १,२२८ करोड़ रु० की कीमत का माल तैयार हुआ, ७ अरब ८७ करोड़ ७५ लाख रु० की पूंजी लगायी गयी और १७ लाख १५ हजार लोगों को कारखानों में काम मिला। १९५३ में इन उद्योगों के कारखानों में केवल १,१२३ करोड़ रु० की कीमत का माल तैयार हुआ, ७ अरब २८ करोड़ ६५ लाख रु० की पूंजी लगायी गयी और १६ लाख २८ हजार लोग कारखानों में काम कर रहे थे।

वैसे तो देश में कुल ६३ उद्योग हैं, किन्तु जिन २८ उद्योगों को इस पड़ताल में शामिल किया गया, उनमें मुख्य हैं—सूती, ऊनी कपड़ा और पटसन, रसायन, लोहा और और इस्पात, अलुमूनियम, बाइसिकिल, सिलाई की मशीनें, बिजली के लैंप और पंखे, चीनी मिट्टी दियासलाई, वनस्पति तेल, साबुन, माड़ी, बिस्कुट, रंग-रोगन आदि। भारत के २० भूतपूर्व राज्यों में यह पड़ताल करायी गयी। इसमें जम्मू-कश्मीर, भूतपूर्व मध्यभारत, हैदराबाद, भोपाल, विलासपुर, मणिपुर, त्रिपुरा, अंडमान-निकोबार राज्य शामिल किए गए, जिनमें बिजलीसे मशीनें चलती हैं और २० या इससे अधिक व्यक्ति रोज काम करते हैं।

★

दो आश्चर्य

आर्थिक जगत् में कभी कभी आश्चर्यकारी घटनाएं होती हैं। आजकल ब्रिटेन का वस्त्र-उद्योग भारतीय और पाकिस्तानी वस्त्रों के बढ़ते हुए आयात से बहुत चिन्तित

है। किसी समय भारतीय बाजारों को अंग्रेजी कपड़ों से पाट देने वाला इंगलैंड आज स्वयं भारतीय कपड़े के आयात पर अंकुश लगाने की चिन्ता कर रहा है, पर इसमें उसे सफलता नहीं मिल रही। इंगलैंड का सरकार कामनवैल्थ के लाभों की चिन्ता कर रही है, इसलिए भारतीय कपड़े पर पाबन्दी भी नहीं लगा सकी। दूसरी ओर मोटरों के निर्माण का प्रमुख देश अमेरिका ब्रिटिश मोटरों के आयात से परेशान है। न्यूयार्क में होने वाली प्रदर्शनी के पहले दो ही दिनों में ७५०००० पौं० की ब्रिटिश मोटरें व मोटर सामग्री बिक गई। जनवरी १९५८ में ही १२००० ब्रिटिश गाड़ियां वहां बिक गई, जिनकी कीमत ५५ लाख पौं० है। गत वर्ष वहां ८५००० मोटरें बिकी थीं, जबकि १९५५ में ३२००० ब्रिटिश मोटरें बिकी थीं। अमेरिका में मोटरों का निर्माण कम हो रहा है, क्योंकि वहां की बड़ी कारें एक गैलन पैट्रोल में ८ मील चलती है, जब कि विदेशी कारें २० से ४० मील चलती हैं। क्राइसलर कारपोरेशन, जनरल मोटर्स और फोर्ड की बिक्री इस वर्ष ४५,१२ और ३६ प्रतिशत गिर गई है। ब्रिटेन व जर्मनी दोनों मोटर उद्योग में इस उद्योग के नेता अमेरिका को पछाड़ रहे हैं।

★

१९५७ में टाइप राइटर

१९५७ में देश में १५,४३० टाइप रायटर तैयार हुए, १९५६ में केवल १३,४२० तैयार हुए थे। जुलाई, १९५७ से विदेशों से टाइप राइटर मंगाने पर बिल्कुल रोक है।

१९५७-५८ में हर टाइप-राइटर के लिए औसतन २८ से ३२ रु० तक की कीमत का इस्पात विदेशों से मंगाया गया। इस्पात का आयात कम होने से टाइपराइटरों के उत्पादन पर साधारण असर पड़ा होगा। इस्पात की सप्लाई बढ़ जाने पर और अधिक टाइपराइटर बनने लगेंगे।

१९५५-५६ में विदेशोंसे ८२ लाख ३२ हजार रु० के १९५६-५७ में १ करोड़ ११ लाख रुपए के और १९५७-५८ में अक्टूबर १९५७ तक ५० लाख ७० हजार रु० के टाइपराइटर मंगाये गये।

★
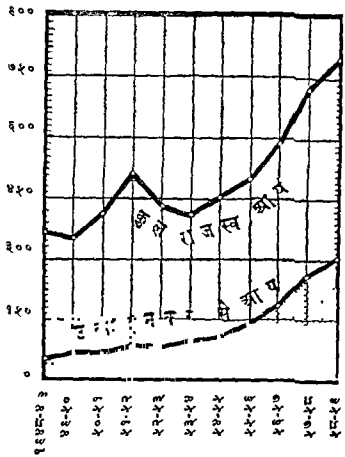
कुल आय में उत्पादन कर का अनुपात किस तेजी से बढ़ रहा है !!

मोटर साइकिलों का निर्माण

मद्रास की जिस फर्म को मोटर-साइकिलें बनानेका लाइसेंस दिया गया है, उसने १९५७ में १८२७ मोटर-साइकिलें तैयार कीं। इस फर्म को हर साल ५,००० तक मोटर साइकिलें तैयार करने के लिए लाइसेंस दिया गया है। इस समय देश में हर साल तीन-चार हजार से अधिक मोटर साइकिलों की मांग नहीं है।

पूरी मोटर साइकल की लागत के ६० प्रतिशत तक के कल-पुर्जे आदि विदेशों से मंगाने पड़ते हैं। मोटर साइकल के कुछ पुर्जे, जैसे टायर, ट्यूब, बैटरी, पिस्टन, पेट्रोल टैंक, बैठने की सीट, इनफ्लेटर, वोल्ट नट तथा रबड़ की कई चीजें देश में ही बनने लगी हैं।

—

आर्थिक विकास की नीति

(पृष्ठ २४६ का शेष)

कि लोहे के कारखानों के साथ २ खाद के कारखाने भी खोले जाएं।

व्यापारिक फसलें

व्यापारिक फसलों की वृद्धि से भी विदेशी मुद्रा की जरूरत में कुछ कमी की जा सकती है। पटसन तथा रुई की दस दस लाख अधिक गांठों के प्रतिवर्ष उत्पादन का अर्थ है ५५ करोड़ रु० विदेशी मुद्रा की बचत। खाद्य तेलों की कमी सारी दुनियां में है। नारियल तथा तिलहन के मूल्य दुनिया की मंडियों में स्थिर हैं या इनके मूल्यों की घटती बहुत धीमी है, जब कि अन्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सामग्री के मूल्यों में हेरफेर हो रहा है। हमारा तिलहनों का उत्पादन तथा प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ नहीं रहा है। इसमें २५ प्रतिशत भी वृद्धि होने से हम धीरे २ विदेशी बाजारों में खाद्य तेलों को, जिनकी मांग अत्यधिक है, निर्यात करने में समर्थ होंगे। गत वर्ष हम १६०,००० टन चीनी का निर्यात करके विदेशी पूंजी प्राप्त करने में सफल हुए थे। अगर हम १० प्रतिशत भी खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ायें, चाय और कच्चे माल के निर्यात में सुधार करें तो विदेशी मुद्रा के कोश बढ़ाने में सरलता होगी।

मेरा तो सुझाव यह है कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चीनी तथा अन्य सामग्रियों के निर्यात को प्रोत्साहन देना होगा, भले ही हमारे देश में इन चीजों की कुछ कमी भी हो जाय या इसके निर्यात के लिए सरकारी सहायता ही क्यों न देनी पड़े। +

+दि यूनाइटिड कमर्शल बैंक के अध्यक्षीय भाषण का एक अंश।

आज का अमेरिकन पूंजीवाद

(पृष्ठ २६७ का शेष)

जीवन के सभी क्षेत्रों में समस्याएं समाधानों से आगे ही रहती हैं। किन्तु उनके हल करने की निरन्तर खोज होती रहती है और अमेरिकी व्यवस्था की शक्ति तथा लचीलेपन ने यह दिखा दिया है कि वे इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए पर्याप्त हैं। जो कुछ सफलता प्राप्त की गई है, वह उस गतिशीलता की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है, जो निरन्तर और अधिक सफलता प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हो रही है।

गतिशीलता का स्रोत

यह गतिशीलता कहां से आई है? "इसमें से कुछ गतिशीलता उस मार्ग-दर्शक अमेरिकी जनता से प्राप्त होती है, जिसका रुख विकासकी दिशा में अग्रसर है; कुछ स्वाधीनता तथा समानता सम्बन्धी क्रान्ति से उत्पन्न हुई है, जिसके कारण बड़ी संख्या में लोग हमारे देश में आकर बसे हैं तथा कुछ प्रगतिशीलता हमारे देश के बाहुल्य का परिणाम है। १६३० वे बाद के वर्षों में आई अत्यधिक मन्दी की चुनौती से भी कुछ गतिशीलता उत्पन्न हुई, जब फ्रैंकलिन रुजवेल्ट की सरकार ने यह देखा कि प्राचीन पूंजीवाद अपर्याप्त है तथा समयकी मांग की पूर्ति की दृष्टि से एक नई व्यवस्था का विकास आवश्यक समझा गया।

"और यह गतिशीलता एक व्यापारी के प्रयत्नों का भी परिणाम है, जिसने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। १६१४ में हेनरी फोर्ड ने अपने श्रमिकों को ५ डालर प्रतिदिन के हिसाब से वेतन देना प्रारम्भ किया, क्योंकि उन्होंने सोचा था कि जो लोग उनके लिए मोटर गाड़ियां तैयार करते हैं, उनके पास भी मोटर गाड़ियां होनी चाहिएं।"

आर्थिक विकास की नीति

(पृष्ठ २४६ का शेष)

कि लोहे के कारखानों के साथ २ खाद के कारखाने भी खोले जाएं।

व्यापारिक फसलें

व्यापारिक फसलों की वृद्धि से भी विदेशी मुद्रा की जरूरत में कुछ कमी की जा सकती है। पटसन तथा रुई की दस दस लाख अधिक गांठों के प्रतिवर्ष उत्पादन का अर्थ है ४५ करोड़ रु० विदेशी मुद्रा की बचत। खाद्य तेलों की कमी सारी दुनियां में है। नारियल तथा तिलहन के मूल्य दुनिया की मंडियों में स्थिर हैं या इनके मूल्यों की घटती बहुत धीमी है, जब कि अन्य अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सामग्री के मूल्यों में हेरफेर हो रहा है। हमारा तिलहनों का उत्पादन तथा प्रति एकड़ उत्पादन बढ़ नहीं रहा है। इसमें २५ प्रतिशत भी वृद्धि होने से हम धीरे २ विदेशी बाजारों में खाद्य तेलों को, जिनकी मांग अत्यधिक है, निर्यात करने में समर्थ होंगे। गत वर्ष हम १६०,००० टन चीनी का निर्यात करके विदेशी पूंजी प्राप्त करने में सफल हुए थे। अगर हम १० प्रतिशत भी खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढ़ायें, चाय और कच्चे माल के निर्यात में सुधार करें तो विदेशी मुद्रा के कोश बढ़ाने में सरलता होगी।

मेरा तो सुझाव यह है कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में चीनी तथा अन्य सामग्रियों के निर्यात को प्रोत्साहन देना होगा, भले ही हमारे देश में इन चीजों की कुछ कमी भी हो जाय या इसके निर्यात के लिए सरकारी सहायता ही क्यों न देनी पड़े। +

+दि यूनाइटिड कमर्शल बैंक के अध्यक्षीय भाषण का एक अंश।

आज का अमेरिकन पूंजीवाद

(पृष्ठ २६७ का शेष)

जीवन के सभी क्षेत्रों में समस्याएं समाधानों से आगे ही रहती हैं। किन्तु उनके हल करने की निरन्तर खोज होती रहती है और अमेरिकी व्यवस्था की शक्ति तथा लचीलेपन ने यह दिखा दिया है कि वे इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए पर्याप्त हैं। जो कुछ सफलता प्राप्त की गई है, वह उस गतिशीलता की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण है, जो निरन्तर और अधिक सफलता प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हो रही है।

गतिशीलता का स्रोत

यह गतिशीलता कहां से आई है? "इसमें से कुछ गतिशीलता उस मार्ग-दर्शक अमेरिकी जनता से प्राप्त होती है, जिसका रुख विकासकी दिशा में अग्रसर है; कुछ स्वाधीनता तथा समानता सम्बन्धी क्रान्ति से उत्पन्न हुई है, जिसके कारण बड़ी संख्या में लोग हमारे देश में आकर बसे हैं तथा कुछ प्रगतिशीलता हमारे देश के बाहुल्य का परिणाम है। १९३० के बाद के वर्षों में आई अत्यधिक मन्दी की चुनौती से भी कुछ गतिशीलता उत्पन्न हुई, जब फ्रैंकलिन रुजवेल्ट की सरकार ने यह देखा कि प्राचीन पूंजीवाद अपर्याप्त है तथा समयकी मांग की पूर्ति की दृष्टि से एक नई व्यवस्था का विकास आवश्यक समझा गया।

"और यह गतिशीलता एक व्यापारी के प्रयत्नों का भी परिणाम है, जिसने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया है। १९१४ में हेनरी फोर्ड ने अपने श्रमिकों को ५ डालर प्रतिदिन के हिसाब से वेतन देना प्रारम्भ किया, क्योंकि उन्होंने सोचा था कि जो लोग उनके लिए मोटर गाड़ियां तैयार करते हैं, उनके पास भी मोटर गाड़ियां होनी चाहिएं।"

[सम्पदा

आगामी स्वाधीनता-दिवस पर

सम्पदा का नया उपहार—

१० वां विशेषांक

- परन्तु वह कैसा होगा ?
- किस विषय पर प्रकाशित होगा ?
- उसकी विशेषताएं क्या होंगी ?

यह जानने के लिए आप कुछ प्रतीक्षा करें।

यह निश्चय रखिये कि उसका स्तर सम्पदा के अन्य विशेषांकों से कम नहीं होगा। अपने विषय पर ज्ञानवर्धक लेखों, तालिकाओं, ग्राफों और चित्रों से पूर्ण।

अभी से ग्राहक बन जाने वालों को साधारण वार्षिक मूल्य में। इस अङ्क का मूल्य १॥) रु०।

—मैनेजर सम्पदा

अशोक प्रकाशन मन्दिर, रोशनारा रोड, दिल्ली-६

भारत का अणुशक्ति उद्योग

(पृष्ठ २४८ का शेष)

भारत सरकार के अणु शक्ति विभाग के सचिव डा० एच. एच. भाभा के कथनानुसार अणु शक्ति टक्नोलोजी की नवीनतम कड़ी है। वह ऐसी कड़ी है जिस पर बीसवीं शताब्दी की औद्योगिक क्रांति निर्भर है तथा देश के सीमित ईंधन-साधनों का ख्याल करते हुए इसकी महत्ता और भी अधिक बढ़ गई है।

देश में अणु शक्ति के उत्पादक पदार्थों—थोरियम तथा यूरेनियम की पर्याप्त मात्रा है। वतमान प्राक्कलन के अनुसार, हमारे पास ५ लाख टन थोरियम तथा ३० हजार टन यूरेनियम है। तथ्य तो यह है कि यूरेनियम तथा थोरियम का यह संचय वर्तमान कोयले की शक्ति से तीस गुना अधिक शक्ति दे सकेगा। तीन सदियों से अधिक के लिए यह शक्ति पर्याप्त होगी।

जनसाधारण का यह विश्वास है कि भारत जैसे अनुन्नत देश के लिए अणु शक्ति का उत्पादन करना आर्थिक दृष्टि से संभव नहीं हो सकेगा, क्योंकि इस में काफी लागत आती है। परन्तु श्री भाभा का विचार है कि अणु शक्ति का उत्पादन कम व्यय पर किया जा सकता है। ताजे अनुभव से यह प्रकट होता है कि एक ६० मेगावाट स्टेशन पर कुल लागत १५० पौंड (रु. २०००) प्रति किलोवाट बैठेगी १५० मेगावाट पर स्टेशन १२० पौंड व १३० पौंड प्रति किलोवाट के बीच लागत आएगी।

प्रधान मंत्री नेहरूजी के एक वक्तव्य के अनुसार यदि हम अणु शक्ति से बिजली तैयार करने के लिए प्रथम स्टेशन खोलने का कार्य शीघ्र प्रारम्भ कर दें तो हम १९६२ में अणु शक्ति से बिजली तैयार कर सकते हैं।

ऐसा अनुमान है कि अणु शक्ति कारखाने से बिजली तैयार करना बहुत सस्ता—२.६ नया पैसा प्रति इकाई (यूनिट)—पड़ेगा। हमारा देश आज भी बिजली के बजाय गोबर से काम चलाता है; ईंधन या बिजली-जैसी ८० प्रतिशत शक्ति गोबर से तैयार होती है। कुछ लोग कहते हैं कि हम अणु शक्ति से बिजली क्यों तैयार करें, जबकि बिजली तैयार करने के लिए कोयला काफी परिमाण में हमारे देश में उपलब्ध है। यदि हम अपने सभी साधनों का उपयोग करें और अमरीका जितनी बिजली खपत करें तो हमारे सभी साधन ३० वर्षों में खत्म हो जाएंगे। इसलिए बिजली तैयार करने के लिए अणु-शक्ति का उपयोग करना अमरीका की अपेक्षा हमारे लिए अधिक जरूरी है, क्योंकि हमारे अन्य साधन सीमित है। यदि हमें निकट भविष्य में अणु-शक्ति से बिजली तैयार करना है तो हमारे लिए यह बहुत जरूरी है कि हम इस दिशा में शीघ्र कार्य प्रारम्भ कर दें।

अणु-शक्ति विभाग में अभी ६०० ऊंचे दर्जे के वैज्ञानिक काम कर रहे हैं और इस वर्ष के अन्त तक यह संख्या ८०० हो जाएगी। वस्तुतः जैसा कि अणु शक्ति के विभाग के अध्यक्ष पं० नेहरू ने कहा है देश के लिए अणु-शक्ति का उपयोग करना और भी अधिक अनिवार्य है। शक्ति का प्रधान साधन कोयला या बिजली है। कोयला समस्त देश में एक समान रूप से उपलब्ध नहीं होता।

भारत का ५६ प्रतिशत कोयला बिहार व बंगाल में है, तथा लगभग २५ प्रतिशत मध्य प्रदेश में है। उद्योग मुख्यतः पश्चिमी भारत में हैं तथा कोयला क्षेत्रों से बहुत दूर हैं। फलतः कोयला १५०० मील से अधिक दूर तक ले जाना पड़ता है।

देश की रेल-व्यवस्था लगभग १०० वर्ष पूर्व की व्यवस्था पर आधारित है। फिलहाल, रेलें कोयले को इधर-उधर ले जाने में बड़ी सहायता देती हैं। रेल विभाग कोयले के लदान पर रु. .८५ प्रति टन प्रति मील किराया लेता है, जबकि अनाज के लदान पर रु. ५.३६ प्रति टन प्रति मील किराया वसूल किया जाता है। अतः कोयला लाने—ले जाने में रेलों को भारी घाटा उठाना पड़ता है।

देश का औद्योगिकीकरण करने में योग देने के अलावा अणु शक्ति केन्द्र रेलों पर कोयले के लदान बचत करेंगे तथा इस प्रकार रेलों का अनाज या अन्य पदार्थों के लदान से रु. १.२८ करोड़ प्रति वर्ष की अतिरिक्त आय हो सकेगी।

भारत में बिजली भी शक्ति का एक साधन है, किन्तु इसका भी देश में समान रूप से विभाजन नहीं हो पाता, और इससे जो शक्ति प्राप्त भी होती है—वह बहुत थोड़ी

खाद्य समस्या और सरकार

(पृष्ठ २५० का शेष)

गये और धीरे धीरे कन्ट्रोल समाप्त कर दिये गये । प्रथम योजना में निर्धारित लक्ष्य पूरे किये गये और योजना की समाप्ति पर जैसा कि *तत्कालीन खाद्यमंत्री का वक्तव्य था—* 'हम अब केवल अन्न मे स्वावलम्बी ही नहीं बल्कि भविष्य के लिए कुछ संचित करने योग्य भी अपने को बना सके है ।' इस प्रकार योजना की सफलता को आका गया और इसी सफलता की आशा से द्वितीय पचवर्षीय योजना बनाते समय केवल आवश्यकतानुसार ही अतिरिक्त अन्न की आशा के लिए खर्चे की रकम निर्धारित की गई ।

खाद्य समस्या फिर एक बार

द्वितीय पचवर्षीय योजनामें जिस आशा से अन्न उत्पादन के लक्ष्य रक्खे गये थे, परिस्थिति उसके विपरीत दृष्टिगोचर हुई । योजना के प्रथम वर्ष मे ही स्थिति चिन्ताजनक रही । एक ओर लोगो के पास बढी हुई क्रय-शक्ति और फलस्वरूप उनकी अन्न के लिए अधिक माग और दूसरी ओर अन्न उत्पादन आशा के प्रतिकूल रहा । विशेषकर उत्तरी भारत के पूर्वी क्षेत्रो मे—*बिहार, पश्चिम बगाल,* पूर्वी उत्तर प्रदेश और उत्तरी मध्य प्रदेश आदि मे बाढ़, सूखा आदि के कारण फसलें खराब हो गई । योजना के द्वितीय वर्ष मे अन्न का अभाव और भी बढ़ गया, साथ ही अन्न के मूल्य काफी चढ़ गये । कीमतों मे होने वाली इस वृद्धि के कारण जनता और सरकार दोनों को ही परेशानी मे पड़ जाना पडा । अत सरकार को सोचना पड़ा कि उसका कैसे सामना किया जाय । फलस्वरूप सरकार ने खाद्य अभाव और मूल्य जाच के लिए श्री अशोक मेहता की अध्यक्षता में जून सन् १९५७ मे 'अनाज जाच समिति' (The Food grains Enquiry Committee) की नियुक्ति की । समिति ने अपनी रिपोर्ट नवम्बर सन् १९५७ मे सरकार क समक्ष रख दी ।

अशोक मेहता समिति रिपोर्ट

समिति इस निष्कर्ष पर पहुची है कि देश की खाद्य-स्थिति आगामी कई वर्षों तक अच्छी होने की आशा नहीं है । अत उसे हल करने के लिए तात्कालिक और दूरवर्ती दोनो प्रकार के उपाए काम मे लने होगे । समिति ने सुझाव दिया है कि अनाज के मूल्य मे स्थिरता लाने के लिए ठोस कदम उठाना सबसे अधिक जरूरी है । समिति ने इसके लिए उच्च अधिकार प्राप्त 'मूल्य स्थिरता मडल' (Price Stabilisation Board) स्थापित करने पर सबसे अधिक जोर दिया है । समिति का सुझाव है कि खाद्यान्न के क्रय विक्रय, गल्ला वसूली और स्टाक जमा करके रखने के लिए अलग से एक 'खाद्यान्न मूल्य स्थिरता सगठन' बनना चाहिए । समिति का यह भी सुझाव है कि एक 'केन्द्रीय खाद्य सलाहकार परिषद्' की स्थापना की जाय जिसका कार्य केन्द्रीय खाद्य मत्रालय और मूल्य स्थिर सगठन की मदद करना होगा । सरकार को खाद्यान्नों के मूल्यों मे होने वाले परिवर्तनो का पता लगता रहे, इसके लिए एक अलग 'मूल्य सूचना विभाग' स्थापित करने का सुझाव भी दिया गया है ।

अन्य सिफारिशें

(१) सस्ते अनाज की दुकानें—समिति ने सिफारिश की है कि सस्ते अनाज की दुकानों पर अनाज इस आधार पर बिकना चाहिये कि न तो नफा हो और न घाटा पड़े ।

(२) कलकत्ते और बम्बई जैसे शहरों की अस्थायी रूप से घेरा बन्दी करने की सिफारिश की गई है ।

(३) गल्ला वसूली—रिपोर्ट मे कहा गया है कि

है। भारत म अन्य उन्नत देशों का अपेक्षा शक्ति का बहुत कम प्रयोग होता है । यदि भारत आज की गति से शक्ति का व्यय करे तो हमारे कोयले के साधन दो तीन सौ साल से अधिक नहीं चलेंगे । लेकिन यदि हम अमेरिका के स्तर पर शक्ति का व्यय करने लगें तो कोयले के बडे २ क्षेत्र जिन पर हम गर्व करते हैं, तीस वर्ष मे समाप्त हो जायगे। दूसरी तरफ जैसा कि हमने ऊपर कहा है—अणु शक्ति के साधन पर्याप्त मात्रा मे भारत मे विद्यमान हैं ।

वह दिन दूर नहीं माना जाना चाहिए जबकि भारत अणु शक्ति के उत्पादन मे शीघ्र ही समर्थ हो जायगा और इसे बहुत ही कम मूल्य पर देश के औद्योगिक विकास के लिए वितरित कर सकेगा ।

—

फिलहाल गेहूं और मोटे अनाज आदि की अनिवार्य वसूली की जरूरत नहीं है । इन्हें मंडी से खरीद लेना काफी होगा। लेकिन चावल की कुछ हद तक अनिवार्य वसूली जरूरी होगी, जिससे सरकारी भंडार में ६-७ लाख टन चावल रखा जा सके। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि अनाज पर न तो पुरा कन्ट्रोल अथवा राशनिंग करना उचित है और न अनिवार्य गल्ला वसूली । लेकिन अनाज के व्यापार को खुली छूट देना भी ठीक नहीं माना गया है।

(४) समिति ने कहा है कि अनाज के व्यापार पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है । अनाज के सभी व्यापारियों और मुख्य उत्पादकों को जो १०० मन से अधिक अनाज का व्यापार करते हैं, लाइसेंस दिये जांय।

(५) समिति ने सिफारिश की है कि सरकार शनैः-शनैः गल्ले के पूरे थोक व्यापार को अपने हाथ में लें।

(६) समिति का अनुमान है कि भारत के अगले कुछ वर्षों में, दूसरी योजना के पूरी होने के बाद भी, काफी मात्रा में आयात किये विना अन्न का भंडार जमा करना अभाव ग्रस्त लोगों की आवश्यकतायें पूरी करना संभव नहीं होगा। इसलिए विदेशों से अन्न का आयात आवश्यक है। समिति का अनुमान है कि यह आयात २० से ३० लाख टन के बीच करना होगा।

(७) आयोजनाओं के विषय में जो द्वितीय आयोजन में चल रही हैं, समिति ने अन्न का उत्पादन बढ़ाने के लिए अनेक सुझाव दिये हैं। ये सुझाव सिंचाई की छोटी वड़ी योजनाओं, उत्तम बीजों की पैदावार बढ़ाने और उनके उचित वितरण करने, देशी खाद के उपयोग बढ़ाने और रासायनिक खाद की उत्पत्ति बढ़ाने, भूमि क्षरण को रोकने और वन विकास करने तथा पशु धन का उचित उपयोग करने से सम्बन्धित हैं।

(८) अन्त में समिति ने इस बात पर भी काफी जोर दिया है यदि देश की आबादी को अधिक तेजी से बढ़ने को रोकने के लिए संगठित देशव्यापी आन्दोलन नहीं किया गया तो देश की खाद्य स्थिति भयानक रूप धारण कर सकती है।

हमारी सम्मति में मेहता समिति ने अन्न समस्या का एक नये ढंग से अध्ययन किया है, जो इससे पूर्व कभी नहीं किया गया। उसके अनेक सुझावों को कार्य रूप में परिणत करने की दिशा में, आशा है सरकार, शीघ्र ही ठोस कदम उठायेगी।

विराट योजनाएं

बहुमुखी समृद्धि

भरपूर फसल उपजाने के लिये खेतों को पानी ..

घरों में प्रकाश के लिये बिजली .

छोटे बड़े उद्योग चलाने के लिए विद्युत-शक्ति . . .

भारतीय जनता को इसी प्रकार के अनेक लाभ पहुचाने और देश को समृद्ध बनाने के लिये इन विराट नदी घाटी योजनाओं का निर्माण हुआ है ।

द्वितीय पचवर्षीय आयोजना में भाखड़ा-नागल, हीराकुड, तुगभद्रा, दामोदर घाटी, चम्बल, मयूराक्षी और इसी प्रकार की अन्य योजनाओं को पूरा करना हमारा परम लक्ष्य बना रहेगा ।

सम्पादक— कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।

सम्पदा
जून, १९५८
मूल्य

BUILDING a MIGHTY India . .

STONEWARE PIPES
(for underground drainage)
salt glazed, acid-resistant and tested to standard specifications.

REFRACTORIES
for all industrial purposes: firebricks, mortars, insulating bricks in all heat ranges and shapes.

R.C.C. SPUN PIPES
for irrigation, culverts, water supply and drainage, available in all classes and sizes.

PORCELAIN SANITARY WARES
Indian and European closets, wash-basins urinals etc

INSULATORS AND ACID-RESISTANT TILES etc

DALMIA PORTLAND CEMENT
for general construction

DALMIA CEMENT (BHARAT) LTD.

DALMIAPURAM (MADRAS STATE)

Managing Agents: HARI BROTHERS PRIVATE LTD., NEW DELHI

विषय सूची

संख्या — विषय — पृष्ठ

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

१. श्री जी० एस० पथिक

२. श्री महेन्द्रस्वरूप भटनागर

बम्बई में हमारे प्रतिनिधि

श्री टी० एन० वर्मा, नेशनल हाउस, तुलक रोड

वर्ष : ७] जून, १९५८ [अङ्क : ६

समाजवाद क्या है ?

कुछ लोगों के लिए समाजवाद के दो मतलब होते हैं : पहला, धन का बटवारा, जिसका मतलब यह लगाया जाता है कि जिनके पास बहुत ज्यादा धन है, उनकी जेब कतर ली जाय, और दूसरा राष्ट्रीयकरण। ये दोनों ही मकसद माकूल हैं और अच्छे हैं, लेकिन इनमें से कोई भी खुद समाजवाद नहीं है। उत्पादन करने वाली व्यवस्था को नुकसान पहुँचाकर, बटवारे की कोशिश करना एकदम गलत बात है। इसका मतलब यह होगा कि हम खुद अपने आपको कमजोर करेंगे। समाजवाद की बुनियाद यह है कि ज्यादा दौलत हो। गरीबी का कोई समाजवाद हो ही नहीं सकता, चुनांचे समानता की प्रक्रिया का क्रम बैठाना पड़ता है।

मेरा ख्याल है कि किसी चीज को ठीक ढंग से चलाने के लिए तैयार हुए बगैर उसका, सिर्फ राष्ट्रीयकरण कर देना भी खतरनाक है। राष्ट्रीयकरण करने के लिये हमें चीजें चुननी पड़ती हैं। समाजवाद का मतलब यह है कि राज्य में हर आदमी को तरक्की करने के लिऐ बराबर मौका मिलना चाहिए। मैं हरगिज इस बात को पसंद नहीं करता कि राज्य हर चीज पर नियन्त्रण रखे, क्योंकि मैं इन्सान की व्यक्तिगत आजादी को अहमियत देता हूँ। मैं उस उग्र किस्म के राज्य-समाजवाद को पसन्द नहीं करता, जिसमें सारी ताकत राज्य के हाथों में होती है और देश के करीब करीब सभी कामों पर उसी की हकूमत हो। राजनीतिक दृष्टि से राज्य बहुत ताकतवर है। अगर उसे आर्थिक दृष्टि से भी बहुत ताकतवर बना दें, तो वह सत्ता का, और अधिकार का केन्द्र बन जायेगा, जिसमें इन्सान की आजादी राज्य के मनमानेपन का गुलाम बन जायगी।

चुनाचे, मैं आर्थिक सत्ता का विकेन्द्रीकरण पसन्द करूंगा। बेशक, हम लोहा और इस्पात, रेल के इंजन और इसी तरह के बहुत सारे दूसरे उद्योगों को विकेन्द्रित नहीं कर सकते। लेकिन आम तौर पर, जहां तक मुमकिन हो, हम सहकारिता के आधार पर उद्योगो की छोटी-छोटी इकाइयां चला सकते हैं, जिन पर राज्य का सामान्य नियंत्रण हो। लेकिन इस बारे में मैं बिल्कुल रूढ़िवादी या हठवादी नहीं हूं। हमें व्यवहार से, व तजुर्बों से सीखना है और खुद अपने तरीकों से आगे बढ़ना है।

जवाहरलाल नेहरू

जमशेदपुर से शिक्षा

गत मास की सबसे उल्लेखनीय, परन्तु खेदपूर्ण घटना जमशेदपुर की हड़ताल थी, जिसमें राष्ट्र को १६००० टन स्पात अथवा १.११ करोड़ रु० की हानि उठानी पड़ी। यह हड़ताल १४ दिन तक चली और फिर वापस ले ली गई। हमने इस हड़ताल को खेदपूर्ण घटना कहा है, इसका यह अर्थ नहीं कि हम मजदूरों के हड़ताल के अधिकार को स्वीकार नहीं करते और न केवल राष्ट्र की होने वाली हानि के अंक देखकर ही हम इसे अत्यन्त खेदपूर्ण मानते हैं, (यद्यपि यह अंक भी कम चिन्तनीय नही हैं)। ऐसी हानि तो अनेक दैवीय प्रकोपों के कारण भी हो जाती है। इस घटना के पीछे जो मूलभूत प्रवृत्ति काम कर रही है, वह अत्यन्त खेदजनक है और एक गंभीर समस्या उत्पन्न करती है, जिसका यदि समाधान शीघ्र न किया गया, तो संभव है कि यह राष्ट्र के लिए एक भारी खतरा बन जाय।

सम्पदा के पाठक जानते हैं कि कुछ समय पहले भारत सरकार, मिल मालिकों और मजदूर संघों के प्रतिनिधियों ने एक आचरण-संहिता पर सहमति प्रकट की थी, जिसमें मजदूर संघों के हड़ताल आदि के सम्बन्ध में कुछ सिद्धान्त स्वीकार किये गये थे। हमने तभी संहिता में प्रतिपादित उन आदर्शों के पालन के सम्बन्ध में सन्देह प्रकट किया था, क्योंकि आज देश का मजदूर-आन्दोलन वस्तुतः मजदूर-आन्दोलन नहीं है। यह राजनीतिक दलों का परस्पर शक्ति-वृद्धि के लिए संघर्ष का एक प्रमुख साधन बन गया है। जिस तरह राजनीतिक विरोधी दल का एक मात्र उद्देश्य दूसरे दल को बदनाम करके गुणावगुण का विवेक किये बिना उसकी प्रत्येक नीति का विरोधमात्र होता है उसी तरह आज के मजदूर संघ एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए मजदूरों में लोकप्रियता प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं और यह लोकप्रियता शिक्षा, स्वास्थ्य चिकित्सा, बुराइयों के निवारण, उनमें परस्पर सौहार्द भावना आदि सेवा के द्वारा नहीं, सस्ते लुभावने नारों के द्वारा उनकी कोमल भावनाओं को भड़का कर, गुमराह कर, और अन्त में तोड़ फोड़ और हड़ताल के मार्ग पर लाकर प्राप्त की जाती है। मजदूरों में असंतोष की आग भड़काने के लिए संभव असंभव मांगें पेश करने और लच्छेदार भाषा में लैक्चरों के सिवा कुछ करना नहीं पड़ता।

जमशेदपुर में यही कुछ हुआ है। वहां का मजदूर संगठन बहुत शान्ति के साथ अधिकारियों से मिल जुल कर अनेक ऐसी सुविधाएं प्राप्त कर चुका था, जो देश के अन्य भागों में मजदूरों को प्राप्त नहीं हैं। कल्याणकारी प्रवृत्तियों के लिए जमशेदपुर आदर्श केन्द्र बना हुआ था। मजदूरों व मालिकों की संयुक्त समितियां सफलतापूर्वक काम कर रही थीं, वेतन बोनस आदि के प्रश्न भी वहां पेचीदे नहीं थे। टाटा वर्कर्स यूनियन के नेता अधिकारियों से बातचीत कर रहे थे। टाटा कम्पनी के चेयरमैन श्री जे० आर० डी टाटा ने हड़ताल से पहले यह घोषणा कर दी थी कि कारखाने के विस्तार और २० लाख टन निर्माण की जो योजनाएं बन रही हैं, उससे देश की जहां सम्पत्ति बढ़ेगी, वहां मजदूरों को भी लाभ पहुँचेगा, उनके वेतनों में खासी वृद्धि की जा सकेगी। वेतन वृद्धिकी योजना पर विचार हो रहा है, जो जल्दी अमल में आयगी। रिपोर्ट के तैयार होने और बातचीत के परिणामों की प्रतीक्षा किये बिना कम्युनिस्ट नेताओं के संकेत पर मजदूर हिंसात्मक प्रदर्शनों पर उतर आये, शहर का एक बाजार अग्निकाण्ड का शिकार हुआ, गोलियां चलानी पड़ीं और अनेक प्रकार की अवांछनीय लज्जाजनक घटनाएं हुईं, जिनके विस्तार में हम नहीं जाना चाहते। सरकार इस बात की जांच करेगी कि समस्त हड़ताल में दलों द्वारा स्वीकृत आचरण संहिता का कहां तक पालन किया गया।

यह सब क्यों हुआ, इसलिए कि अ० भा० ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अधिकारी लोह-उद्योग के क्षेत्रमें अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते थे। वे अ० भा० राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस के सफल प्रभाव को सहन करने के लिए तैयार नहीं थे। पिछले कई महीनों से वे वहां अपना गढ़ स्थापित करने के लिए प्रयत्न कर रहे थे और उन प्रयत्नों की चरम सीमा थी यह गैर कानूनी हड़ताल।

प्रश्न केवल जमशेदपुर की हड़ताल का नहीं है। आज

प्रश्न यह है कि जब देश पंचवर्षीय योजनाओं की पूर्ति में लगा हुआ है, और विदेशी मुद्रा की समस्या भयंकर रूप से मुंह बाये खडी है, तब क्या किसी भी वर्ग को चाहे वह मिल मालिक हो या मजदूर, यह अधिकार दिया जा सकता है कि वह देश के आर्थिक विकास के मार्ग में कोई बाधा डाले ? क्या कोई ऐसी मशीनरी नहीं स्थापित की जा सकती कि कम से कम पांच वर्षों तक ऐसी कोई भी दुरभिसंधि सम्भव न हो सके, जिससे उद्योग को कोई हानि पहुँच सके ? क्या कोई देश में ऐसी शक्ति नहीं है, जो दोनों दलों को कोई भी ऐसा प्रयत्न करने से रोक सके ? और यदि कोई ऐसा गैरकानूनी प्रयत्न करता है, तो उसे यथोचित दण्ड दिया जा सकें ? देश किसी भी वर्ग से चाहे वह कितना महत्वपूर्ण क्यों न हो, बडा है, यह सत्य जिस दिन हम भूल जावेंगे, उसी दिन हम धोखा खावेंगे। इंगलैंड में १६२६ में मजदूरों ने जो हड़तालें की थीं, उनसे मजदूर दल जनता की सहानुभूति खो बैठा था। इटली में साम्यवादियों ने उद्योग-व्यापार को ठप्प कर दिया था और जनता मुसलिनी के कठोर फासिष्ट शासन को स्वीकार करने को विवश हो गई थी। जर्मनी में हर हिटलर के निन्दनीय नाज़ी शासन को भी जर्मन जनता ने सहन किया था, क्योंकि वह देश में अव्यवस्था को दीर्घकाल तक पसन्द नहीं कर सकती थी।

आज हम सब को इस प्रश्न पर गम्भीरता से सोचना है कि क्या राष्ट्र के लिए बलिदान करना हमारा—मिल मालिक, मजदूर और जनता सभी का कर्तव्य नहीं है ? यदि शेयर होल्डर कम मुनाफा लेकर, पूंजीपति कम आमदनी करके और मजदूर पांच प्रतिशत कम मजदूरी लेकर भी उत्पादन व्यय कम कर सकें, तथा जनता को जिसकी क्रयशक्ति कम हो रही है, सस्ता माल दे सकें, और विदेशी बाजारों की प्रतिस्पर्धा में ठहर सकें, तो यह लाभ अन्ततोगत्वा हम सबके लिए लाभकारी होगा। त्याग केवल एक पक्ष को नहीं, सभी को करना होगा। उत्पादन पहले बढ़ाइये, फिर उसके वितरण का प्रश्न हल कर लेंगे। लेकिन आज तो विभिन्न राजनैतिक दल अपने शक्तिवर्धन के लिए देश के मजदूर वर्ग को जिस तरह अपना औजार बनाने का षड्यंत्र कर रहे हैं, वह तो देश के प्रति घोर अपराध है। यदि इस दुष्प्रवृत्ति को समाप्त नहीं किया तो देश की अर्थव्यवस्था के सामने भारी खतरा पैदा हो जायगा।

—

वस्त्र निर्यात मे कमी

विदेशों में भारतीय वस्त्रों की बिक्री के लिये निरन्तर प्रयत्न करने पर भी तथा वस्त्र-निर्यात समिति की कोशिशें होने पर भी विदेशों के साथ भारतीय वस्त्र व्यापार में निरन्तर कमी होती जा रही है। वर्तमान वर्ष के प्रथम चार महीनों मे कपड़े का जो कुल निर्यात हुआ, वह २१६० लाख गज ही है, जबकि १६५७ के इन महीनों में ३२१० लाख गज कपड़ा निर्यात हुआ था। इसका अर्थ है १६५७ की तुलना में १६५८ में १०५० गज कपडे के निर्यात में कमी। *आगामी महीनों में भी निर्यात में इसी प्रकार की कमी होने* की संभावना है। इस से १६५८ के पूरे वर्ष में ६५०० लाख गज निर्यात होने का अनुमान है, जबकि १६५७ मे ८१०० लाख गज का निर्यात हुआ था।

कपडे के निर्यात में कमी हो जाना बहुत निराशाजनक है, विशेषतः ऐसी अवस्था में जबकि विदेशी पूंजी की प्राप्ति दिन व दिन कठिन होती जा रही है। वस्त्र उद्योग विदेशी पूंजी कमाने के क्षेत्र मे प्रमुख स्थान रखता है। ऐसी स्थिति में निर्यात सम्बन्धी कठिनाई को दूर करने की सख्त आवश्यकता है। यह तभी संभव है, जब सरकार तथा व्यापार दोनों पक्षों की तरफ से परस्पर सहयोग पूर्ण विचार विमर्श हो। यह बात तब प्रकाश में आई, जब *बम्बई में व्यापार तथा उद्योग मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री* को अखिल भारतीय निर्यात समिति की तरफ से एक आवेदनपत्र पेश किया गया। अत्यन्त प्रसन्नता की बात है कि मंत्री महोदय ने इस आवेदन तथा सदस्यों के सुझावों का उत्तर देते हुए, वस्त्र निर्यात की वृद्धि के लिये अपनी सहानुभूति प्रकट की और आश्वासन भी दिया कि सरकार यथाशक्ति निर्यात को बढ़ाने के लिये सहयोग देगी। १६५७ के प्रथम चार महीनों के निर्यात की तुलना में १६५८ के प्रथम चार महीनों के निर्यात के अंकों से वास्तविक स्थिति स्पष्ट हो जायगी:—

(दस लाख गजों में)

	कुल	मोटा	साधारण	बढ़िया	सुपर फाइन
जनवरी	९०.६६	२३.०७	६३.०७	२.९०	१.६२
फरवरी	७१.४७	१७.२०	५०.९३	१.५८	१.६६
मार्च	८३.९९	२०.९७	५६.८०	१.३२	१.६०
अप्रैल	७४.९०	१८.६७	५२.६२	१.८७	१.७४
	३२१.०२	८०.०१	२२६.४२	७.६२	६.६२
१९५८					
जनवरी	६३.९२	१९.६६	४२.०६	०.४४	१.७९
फरवरी	४७.७२	१५.०४	३०.२७	०.६५	१.७६
मार्च	५३.६५	१६.९१	३४.५८	०.४५	२.०१
अप्रैल	५०.३५	१५.८७	३१.४४	०.६१	२.४३
	२१५.६७	६७.४८	१३८.३५	२.१५	७.९९

संसार के बाजारों में भारतीय वस्त्र के लिये लगातार कठिनाइयां बढ़ती जा रही हैं। सूडान ने भारतीय कपड़े को खुले लाइसेन्स देने से इनकार कर दिया है। इंडोनेशिया में आंतरिक अव्यवस्था और उपद्रवों के कारण भारतीय वस्त्र निर्यात कम हो गया। कनाडा वस्त्र आयात नीति को कठोर कर रहा है। ग्रेट ब्रिटेन, भारत पर लगातार जोर डाल रहा है कि हम अपना कपड़ा वहां कम भेजें। पूर्वी आफ्रीका के केनिया, युगाण्डा और टांगानिका आदि देशों ने कोरे और धुले कपड़े पर आयात-कर अधिक बढ़ा दिया है। ये कर २०% तथा छपे हुए कपड़े पर १००% तक होंगे। पूर्वी आफ्रीका के बाजारों में भारत का ७½ करोड़ गज कपड़ा खपता है। इन करों से भारतीय वस्त्र निर्यात और कठिन हो जायगा।

भारतीय वस्त्र उद्योग जिस भारी संकट में से गुजर रहा है, उस का यह एक पहलू है। देश में खपत के लिये भी कपड़ा तय्यार करने वाली मिलों की हालत अच्छी नहीं है। वे लगातार बन्द हो रही हैं, और मजदूरों में लगातार बेकारी बढ़ रही है। इस संकट को दूर करने के लिये उद्योग की ओर से अनेक छोटे बड़े सुझाव दिये गए हैं। उन पर विचार करके भारत सरकार क्या निर्णय करेगी, यह नहीं कहा जा सकता। लेकिन जो कुछ भी किया जाय, वह बहुत जल्दी किया जाना चाहिए।

—

कागज उद्योग

'कामर्स' के व्यापारिक संवाददाता ने देश के कागज के कारखानों की और नियोजकों के रुपया लगाने के परिणाम स्वरूप मिलों के बढ़े हुए शेयरों की एक सूची प्रकाशित की है।

ओरियंट पेपर्स के शेयरों की कीमत २४-५० (फरवरी के अंत में) से बढ़कर ३१-३० रु० हो गई है। टीटागर की कीमत ३३-५० रु० से ३८-५० रु०। श्री गोपाल मिल के शेयरों की कीमत १३.९७ से १६.१६ तक बढ़ गई है। वस्तुतः कागज उद्योग का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। देश में लगातार कागज की मांग बढ़ रही है। शिक्षा प्रसार के साथ अखबारों और किताबों की जरूरत बढ़ गई है। एक अनुमान के अनुसार कागज की मांग १०% प्रति वर्ष बढ़ जाती है। किन्तु इस कारण कागज महंगा हो जाय, यह स्वाभाविक होते हुए भी वांछनीय नहीं है। कागज का मूल्य इतना नहीं बढ़ने देना चाहिए, चूंकि इसका असर पुस्तक और अखबार पढ़ने वालों पर ही पड़ता है।

—

चीनी उद्योग

१९३२ में संरक्षण करों के द्वारा चीनी उद्योग को विशेष प्रोत्साहन मिला था, तब से यह उद्योग निरन्तर उन्नति करता रहा है। आज वस्त्र उद्योग के बाद इसका स्थान है। बहुत से किसानों व मजदूरों को इससे आजीविका मिलती है। १९५५ में चीनी मिलों की संख्या यद्यपि १६१ थी, पर १५३ मिलों ने अपने अंक भेजे हैं। इस उद्योग ने सब खर्च निकाल कर २९.६४ करोड़ रु० कमाया है। कुल मिलों में ११६.४९ करोड़ रु० की चीनी १९५५ में तैयार हुई थी। २.२४ करोड़ रु० के सह-उत्पादन (बाई प्रोडक्ट) भी तैयार हुए। इसमें से उत्तर प्रदेश का भाग सबसे बड़ा अर्थात् ६४.४५ करोड़ रु० था। बिहार में २३.५१ करोड़ रु० की चीनी पैदा हुई। बम्बई, मद्रास और आंध्र में क्रमशः १३.६४, ४.८६ और ४.८८ करोड़ रु० की चीनी तैयार हुई।

इस वर्ष १५३ मिलों में, जिनके अंक प्राप्त हुए हैं, १,२१,३८० कारीगर काम कर रहे थे। यह संख्या देश के सब कारखानों में काम करने वाले मजदूरों की ४.१ प्रतिशत है। इस वर्ष वेतन और मजदूरी के रूप में चीनी

[सम्पदा

मजदूरों ने १० ६७ करोड़ रु० बाटा है। प्रति मजदूर ६०४ रु० वार्षिक आय हुई, जबकि देश के प्रति व्यक्ति आय २७४ रु० है। परन्तु मजदूरों से अधिक किसानों को इस उद्योग से आय होती है। गन्ने के मूल्य में ७० ६८ करोड़ रु० किसानों को दिये गये। यह रकम कुल उत्पन्न चीनी आदि के मूल्य का ६० प्रतिशत हैं। चीनी की कीमत कम करने के लिए गन्ने की कीमतों में कमी अनिवार्य होगी।

दूसरों की दृष्टि में

हम अपनी पच वर्षीय योजनाओं की प्रगति की प्रशसा करें, यह स्वाभाविक है। किन्तु दूसरों की सम्मति अधिक निष्पक्ष और अधिक प्रामाणिक होगी। विश्व बैंक के प्रमुख अधिकारी आर्थिक विषयों के विशेषज्ञ माने जाते हैं। उन्ह भिन्न २ देशो की आर्थिक स्थिति देखकर विभिन्न योजनाओं की पूर्ति के लिये ऋण देना पड़ता है। इसलिए इनकी सम्मति का विशेष महत्व है। विश्व बैंक के प्रमुख 'पर जेकब्सन'ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में एक भाषण देते हुए भारतीय अर्थनीति की विशेष रूप से प्रशसा की है। देश की मुद्रा नीति में जनता का विश्वास है, भारत में पदार्थों के मूल्य बढ़े अवश्य हैं, किन्तु बहुत से देशों की अपेक्षा कम बढ़े हैं, देश की बैंक व्यवस्था योग्यता से चलाई जा रही है, उसके प्रबन्धकर्ता काफी कुशल हैं, भारत विदेशी पूंजी का उचित उपयोग कर रहा है और विदेशियों को सम्पत्ति करसे मुक्त कर उपयुक्त नीति अपना रहा है। इसलिये उन्होने यह आशा प्रकट की है कि विश्व बक तथा अन्य देशों से भारत को पर्याप्त पूंजी और ऋण मिलने की सभावना है। विश्व बैंक के एक दूसरे अधिकारी 'पीटर राइट' ने भी भारत की अर्थनीति और व्यवस्था की विशेष प्रशसा की है। वे कहते हैं कि भारत बहुत ईमानदारी से विकास योजनाओं की पूर्ति में लगा हुआ है। यह बात इस की साख को बहुत बढ़ा देती है। विश्व बैंक के अधिकारियों की ये सम्मतिया उन निराशावादियो को उत्तर देने के लिये काफी हैं, जो भारत की आर्थिक नीति और व्यवस्था से सदा असन्तुष्ट रहते हैं।

यथार्थ की ओर चिन्तन

पिछले दिनो केरल के मुख्य मत्री श्री नम्बूदीपाद ने एक पत्र प्रतिनिधि सम्मेलन में कहा था कि यदि पत्रकार वेतन बोर्ड की सिफारिशें केरल में अमल मे लायी जाय तो केरल के अनेक पत्र बन्द करने पड़ेंगे। हमारी दृष्टि में यह आदर्श से यथार्थ की ओर चिन्तन है। केरल शासन मिश्रित अर्थव्यवस्था के पक्ष में है, यह भी यथार्थवाद की ओर एक कदम है। हमारी यह निश्चित सम्मति है कि यदि बिना पूर्व आग्रह के कम्यूनिस्ट भी अपना उत्तरदायित्व समझकर देश की आर्थिक समस्याओं पर विचार करेंगे तो वे भावुकता की बजाय व्यावहारिकता के अधिक निकट आयेंगे और प्रस्तुत समस्याओ के स्पष्ट रूप को देखकर अपनी नीति में उचित परिवर्तन करने का प्रयत्न करेंगे और इस तरह समस्याओ का समाधान आसान हो जायगा।

देश का महान् घरेलू उद्योग—

घी तथा दूध से बने पदार्थ

भारत में प्रति वर्ष लगभग १ करोड़ ३ लाख ८ हजार मन घी उत्पन्न किया जाता है, जिसका मूल्य लगभग १ अरब ८५ करोड़ रु० होता है। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, बम्बई तथा बिहार घी उत्पादन के मुख्य केन्द्र हैं। देश के कुल घी उत्पादनका ५० प्रतिशत उत्पादन इन राज्यों में होता है। सभी क्षेत्रों में दूध से समान मात्रा में घी नहीं निकलता। यह दूध की किस्म था घी निकालने की विधि पर निर्भर करता है।सामान्यतः एक मन दूध से लगभग २ सेर ५ छटांक घी निकलता है।

भारत में घी का व्यापार उतना प्राचीन है, जितना कृषि। घी उत्पादन यहां का घरेलू उद्योग रहा है। वस्तुतः यह पशु-पालन का एक अंग है। गांवों में दूध काफी होता है। सबकी खपत नहीं हो पाती। बचे हुए दूध की चिकनाई को सुरक्षित रखने का एकमात्र उपाय है—उसका घी तैयार कर लेना। अतः यही विधि यहां प्रचलित है।

भारत में घी का सबसे अधिक प्रयोग भोजन पकाने में किया जाता है। इसके अतिरिक्त देशी दवाइयां तैयार करने, मालिश करने तथा सुंघनी को खुशबूदार बनाने में भी घी का उपयोग होता है।

बाजार में बिकने वाला घी अधिकतर भैंस के दूध से तैयार किया जाता है। कभी-कभी उसे गाय के दूध से तैयार किये गये घी के साथ मिला दिया जाता है। एग मार्क योजना के अंतर्गत सबसे पहले घी को वर्गीकरण किया गया, जिससे शुद्ध तथा पूर्व परीक्षित घी प्राप्त हो सके।

दूध से बने पदार्थ

भारत में घी के अतिरिक्त मक्खन, दही, खोआ, आइसक्रीम तथा क्रीम भी तैयार की जाती है और इन पदार्थों का व्यापारिक महत्व बहुत है। किन्तु घी की अपेक्षा इन पदार्थों का उत्पादन बहुत कम है। दूध से इन वस्तुओं का औसत उत्पादन इस प्रकार है—मक्खन ६.९ प्रतिशत, दही ८६.२ प्रतिशत, खोआ २० प्रतिशत, आइसक्रीम १२.१९ प्रतिशत तथा क्रीम ९.८ प्रतिशत। अनुमान है कि भारत में मक्खन का वार्षिक उत्पादन १९ लाख ३७ हजार मन है, जिसमें ७.४ प्रतिशत मक्खन तथा शेष देशी मक्खन होता है। कुल उत्पादन का २।५ से अधिक भाग केवल पंजाब में उत्पन्न होता है। उत्तरप्रदेश, बम्बई तथा बिहार मक्खन उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

भारत में प्रतिवर्ष दही का उत्पादन ३ करोड़ ५६ लाख ७६ हजार मन है। सबसे अधिक उत्पादन उत्तरप्रदेश में होता है। इसके बाद बिहार, आन्ध्र तथा पंजाब का नम्बर आता है। आइसक्रीम तथा खोआ के उत्पादन में भी उत्तरप्रदेश अन्य राज्यों से बढ़ा-चढ़ा है। देश में २७ लाख ३७ हजार मन आइसक्रीम तैयार की जाती है, जिसका काफी भाग उत्तरप्रदेश में तैयार होता है। देश में खोए का उत्पादन ४२ लाख ५८ हजार मन है, जिसका तीन-चौथाई भाग केवल उत्तरप्रदेश में तैयार होता है।

क्रीम केवल शहरी क्षेत्रों में तैयार की जाती है और इसकी खपत भी शहरी क्षेत्रों में ही है। इसका वार्षिक उत्पादन ३ लाख ३१ हजार मन है, जिसका ५० प्रतिशत उत्तरप्रदेश में ही होता है।

राज्यों में सम्पदा स्वीकृत

सम्पदा को निम्नलिखित राज्यों के शिक्षा-विभागों ने अपने अपने राज्य के स्कूलों, कालेजों तथा सार्वजनिक वाचनालयों के लिए स्वीकृत किया है—

राज्य	परिपत्रक संख्या	दिनांक
(१) उत्तरप्रदेश	पुस्तक ५२५७	१२-१-५४
(२) बिहार	७३३/२पी/१/५३	२७-११-५३
(३) पंजाब	३२०६/५/२५/बी-५३-२६१४३	२३-७-५३
(४) मध्यप्रदेश		
(स्कूलों के लिए)	२ जी/वी	२-८-५२
(कालेजों के लिए)	३४२८ ३XVIII	२४-८-५२
(५) राजस्थान	३६८०/Edu II/५२	६-१२-५२
(६) मध्यभारत	३ : १५ : २ : ५२वी/२५६५	२४-३-५२

नई कर पद्धति : एक विचारपूर्ण अध्ययन

श्री एन. ए. पालखीवाला

वर्तमान कर-पद्धति के अन्दर पहली भूल यह है कि उसकी रूपरेखा अस्थायी और अनिश्चित है। आय कर निगमके अन्दर यह अनिश्चितता सबसे ज्यादा है। कोई वर्ष ऐसा नहीं जाता है और कभी कभी आधे वर्ष के अन्दर ही, जिसमें इनकम टैक्स धारा १९२२ में कोई संशोधन हुये, बिना नहीं होता। हमारे देश के इतिहास में किसी भी कर में इतना संशोधन या परिवर्तन नहीं हुआ है, जितना कि इन्कम टैक्स मे हुआ है। इसमें कई परिवर्तन ऐसे हुये हैं, जिनके लिये कोई भी विचारपूर्ण कारण नहीं है। उदाहरणार्थ, व्यापार घाटा जो प्रति वर्ष हिसाब में आगे ले जाया जाता है, उस सम्बन्धी नियम को देख लें।

फाइनेन्स एक्ट १९५५ में परिवर्तन होने से पूर्व ऐसा नियम था कि किसी भी घाटे को छः वर्ष से आगे ढोकर नहीं ले जाया जा सकता। फाइनेन्स एक्ट १९५५ में इसकी अवधि पूर्णरूपसे हटा दी गयी और ऐसा माना गया कि अनिश्चित अवधि तक हम घाटे को ढोये ले चल सकते हैं। फिर फाइनेन्स एक्ट (नम्बर २) में घाटे ढोये ले चलने की नयी अवधि आठ वर्ष की निर्धारित की गई। इसके बीच में इसमें परिवर्तन के लिये कुछ भी उपाय नहीं किया गया है।

इनकम टैक्स नियम में जिसका नागरिक पर कठोर प्रभाव पड़ता है, कई ऐसे दोष हैं जिनके सम्बन्ध में खास-खास जगह पर अधिकारियों को बतलाया गया है लेकिन खेद है कि इसमें कोई भी सुधार नहीं हुआ है। लेकिन साथ ही साथ जहां पर राजस्व प्राप्ति में बाधा पहुँचने की बात है, वहां इसका तत्काल संशोधन कर दिया गया है बिना इस बात को ध्यान दिये कि यह संशोधन न्यायपूर्ण, उचित अथवा अनुचित है। ऐसा कहना कि जैसे मनुष्य का संपूर्ण जीवन परीक्षण से भरा है, वैसे ही कानून भी परीक्षण से भरे हैं, उचित नहीं है। परीक्षण आंख मूंद जल्द जल्द नहीं होना चाहिये, जिससे आगे चलकर कानून का आवश्यकीय विकास ही पूर्णरूप से नष्ट हो जावे। इस तरह के संक्रामक परिवर्तनसे काफी कष्ट पहुँचता है कि आय एक वर्ष में होती है और कर अगले वर्ष के लिये निर्धारित किया जाता है। इस तरह जब तक फाइनेन्स बिल पास होता है, कर दाता के सामने मुसीबत उपस्थित हो जाती है। किसी भी करदाता को न्यायपूर्ण और साफ साफ तरीकों तथा इमानदारी से काम करने का मौका नहीं मिलता है।

नई कर-पद्धति के अन्दर दूसरी सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके अन्दर नागरिक की सुविधा का कुछ भी ध्यान नहीं किया गया है। आज किसी को भी इस बात की चिन्ता नहीं है कि कानूनी ढंग से कारोबार चलाने के लिये कानून मानने वाले नागरिक को कानून सम्बन्धी जटिल फार्म भरना होता है और कितना झंझट उठाना पड़ता है। एक दूषित वातावरण उपस्थित हो जाता है। जितना ही ज्यादा कर लगाने के पेंचीदे तरीके होंगे उतना ही शासन शक्ति ज्यादा कायम करनी होगी, मानव शक्ति ज्यादा नष्ट होगी, ज्यादा सरकारी कर्मचारी रखे जायेंगे, ज्यादा व्यय होगा और इसलिये ज्यादा कर लगाने की आवश्यकता होगी।

नई कर पद्धति के अन्दर तीसरी कमी यह है कि इसके अन्दर न्याय और ईमानदारी नहीं है। बहुत वर्ष पूर्व हाउस आफ लार्डस ने निर्णय दिया था कि कर और न्याय दोनों परस्पर अपरिचित चीजें हैं। लेकिन इतना होते हुए भी हम ऐसे कोई कारण नहीं देखते, जिससे वे एक दूसरे के लिये शत्रु हों। नई कर पद्धति के अन्दर कई ऐसी धाराएं है जो कि सचाई और स्वस्थ व्यवहार को दुश्मन हैं। उदाहरणार्थ इंडियन इनकम टैक्स धारा २३ को देखें। इसमें एक उपधारा है जिसमें ऐसी कंपनियों में जिनमें जनता का हिस्सा कम है, नफे का निर्धारित भाग लाभांश के रूप में घोषित करना होगा। एक कम्पनी के केस में जैसा कि हाउस आफ लार्डस ने कहा था कम्पनी के लिये यह कानूनी दंड है कि वह ज्यादा लाभांश नहीं घोषित करती है। भारतीय कानून में यदि ज्यादा लाभांश घोषित नहीं करने के लिये ज्यादा कारण है तो भी कम्पनी को धारा २३ ए के अनुसार कम्पनियों को कुछ निश्चित प्रतिशत लाभांश

दती है तो उसे फाइनेन्स एक्ट १९५८ के अन्दर दंड देना होगा। इस सम्बन्ध में इंडियन पेनल कोड याद आता है, जिसमें बतलाया गया है कि यदि आप डकैती करते हैं तो आपको सात वर्ष का कारागार होगा और यदि आप डकैती नहीं करते, तो आपको पांच वर्ष की जेल होगी।

इसी के समान उदाहरण बोनस शेयरों का भी है। इस कर से सरकार को कम राजस्व प्राप्त होता है लेकिन इसको लागू करने से स्वस्थ रूप से आर्थिक विकास नष्ट हो जाता है। इस तरह का कर बिलकुल ही नहीं लगाया जाना चाहिये। बोनस शेयर कम्पनी के नफे से निकलते हैं, जिस पर पहले भी कर लग चुका है और बोनस शेयर लगने के बाद शेयर होल्डरों की उचित कीमत पहले के समान ही रह जाता है।

चौथी बात जो नई कर प्रणाली के अन्दर दिखाई देती है, वह यह है कि इसका आकार राष्ट्र के विकास के लिये लाभप्रद न होकर ज्यादातर केवल सिद्धान्त पर ही आधारित है। मनगढ़न्त सिद्धान्त से देखने पर तो नई करपद्धति अवश्य ही आकर्षक दिखाई देगी। आपकी आय पर आय-कर लगता है, व्यय पर कर, बचत पर, पूंजी पर, जीवन में आप जो दान देते हैं उस पर उपहार कर (गिफ्ट टेक्स) और यदि आप बिना खर्च के किये हुए मर जाते हैं तो उस पर एस्टेट ड्यूटी। अब यह प्रश्न उठता है कि इस तरह की कर प्रणाली क्या स्वस्थ आर्थिक विकास के लिये उचित है। यदि हम स्पष्ट रूप से ध्यान दें तो पता चल जावेगा कि भारतवर्ष में लाभ कमाने के लिये धन कम है, खर्च करने के लिये कम है, पूंजी लगाने के लिये कम है, दान देने के लिये कम है ऐसी हालत में नये कर सर्वथा अविवेकपूर्ण दिखाई देते हैं। जहां पर केवल वेल्थ टेक्स और इनकम टैक्स ही मिलकर व्यक्ति की वार्षिक आय से १०० प्रतिशत ज्यादा हो जाते हैं, वहां स्पष्ट यह पता चलता है कि नई कर पद्धति लगाने का केवल एकमात्र यही उद्देश्य है कि हम किसी की सम्पत्ति को बिना मुआवजा (उचित मूल्य) दिये ही हड़प कर लें।

इस संदर्भ में यह ध्यान में देने योग्य है कि जो राष्ट्र अविवेकपूर्ण सिद्धान्तों पर अपनी नीति बनाते हैं, उनको भारी नुकसान उठाना पड़ता है। यथार्थवादी नीति अपनाने से उन्हें कुछ भी नुकसान नहीं होता।

नई कर प्रणाली के अन्दर पांचवीं और अति ही घातक चीज है कर लगाने-सम्बन्धी अधिकारियों की व्यवहार नीति। जहां हमारे सामने कई ऐसे उदाहरण आये जहां पर करदाता कर नहीं देने के कारण बरबाद हो गया वहां हमें एक भी ऐसा उदाहरण नहीं दिखाई दिया, जिसमें एक भी इनकम टैक्स अधिकारी को अन्ययापूर्वक कर लगाने के लिये, जो विभिन्न प्रान्तों में लगाये जाते हैं, दण्ड मिला हो। कई ऐसे उदाहरण आये देखे गये हैं जहां पर इनकम टैक्स अधिकारियों ने कभी-कभी ऐसा अनुमान लगाया है, जहां पर किसी भी मनुष्य की विचार शक्ति नहीं पहुँच सकती है। जहां आजकल ज्यादा कर लगने लगा है और कर का बोझ भी ज्यादा है वहां यह उचित है कि अधिकारीगण केवल उचित कर ही लें और देश के किसी भी नागरिक से अन्यायपूर्ण कर न लें। कर से बचना बड़ा गुनाह है, लेकिन उससे भी ज्यादा गुनाह है अन्यायपूर्ण कर लगाना। हमारे शासकों में बुद्धि की कमी नहीं है वास्तविक दोष उच्च पदाधिकारियों का है, जो इनकम टैक्स अधिकारियों को तरक्की देते हैं चूंकि अधिकारियों के अंदर एक भ्रम उपस्थित हो गया है कि उनकी तरक्की केवल इसी पर निर्भर है कि वे अनुचित तरीकों से ज्यादा से ज्यादा कर सरकार को दिला सकें। ऐसी हालत में कई जगह जहां पर इनकम टैक्स आफिसर को मालूम है कि उसे वैसा आदेश नहीं देना चाहिये जैसा वह दे रहा है, फिर भी अपनी तरक्की के लोभ में बाध्य होकर अनुचित कार्य करने में संकोच नहीं करता।

यदि हम कर प्रणाली में हुये परिवर्तन तथा कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति दोनों की तुलना करके देखें तो हमें पता चलेगा कि कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति में परिवर्तन होना चाहिये। कानून से उतनी हानि नहीं है, जितना कर वसूल करने वालों से।

अंत में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि यह ज्यादा अच्छा है कि हम स्वच्छ और न्यायपूर्ण कानून बनायें जिसका पालन प्रत्येक नागरिक सहयोग की भावना से कर सके। ऐसा अन्यायपूर्ण कानून नहीं बनाना चाहियें, जिससे कानून मानने वाले नागरिक उसका पालन नहीं कर सकें।

—

आज की कुछ आर्थिक समस्याएं

ले०—जी० डी० सोमानी

इस बात से सभी सहमत हैं कि जनता कल्याण राज्य में सुखी रहे तथा राष्ट्र की शक्ति इस लक्ष्य की प्राप्ति की ओर संलग्न रहे। कल्याण राज्य में निस्सन्देह समान वितरण न्यायोचित, आवश्यक व अनिवार्य है। यह बात हमारे हृदय तथा दिमाग दोनों को ठीक जंचती है। कुछ वर्गोंका विचार है कि ऐसा न्याय तभी हो सकता है, जब कुछ लोगों की भारी आय को घटा दिया जाय।

समान वितरण के नाम पर अब चालू होने वाले नवीन वेतन सिद्धान्त के बारे में मैं कुछ तर्क किये बिना नहीं रह सकता। यह उतना ही भ्रमजनक है, जितना पुराना सिद्धांत। प्रथम वेतन सिद्धान्त का—जिसके अनुसार वेतन के रूप में बांटने के लिए प्राप्य राष्ट्रीय आय को नहीं बढ़ाया जा सकता—मजदूरों ने विरोध किया था। वर्तमान नया वेतन सिद्धांत भी, जो आजकल देश में प्रचलित हो रहा है और जिसके अनुसार जनता का जीवन स्तर, कुछ धनी लोगों की सम्पत्ति को घटाये बिना तथा उस सम्पत्ति पर विविध कर लगाये बिना ऊंचा नहीं किया जा सकता, सरासर भ्रमजनक है। मैं मजदूरों से अनुरोध करता हूँ कि वे इस पक्षपातपूर्ण वेतन निधि सिद्धान्त का दृढ़ता से विरोध करें। धन को ही अन्तिम लक्ष्य समझना गलत है। वह एक साधन मात्र है। दूसरे शब्दों में—असल समस्या यह नहीं है कि एक आदमी कितना कमाता है ? अथवा कितना धनी है ?—बल्कि समस्या यह है कि वह अपनी आमदनी तथा पूंजी को कैसे खर्च करता है।

अगर आमदनी तथा पूंजी का उपयोग उत्पादन कार्यों में होता है तो उससे दूसरों के धन में भी वृद्धि होगी।

\+ + +

वैयक्तिक तथा संयुक्त आमदनी—दोनों पर कर लगाने की नीति भारी बोझ डालती है। निजी कारोबार ने राष्ट्र के कल्याण के लिये बहुत कुछ किया है, और कर रहा है—इस नीति के कारण उससे अधिक आशा रखना व्यर्थ है। सरकार को इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए कि कर लगाने की नीति में किस प्रकार उदारता दिखाई जाय, जिससे पूंजी निर्माण अधिक हो सके और विकास के प्रयत्न अधिक से अधिक सफल हो सकें। लेकिन यह भी ध्यान में रखे कि इस प्रकार की उदारता से सरकार की वार्षिक आय में भी कमी न हो, क्योंकि न्यायोचित कर लगाने से सरकार को अन्ततोगत्वा अधिक लाभ होता है। कर लगाने की नीति ऐसी होनी चाहिए, जिससे उद्योगों के विकास की संभावना बढ़ती रहे।

\+ + +

आधुनिक व्यापार तथा कारोबार कुछ थोड़े से लोगों की चीज नहीं है। वास्तव में आधुनिक व्यापार सबसे अधिक प्रजातंत्रात्मक संस्था है। "टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" संभवतः भारत में सबसे बड़ी निजी संस्था है। इसके ४७,००० शेयर होल्डर हैं, करीबन उनमें से बहुत कम लोगों के शेयर प्रतिव्यक्ति १०,००० रु० से भी कम हैं तथा ८७ प्रतिशत लोगों के शेयर २००० रु० प्रति व्यक्ति है। ऐसी अवस्था में उद्योग को कुछ थोड़े से लोगों की चीज समझना सचाई से दूर भागना है।

\+ + +

मजदूर सम्बन्धी कानूनों के सम्बन्ध में स्थिति कुछ संतोषजनक है। इस क्षेत्र में राष्ट्रीय तौर पर त्रिपक्षीय विचार विमर्श हुए, जिससे परस्पर मतभेद दूर हुए। प्रबन्धक कमेटियों में कारीगरों के भाग लेने का विचार एक निश्चित रूप धारण करता जा रहा है और ३० से भी अधिक मिलों ने (निजी तथा सरकारी क्षेत्र में) "संयुक्त प्रबन्धक समिति" चलाने के लिए सहमति प्रकट की है। निजी क्षेत्र के अनेक अधिकारियों ने संयुक्त समिति के विचार के प्रति कुछ तर्क वितर्क किया तथा यह इच्छा प्रकट की कि कुछ चुने हुए औद्योगिक संगठनों में अपनी इच्छापूर्वक संयुक्त प्रबन्धक समितियों की स्थापना की जाय। न कि कानूनी तौर पर अनिवार्य रूप से उद्योग में अनुशासन वा आचरण सम्बन्धी संहिता, जिसे सरकार, मिल मालिक एवं कारीगरों के प्रतिनिधियों ने काफी विचार विमर्श के बाद तय्यार किया था,—सचमुच बहुत महत्वपूर्ण है।

दती है तो उसे फाइनेन्स एक्ट १६५८ के अन्दर दंड देना होगा। इस सम्बन्ध में इंडियन पेनल कोड याद आता है, जिसमें बतलाया गया है कि यदि आप डकैती करते हैं तो आपको सात वर्ष का कारागार होगा और यदि आप डकैती नहीं करते, तो आपको पांच वर्ष की जेल होगी।

इसी के समान उदाहरण बोनस शेयरों का भी है। इस कर से सरकार को कम राजस्व प्राप्त होता है लेकिन इसको लागू करने से स्वस्थ रूप से आर्थिक विकास नष्ट हो जाता है। इस तरह का कर बिलकुल ही नहीं लगाया जाना चाहिये। बोनस शेयर कम्पनी के नफे से निकलते हैं, जिस पर पहले भी कर लग चुका है और बोनस शेयर लगने के बाद शेयर होल्डरों की उचित कीमत पहले के समान ही रह जाता है।

चौथी बात जो नई कर प्रणाली के अन्दर दिखाई देती है, वह यह है कि इसका आकार राष्ट्र के विकास के लिये लाभप्रद न होकर ज्यादातर केवल सिद्धान्त पर ही आधारित है। मनगढ़न्त सिद्धान्त से देखने पर तो नई करपद्धति अवश्य ही आकर्षक दिखाई देगी। आपकी आय पर आय-कर लगता है, व्यय पर कर, बचत पर, पूंजी पर, जीवन में आप जो दान देते हैं उस पर उपहार कर (गिफ्ट टेक्स) और यदि आप बिना खर्च के किये हुए मर जाते हैं तो उस पर एस्टेट ड्यूटी। अब यह प्रश्न उठता है कि इस तरह की कर प्रणाली क्या स्वस्थ आर्थिक विकास के लिये उचित है। यदि हम स्पष्ट रूप से ध्यान दें तो पता चल जावेगा कि भारतवर्ष में लाभ कमाने के लिये धन कम है, खर्च करने के लिये कम है, पूंजी लगाने के लिये कम है, दान देने के लिये कम है ऐसी हालत में नये कर सर्वथा अविवेकपूर्ण दिखाई देते हैं। जहां पर केवल वेल्थ टेक्स और इनकम टैक्स ही मिलकर व्यक्ति की वार्षिक आय से १०० प्रतिशत ज्यादा हो जाते हैं, वहां स्पष्ट यह पता चलता है कि नई कर पद्धति लगाने का केवल एकमात्र यही उद्देश्य है कि हम किसी की सम्पत्ति को बिना मुआवजा (उचित मूल्य) दिये ही हड़प कर लें।

इस संदर्भ में यह ध्यान में देने योग्य है कि जो राष्ट्र अविवेकपूर्ण सिद्धान्तों पर अपनी नीति बनाते हैं, उनको भारी नुकसान उठाना पड़ता है। यथार्थवादी नीति अपनाने से उन्हें कुछ भी नुकसान नहीं होता।

नई कर प्रणाली के अन्दर पांचवीं और अति ही घातक चीज है कर लगाने-सम्बन्धी अधिकारियों की व्यवहार नीति। जहां हमारे सामने कई ऐसे उदाहरण आये जहां पर करदाता कर नहीं देने के कारण बरबाद हो गया वहां हमें एक भी ऐसा उदाहरण नहीं दिखाई दिया, जिसमें एक भी इनकम टैक्स अधिकारी को अन्ययापूर्वक कर लगाने के लिये, जो विभिन्न प्रान्तों में लगाये जाते हैं, दण्ड मिला हो। कई ऐसे उदाहरण आये देखे गये हैं जहां पर इनकम टैक्स अधिकारियों ने कभी-कभी ऐसा अनुमान लगाया है, जहां पर किसी भी मनुष्य की विचार शक्ति नहीं पहुँच सकती है। जहां आजकल ज्यादा कर लगने लगा है और कर का बोझ भी ज्यादा है वहां यह उचित है कि अधिकारीगण केवल उचित कर ही लें और देश के किसी भी नागरिक से अन्यायपूर्ण कर न लें। कर से बचना बड़ा गुनाह है, लेकिन उससे भी ज्यादा गुनाह है अन्यायपूर्ण कर लगाना। हमारे शासकों में बुद्धि की कमी नहीं है वास्तविक दोष उच्च पदाधिकारियों का है, जो इनकम टैक्स अधिकारियों को तरक्की देते हैं चूंकि अधिकारियों के अंदर एक भ्रम उपस्थित हो गया है कि उनकी तरक्की केवल इसी पर निर्भर है कि वे अनुचित तरीकों से ज्यादा से ज्यादा कर सरकार को दिला सकें। ऐसी हालत में कई जगह जहां पर इनकम टैक्स आफिसर को मालूम है कि उसे वैसा आदेश नहीं देना चाहिये जैसा वह दे रहा है, फिर भी अपनी तरक्की के लोभ में बाध्य होकर अनुचित कार्य करने में संकोच नहीं करता।

यदि हम कर प्रणाली में हुये परिवर्तन तथा कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति दोनों की तुलना करके देखें तो हमें पता चलेगा कि कर वसूल करने वाले अधिकारियों की नीति में परिवर्तन होना चाहिये। कानून से उतनी हानि नहीं है, जितना कर वसूल करने वालों से।

अंत में हम इतना ही कहना चाहते हैं कि यह ज्यादा अच्छा है कि हम स्वच्छ और न्यायपूर्ण कानून बनायें जिसका पालन प्रत्येक नागरिक सहयोग की भावना से कर सके। ऐसा अन्यायपूर्ण कानून नहीं बनाना चाहियें, जिससे कानून मानने वाले नागरिक उसका पालन नहीं कर सकें।

—

आज की कुछ आर्थिक समस्याएं

ले०—जी० डी० सोमानी

इस बात से सभी सहमत हैं कि जनता कल्याण राज्य में सुखी रहे तथा राष्ट्र की शक्ति इस लक्ष्य की प्राप्ति की ओर संलग्न रहे। कल्याण राज्य में निस्सन्देह समान वितरण न्यायोचित, आवश्यक व अनिवार्य है। यह बात हमारे हृदय तथा दिमाग दोनों को ठीक जंचती है। कुछ वर्गोंका विचार है कि ऐसा न्याय तभी हो सकता है, जब कुछ लोगों की भारी आय को घाटा दिया जाय।

समान वितरण के नाम पर अब चालू होने वाले नवीन वेतन सिद्धान्त के बारे में मैं कुछ तर्क किये बिना नहीं रह सकता। यह उतना ही भ्रमजनक है, जितना पुराना सिद्धांत। प्रथम वेतन सिद्धान्त का—जिसके अनुसार वेतन के रूप में बांटने के लिए प्राप्य राष्ट्रीय आय को नहीं बढ़ाया जा सकता—मजदूरों ने विरोध किया था। वर्तमान नया वेतन सिद्धांत भी, जो आजकल देश में प्रचलित हो रहा है और जिसके अनुसार जनता का जीवन स्तर, कुछ धनी लोगों की सम्पत्ति को घटाये बिना तथा उस सम्पत्ति पर विविध कर लगाये बिना ऊंचा नहीं किया जा सकता, सरासर भ्रमजनक है। मैं मजदूरों से अनुरोध करता हूँ कि वे इस पक्षपातपूर्ण वेतन निधि सिद्धान्त का दृढ़ता से विरोध करें। धन को ही अन्तिम लक्ष्य समझना गलत है। वह एक साधन मात्र है। दूसरे शब्दों में—असल समस्या यह नहीं है कि एक आदमी कितना कमाता है ? अथवा कितना धनी है ?—बल्कि समस्या यह है कि वह अपनी आमदनी तथा पूंजी को कैसे खर्च करता है।

अगर आमदनी तथा पूंजी का उपयोग उत्पादन कार्यों में होता है तो उससे दूसरों के धन में भी वृद्धि होगी।

\+ + +

वैयक्तिक तथा संयुक्त आमदनी—दोनों पर कर लगाने की नीति भारी बोझ डालती है। निजी कारोबार ने राष्ट्र के कल्याण के लिये बहुत कुछ किया है, और कर रहा है—इस नीति के कारण उससे अधिक आशा रखना व्यर्थ है। सरकार को इस बात पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए कि कर लगान की नीति में किस प्रकार उदारता दिखाई जाय, जिससे पूंजी निर्माण अधिक हो सके और विकास के प्रयत्न अधिक से अधिक सफल हो सकें। लेकिन यह भी ध्यान में रखे कि इस प्रकार की उदारता से सरकार की वार्षिक आय में भी कमी न हो, क्योंकि न्यायोचित कर लगाने से सरकार को अन्ततोगत्वा अधिक लाभ होता है। कर लगाने की नीति ऐसी होनी चाहिए, जिससे उद्योगों के विकास की संभावना बढ़ती रहे।

\+ + +

आधुनिक व्यापार तथा कारोबार कुछ थोड़े से लोगों की चीज नहीं है। वास्तव में आधुनिक व्यापार सबसे अधिक प्रजातंत्रात्मक संस्था है। "टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" संभवतः भारत में सबसे बड़ी निजी संस्था है। इसके ४७,००० शेयर होल्डर हैं, करीबन उनमें से बहुत कम लोगों के शेयर प्रतिव्यक्ति १०,००० रु० से भी कम हैं तथा ८७ प्रतिशत लोगों के शेयर २००० रु० प्रति व्यक्ति है। ऐसी अवस्था में उद्योग को कुछ थोड़े से लोगों की चीज समझना सचाई से दूर भागना है।

\+ + +

मजदूर सम्बन्धी कानूनों के सम्बन्ध में स्थिति कुछ संतोषजनक है। इस क्षेत्र में राष्ट्रीय तौर पर त्रिपक्षीय विचार विमर्श हुए, जिससे परस्पर मतभेद दूर हुए। प्रबन्धक कमेटियों में कारीगरों के भाग लेने का विचार एक निश्चित रूप धारण करता जा रहा है और ३० से भी अधिक मिलों ने (निजी तथा सरकारी क्षेत्र में) "संयुक्त प्रबन्धक समिति" चलाने के लिए सहमति प्रकट की है। निजी क्षेत्र के अनेक अधिकारियों ने संयुक्त समिति के विचार के प्रति कुछ तर्क वितर्क किया तथा यह इच्छा प्रकट की कि कुछ चुने हुए औद्योगिक संगठनों में अपनी इच्छापूर्वक संयुक्त प्रबन्धक समितियों की स्थापना की जाय। न कि कानूनी तौर पर अनिवार्य रूप से उद्योग में अनुशासन वा आचरण सम्बन्धी संहिता, जिसे सरकार, मिल मालिक एवं कारीगरों के प्रतिनिधियों ने काफी विचार विमर्श के बाद तय्यार किया था,—सचमुच बहुत महत्वपूर्ण है।

आज देश में ट्रेड यूनियन आन्दोलन का अनेक कारणों से राजनीतिक पार्टियों के कार्यक्रमों के साथ निकट सम्बन्ध है। आवश्यकता यह है कि यह आन्दोलन राजनीतिक नेताओं की दलबन्दी से स्वतन्त्र हो और मज़दूरों से ही उनके नेतृत्व का विकास हो। इसलिए मैं इस बात का स्वागत करता हूँ कि औद्योगिक कारीगरों को ट्रेड यूनियन आन्दोलन के बारे में प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम तय्यार किया गया है।

राज्य बीमा योजना में कुछ सुधार करने होंगे। मज़दूरों ने शिकायत की है कि उनका दवा-दारू तथा चिकित्सा सम्बन्धी स्तर बहुत निम्न है, तथा उन्हें आवश्यक कागजातों को भरने के लिए बड़ी मुसीबतें उठानी पड़ती हैं, जिससे समय तथा पैसा दोनों बरबाद हो जाते हैं। राज्य बीमा निगम के पास करीबन १२ करोड़ रु० की निधि है, जिसका उपयोग अब तक नहीं हुआ है। फिर भी यह निगम कर्मचारियों की सुविधाओं के लिये तथा उनकी आर्थिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए बिलकुल कोशिश नहीं कर रहा है और दूसरी ओर समय समय पर सुझाव रखा जाता है कि इस निधि को बढ़ाने के लिये मिल मालिक अपना योग और अधिक दें। मेरा स्पष्ट सुझाव यह है कि, सरकार तथा राज्य बीमा निगम—दोनों मिल मालिकों पर अतिरिक्त बोझ डालकर निगम की धन राशि बढ़ाने की बजाय कर्मचारियों की स्थिति को सुधारने के प्रति तुरन्त ध्यान दें।❀

❀ अखिल भारतीय उद्योग विनियोजक संगठन के रजत जयन्ती सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण के कुछ अंश।

भारत में आधुनिक उद्योगों का विकास

प्रो० चतुर्भुज मामोरिया

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत

प्रथम पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत राजकीय और निजी उद्योग क्षेत्र में औद्योगिक उत्पादन बढ़ाने की व्यवस्था की गई। योजना को कार्यान्वित करने के लिए निर्धारित २३.५६ करोड़ रुपयों में से १४१ करोड़ (अर्थात् ७.६ %) उद्योगों और खनिज विकास में लगाया गया। प्रथम योजना में ऐसे उद्योगों को प्राथमिकता दी गई जो देश के लिए आधारभूत उद्योग माने जाते हैं, और जिन उद्योगों का अभी तक अपेक्षाकृत कम विकास हुआ था। यदि राजकीय और निजी उद्योग क्षेत्रों को एक साथ मिलाकर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि कुल व्यय का २६ प्रतिशत धातु शोधन उद्योगों के लिए २० प्रतिशत पेट्रोल शोधन शालाओं के लिए, १६ प्रतिशत इन्जीनियरिंग उद्योगों के लिए; ८ प्रतिशत वस्त्र उद्योग के लिए; ५ प्रतिशत सीमेंट और लगभग ४ प्रतिशत कागज, पट्टे और अखबारी कागज उद्योग के लिए रखा गया था। औद्योगिक विकास कार्यक्रम के लिए प्रथम योजना काल में निम्न प्रकार से प्राथमिकता दी गई :—

(१) जूट और प्लाईवुड जैसे उत्पादक वस्त्र उद्योग और सूती कपड़े, चीनी, साबुन, बनस्पति, रंग और वार्निश जैसे उपभोक्ता उद्योग की वर्तमान उत्पादन क्षमता का पूर्ण उपयोग किया जाय।

(२) लोहा व इस्पात, एल्यूमीनियम, सीमेंट, रासायनिक खाद, भारी रासायनिक पदार्थ, मशीनों के औजार आदि उद्योगों की वर्तमान उत्पादन क्षमता को बढ़ाया जाय।

(३) जिन उद्योगों को आरम्भ करने के लिए पूंजी लगा दी गई है, उन्हें पूरा किया जाय।

(४) देश के औद्योगिक ढांचे को अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए अपने साधनों को ध्यान में रखते हुए नये कारखाने स्थापित किये जायें, जैसे जिप्सम से गन्धक और रेयन के लिए रासायनिक लुब्दी बनाने के उद्योग।

प्रथम योजनाकाल में (१) जूट, मोटरों, मशीनों के औजार तथा कपड़े की मशीनों और चूड़ियों का उत्पादन करने वाले उद्योगों की वास्तविक उत्पादन क्षमता में किसी प्रकार का परिवर्तन करने की व्यवस्था नहीं की गई, क्यों कि इनकी उत्पादन क्षमता पर्याप्त थी और इनकी वर्तमान उत्पादन क्षमता को बनाये रखने के लिए ही अधिकांशतः प्रयत्न किये गये।

(२) ढले हुए लोहे, इस्पात. चीनी, सीमेंट, कागज, पट्टा, दियासलाई तथा अन्य रासायनिक पदार्थों के उद्योगों की वास्तविक उत्पादन क्षमता में वृद्धि की योजना की गई किन्तु यह वृद्धि प्रत्येक उद्योग में १०० प्रतिशत से कम ही रखी गई।

(३) बिजली से चलने वाले पम्पों, डिजिल-इन्जिनों, सीने की मशीनों, बाइसिकलों इत्यादि उद्योगों के जिनकी वास्तविक उत्पादन क्षमता मांग के अनुपात में कम थी, काफी प्रसार करने की योजना बनाई गई। इसी श्रेणी में अन्य उद्योग—काटन लिंटर्स, रासायनिक लुगदी, कुछ दवाइयां, (जिनका भारत में उत्पादन नहीं किया जाता था) भी रखे गये।

प्रथम योजना काल मे उत्पादन के जो लक्ष्य निर्धारित किए गये थे, उनमें से कुछ लक्ष्यों की पूर्ति हो चुकी है; कुछ में उत्पादन लक्ष्य से भी अधिक बढ़ गया है। और कुछ में विभिन्न कारणों से लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो पाई। प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत सीमेंट, कागज, रेयन, सोडा एश, कास्टिक सोडा, बिजली के ट्रांसफार्मर, बाइसिकलें, सीने की मशीनें, पैट्रोल शोधन आदि उद्योग हैं। द्वितीय श्रेणी के अन्तर्गत सूती वस्त्र, शक्कर और बनस्पति तेल उद्योग हैं। तृतीय श्रेणी के अन्तर्गत लोहा और इस्पात, एल्यूमीनियम, मशीन टूल, खाद, डीजल एन्जिन, पम्प, रेडियो, बैटरी, बिजली के लैंप, लालटेनें, बिजली के पंखे जूट उद्योग, रंग, रोगन, प्लाईवुड, अलकोहल, कांच और सुपरफास्फेट आदि उद्योग हैं।

इस योजना काल में देश में प्रथम बार इन वस्तुओं का उत्पादन किया गया :—

विरल मिट्टी (Rare Esrth) कम्पाऊंड, धुनने की मशीनें, स्टैपरेशे, सैलूलोज के धागे, कैल्शियम कारबाईड,

हाईड्रोजन पेरोक्साइड, कास्टिक सोडा, अमोनियम क्लोराईड, पेन्सीलिन, डी. डी. टी. अखबारी कागज, स्वचालित कर्घे, इस्पात के तार, जूट कातने की फ्रेमें, टरबाइन, पंप, बिजली की मोटरें और ट्रांसफार्मर आदि।

इस योजना काल में सरकारी क्षेत्र में निम्न औद्योगिक विकास योजनाएं कार्यान्वित की गईं ;—

(१) सिन्द्री खाद का कारखाना, (१९५१) सिन्द्री बिहार।

(२) चित्तरंजन रेल इन्जिन का कारखाना, मिही-झाम, बिहार।

(३) भारतीय टेलीफोन तार का कारखाना, रूपनारायनपुर, पश्चिमी बंगाल।

(४) हिन्दुस्तान टेलीफोन उद्योग, बंगलौर।

(५) हिन्दुस्तान वायुयान कारखाना, बंगलौर।

(६) हिन्दुस्तान पोत निर्माण कारखाना, विशाखापट्टनम्।

(७) रेल के डिब्बों का कारखाना, पेराम्बूर, मद्रास।

(८) पेन्सीलीन कारखाना, पिम्परी, पूना।

(९) डी. डी. टी. कारखाना दिल्ली।

(१०) मशीनों के पुर्जे बनाने का कारखाना, जलहाली बंगलौर।

(११) इस्पात के कारखाने—(i) क्रप-डिमाग द्वारा आयोजित रूरकेला का इस्पात का कारखाना, रूरकेला (उड़ीसा)।

(ii रूस द्वारा आयोजित, भिलाई इस्पात कारखाना, भिलाई (म० प्र०)

(iii) ब्रिटिश योग द्वारा दुर्गापुर इस्पात कारखाना दुर्गापुर (प० बंगाल)

(१२) राष्ट्रीय वैज्ञानिक यंत्रों का कारखाना।

(१३) भारतीय विस्फोटक कारखाना, बिहार।

(१४) नीपा पेपर मिल, नीपानगर, (मध्य प्रदेश)।

प्रथम योजना काल में औद्योगिक उत्पादन के सूचनांक १९४६ के आधार पर १९५० में १०५ से बढ़कर १९५१ में ११७, १९५२ में १२९, १९५३ में १३५, १९५४ में १४७ और १९५५ में १६२ हो गये। इस काल में विभिन्न उद्योगों में इस प्रकार उत्पादन बढ़ा:—

उत्पादन में वृद्धि

	१९५०-५१	१९५५-५६	प्रतिशत वृद्धि
डीजल एन्जिन	५,५३९	१०,३९९	८७
मोटरें	१६,५००	२५,३००	५३
एल्यूमीनियम	३,६७७ टन	७,३३३ टन	९९
सीमेंट	२,६८९ ह० टन	४,५९२ ह० टन	७१
इस्पात	९७६ ह० टन	१,२७४ ह० टन	३१
बिजली की मोटरें	९९ ह० अ० श०	२७२ ह० अ० श०	१७५
गंधक का तेजाब	९९ ह० टन	१६४ ह० टन	६६
सोडा एश	४५ ह० टन	८१ ह० टन	८०
अमोनियम सल्फेट	४६ ह० टन	३९४ ह० टन	७५६
रंग-रोगन	३० ह० टन	३९ ह० टन	३०
कांच की चादरें	११७ ला० वर्ग फीट	३९७ ला० वर्ग फीट	२३९
जूट का सामान	८२४ ह० टन	१,०५४ ह० टन	२८
सूत	११,७९० ला० पौंड	१६,३३० ला० पौंड	३९
सूती वस्त्र	३७,१९० ला० गज	५,१०२ ला० गज	३७

ढला लोहा	१,२७२ ह० टन	१,७८७ ह० टन	१४
दियासलाई	५४० हजार डिब्बे	६६२ ह० डि०	२३
बाइसिकलें	१०१ हजार	५१३ हजार	४१०
जूते (विदेशी टाइप के)	२,१८२ हजार जोड़े	२,२५६ हजार जोड़े	२
चीनी	१,०६४ हजार टन	१७०१ ह० टन	६०
कागज और पट्ठा	११४ हजार टन	१८७ ह० टन	६४

नई औद्योगिक नीति (१६५६)

देशमें १६५४ में राष्ट्रीय सरकार द्वारा समाजवादी व्यवस्था को स्वीकार किये जाने पर औद्योगिक नीति में भी परिवर्तन किया गया। यह नई नीति ३० अप्रैल १६५६ को घोषित की गई। इस नीतिका अभिप्राय यह है कि देश के भावी औद्योगिक विकास में राज्य का उत्तरदायित्व दिन पर दिन बढ़ता जायेगा और बहुत से आधारभूत उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया जायेगा तथा नये आधारभूत उद्योग राज्य द्वारा ही खोले जायेंगे। इस प्रकार सार्वजनिक क्षेत्र का उत्तरोत्तर विकास किया जायगा। कुछ उद्योगों को वैयक्तिक क्षेत्र (Private Sector) में भी रखा गया है जिससे वैयक्तिक प्रयास भी देशके औद्योगिक विकास में अपना सहयोग दे सके।

नई औद्योगिक नीति के अनुसार भारतीय उद्योगों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है:—

(१) प्रथम भाग में, जो कि सूची 'क' (Schedule A) कहलाता है, वे उद्योग सम्मिलित हैं जो पूर्णतः सार्वजनिक क्षेत्र में रहेंगे। इस प्रकार के उद्योगों की संख्या १७ है। इस प्रकार के उपयोग ये हैं:—

सुरक्षा के लिए हथियार व गोला, बारूद और युद्ध सामग्री सम्बन्धी अन्य उद्योग, लोहा और इस्पात, अणु-शक्ति, भारी मशीन निर्माण (जिनकी आवश्यकता लोहे और इस्पात के उद्योग, खानों, मशीन टूल उद्योग और अन्य आधारभूत उद्योगों में होता है); भारी बिजली की मशीनें, भारी कास्टिंग, कोयला और लिगनाइट, खनिज तेल, लोहा, मैंगनीज, क्रोम, जिप्सम, गंधक, सोना और हीरा निकालने का उद्योग, ताम्बा, जस्ता, सीसा, टिन, वुल्फ्रॉम, और मोली बिडनम निकालने और उन्हें साफ करने का उद्योग, अणु-शक्ति से सम्बन्धित खनिज, वायुयान व रेल निर्माण तथा जलपोत निर्माण उद्योग, टेलीफोन और बिजली का उत्पादन और वितरण।

(२) दूसरे प्रकार के वे उद्योग होंगे, जिनमें राज्य तथा वैयक्तिक प्रयास दोनों ही सम्मिलित होंगे अर्थात् जिनकी स्थापना राज्य के द्वारा होगी और उनमे वैयक्तिक प्रयास भी सहयोग देंगे। ये उद्योग सूची 'ख' में निर्देशित हैं। इस प्रकार के उद्योग ये हैं :—

अन्य सभी प्रकार के खनिज (छोटे खनिजों को छोड़ कर) अल्यूमीनियम और वे खनिज जिनका उल्लेख सूची 'क' में नहीं किया गया है, मशीन टूल्स, फैरो-एलाय और यन्त्र बनाने का इस्पात, रासायनिक उद्योगों में प्रयोग में आने वाले पदार्थ, दवाइयां, रंग, प्लास्टिक आदि ऐन्टीबायोटिक दवाइयां, खाद, रासायनिक लुगदी, सड़क और जल यातायात।

(३) तीसरी श्रेणी में वे सभी उद्योग होंगे जो पूर्णतः वैयक्तिक क्षेत्र में छोड़ दिये जायेंगे और वैयक्तिक पूंजीपतियों के अधिकार में रहेंगे—इनमें मुख्यतः बागान उद्योग, कपड़ा उद्योग, चीनी उद्योग आदि हैं।

अब तक जो भारी व आधारभूत उद्योग वैयक्तिक प्रयास के अंतर्गत हैं, वे बने रहेंगे किन्तु जो नये भारी कारखाने खोले जायेंगे, उन्हें सरकार खोलेगी। जिन उद्योगों में सरकार प्रवेश करेगी वह कार्य धीरे-धीरे ही किया जायगा और क्रमशः ही उनका राष्ट्रीयकरण होगा।

—

जीवन बीमा कार्पोरेशन का विनियोजन

भारत में पूंजी विनियोजन का सबसे बड़ा प्रतिष्ठान जीवन बीमा कार्पोरेशन है। १९५७ के अंत में इस संस्था का कुल विनियोजन ४०० करोड़ रुपए था। विनियोजन के लिये अतिरिक्त बचत की रकम का अनुपात वार्षिक दर में ३० करोड़ रुपये या प्रतिदिन १० लाख रु० का है। यह अनुमान किया गया है कि अगले दस वर्षों के अंत में इस संस्था का विनियोजन १००० करोड़ रुपए तक पहुँच जाएगा। अपने विनियोजन और काम-काज के स्तर में इस संस्था का स्थान वही है, जो ग्रेट ब्रिटेन में प्रूडेनशियल और अमेरिका में मेट्रोपालिटन का है। इधर यह प्रश्न उठा है कि जीवन-बीमा कार्पोरेशन के विनियोजन की क्या नीति हो। इस संबंध में कई सुझाव दिये गये। पर वे सब इस दृष्टि से दिए गए कि यह संस्था केवल विनियोजक मात्र है। पर हकीकत में उसके लिए विनियोजन का कार्य गौण स्थान नहीं रखता है। उसका प्रमुख कार्य ट्रस्टी का है। लोगों से प्रीमियम चंदे के द्वारा जो रकम उसे मिलती है, जनता की उस बचत को सुरक्षित रखना उसका प्रथम काम है। यद्यपि कानून की दृष्टि से सरकार को उसके काम-काज को देखने का अधिकार है, पर यह स्मरण रहे कि जीवन-बीमा कार्पोरेशन की रकम सरकार की नहीं है। उसकी रकम ट्रस्ट फंड के रूप में है, जो सरकारी निधियों से जुदा है। इसलिए उसके धन के विनियोजन की योजना निर्धारित करते समय इस तत्व को न भूलना चाहिए। यदि इस पर दुर्लक्ष किया गया, तो कार्पोरेशन की प्रगति को धक्का लगेगा। इसलिए उसके धन का विनियोजन करते समय इन लक्ष्यों पर ध्यान रहना चाहिए—

(१) जिन धंधों में रकम लगायी जाए, उनके मूल्य की स्थिरता हो। उसकी रकम आसानी से किसी भी समय वापस मिल सके।

(२) मूलधन की सदा सुरक्षा हो।

(३) मूल्य की स्थिरता पर विचार न करने पर विनियोजन किया जाए तो आयकी सबसे ऊंची दर हो।

(४) विनियोजन लेने वाले प्रतिष्ठान की सम्पदा पर अधिकार हो, जबकि विनियोजन की रकम जोखम में प्रकट हो।

(५) एक व्यक्ति अपना विनियोजन चाहे जैसे कर सकता है, यद्यपि वह भी इन निर्देशों पर ध्यान देता है, किंतु वह किसी के आगे जवाब देह नहीं होता है। किन्तु कार्पोरेशन का विनियोजन विधिवत आधार पर ही संभव है। किन्तु इसका यह भी अर्थ नहीं कि कड़े शिकंजे में विनियोजन हो। उससे भी समाज को कोई लाभ न पहुँचेगा। विनियोजन की व्यवस्था इन निर्देशों के आधार पर लचीली हो।

★

३ करोड़ ४४ लाख रु० के नये सिक्के

१९५८-५९ में ३ करोड़ ४४ लाख रु० के नये सिक्के ढाले जाएंगे और जारी किये जाएंगे। अब तक काफी नये सिक्के ढाले जा चुके हैं और पुराने सिक्कों के स्थान पर उन्हें जारी भी किया जा चुका है। मार्च, १९५८ के अंत तक २ करोड़ ५६ लाख रु० के नये सिक्के जारी किये गये। इनमें से ३८ लाख ६९ हजार रु० के १ नये पैसे के, ३५ लाख ७० हजार रु० के २ नये पैसे के, ६१ लाख २१ हजार रु० के ५ नये पैसे के और १ करोड़ २० लाख २६ हजार रु० के १० नये पैसे के सिक्के हैं।

सबसे अधिक ऋण भारत को

भारत के लिए स्वीकृत दो ऋणों पर हस्ताक्षर हो जाने तथा जापान को विद्युत्-शक्ति के लिए प्रदान किए जाने वाले दो अन्य ऋणों की बातचीत सम्पूर्ण हो जाने के बाद विश्व-बैंक द्वारा एशिया को दिये जाने वाले ऋण १ अरब डालर तक पहुँच जायेंगे।

शेष पृष्ठ २३२ पर

आर्थिक विषमता और बेरोजगारी

श्री विश्वम्भरनाथ पाण्डेय

जिन अनेक कारणों से समाजवादी वर्तमान समाज के पुनर्निर्माण की मांग करते हैं, उनमें पूंजीवाद की आर्थिक विषमता और बेरोजगारी तथा इनसे उत्पन्न होने वाली अनेक सामाजिक बुराइयों का महत्वपूर्ण स्थान है। पूंजीवादी देशों में जनसंख्या के अल्प प्रतिशत लोग ही राष्ट्रीय आय का अधिकांश हड़प लेते हैं—जैसे इंगलैन्ड में श्री आर्थर लेविस के अनुसार वहां की कुल जनसंख्या के दो प्रतिशत लोग राष्ट्रीय आय का २० प्रतिशत भाग प्राप्त कर लेते हैं और शेष ९८ % प्रतिशत जनता के भाग में राष्ट्रीय आय का मात्र ८० % भाग ही पड़ता है। सामाजिक नीति तथा न्याय की दृष्टि से यह स्थिति सर्वथा अनपेक्षित है। *समाजवाद का आदर्श समता है।* आर्थिक कारणों के अतिरिक्त सामाजिक एवं नैतिक न्याय की प्रतिष्ठा के लिये भी समता की आवश्यकता सिद्ध होती है। इस बात का कोई आधार तथा संतोषजनक उत्तर नहीं मिलता कि क्यों समाज के कुछ व्यक्तियों को नितान्त विलासितापूर्ण जीवन बिताने के लिये आवश्यकता से अधिक साधन प्राप्त होने दिये जायं, जबकि अधिकांश व्यक्तियों को जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं के उपभोग से भी वंचित रहना पड़ता है।

विषमता निवारण के उपाय

समाजवादी दर्शन के प्रभाव में वर्तमान समाज की विषमताओं को दूर करने के निम्नांकित उपाय बताये जाते हैं:—

(क) मृत्युकर तथा आयकर जैसे प्रत्यक्ष करों को और भी अधिक प्रगतिशील बनाया जाय;

(ख) सरकार उन वस्तुओं के उत्पादन में आर्थिक सहायता (Subsidies) प्रदान करे जिनका उपभोग गरीबों द्वारा होता है। इसका परिणाम यह होगा कि उन वस्तुओं के मूल्य में कमी हो जाने के कारण गरीबों का उपभोग-स्तर ऊंचा होगा तथा उनकी सीमित आय का कम भाग साधारण-उपभोग की वस्तुओं के क्रय में खर्च होगा। आय का शेष भाग वे आराम की वस्तुओं पर व्यय कर सकेंगे और उनका सर्वांगीण जीवन-स्तर भी ऊंचा होगा।

(ग) गरीबों के शारीरिक, मानसिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिये सरकारी जन-सेवा का पर्याप्त विस्तार होना चाहिये, जिससे इनके समाज का नवनिर्माण हो। एतदर्थ स्वास्थ्य-सेवाओं (अस्पतालों), औषधि केन्द्रों, निःशुल्क शिक्षा संस्थाओं, विनोद घरों तथा शिशु एवं मातृ सदनों आदि का यथेष्ट प्रसार होना अपेक्षित है।

इन सेवाओं का परिणाम द्विपक्षी (दुतरफा) होगा। पहला यह कि इससे सम्पत्ति का हस्तान्तरण होगा, क्योंकि सरकार धनियों से कर लेकर कर की राशि को ही सेवाओं और वस्तुओं के रूप में गरीबों को अर्पित करेगी। (२) गरीबों के बच्चों की अर्जन शक्ति का शारीरिक तथा मानसिक स्तर पर विकास होगा, जो आर्थिक विषमता को मिटाकर एक स्वस्थ और समता-प्रधान समाज की नींव डालने समर्थ होगा।

(घ) कभी कभी समाजवादी आय की विषमता को रोकने के लिये मजदूरों की न्यूनतम मजदूरी निर्धारित कर देने की भी सिफारिश करते हैं। किन्तु यदि गम्भीरतापूर्वक सोचा जाय तो पता चलेगा कि इससे उद्देश्य की सिद्धि होने में संदेह है। मजदूरी के बढ़ाने से पूंजीपति के लाभ की मात्रा घट जायगी। पूंजीपति यह आसानी से बर्दाश्त नहीं कर लेगा। वह अपने लाभ की पुरानी मात्रा बनाये रखने के लिये वस्तुओं का मूल्य बढ़ा देगा। अस्तु, मजदूरों को जो लाभ मजदूरी के बढ़ने से होगा वह मूल्य की वृद्धि के कारण शून्य (Neutralized) हो जायेगा और वे ज्यों के त्यों बने रहेंगे। पूंजीपतियों की इस विरोधी-क्रिया को अशक्त करने का एक उपाय है और वह यह कि सरकार वस्तुओं का उचित मूल्य निश्चित कर दे और उनमें वृद्धि न होने दे। किन्तु *तब इस बात का भय होगा* कि पूंजीपति धीरे धीरे उन वस्तुओं के उद्योगों में पूंजी विनियोजन शुरू कर दें, जिनका मूल्य निश्चित (Control) नहीं किया गया है और लाभ की कमी के कारण निर्धारित मूल्यों के उद्योगों का संकोचन करने लगें। उद्योगों के संकोचन के कारण उत्पा-

दन कार्य घटेगा और अनेक मजदूरों की छटनी शुरू हो जायेगी। समष्टिगत दृष्टि से मजदूर वर्ग के लिये यह स्थिति हितकर नहीं कही जायेगी। अतः आर्थिक विषमता को दूर करने के लिये न्यूनतम मजदूरी निश्चित करने की नीति का क्षेत्र संकुचित तथा कंटकमय है।

कहने का तात्पर्य यह है कि सरकार को कुछ ऐसे कार्य (वित्तीय एवं सामाजिक) करने होंगे, जिनसे आय का वर्तमान असमान वितरण नष्ट हो, क्योंकि कारण रूप से अर्जन और विकास के अवसर की विषमता को नष्ट करके ही भावी समाज की समता का आधार निर्मित किया जा सकता है।

बेरोजगारी

वर्तमान पूंजीवादी अर्थतंत्र के आय-वैषम्य (राष्ट्रीय आय के असमान वितरण) और उससे उत्पन्न सामाजिक बुराइयों के साथ एक दूसरी सामाजिक समस्या भी है, और वह है बेकारी की। समाजवाद व पूंजीवाद के बीच चुनाव करते समय हमें इस प्रश्न पर भी विचार करना होगा। पूंजीवाद का यह एक महान दुर्गुण है कि इसके अन्दर उत्पादन-यंत्र को रह रहकर शिथिल कर दिया जाता है, जबकि समाज में अभाव और गरीबी की कमी नहीं होती। इसका कारण यह होता है कि उत्पादन के अनेक साधनों तथा उनसे भी अधिक महत्वपूर्ण-मानव शक्ति को बेकार हो जाना पड़ता है। एक ओर मनुष्य काम और मजदूरी चाहता है, किन्तु दूसरी ओर काम के कारखाने जानबूझ कर बन्द कर दिये जाते हैं। इस प्रकार जानबूझ कर दैन्य और अभाव की स्थिति लादी जाती है और नितान्त दुखद रूप से 'विपुलता के बीच विपन्नता' की स्थिति उत्पन्न की जाती है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री श्री ए० सी० पीगू के शब्दों में यह एक कष्ट कर विरोधाभास (Paradox) की स्थिति होती है। समाज का एक वर्ग वस्तु और सेवाओं का अभाव अनुभव करता है तो दूसरी ओर मनुष्य एवं उत्पादन के साधनों का वह वर्ग बेकार रखा जाता है, जो उन वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कर सकता है। वास्तव में यह विरोधाभास पूंजीवादी सभ्यता के उन विरोधाभासों में से एक है, जिनके आधार पर कार्लमार्क्स ने कहा था कि पूंजीवाद स्वयं अपने विरोधाभासों के कारण ही नष्ट हो जायेगा। अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'पूंजीवाद, समाजवाद और प्रजातंत्र' में प्रो० सुम्पीटर ने लिखा है कि 'पूंजीवाद मर गया और इसे मैं समझता हूँ दूसरी जिन्दगी उधार भी नहीं मिल सकती।' जिस विरोधाभास की चर्चा हम अभी कर रहे हैं, वह पूंजीवादी अर्थतंत्र की आकस्मिक घटना नहीं अपितु नियमित रूप से होने वाली आवश्यक घटना है, जो प्रायः १०, १५ वर्षों में एक बार होती ही रहती है। इतना ही नहीं पूंजीवादी अर्थतंत्र में वस्तुओं का अभाव जानबूझ कर उत्पन्न किया जाता है, जिससे मूल्य स्तर ऊपर उठे। यह विश्व-विदित है कि विश्व व्यापी मन्दी के १९२९-१९३३ के दिनों में ब्राजील ने पर्याप्त मात्रा में कहवा (काफी) समुद्र में फेंक दिये। अमेरिका और कनाडा में गेहूं जला दिया गया और पूंजीवादी मनोवृत्ति के अर्थशास्त्रियों के परामर्श से प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट ने कैलिफोर्निया के सेव के बगीचे कटवा दिये। यह सब उन दिनों किया गया, जबकि उन्हीं देशोंमें व्याप्त बेकारी के कारण गेहूँ, रुई, सेव और कहवा के लिये लालायित रहने वाले बेकार स्त्री पुरुषों की संख्या कम नहीं थी। इस प्रसंग में सुप्रसिद्ध फेबियन समाजवादी बर्नार्ड शा की एक कहानी श्रव्य है। एक पूंजीवादी देश में बड़े परिश्रम और अध्यवसाय के बाद किसी वैज्ञानिक ने एक ऐसे शीशे की उत्पादन-प्रणाली का आविष्कार किया, जो टूट नहीं सकता था और लागत व्यय भी कम पड़ता था। अपना इस लोक कल्याणकारी खोज पर वैज्ञानिक बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने सोचा, अब गरीब से गरीब व्यक्ति के घर में भी सुन्दर और स्वच्छ शीशे के बर्तन पहुँच जायेंगे। किसी पूंजीपति को यह बात मालूम हुई और छल-चातुर्य से उसने उस वैज्ञानिक के आविष्कार की 'पेटेन्ट' खरीद ली। किन्तु उस पेटेन्ट को काम में लाने की अपेक्षा उसने यह सोचकर जला दिये कि अगर कांच टूटेगा ही नहीं तो कारखाना चलेगा कैसे? इस प्रकार विज्ञान की लोक-कल्याणकारी खोज से समाज वंचित रह गया और विज्ञान की रचनात्मक शक्ति अग्नि की आहुति बना दी गई। तात्पर्य यह कि पूंजीवादी अर्थतंत्र जानबूझ कर उत्पादन यंत्र को इस प्रकार चलाता है कि मांग से अधिक पूर्ति होने न पावे, चाहे ऐसा करने में उत्पादक साधनों को बेकार भी

क्यों न कर देना पड़े। समाज के ऊपर कृत्रिम ढंग से लादी गई यह बेरोजगारी या बेकारी निन्द्य है।

गतिशील समाज

यदि समाज स्थिर हो, उसकी जनसंख्या, लोगों की रुचि व पसन्द, उत्पादन प्रणाली और आय आदि अपरिवर्तन शील हों तो अर्थशास्त्रियों का मत है कि विनियोजन (invest ment) की मात्रा को स्थिर करके उत्पादन क्रिया को ऐसे स्तर पर टिका दिया जा सकता है, जबकि उत्पादन का कोई भी साधन बेकार नहीं रहेगा। किन्तु वास्तव में समाज गतिशील है और लोकरुचि, जनसंख्या, परम्परा, रीति रिवाज (Fashion) और आमदनी आदि में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। समाज की इस गतिशीलता या अस्थिरता के कारण नियुक्तियों के क्षेत्र मे हम दो प्रकार की गति पाते हैं।

(१) सापेक्षिक गति—यह गति उत्पादन अथवा उत्पादन प्रणाली के बदलने के कारण उत्पन्न होती है। स्पष्ट है कि नियुक्तियों की यह सापेक्षिक गति पूंजीवादी तथा समाजवादी दोनों अर्थतंत्रों में अनिवार्य रूप से उपस्थित होगी। अतः इस सापेक्षिक गति के कारण समाज में उत्पन्न होने वाली सापेक्षिक बेकारी (Relative unemploy ment) जिसे अधिक प्रचलित शब्दावली में संघर्षात्मक बेकार (Frictional unemployment) कहते हैं दोनों ही अर्थतंत्र में अपरिहार्य रूप से उपस्थित रहेगी।

(२) निरपेक्ष गति—यह गति पूंजीवादी आर्थिक जगत के मन्दी और तेजी के काल में पायी जाती है जिसका प्रभाव सम्पूर्ण अर्थतंत्र पर पड़ता है। इसका प्रधान कारण विनियोजन की अस्थिरता है। मंदी के युग में मूल्य स्तर के गिर जाने तथा पूंजीपतियों के लाभ की मात्रा में कमी होने के कारण उत्पादन कार्य शिथिल हो जाता है। कारखाने या तो बन्द हो जाते हैं या उनके उत्पादन का पैमाना घटा दिया जाता है। ऐसी स्थिति में श्रमिकों की छटनी होती है। कुछ लोग बेकार हो जाते हैं—समाज में क्रयशक्ति की कमी हो जाती है जिसके कारण बाजार में वस्तुओं की मांग गिर जाती है। मांग की कमी के कारण मूल्य कुछ और घटता है, उत्पादन को और भी धक्का लगता है तथा उत्पादन की मात्रा फिर घटानी पड़ती है। फलतः कुछ और लोग बेकार होते हैं। क्रयशक्ति फिर कम होती है, मांग घटती है, मूल्य स्तर निम्नतर होता है और उत्पादन की मात्रा पुनः घटायी जाती है और छटनी के कारण बेकारों की संख्या पुनः बढ़ती है। इस प्रकार बेकारी का दुश्चक्र हर बार पिछली बार से बड़ा वृत्त बनाता है और अन्ततोगत्वा बेकारी की समस्या विकट रूप धारण कर लेती है। देखना यह है कि वास्तविक बेकारी को दूर करना समाजवाद में अधिक सम्भव है या पूंजीवाद में ?

प्रचलित समाजवाद में आर्थिक योजना और उसके संचालन के लिये एक केन्द्रीय योजना-समिति का विशिष्ट स्थान है और चूंकि समाजवाद में सभी उद्योग एक ही सरकारी नियन्त्रण के अधीन होते हैं, अतः उनको एक नीति से चलाना तथा उनके कार्यों में समन्वय स्थापित करना समाजवाद में अधिक आसान है अपेक्षाकृत पूंजीवाद के। पूंजीवाद में कोई ऐसी केन्द्रीय संस्था नहीं होती जो सब उद्योगों की अभिभावक हो। इसके अतिरिक्त कार्य संचालन तथा नीति निर्धारण के लिये आवश्यक आंकड़ों की प्राप्ति भी समाजवाद में पूंजीवाद की अपेक्षा अधिक सहज है। इस पृष्ठ भूमि में हम बेकारी दूर करने के आधुनिक उपचारों की तुलनात्मक कार्यक्षमता पर विचार करेंगे।

आजकल दिवंगत अर्थशास्त्री श्री जे० एम० किन्स के सिद्धान्तानुसार बेकारी के दो उपचार प्रचलित और मान्य हैं—जनकार्य नीति (Public works policy) और मुद्रा नीति (Monetary policy)। पुलिस राज्य का युग बीत गया, अब कल्याण राज्य (welfare state) का युग है। अतः ऐसा माना जाता है कि जब कभी व्यक्तिगत अंचल के पूंजी-विनियोजन की मात्रा कम पड़ जाय और उत्पादन कार्य में ह्रास के कारण बेकारी फैलने की आशंका हो तब सरकार को जनकार्यों के नियोजन द्वारा पूंजी विनियोजन की कमी पूरी कर देनी चाहिये। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय बैंक की सहायता से कुछ ऐसी मुद्रानीति—जैसे सूद की दर कम करना आदि का अनुसरण करना चाहिये, जिससे आर्थिक समाज में मुद्रा और साख का विस्तार हो। अस्तु—ये दोनों नीतियां एक दूसरे से पृथक् नहीं अपितु परस्पर पूरक हैं।

बेकारी की समस्या के परिहार के लिये इन दोनों ही उपचारों की कार्यक्षमता पूंजीवाद में अपेक्षाकृत कम होती है। इसके कई कारण हैं। प्रथम कारण यह है कि पूंजीवाद में सरकारी विनियोग का परिमाण इतना कम होता है कि उसके द्वारा कुल विनियोग को प्रभावित नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिये इंगलैंड में सरकारी विनियोग कुल विनियोग का मात्र ½ भाग है। (२) इसके अतिरिक्त सरकारी विनियोग के अधिकांश की प्रकृति कुछ ऐसी होती है कि उसे प्रायः समान और एक स्तर पर रखा जाता है। अथवा यों कहें कि उनकी घटती-बढ़ती, मंदी व तेजी से नहीं प्रभावित होती अपितु देश की राजनीतिक स्थिति से। उदाहरण के लिये रक्षात्मक उद्योगों के विनियोजन को मंदी काल के लिये रोक नहीं रखा जा सकता। यह दूसरा कारण है। (३) तीसरा कारण यह है कि पूंजीवादी सरकार छोटी छोटी स्वायत्त संस्थाओं में विभक्त होती है, जिन्हें एक नीति के अनुसरण करने के लिये बाध्य करना कठिन होता है। यह नहीं कहा जाता कि समाजवाद में स्वायत्त संस्थाएं होंगी ही नहीं। अपितु कहने का अभिप्राय यह है कि समाजवाद में स्वायत्त संस्थाओं की नीति और दर्शन की एकात्म भावना के कारण एक अर्थ-नीति का व्यापक अनुसरण पूंजीवाद की अपेक्षा अधिक आसान होगा।

समाजवादी समाज, जिसके विभिन्न औद्योगिक अंचल एक ही केन्द्रीय योजना समिति के नियंत्रण में होते हैं, इन सब बाधाओं में से मुक्त होता है। इसलिये बेकारी की समस्या को दूर करने के लिये जन-कार्य-नीति को समाजवादी समाज अधिक योग्यता, क्रियाशीलता और सरलता से प्रयुक्त कर सकता है।

अब रही मुद्रा नीति की कार्यक्षमता की बात। अर्थशास्त्र का यह सर्वमान्य सिद्धान्त है कि रोजगार विनियोग स्तर पर अवलम्बित है। विनियोग को घटा बढ़ा कर हम रोजगार को घटा बढ़ा सकते हैं। उसी प्रकार विनियोग को स्थिर रखकर देश के रोजगार-स्तर को भी हम स्थिर कर सकते हैं। किन्तु चूंकि समाज प्रगति शील है, विनियोग की स्थिरता सदा अपेक्षित नहीं। सामाजिक आर्थिक स्थिति की विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार विनियोग में भी परिवर्तन होना चाहिये। इसके लिये कुल चलित मुद्रा (money in circulation) की संख्या में परिवर्तन की अपेक्षा होती है। मुद्रा की संख्या को घटाने बढ़ाने में बैंकों की साख का महत्त्वपूर्ण स्थान है। अतः न्यायतः यह प्रमाणित हो जाता है कि बैंकों के द्वारा कुल मुद्रा की संख्या को यथास्थिति घटा बढ़ा कर अपेक्षित विनियोग-स्तर की स्थापना हो सकती है। किन्तु प्रश्न है—क्या पूंजीवाद के व्यावसायिक बैंक राष्ट्रीय हित की कामना से संचालित हो सकेंगे ? क्या उनकी मुद्रा-नीतियों में अपेक्षित एकरूपता तथा सामञ्जस्य होगा ? क्या मंदी के युग में जबकि विनियोग के स्तर को उठाने के लिये अर्थतंत्र को अधिक रुपये और ऋण की आवश्यकता होगी, ये बैंक लाभ की भावना का त्याग कर अपना सूद-दर घटायेंगे ? इन तीनों ही प्रश्नों का उत्तर निश्चित 'नहीं' है। तभी तो पूंजीवादी देशों में भी व्यावसायिक बैंकों के ऊपर एक केन्द्रीय बैंक की आवश्यकता मानी जाती है तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से राज्य के आधीन रखा जाता है। अस्तु। राष्ट्रीय हित की दृष्टि से अधिकोषण संस्थाओं की मुद्रा-नीति की अनुकूलता के लिये जिस अंश तक पूंजीवादी देशों में केन्द्रीय बैंकों तथा उनकी सरकारी आधीनता को स्वीकृति दी जाती है, कम से कम उस अंश तक तो समाजवाद की श्रेष्ठता स्वयं सिद्ध हो जाती है।

इस प्रकार प्रस्तुत विवेचन के निष्कर्ष निम्नांकित हुए:—

(१) पूंजीवादी समाज के स्थान पर उस समाजवादी समाज की स्थापना होनी चाहिये, जिसका आधार अवसर और आय की समानता होगा।

(२) केन्द्रीय योजना समिति से युक्त समाजवादी अर्थतंत्र में बेकारी की समस्या का समाधान पूंजीवादी अर्थतंत्र से अधिक उत्तम, योग्य और आसान होगा, इसमें संदेह नहीं।

—

हमारे नए बाट

श्री परमानन्द दोषी एम. ए.

भला कौन ऐसा सभ्य आदमी होगा, जो बाट-बटखरे को नहीं जानता होगा। रुपए-पैसों की तरह बाट बटखरों से हमें सदैव ही ताल्लुक रहा करता है। खरीद-फरोख्त, लेन-देन और उधार-पैंचे में परिमाण अथवा तौल की बात बाट-बटखरों से ही होती है। दशमिक प्रणाली जिसके करिश्मे हम लगभग एक वर्ष पूर्व से देखते चले आ रहे हैं। वह अब अपने दामन में 'बाटों' और पैमानों को भी समेटने जा रही है। जिस प्रकार जनवरी १९५७ से हम दैनिक तापमान को सेंटीग्रेड अन्शों में और वर्षा को मिलीमीटरों में नापने लगे हैं और अप्रैल, १९५७ से दाशमिक प्रणाली के सिक्के जारी किए गए हैं, जिसमें रुपए को १६ आने, ६४ पैसे अथवा १९२ पाइयों के बदले १०० नये पैसों में बांटा गया है, उसी प्रकार अब अक्तूबर, १९५८ से हमारे सम्मुख मीटर-प्रणाली के बाट और पैमाने आने वाले हैं।

बाट पैमाने की एकरूपता

मीटर-प्रणाली को क्यों चालू किया जा रहा है—यह प्रश्न जितना जटिल है, इसका उत्तर उतना ही सरल है। बात यह है कि वर्तमान समय में अपने देश में सैकड़ों प्रकार के बाट और पैमाने चालू हैं। बाट और पैमानों की यह विविधता सैकड़ों वर्ष पूर्व से चली आ रही है। इन नाना प्रकार के बाटों और पैमानों के चलते नाना प्रकार की दिक्कतें, उलझनें और गड़बड़ियां उत्पन्न होती रहती हैं। बेईमानी, ठगी, धोखेबाजी लूट, अन्धेर- चाहे जैसी भी संज्ञा दें, बाटों की विविधता के कारण सबकी सब उपयुक्त ही होंगी। एक राज्य के बाट और पैमाने दूसरे राज्य के बाट और पैमानों से भिन्न प्रकार के हों, यह बात कुछ हद तक न्यायसंगत जंचती है। परन्तु एक राज्य के विभिन्न जिलों, एक जिले के विभिन्न सबडिविजनों, एक सबडिविजन के विभिन्न स्थानों, यहां तक कि एक गांव के विभिन्न परिवारों के बाट और पैमानों में बड़ा अन्तर पाया जाता रहा है। यह एक दम असंगत बात है। ये बाट और पैमाने भी सिक्कों की अपेक्षा कम आवश्यक नहीं है; क्योंकि सिक्कों के समान ये भी व्यवहृत हुआ करते हैं। ऐसी दशा में इनके प्रतिमानों, आकार प्रकार, तौल-बनावट आदि सभी पहलुओं में इतनी विषमता और विभिन्नता सर्वथा अनुचित है। इसी विषमता की वजह से बहुत असुविधाओं का सामना आये दिन लोगों को करना पड़ता है। इसका अन्त करके सिक्कों की भांति ही अखिल भारतीय स्तर पर बाटों और पैमानों की एकरूपता के सांचे में ढालना परमावश्यक है।

मीटर प्रणाली ही क्यों ?

देश भर में एक बाट और पैमाने एक ही प्रकार के रहें, इस बात को स्वीकार कर लेने के पश्चात अब यह देख लेना उपयुक्त प्रतीत होता है कि कौन कौन सी प्रणाली अपनायी जाय। किसी प्रणाली-विशेष के विषय में कुछ कहने के पूर्व यह देख लेना भी उचित जंचता है कि उस मान्य प्रणाली में कौन कौन सी विशेषताएं होनी चाहिए। वैसे तो बाटों और पैमानों की एक-रूपता स्थिर करने वाली प्रणाली में बहुत सारे गुण होने चाहिएं; परन्तु संक्षेप में उसको सरल, बोधगम्य और सीधा साधा होना चाहिए। उसकी सभी इकाइयां एक इकाई से उत्पन्न हों, जिससे उसका परस्पर सम्बन्ध हो और समस्त प्रणाली मिल कर एक हो। बड़े तथा छोटे बाट या पैमाने एक से और सरल अंशों के होने चाहिए, जो लम्बाई तौल और तरलता की माप आदि की सभी इकाइयों के लिए एक से हों तथा इनका रूप ऐसा हो, जिससे राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उद्योग-व्यापार में सरलता से व्यवहार किया जा सके। ये सारी विशेषताएं किस प्रणाली में पाई जा सकती है—यह देख लेना भी प्रासंगिक प्रतीत होता है।

सर्व प्रथम अब तक प्रचलन में रहने वाली भारतीय प्रणालियों को देखें। भारत में बाटों के रूप में सेर और पौंड प्रचलित रहे हैं। उनके सबसे छोटे अंश विभाजित करके निकालने पर सवा-ढाई आदि का बखेड़ा रह जाता है। गज, फर्लांग, मील आदि में यही बात है। तरल पदार्थों के नापने का तो कोई ऐसा पैमाना ही नहीं है

लगभग ७०-८० लाख एकड़ भूमि में इस विधि से खेती की जाएगी।

सामाजिक परिवर्तन

सामुदायिक आन्दोलन को गांव की सहकारिता संस्थाओं के साथ मिलकर एक और महत्वपूर्ण काम भी करना है। यह है सामाजिक परिवर्तन। भूमि सुधार और सामाजिक विकास एक दूसरे से मिले-जुले हैं। सामाजिक परिवर्तन का काम इन दोनों को ही करना है, अतएव ये अलग अलग काम नहीं कर सकते। इस दिशा में सरकार को भी कुछ महत्वपूर्ण काम करने चाहिए, जिनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

(क) वह विभिन्न क्षेत्रों में विकास के काम शुरू करे और उन्हें आर्थिक सहायता दे,

(ख) ग्रामीणों के दिग्दर्शन के लिए वह प्राविधिक और अन्य विषयों में सलाह देने की व्यवस्था करे ;

(ग) गांवों की सहकारिता संस्थाओं को वह अल्पकालीन, मध्यकालीन और दीर्घकालीन आर्थिक सहायता दे तथा उनके लिए ऐसा कार्यक्रम निश्चित करे, जिससे वे नियत समय में इस रुपए को लौटाकर अपनी पूंजी से काम चला सके ; और

(घ) किसानों के लिए वह खेती के सुधरे हुए तरीके तथा खाद बनाने के ढंग आदि विषयों पर प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करे।

हाल ही में सामुदायिक विकास कार्यक्रम में जो परिवर्तन किया गया है, उसके अनुसार ग्राम पंचायतों और ग्राम सहकारिता संस्थाओं की स्थापना को सबसे अधिक महत्व दिया जा रहा है और इरादा यह है कि दो तीन वर्ष में ही सभी गांवों में ऐसी संस्थाएं बन जाएं।

गांव की ३० करोड़ जनता के सामाजिक जीवन को बदलने का काम काफी कठिन है। लेकिन जिस ढंग से हम प्रगति कर रहे हैं, उससे किसी भी तरह निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

सामुदायिक योजना का दूसरा पहलू

[श्री ब्रजकिशोर पटैरिया]

अभी तक की प्रगति के आंकड़े जो समय समय पर प्रकाशित किए जाते रहे हैं व जिनमें युवा महिलाओं के बच्चे देने की तादाद, मुर्गियों के अण्डे देने की तादाद बधिया किये गये सांडों की संख्या से लेकर कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, संचार, सिंचाई कला, समाज शिक्षा-सम्बन्धी कार्य एवं सड़कें, शाला भवन, कुओं आदि के निर्माण कार्यों का जो विवरण प्रस्तुत होता है, वह बहुत ही आशाजनक व सन्तोषप्रद कहा जा सकता है। पर सवाल यह उठता है कि क्या ये सब आंकड़े सही हैं? इस प्रश्न का उत्तर केन्द्रीय विकास विभाग के सचिव श्री डे साहीब ने मध्यप्रदेश के विकास कार्यों का दौरा करने के बाद जो व्यक्त किया है, उससे मिल जाता है। उन्होंने स्पष्ट कहा कि पैसे का दुरुपयोग हुआ व कागजी घोड़े दौड़ाये गये। दूसरा उदाहरण बड़ा दिलचस्प है। हमारे मध्यप्रदेश के माननीय उद्योग मंत्री श्री तख्तमल जी ने किसी जिले के जन-संपर्क दौरे में एक विकास खंड अधिकारी (बी० डी० ओ०) से पूछा कि खाद के कितने गड्ढे खोदे गये? उन्होंने फौरन फाइल उठाकर हजारों की संख्या बतला दी। जब माननीय मंत्री जी ने एक गड्ढा देखना चाहा तो बी० डी० ओ० साहिब एक गड्ढा भी न बता सके। जीता जागता एक गड्ढा वहां नहीं था याने गड्ढे कागज पर ही बने थे। यही हाल सब जगह समझिए।

गलती कहां पर है ?

एक विकास खंड में एक विकास खंड अधिकारी (बी० डी० ओ०) उसके नीचे ३ विकास सहायक अधिकारी (कृषि, पशुपालन, सहकारिता और पंचायत) २ समाज शिक्षा संगठन (एक पुरुष, १ स्त्री) १ ओवर सिअर २ क्लर्क १० ग्राम सेवक एवं ३ अन्य चपरासी वगैरह इस तरह २२-२३ कर्मचारियों की व्यवस्था है। कर्मचारियों का रहन सहन, आचार व्यवहार, बोल-चाल यदि ग्राम वासियों के अनुकूल हो, व ये कर्मचारी यदि वास्तव में अपने को ग्रामीणों का सेवक समझें, तो निश्चय है कि उन्हें ग्रामवासियों का

(शेष पृष्ठ ३३८ पर)

आवश्यकता और सन्तुष्टि

श्री हेमचन्द जैन

विश्व में व्यक्तिगत या सामूहिक दृष्टि से साध्य के सम्बन्ध में मतैक्य पाया जाता है, परन्तु लक्ष्य प्राप्ति के अनेक मार्ग होते हैं, जिससे साधनों के कार्यान्वय में मतभेद होना स्वाभाविक हो जाता है। *व्यावहारिक जगत में ऐसा* होता भी है। मानव का उद्देश्य है कि उसे अधिकतम सन्तुष्टि या सुख प्राप्त हो। इस दिशा की ओर वह अपने आदर्शों व सिद्धान्तों का अन्वेषण या प्रयोग करता रहता है। सुख की मान्यताओं, *मापदण्डों या परिधि के संबंध में विभिन्न विचार या दृष्टि व्यक्ति विशेष या समाज की हो सकती हैं।* कोई भौतिक सुख को ही चरम सुख मान बैठते हैं तथा कुछ आत्मिक सुख की उपलब्धि को। वे भौतिक सुख को हेय एवं नश्वर मानते हैं। नास्तिक या निरीश्वरवादी प्रकृति से आत्मसत्ता का तादात्म्य स्थापित करके सुख की कल्पना पर आस्था रखते हैं। आज विश्व में जो अविश्वास, संघर्ष और मानवता पर घात-प्रतिघात हो रहे हैं, उसके मूल में आर्थिक कारण हैं। सुख की मृगतृष्णा के पीछे मानव इतना दीवाना हो गया और उसने आवश्यकताओं में इतनी अधिक वृद्धि कर ली, जिनकी सन्तुष्टि उसकी सीमा से पार हो गई और इसका परिणाम शोषण हुआ, जो छोटे रूप में सामन्तवाद, पूंजीवाद और वृहत रूप में साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के रूप में दृष्टिगोचर हुआ। पश्चिम में किसी वस्तु की कमी नहीं है, फिर भी आवश्यकताओं का नित्य नवीन प्रसार होता जाता है और मानव मस्तिष्क के बल पर नये नये अन्वेषणों की उद्भावना करता जाता है। सम्पदा-वैभव की कमी नहीं है, परन्तु आज उनका हृदय अभावों का अनुभव करता है। आज सभ्यता के सन्मुख युग चुनौती दे रहा है।

प्रश्न यह है कि आवश्यकताओं के कम करने से मानव को अधिकतम सुख-तृप्ति या सन्तुष्टि प्राप्त होती है या आवश्यकता वृद्धि ही तृप्ति के विकास का मार्ग है— प्रश्न वादविवाद और गहन अध्ययन चाहता है। आवश्यकताएं ही अन्वेषण की जननी हैं तथा बेकारी, दरिद्रता, गरीबी को दृष्टिगत रख कर भविष्य की समस्याओं को ध्यान में न रखकर लोग आवश्यकता-वृद्धि को सुख उपलब्धि की रामबाण दवा समझते हैं। वर्तमान मानव-*सुख की बाधक समस्याओं के रास्ते के अवरोधों को दूर करने* के तीन मार्ग हैं। प्रत्येक देश इन तीनों में से दो या तीनों को एक साथ कार्यान्वित करता है। हम कभी एक मार्ग को द्रुतगति से कार्यान्वित होते देखते हैं और दूसरे को प्रच्छन्न रूप से। अर्थशास्त्र का केन्द्र आवश्यकताएं हैं जिनकी सन्तुष्टि के लिए मानव प्राणी उत्पादन वितरण और *विनिमय करता है और उपभोग करके आवश्यकताओं* की तृप्ति करता है।

जब मानव समाज आर्थिक दृष्टि से कम विकसित था, उसकी आर्थिक क्रियाएं कम थीं, तब उत्पादन के समस्त साधन व्यक्ति विशेष में अन्तर्निहित थे। उत्पादन के बाद ही वह उपभोग करके अपनी आवश्यकता की पूर्ति कर लेता था, परन्तु आवश्यकताओं की वृद्धि के साथ साथ मानव-जीवन जटिल होता गया और उपयोग की प्रक्रिया से पूर्व अनेक समस्याओं—वितरण-विनिमय-समयसे आर्थिक जीवन उलझता गया। श्रम विभाजन से जो लाभ या अलाभ होते हैं, वहीं लाभ-अलाभ उत्पादन के साधनों के विभाजन अविभाजन से होता है। आर्थिक प्रवृत्तियों के विकास के साथ साथ उत्पादक इकाइयों के पैमान में प्रसार होता गया। वस्तु का उन्मेष-निमेष मानव शक्ति से परे है। वह वस्तु की उपयोगिता में सृजन कर सकता है, निर्माण नहीं। भूमि या मुफ्त प्राकृतिक देन और श्रम उत्पादन के प्रारंभिक और आधार साधन हैं और पूंजी संगठन और साहस आधार साधनों पर निर्भर है। उत्पादन का कौन सा साधन प्रथम महत्वका है, इस में मतभेद हो सकता है, परन्तु यह निर्विवाद है कि अपने अपने स्थान में उत्पादक अंगों का एक विशेष स्थान हैं। उत्पादन के प्रत्येक अंग की अपनी अपनी समस्याएं हैं और विश्व में प्रत्येक अंग के प्रतीक धारियों में प्रथम महत्ता के संबंध में संघर्ष है।

उत्पादन पर ही पूंजीवादी अर्थ व्यवस्थामें आस्था

मुझसे यहां वाले पूछते हैं कि रत्नागिरी में बहुत ही कम जमीन है, तब यहां की समस्या आप कैसे हल करेंगे? मैं उनसे कहता हूं कि आपसे ढाईगुनी जनसंख्या केरल की है, लेकिन वहां ग्रामदान काफी हो रहे हैं। अभी मैंने सुना कि केरल के मुख्यमन्त्री नम्बूदरीपाद कहने लगे हैं कि भूमि सुधार कानून की कुछ धाराओं से जमीन के मालिकों को कष्ट होगा, इसलिये उस पर हम लोग विचार करेंगे। याने यह समस्या हल हो न होगी, उन्होंने यह विज्ञापन कर दिया है कि हम जमीन बांटेंगे, लेकिन तब लोग अपने-अपने रिश्तेदारों को ढूंढ-ढूंढकर आपस में जमीन बांट लेंगे, तब सरकार घोषणा करेगी कि कोई भी व्यक्ति १५-२० एकड़ से ज्यादा जमीन रख नहीं सकता याने वह कानून सर्वथा निरुपयोगी सिद्ध होगा।

अब ग्रामदान के बाद जो सिद्ध होगा, वह क्रांतिकारी ही होगा। चीन में कानून ने क्रांति नहीं की। क्रांति ने ही कानून बनाया, रूस का भी यही हाल है। इसलिए अगर आप सरकार द्वारा क्रांति लाना चाहें तो वह हो नहीं सकती। क्रांति के बाद जो सरकार बनती है, वही क्रांतिकारी कानून बनाती है। इसलिए अगर आप भूमि समस्या जनशक्ति से हल करते हैं, तो कहा जायगा कि सरकार का एक काम कम हुआ।

देश में खादी उत्पादन की प्रगति

(अप्रैल १९५७ से लेकर जनवरी १९५८ तक)

राज्य	सूती खादी (वर्गगज)	ऊनी खादी (वर्गगज)	रेशम खादी (वर्गगज)	कुल बिक्री (रुपयों में)
१. आंध्र	३५,०२,७४४	२,२१,९५६	७५६	५४,७१,४८८
२. आसाम	१०,४६३	—	१६,३९७	१,०२,३७६
३. बिहार	२१,९९,६७४	३,७३५	२,०५,६६१	२३,९९,८७६
४. बम्बई	७,९६,९३८	४९,०५४	—	६२,३४,३९९
५. केरल	१,४२,४१२	३८१	—	२,१३,०५९
६. मद्रास	२५,६६,१६५	२३०	२१,५२६	३१,३९,६१२
७. मध्य प्रदेश	१,९८,९२३	—	—	१०,७७,९८५
८. मैसूर	५,८६,७०१	४,७१,२२४	९४०	२१,९२,४३३
९. उड़ीसा	१,५०,३३०	—	७,०२७	२,८८,९५४
१०. पंजाब	२०,८०,८३०	१,५०,७९४	—	२९,३४,२७४
११. राजस्थान	९,८४,०७८	८०,३१२	—	१३,०४,१३९
१२. उत्तर प्रदेश	३६,४३,००९	२,६५,९५४	७३,६८५	७६,८६,६१४
१३. पश्चिम बंगाल	१,०७,७०२	—	३,३३,४५८	८,०८,१०५
१४. जम्मू और काश्मीर	९,७२३	१,६४,९९९	—	४८,४७१
१५. दिल्ली	८३,२४३	—	—	२०,१३,७११
योग	१,७०,६२,९३५	१४,१८,६४२	२६,५९,४८०	३,५९,१६,५०९

नोट:—इसके अतिरिक्त, १,२८,७८,७४१ वर्गगज स्वावलम्बी खादी का भी उत्पादन हुआ, जिसकी कीमत २,२३,८३,२२९ रुपये हुई। उपर्युक्त अवधि में केन्द्रीय सरकार को १६,०४,२७१ रुपयों की खादी उपलब्ध की गई।

(शेष पृष्ठ ३२३ पर)

संसद का चतुर्थ अधिवेशन

संसद का चतुर्थ अधिवेशन, जिसका उद्‌घाटन राष्ट्रपति द्वारा १० फरवरी १९५८ को किया गया था, १० मई १९५८ के दिन स्थगित हुआ। रेलवे बजट तथा वित्तीय बजट संसद के सामने १७ और २८ फरवरी को क्रमशः पेश किये गये थे। एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि संसद के इतिहास में प्रथम बार प्रधानमन्त्री नेहरू ने वित्त बजट पेश किया। उपहार कर विधेयक तथा विभिन्न करों में कुछ परिवर्तन, जिससे उद्योग को विकास कार्य की प्रेरणा मिले, संसद के इस अधिवेशन की विशेषताएं हैं।

संसद में पेश हुए बिलों में निम्न बिल भी थे—

(१) मर्चेन्ट शिपिंग बिल १९५८ :—यह बिल इस दृष्टि से पेश किया गया था कि मर्चेन्ट शिपिंग सम्बन्धी कानूनों में संशोधन तथा सुदृढ़ीकरण हो सके। यह दोनों सदनों की संयुक्त समिति को सौंपा गया है।

(२) केन्द्रीय सेल्ज टैक्स (द्वितीय संशोधन) बिल १९५८ :—जिससे खान उद्योग बिजली के काम काज आदि क्षेत्रों में रियायती कर दर पर अन्ततः प्रान्तीय—व्यापार चल सके।

(३) ट्रेड और मर्चेन्डाइज मार्क्स बिल १९५८ :—जिसके अनुसार ट्रेड तथा मर्चेन्डाइस सम्बन्धी सिविल तथा क्रिमिनल कानूनों को एक करके तथा संशोधनों को संगठित करके श्री राजगोपाल अय्यंगार की सिफारिशों को अमल में लाया जायगा। यह बिल जायंट सेलेक्ट कमेटी को सौंपा गया है।

(४) उत्तराधिकार कर में १ लाख रु० की बजाय ५०००० रु० तक छूट करने का बिल भी पेश हुआ, किन्तु वह आगामी अधिवेशन के लिए स्थगित कर दिया गया।

संसद ने जिन बिलों को पास किया है उनमें धान कुटाई उद्योग बिल, भारतीय स्टैम्प बिल, जहाजरानी कन्ट्रोल बिल खनिज पदार्थों का बिल तथा कर्मचारियों का मितव्ययतानिधि (संशोधन) बिल—मुख्य थे।

कई महत्वपूर्ण कागजात भी संसद के समय दोनों सदनों में प्रस्तुत किये गए।

(१) विदेशी धन राशि में कमी हो जाने के बारे में योजना आयोग की रिपोर्ट।

(२) द्वितीय योजना की स्थिति-गति मूल्यांकन के बारे में योजना आयोग का ज्ञापन पत्र।

(३) लाइफ इन्सूरन्स कारपोरेशन के कारनामों के बारे में मुख्य न्यायाधीश श्री एम. सी. चागला की रिपोर्ट।

संसद की इस अवधि में पब्लिक अकाउन्टस तथा एस्टिमेट कमेटियों ने कई महत्वपूर्ण रिपोर्टें पेश कीं। एस्टिमेट कमेटी की अन्य रिपोर्टों में—आय व्यय सम्बन्धी सुधार, योजना आयोग तथा इन्डियन टेलीफोन इन्डस्ट्रिस प्राइवेट लिमिटेड, बंगलौर आदि विषय थे। एस्टिमेट कमेटी की एक और महत्वपूर्ण रिपोर्ट, इस विषय पर थी कि राष्ट्रीयकरण किये गये औद्योगिक कारोबार के संगठन तथा प्रबन्ध के बारे में कमेटी ने अपनी १६ वीं रिपोर्ट प्रथम लोकसभा) में जो सिफारिशें की थी, उन पर सरकार ने क्या कार्रवाई की है? कमेटी ने खेद प्रकट किया है कि, कई सिफारिशें अभी तक अमल में नहीं आई हैं, जबकि इस पर पूर्ण विचार करने के लिये सरकार ने डेढ़ साल का समय तक लिया है। अकाउन्टस कमेटी की सबसे महत्वपूर्ण रिपोर्ट "आय व्यय मूल्य निरूपण तथा आर्थिक नियंत्रण" के बारे में थी।

एक अन्य महत्वपूर्ण विषय "केन्द्रीय सरकार" की आय-व्यय जांच रिपोर्ट थी, जिसमें स्पष्ट किया गया है कि विभिन्न मंत्रालयों में अनियमित तथा अव्यवस्थित व्यय हुए हैं।

—

बम्बई प० बंगाल से दुगना धनी

सम्पत्ति कर संबंधी आंकड़ों के अनुसार बम्बई प्रांत में लोग पश्चिम बंगाल की अपेक्षा दुगुने धनी हैं।

सारे भारत के कुल कर देने वालों में से ४०प्रतिशत लोग सिर्फ बम्बई प्रान्त में है। ३७,६०६ कर देने वालों में से, जिन में २६,५६२ वैयक्तिक, ४,१७३ संयुक्त परिवार तथा ४,१७१ कम्पनियां शामिल हैं १९५७-५८ के सम्पत्ति कर आंकड़ों के अनुसार सिर्फ अकेले बम्बई प्रान्त में १२,६७४ वैयक्तिक ८१३ हिन्दू संयुक्त परिवार तथा १,२३० कम्पनियां कर देने वाले हैं।

पश्चिम बंगाल के आंकड़े क्रमशः ६,१३७ ४८८ तथा १,७२३ है अर्थात कुल संख्या ८३४८ है, जब कि बम्बई की कुल संख्या १५,०१७ है।

मद्रास का स्थान तीसरा है, जहां सम्पत्ति-करदाताओं की संख्या २५५० है। दिल्ली, राजस्थान में २,२३६, आंध्र प्रदेश में १,६३७, मैसूर में १,४६३, बिहार और उड़ीसा में १,२६६, उत्तर प्रदेश में १,१७६, केरल में १,११५, पंजाब और जम्मू-कश्मीर में १,१०६, मध्य प्रदेश में १,०१८ तथा आसाम में ५६३ करदाताओं की संख्या है।

नवीन सूचनाओं के अनुसार करदाताओं में वैयक्तिक तथा २१५ कम्पनियां ऐसी हैं जिन की नकद सम्पत्ति १ करोड़ से भी अधिक है। १९५७-५८ के बजट में सम्पत्ति-कर से १२.५करोड़ रु० आय की अनुमान किया गया था किन्तु ६,७०,८८,००० रु० वसूल हुए।

इस कमी का प्रधान कारण यह था कि इस कानून को राष्ट्रपति की स्वीकृति बहुत देर से मिली और तब तक बहुत सा समय बीत गया। आयकर लगाने का काम इस वर्ष जनवरी में प्रारंभ हुआ था। इस लिए चालू वित्तीय वर्ष समाप्त होने से पहले सारे मामलों को समाप्त करना संभव नही था। इस के अलावा कानून नया था। इस लिए करदाताओं को इसे समझाने में काफी समय लगा तथा बार बार अवधि बढाने के लिए प्रार्थनाएं की जाने के कारण प्रथम वर्ष में समय देना पड़ा। वैयक्तिक तथा हिन्दू संयुक्त परिवारों के मामलों में नकद सम्पत्ति का पूर्व विवरण प्राप्त न होने के कारण आय के अनुसार सम्पत्ति का अनुमान लगाना पड़ा। अनुभव से यह पता चला है कि ऐसे अनुमान वास्तविक स्थिति से बढ़ा-चढ़ा कर लगाये गए हैं।

—

चन्द्रलोक में औद्योगिक संस्थान

आज निश्चित रूपसे यह कहना कठिन है कि आगामी पांच या दस वर्षों में चन्द्रमा के व्यावहारिक अध्ययन का विकास किस दिशा में होगा। लेकिन, एक बात निश्चित है: कुछ समय तक चन्द्रमा का अध्ययन करने के बाद उसे काबू में लाने की प्रक्रिया चालू होगी। मानव चालित यानों का निर्माण करेगा, जिसमें बैठकर वह स्वयं चन्द्रलोक में पहुँचेगा और उस भास्वर उपग्रह की सतह पर जो हमारे निकटतम है, कदम रखेगा। और चन्द्रमा में पहुँचने के बाद वह वहां अस्थायी वैज्ञानिक स्टेशन स्थापित करेगा। उसके लिए हवा और भोजन की पूर्ति पृथ्वी से होगी। बाद में वेधशालाएं और संस्थान नियमित रूप में चालू हो जाएंगे तथा अन्ततः चन्द्रमा की प्राकृतिक सम्पत्ति का उपयोग करने के लिए औद्योगिक संस्थान स्थापित होंगे।

—श्री वी० शारानोव

प्रतिघंटे ५४०० नये मुख

संयुक्त राष्ट्र संघ ने सन् '५७ के जीवन-मरण वृत्त पर जो वार्षिक ग्रन्थ प्रकाशित किया है, उसमें कहा गया है कि विश्व की आबादी प्रति घंटे ५ हजार ४ सौ की संख्या में बढ़ रही है। इसका मतलब यह हुआ कि प्रतिवर्ष ४ करोड़ ७० लाख की संख्या में मानव-आबादी बढ़ रही है। पिछले २० वर्षों के भीतर एक चौथाई आबादी बढ़ चुकी है। प्रति एक हजार की आबादी में ३४ बच्चे जन्म ले रहे हैं और १८ व्यक्तियों की मृत्यु होती है। डच जनता का जीवन दीर्घतम होता है जिसमें मर्दों का औसत ७१ और महिलाओं का ७४ साल आता है। भारत के लोग जल्दी मरते हैं। यहां मर्द-औरत का औसत जीवन ३२ साल पाया गया है। लैटिन अमेरिका में जनसंख्या तेजी से बढ़ रही है, यद्यपि इसमें एशिया ही आगे है, जहां हर साल २ करोड़ ४० लाख की संक्या आबादी बढ़ रही है।

जनता के पास ५१.१० अरब रुपये का चांदी और सोना

भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन के ताजे अंक में एक

(शेष पृष्ठ ३३४ पर)

श्री जी० एस० पथिक

केरल सरकार और बिड़ला ब्रदर्स

केरल की कम्यूनिस्ट सरकार और बिडला ब्रदर्स में केरल राज्य में रेयन पल्प फेक्टरी की स्थापना के संबंध में इकरारनामा हुआ है। दो विरोधी तत्वों का यह जोड यदि निभा तो एक बड़ी घटना होगी और उससे भविष्य में आर्थिक क्षेत्र की प्रगति में एक नया कदम उठेगा। इससे यह तो प्रकट है कि केरल की कम्युनिस्ट सरकार देश के एक प्रमुख पूंजीपति या औद्योगिक प्रतिष्ठान के लिए हौवा साबित नहीं हुई। केरल की कम्यूनिस्ट सरकार ने पूंजीवाद से जो सम्बन्ध किया और जो रियायतें दीं, उससे अपने दल की गलत फहमियों का निराकरण करने में सफलता प्राप्त की है। दो शक्तियों में यह सहयोग देश के लिए आशाजनक है। कहा जाता है कि भारतीय विधान में जो गारंटियां दी गयीं है, उनसे कहीं अधिक बिडला ब्रदर्स को रियायतें मिलीं। केरल सरकार ने औद्योगिक शांति के प्रति विश्वास दिलाया, जिसे पूंजी लगाने वाले पक्ष ने संतोषजनक माना।

केरल राज्य में नये उद्योग

केरल में नई औद्योगिक प्रगति के चिन्ह प्रकट हो रहे हैं। अंग्रेज विशेषज्ञों ने कोचीन को भारत का दूसरा शिपयार्ड स्थापित करने के लिए चुना है। विशेषज्ञों का मत है कि गहरे पानी का बन्दरगाह सुविधाएं प्रदान करेगा। निजी क्षेत्र भी केरल में नए उद्योगों की स्थापना के लिए आगे बढ़ रहा है। केरल का रेयन पल्प उद्योग सारे देश के लिए उपयोगी होगा। मैसूर की लैम्प फैक्टरी और भारत इलेक्ट्रोनिक का कारखाना उल्लेखनीय उद्योग हैं। सस्ती विद्युत की प्राप्ति से ये दोनों फैक्टरियां खुल सकी हैं। टायर फेक्टरी की स्थापना का प्रयत्न आगे नहीं बढ़ सका। अलबत्ता पम्बा की घाटी में स्टार्च फेक्टरी खोली जा सकती है। राज्य द्वारा संचालित उद्योगों का भी पुनर्गठन हो रहा है। प्लाईवुड और रबड़ के उद्योगों का संचालन मजबूत आधार पर किया जाने वाला है।

सोवियत रूस की आर्थिक सहायता

अविकसित क्षेत्र में अमेरिका और योरोपीय देश ही नहीं, सोवियट रूस की अर्थ व्यवस्था भी आर्थिक सहायता देने में आक्रमणात्मक है। इधर रूसी आर्थिक सहायता का इतना अस्थिर रूप हो गया है कि कह नहीं सकते कि कब उसका क्या रूप हो जाए। आर्थिक प्रश्नों पर रूस के निर्णय भी राजनीतिक सैनिक और नाकेबन्दी के ख्याल के बिना शायद ही होते हों। आज रूसी अर्थ व्यवस्था ने अपने कुछ नियम बनाए हैं, उनमें राजनीति निश्चय ही प्रधानता रखती है। रूस का विदेशी व्यापार में आगे बढ़ना, माल का बदला करना आदि आर्थिक तत्व हैं। परन्तु पूंजीगत पदार्थों का निर्यात सीरिया, इण्डोनेशिया, भारत और अरजनटाइना में आर्थिक व्यवस्था के रूप में होने पर भी राजनीति से परे नहीं है। रूस की यह राजनीतिक विचारधारा कितनी तेजी से बदलती है—इस सम्बन्ध में सोचा नहीं जा सकता। आज भारत के साथ ऊंचे दर्जे की मित्रता है तो कल मिश्र के साथ हो सकती है। इधर कुछ समय से भारत के प्रति रूस की अन्यमनस्कता प्रकट हो रही है। रूस ने भिलाई के ऋण की व्यवस्था में परिवर्तन करने से इन्कार कर दिया है। उसने औषधि उद्योग में सहायता देने से इन्कार कर दिया था। रूसी सहायता न मिलने की सम्भावना से ही केन्द्रीय सरकार के उद्योग और व्यापार विभाग को यह प्रकट करना पड़ा था कि औषधि उद्योग के निर्माण का जो कार्यक्रम सोवियत सहायता पर आश्रित था, उसमें परिवर्तन करना पड़ा। पर बाद में रूस को कुछ चेतना हुई, आगा पीछा सोचकर रूसी सरकार ने भारत के ८५ करोड़ रुपए की पूंजी से स्थापित होने वाले ड्रग उद्योग को १००० लाख रूबल का ऋण और टेकनीकल सहायता देना स्वीकार किया। इस उद्योग में अमेरिकन और पश्चिम जर्मनी द्वारा सहयोग देने के निर्णयों का ही सोवियत रूस पर प्रभाव पड़ा। जो कुछ हो, भारत रूस की इस सहायता के प्रति कृतज्ञ रहेगा।

विदेशी मुद्रा का संकट

१६ मई १९५८ को भारत की स्टर्लिंग जमा २५२.५१ करोड़ रुपए की थी, जिसमें से ४२.८४ करोड़ रुपए रिजर्व बैंक के बैंकिंग विभाग में जमा थे। शेष २०९.६८ करोड़ रुपए के स्टर्लिंग ११८ करोड़ रुपए के सोने के साथ चलन की जमा में थे। कानूनी रूप से सोने को जो न्यूनतम जमा निर्धारित है, उससे सोने की रकम ३ करोड़ रुपए ऊंची है। मुद्रा के रक्षित कोष में गत वर्ष की तुलना में ४७७.५९ करोड़ रुपए थे, जिसमें से ४१२.५२ करोड़ रुपए बैंक के इश्यू विभाग में थे। सोने की रकम पूर्ववत् जमा है। इसमें २२५.०५ करोड़ रुपए का परिवर्तन है। ४.३ करोड़ रुपए प्रति सप्ताह औसतन व्यय होते हैं। अतएव प्रति सप्ताह ६ करोड़ रुपए की क्षति है। यदि सोने का स्तर न घटाया गया तो भारत के पास २५६ करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा जमा है और साप्ताहिक व्यय ३० प्रतिशत अधिक है। यदि वर्तमान कामकाज को जारी रखा जाए, तो भारत के पास जितनी विदेशी मुद्रा जमा है, वह अगले १० महीनों में खप जाएगी। पर इतना ही नहीं है। जून से अक्तूबर तक आज की अपेक्षा विदेशी मुद्रा की अधिक मांग है। इन महीनों में १५० करोड़ रुपए खप जाएंगे अर्थात् प्रति सप्ताह ९ करोड़ रुपए की क्षति होगी। इसका नतीजा यह होगा कि इस वर्ष के अन्त में भारत के पास विदेशी मुद्राएं बिलकुल न रहेंगी। आयात एकबारगी शून्य तक पहुँच गए हैं और निर्यात बढ़ने की कोई आशा नहीं है। निर्यात वृद्धि की जो योजनाएं हैं, वे दीर्घकालीन हैं। इधर निर्यात पदार्थों के दाम विदेशों में गिर रहे हैं और आयात कम करने से दूसरे देश भारत के माल की खपत घटा रहे हैं। इस समय योजना में कोई कमी करना कहां तक सम्भव है, यह विचारणीय है। जिन विकास पदार्थों के आर्डर दिए जा चुके हैं, उनके आयात न होने का प्रश्न नहीं है। अलबत्ता आगे के लिए विकास पदार्थों के आयात में कमी की जा सकती है। ग्रेट ब्रिटेन ने जो भारत का सबसे बड़ा खरीदार है, २३० लाख पौण्ड भारतीय माल के आयात में कमी की है। इंगलैण्ड ने चाय का आयात घटा दिया है। अलबत्ता एक आशा है कि भारत को अमेरिका के 'सीशोर' मद में से विशेष सहायता प्राप्त हो। यदि इस समय भारत को तुरन्त विदेशी सहायता प्राप्त नहीं होती है, तो दूसरी योजना का भावी विकास खतरे में है!

दूसरी पंचवर्षीय योजना का आलेखन

योजना आयोग ने दूसरी पंचवर्षीय योजना की गति विधि और प्रगति का एक महत्वपूर्ण आलेखन प्रकट किया है। वह देश के आर्थिक विश्लेषण का बढ़ता हुआ कदम है। अब यह हमारे लिए आवश्यक है कि हम उसे राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से महत्ता प्रदान करें। यदि हम साधन और स्रोतों की दृष्टि से योजना का पर्यवेक्षण करें, तो हमें उनके जुटाने में कठिनाई हो रही है। पर यदि हम विकास की आवश्यकताओं पर दृष्टिपात करें, तो मालूम होगा कि देश की आर्थिक उन्नति के लिए अभी बहुत अधिक जरूरतों को पूरा करना होगा। केन्द्रीय सरकार ने दूसरी योजना के प्रथम दो वर्षों में भारी कर लगाए हैं। इन अतिरिक्त करों से पांच वर्षों में ७२५ करोड़ रुपए की आय का अनुमान किया गया है। योजना के आरम्भ में करों का जो स्तर प्रकट किया गया था, उस में ५०० करोड़ रुपए की वृद्धि हुई है। यदि हम केन्द्र और राज्यों में इन तीन वर्षों में जो अतिरिक्त कर लगाए गए, उन्हें आधार मानें तो ५ वर्षों में ९०० करोड़ रुपए की आय होती है, जिससे ४०० करोड़ रुपए की कमी नहीं रहती है। केन्द्रीय सरकार के भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री कृष्णमाचारी ने साहसपूर्वक नये करों के द्वारा योजना में स्रोतों की कमी को दूर करने का प्रयत्न किया था। उसमें कमी होने से योजना के लक्ष्य पूरे न हो पाएंगे। देश की जैसी परिस्थिति है, उससे योजना के स्रोतों की आय दूसरे मदों में लगी। योजना के बाहर विकसित कार्य, गैर विकसित व्यय और सेना की बढ़ती हुई मांग योजना का बहुत धन ले गई। योजना के स्रोत इस प्रकार हैं—

	योजनाओं के पहले ३ वर्षों में	अगले २ वर्षों के अनुमान	जोड़ १९५६-६१
	(करोड़ रुपए में)		
बजट के आंतरिक स्रोतों से	११०१	९२१	२०२२

(शेष पृष्ठ ३३५ पर)

यदि रूस में साम्यवाद न होता ?

श्री गाइ सिम्स फिच

रूसी नेताओं का विचार है कि गत ४० वर्षों में रूस की असाधारण औद्योगिक उन्नति का मूल कारण वहा की साम्यवादी व्यवस्था है, परन्तु राष्ट्रपति आइजनहावर के आर्थिक परामर्शदाता श्री हौग का कहना है कि यदि रूस में साम्यवादी शासन न होता, तो वह और भी अधिक उन्नति कर सकता था।

एक यथार्थवादी विद्वान के नाते डा० हौग ने यह स्वीकार किया है कि सब मिलाकर रूस में खासी प्रगति की गई है, किन्तु यदि यथार्थ रूप में देखा जाये तो यह भी स्पष्ट है कि रूस में सभी क्षेत्रों में सन्तुलित रूप से प्रगति नहीं हुई है। भारी उद्योगों तथा सैनिक सामग्री के उत्पादन में काफी प्रगति हुई है और कृषि एव उपभोग्य वस्तुओं के उत्पादन की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है।

अमेरिका की तुलना मे ४० प्रतिशत

यह अनुमान लगाया गया है कि रूस का कुल उत्पादन अमेरिका के उत्पादन की तुलना में *लगभग ४० प्रतिशत* के बराबर है। किन्तु रूस की प्रतिव्यक्ति खपत का अनुपात अमेरिका की अपेक्षा केवल २० प्रतिशत के बराबर है। उपभोग्य वस्तुओं के क्षेत्र में रूसी उत्पादन अमेरिकी उत्पादन के २ और ४ प्रतिशत के मध्य है और यहा तक कि अधिक मूलभूत आवश्यकताओ के क्षेत्र में भी अत्यन्त न्यूनता के साथ उपलब्ध रूसी आंकड़ो से स्पष्ट पता चल जाता है कि रूस में भोजन तथा मकान-सम्बन्धी औसत स्तर अमेरिका और अन्य अनेक स्वतन्त्र देशों के स्तर से बहुत नीचा ही नहीं है, बल्कि जारों के शासन-काल की अपेक्षा कुछ ही अच्छा है।

इसका उद्देश्य रूस की स्थिति के सम्बन्ध में यह सिद्ध करना नहीं है कि प्रमुख औद्योगिक राष्ट्र की हैसियत से रूस का स्थान अमेरिका के बाद दूसरे नम्बर पर नहीं है। किन्तु हमें यहा भी तथ्यों की जांच और सावधानतापूर्वक अन्य विकल्पों का अन्दाज करना चाहिए। यह बात भुला नहीं देनी चाहिए कि जारकालीन रूस में चाहे कुछ भी दोष थे—और वे थे भी बहुत से—आर्थिक दृष्टि से वह ससार के देशो मे छठे स्थान पर था और उसका प्रतिव्यक्ति उत्पादन भी आज के किसी अल्प-विकसित देश की अपेक्षा निश्चित रूप से अधिक था। साम्यवादियों को नये सिरे से उन्नति नहीं करनी पड़ी है नव निर्माण के लिए उनके पास पहले से ही ठोस आधार मौजूद था।

४० वर्षों में कैसी उन्नति की ?

इससे एक ऐसा प्रश्न उत्पन्न होता है जो अर्थशास्त्रियो को सदा से परेशान करता रहा है। वह प्रश्न यह है कि यदि रूस में भी ऐसी ही स्वतन्त्र व्यवसाय प्रणाली व्यवहार में लाई गई होती, जैसी कि अमेरिका तथा कुछ अन्य देशों में व्यवहार में लाई जाती है, तो क्या गत ४० वर्षों में रूसियो की दशा अधिक अच्छी न होती ? यह स्पष्ट है कि इतिहास ने इस प्रश्न के निश्चित उत्तर को असम्भव बना दिया है। फिर भी, कुछ दिलचस्प सकेत हमें इस सम्बन्ध मे अवश्य मिलते हैं।

अनेक विशेषज्ञो का विचार है कि १८८० से १९२० तक के अमेरिकी विकास काल की सोवियत रूस के विकास के ४० वर्षों से बहुत अधिक तुलना की जा सकती है। उस काल मे अमेरिकी अर्थ-व्यवस्था का विकास कम से कम उतनी ही तेजी से हुआ है, जितनी तेजी से गत ४० वर्षों में रूसी अर्थ व्यवस्था का हुआ है। इसके अलावा, अमेरिका जैसा एक स्वतन्त्र समाज उत्पादन की कोटि मे सुधार, वस्तुओ की विविधता, सेवाओ एव सुख-सुविधाओं की व्यवस्था, फलत जीवन स्तर में सुधार एव बड़े कारखानों के विस्तार के रूप में अपनी उन्नति करता है।

कनाडा से तुलना

अमेरिका की अत्यधिक उन्नत आर्थिक स्थिति होने के कारण यह प्रवृत्ति हो सकती है कि अमेरिका की स्थिति

को विशिष्ट और अपवाद बतलाया जाये। तब हम २० वीं सदी के एक अन्य विकासोन्मुख देश कनाडा के सम्बन्ध में विचार करते हैं। पिछले उन्हीं ४० वर्षों में, जिनमें सोवियत रूस ने उल्लेखनीय प्रगति की है, कनाडा की आर्थिक स्थिति में रूस की अपेक्षा कहीं तेजी से प्रगति हुई है। वहां उद्योगों तथा कृषि में और उत्पादन एवं खपत के मध्य अधिक सुन्दर सन्तुलन रहा है, और इनके परिणामस्वरूप कनाडा के लोगों का जीवन-स्तर भी रूसियों के जीवन-स्तर से बहुत अधिक उन्नत हुआ है।

सबसे पहले यह स्वीकार करना चाहिए कि स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत एक विकासोन्मुख देश में व्यापार सम्बन्धी उतार-चढ़ावों के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, किन्तु गत दो दशकों की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया है कि ये उतार-चढ़ाव सीमित रहे हैं, समस्याएं अस्थायी रही हैं और उनके प्रभाव भी अधिक गहरे नहीं पड़े हैं। उनका उन अशान्तियों एवं मानवीय कष्टों से कोई सम्बन्ध नहीं है, जो साम्यवादियों के तौर-तरीके जबर-दस्ती लागू किये जाने के कारण हुए हैं।

अमेरिका की आर्थिक प्रगति के द्वारा इतिहास ने यदि किसी बात को सबसे अधिक जोरदार तरीके से सिद्ध किया है तो वह यह है कि स्वतन्त्रता और सम्पन्नता (अर्थात् सब वस्तुओं की यथेच्छ उपलब्धि) का निर्वाह साथ-साथ खूब अच्छी तरह हो सकता है। श्री हौग के शब्दों में, "अमेरिका में विद्यमान जनता के पूंजीवाद ने स्वतन्त्र मनुष्य में निहित सम्मान के साथ भौतिक समृद्धि जोड़कर सोने में सुगन्ध मिलाने जैसा काम किया है।"

— 'ईस्टर्न इकोनोमिस्ट' से

१९५८ के लिपजीग मेले में भारत

लिपजीग का वसन्त मेला, जो २ मार्च से ११ मार्च १९५८ तक चला था, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक क्षेत्र में फिर से महान् सिद्ध हुआ है। इस मेले में ७३ विभिन्न देशों के ५,७२,७२८ दर्शक एकत्र हुए थे। मेले के प्रारम्भ काल से लेकर लगातार रहने वाली चहल पहल व इतनी बड़ी मात्रा का व्यापार तथा मेले के समयों में हुए असंख्य व्यापार सम्बन्धी मामलों से इस बार भी स्पष्ट प्रतीत होता था कि सभी पश्चिमी व पूर्वी व्यापारी कई सालों से चलते आने वाले समझौतों को मजबूत करने, नये २ कंट्राक्ट करने तथा अंतर्राष्ट्रीय शांतिपूर्ण व्यापार में सहयोग देने को तय्यार थे।

जर्मन गणतंत्र का कुल विदेशी व्यापार २४८.५ करोड़ मार्क रहा। विदेशी प्रतिनिधि कम्पनियों के व्यापार में काफी वृद्धि हुई है। विशेषतः पश्चिमी देशोंके व्यापारी तथा समाजवादी देशों के व्यापारी प्रतिनिधियों के मध्य व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

उन सभी लोगों ने, जो अन्तर्राष्ट्रीय वस्तुविनिमय तथा उन्नति के प्रति रुचि रखते हैं, शीघ्र ही एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मण्डल के अधिवेशन बुलाने के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किये। उस अधिवेशन में एक दूसरे देश के मध्य परस्पर व्यापार के प्रति जो रुकावटें व असुविधाएं हैं, उन्हें दूर करने के प्रति विचार किया जाय, जिससे वस्तुओं के परस्पर विनिमय में वृद्धि हो तथा विशेषकर पूर्व औ पश्चिमी देशों के मध्य व्यापार बढ़े।

२,६०,००० वर्ग मीटर के विशाल मैदान में ७३ देश के ६६६६ प्रदर्शकों ने अपनी परम्परागत निर्यात-वस्तुओं का प्रदर्शन किया।

सरकारी तौर पर प्रदर्शन में भाग लेने वाले २१ देशों में भारत का भी विशेष स्थान था। भारतीय प्रदर्शिनी का प्रबन्ध ६५० वर्ग मीटर के क्षेत्र में व्यापार तथा उद्योग मंत्रालय के प्रदर्शिनी विभाग द्वारा किया गया था, जो पिछले तीन वर्षों की तरह इस वर्ष भी अत्यन्त आकर्षक तथा सफल रहा। भारत से ११५ व्यापारी इस मेले में भाग लेने आए थे।

इस क्षेत्र में जो अनुकूल वातावरण तय्यार हुआ है, उससे जर्मन गणराज्य के विदेश व्यापार विभाग तथा भारत

के स्टेट ट्रेडिंग कॉरपोरेशन के मध्य तीन साल की लम्बी अवधि का समझौता हुआ है, जिसके अनुसार १,२०,००० लांगटन अमोनियम सल्फेट तथा इसके बदले में ९,०००० लाग टन मरिएट आफ पोटाश का परस्पर विनिमय होगा।

जर्मन गणतन्त्र के विदेश व्यापार विभाग ने, भारत से अबरक खरीदने के बारे में तीन साल का जो समझौता हुआ था, उसे पूरा कर लिया है। मेले के समय खाद तथा अबरक के लंबी अवधि के समझौतों के अलावा सोपस्टोन, चाय, मसाले, आवश्यक तेल, दस्तकारी चीजें तथा कपड़ा आदि व्यापार के सम्बन्ध में भी समझौते हुए थे। वहां दर्शकों ने यह अनुभव किया कि यदि भारत के साथ व्यापार बढ़ाया जाय, तो आगामी प्रदर्शनी तक भारत व जर्मनी में व्यापार के बहुत अधिक बढ़ने की सभावनाएं हैं और अन्य देशों की अपेक्षा भारतीय माल को ज्यादा पसन्द किया जायगा।

काफी विचार विमर्श के बाद भारतीय प्रतिनिधियों से यह सिफारिश की गई थी कि लिपजीग के मेले की अवधि में वे क्रय संभावनाओं का पूरी तरह लाभ उठाएं। उस वक्त लिपजीग में रहने वाले भारतीय व्यापारियों ने जर्मन गणराज्य के इस प्रस्ताव से सहमति प्रकट की। जर्मन गणराज्य के औद्योगिक विकास को देखते हुए यह प्रस्ताव मशीनों तथा फैक्टरी के निर्माण में सहयोग देने के क्षेत्र में अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्त्रोत्पादन की मशीनें, दवाइयां, मुद्रण सामग्री आदि की मशीनें आदि खरीदने के लिए भी सौदे हुए थे।

भारत तथा रूमानिया के आर्थिक सम्बन्ध

ले० आयन दनसीनु

"भारत माता की जय" यह भारत की प्राचीन शुभकामना है। 'उसकी विजय से उसकी उन्नति के लिए नये स्वतन्त्र उन्मुक्त आकाश खुल जायेंगे।" यह आशा बहुत वर्ष पहले पं० जवाहरलाल नेहरू ने की थी। अब वह स्वतन्त्र वातावरण उत्पन्न हो चुका है और आज भारत के लोग साम्राज्यवाद की दासता से मुक्त होकर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त कर, आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

स्वतन्त्रता के बाद अन्न समस्या को सुलझाने तथा खाद्य सन्तुलन प्राप्त करने के लिए भारत ने प्रथम पंचवर्षीय योजना (१९५१-५६) की तरफ अपनी शक्ति लगाई। कृषि उत्पादन तथा औद्योगिक क्षेत्र में योजना के परिणाम अधिक प्रशसनीय रहे। द्वितीय योजना में (१९५६-६१) देश के औद्योगीकरण करने, यातायात की सुविधाएं बढ़ाने, बिजली उत्पादन करने तथा कृषि उत्पादन में सुधार करने के लिए सही कदम उठाये जा रहे हैं।

आर्थिक समृद्धि के लिए भारतीय जनता के अदम्य उत्साह के प्रति रूमानिया की जनता बड़ी सहानुभूति दिखाती आ रही है। पहले यूरप वाले भारत के प्रति रुचि रखना व्यर्थ समझते थे। परन्तु आज जब कि विश्व शान्ति की इच्छा रूमानिया तथा भारतीय जनता को प्रेरणा देती है दोनों देशों की दूरी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के कारण कम होती जा रही है।

रूमानिया की जनता अपने ही अनुभव से यह महसूस करती है कि किसी देश की उन्नति, तथा जीवन स्तर की वृद्धि तभी हो सकती है, जब एक दूसरे देश के सम्बन्ध, विशेषत आर्थिक सहयोग सम्बन्ध सुदृढ़ हो।

इसी उत्साह और साहस से मार्च २३, १९५४ में रूमानिया ने भारत के साथ व्यापारिक समझौता किया, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण था। परिणाम भी शीघ्र ही अच्छे निकले। समझौते के दो वर्ष बाद १९५४ की अपेक्षा व्यापार सम्बन्धी विनिमय काफी अधिक रहा। १९५६ की अपेक्षा १९५७ में व्यापार दुगुना रहा।

रूमानिया से भारत को निर्यात होने वाली चीजों में छपाई सामान, मशीन, खुदाई साधन, ट्रांसफार्मर तथा दवाइयां आदि थीं, जबकि भारत से रूमानिया को जाने वाली चीजों में खाद्य तेल, कपड़े, मिर्च मसाले, खाल तथा खाल, चमड़ा वगैरह थीं। यह व्यापार दोनों देशों के मध्य

को विशिष्ट और अपवाद बतलाया जाये। तब हम २० वीं सदी के एक अन्य विकासोन्मुख देश कनाडा के सम्बन्ध में विचार करते हैं। पिछले उन्हीं ४० वर्षों में, जिनमें सोवियत रूस ने उल्लेखनीय प्रगति की है, कनाडा की आर्थिक स्थिति में रूस की अपेक्षा कहीं तेजी से प्रगति हुई है। वहां उद्योगों तथा कृषि में और उत्पादन एवं खपत के मध्य अधिक सुन्दर सन्तुलन रहा है, और इनके परिणामस्वरूप कनाडा के लोगों का जीवन-स्तर भी रूसियों के जीवन-स्तर से बहुत अधिक उन्नत हुआ है।

सबसे पहले यह स्वीकार करना चाहिए कि स्वतन्त्र अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत एक विकासोन्मुख देश में व्यापार सम्बन्धी उतार-चढ़ावों के कारण अनेक समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं, किन्तु गत दो दशकों की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया है कि ये उतार-चढ़ाव सीमित रहे हैं, समस्याएं अस्थायी रही हैं और उनके प्रभाव भी अधिक गहरे नहीं पड़े हैं। उनका उन अशान्तियों एवं मानवीय कष्टों से कोई सम्बन्ध नहीं है, जो साम्यवादियों के तौर-तरीके जबर-दस्ती लागू किये जाने के कारण हुए हैं।

अमेरिका की आर्थिक प्रगति के द्वारा इतिहास ने यदि किसी बात को सबसे अधिक जोरदार तरीके से सिद्ध किया है तो वह यह है कि स्वतन्त्रता और सम्पन्नता (अर्थात् सब वस्तुओं की यथेच्छ उपलब्धि) का निर्वाह साथ-साथ खूब अच्छी तरह हो सकता है। श्री हौग के शब्दों में, "अमेरिका में विद्यमान जनता के पूंजीवाद ने स्वतन्त्र मनुष्य में निहित सम्मान के साथ भौतिक समृद्धि जोड़कर सोने में सुगन्ध मिलाने जैसा काम किया है।"

— 'ईस्टर्न इकोनोमिस्ट' से

१९५८ के लिपजीग मेले में भारत

लिपजीग का वसन्त मेला, जो २ मार्च से ११ मार्च १९५८ तक चला था, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक क्षेत्र में फिर से महान् सिद्ध हुआ है। इस मेले में ७३ विभिन्न देशों के ५,७२,७२८ दर्शक एकत्र हुए थे। मेले के प्रारम्भ काल से लेकर लगातार रहने वाली चहल पहल व इतनी बड़ी मात्रा का व्यापार तथा मेले के समयों में हुए असंख्य व्यापार सम्बन्धी मामलों से इस बार भी स्पष्ट प्रतीत होता था कि सभी पश्चिमी व पूर्वी व्यापारी कई सालों से चलते आने वाले समझौतों को मजबूत करने, नये २ कंट्राक्ट करने तथा अंतर्राष्ट्रीय शांतिपूर्ण व्यापार में सहयोग देने को तय्यार थे।

जर्मन गणतंत्र का कुल विदेशी व्यापार २४८.५ करोड़ मार्क रहा। विदेशी प्रतिनिधि कम्पनियों के व्यापार में काफी वृद्धि हुई है। विशेषतः पश्चिमी देशोंके व्यापारी तथा समाजवादी देशों के व्यापारी प्रतिनिधियों के मध्य व्यापार में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

उन सभी लोगों ने, जो अन्तर्राष्ट्रीय वस्तुविनिमय तथा उन्नति के प्रति रुचि रखते हैं, शीघ्र ही एक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मण्डल के अधिवेशन बुलाने के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किये। उस अधिवेशन में एक दूसरे देश के मध्य परस्पर व्यापार के प्रति जो रुकावटें व असुविधाएं हैं, उन्हें दूर करने के प्रति विचार किया जाय, जिससे वस्तुओं के परस्पर विनिमय में वृद्धि हो तथा विशेषकर पूर्व और पश्चिमी देशों के मध्य व्यापार बढ़े।

२,९०,००० वर्ग मीटर के विशाल मैदान में ७३ देश के ९६९९ प्रदर्शकों ने अपनी परम्परागत निर्यात-वस्तुओं का प्रदर्शन किया।

सरकारी तौर पर प्रदर्शन में भाग लेने वाले २१ देशों में भारत का भी विशेष स्थान था। भारतीय प्रदर्शिनी का प्रबन्ध ६५० वर्ग मीटर के क्षेत्र में व्यापार तथा उद्योग मंत्रालय के प्रदर्शिनी विभाग द्वारा किया गया था, जो पिछले तीन वर्षों की तरह इस वर्ष भी अत्यन्त आकर्षक तथा सफल रहा। भारत से ११५ व्यापारी इस मेले में भाग लेने आए थे।

इस क्षेत्र में जो अनुकूल वातावरण तय्यार हुआ है, उससे जर्मन गणराज्य के विदेश व्यापार विभाग तथा भारत

के स्टेट ट्रेडिंग कॉरपोरेशन के मध्य तीन साल की लम्बी अवधि का समझौता हुआ है, जिसके अनुसार १,५०,००० लांगटन अमोनियम सल्फेट तथा इसके बदले में ६,०००० लांग टन मरिएट आफ पोटाश का परस्पर विनिमय होगा।

जर्मन गणतन्त्र के विदेश व्यापार विभाग ने, भारत से अबरक खरीदने के बारे में तीन साल का जो समझौता हुआ था, उसे पूरा कर लिया है। मेले के समय खाद तथा अबरक के लंबी अवधि के समझौतों के अलावा सोपस्टोन, चाय, मसाले, आवश्यक तेल, दस्तकारी चीजें तथा कपड़ा आदि व्यापार के सम्बन्ध में भी समझौते हुए थे। वहां दर्शकों ने यह अनुभव किया कि यदि भारत के साथ व्यापार बढ़ाया जाय, तो आगामी प्रदर्शनी तक भारत व जर्मनी में व्यापार के बहुत अधिक बढ़ने की संभावनाएं हैं और अन्य देशों की अपेक्षा भारतीय माल को ज्यादा पसन्द किया जायगा।

काफी विचार विमर्श के बाद भारतीय प्रतिनिधियों से यह सिफारिश की गई थी कि लिपजीग के मेले की अवधि में ये क्रय-संभावनाओं का पूरी तरह लाभ उठाएं। उस वक्त लिपजीग में रहने वाले भारतीय व्यापारियों ने जर्मन गणराज्य के इस प्रस्ताव से सहमति प्रकट की। जर्मन गणराज्य के औद्योगिक विकास को देखते हुए यह प्रस्ताव मशीनों तथा फैक्टरी के निर्माण में सहयोग देने के क्षेत्र में अधिक उपयोगी हो सकता है। वस्त्रोत्पादन की मशीनें, दवाइयां, मुद्रण सामग्री आदि की मशीनें आदि खरीदने के लिए भी सौदे हुए थे।

—

भारत तथा रूमानिया के आर्थिक सम्बन्ध

ले० आयन टनसीनु

"भारत माता की जय" यह भारत की प्राचीन शुभकामना है। "उसकी विजय से उसकी उन्नति के लिए नये स्वतन्त्र उन्मुक्त आकाश खुल जायेंगे।" यह आशा बहुत वर्ष पहले पं० जवाहरलाल नेहरू ने की थी। अब वह स्वतन्त्र वातावरण उत्पन्न हो चुका है और आज भारत के लोग साम्राज्यवाद की दासता से मुक्त होकर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त कर, आर्थिक आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

स्वतन्त्रता के बाद अन्न समस्या को सुलझाने तथा खाद्य सन्तुलन प्राप्त करने के लिए भारत ने प्रथम पंचवर्षीय योजना (१९५१-५६) की तरफ अपनी शक्ति लगाई। कृषि उत्पादन तथा औद्योगिक क्षेत्र में योजना के परिणाम अधिक प्रशंसनीय रहे। द्वितीय योजना में (१९५६-६१) देश के औद्योगीकरण करने, यातायात की सुविधाएं बढ़ाने, बिजली उत्पादन करने तथा कृषि उत्पादन में सुधार करने के लिए सही कदम उठाये जा रहे हैं।

आर्थिक समृद्धि के लिए भारतीय जनता के अदम्य उत्साह के प्रति रूमानिया की जनता बड़ी सहानुभूति दिखाती आ रही है। पहले यूरप वाले भारत के प्रति रुचि रखना व्यर्थ समझते थे। परन्तु आज जब कि विश्व शान्ति की इच्छा रूमानिया तथा भारतीय जनता को प्रेरणा देती है, दोनों देशों की दूरी मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के कारण कम होती जा रही है।

रूमानिया की जनता अपने ही अनुभव से यह महसूस करती है कि किसी देश की उन्नति, तथा जीवन स्तर की वृद्धि तभी हो सकती है, जब एक दूसरे देश के सम्बन्ध, विशेषतः आर्थिक सहयोग सम्बन्ध सुदृढ़ हों।

इसी उत्साह और साहस से मार्च २३, १९५४ में रूमानिया ने भारत के साथ व्यापारिक समझौता किया, जो अत्यन्त महत्वपूर्ण था। परिणाम भी शीघ्र ही अच्छे निकले। समझौते के दो वर्ष बाद १९५४ की अपेक्षा व्यापार सम्बन्धी विनिमय काफी अधिक रहा। १९५६ की अपेक्षा १९५७ में व्यापार दुगुना रहा।

रूमानिया से भारत को निर्यात होने वाली चीजों में छपाई सामान, मशीन, खुदाई साधन, ट्रांसफार्मर तथा दवाइयां आदि थीं, जबकि भारत से रूमानिया को जाने वाली चीजों में खाद्य तेल, कपड़े, मिर्च मसाले, खाल तथा खाल, चमड़ा वगैरह थीं। यह व्यापार दोनों देशों के मध्य

आर्थिक विकास में—

टैक्नोलौजी और मानव-श्रम का योग

डब्ल्यू० एस० वोटिंस्की

आधुनिक समृद्धिशाली और प्रगतिशील देशों की अर्थ-व्यवस्था का विकास टैक्निकल, सामाजिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के पारस्परिक संयोग से हुआ है। आर्थिक विकास और समृद्धि की वर्तमान स्थिति तक पहुंचने में टैक्निकल जानकारी, सामाजिक और राजनीतिक संघटन तथा आधुनिक मानव ने भरसक योग दिया है और इस उल्लेखनीय आर्थिक सफलता का श्रेय इन सबको ही प्राप्त होना चाहिए। आधुनिक अर्थ-व्यवस्था के स्वरूप को प्रभावित करने वाले तत्व आपस में इस प्रकार गुंथे हुए हैं कि उनका अलग अलग मूल्यांकन कर पाना या महत्व आंक पाना सरल नहीं।

उदाहरणार्थ उत्पादन-क्षमता को ले लीजिए। एक श्रमिक नेता की दृष्टि में उत्पादन-क्षमता में जो वृद्धि होती उसका श्रेय वह श्रमिकों को ही देना चाहेगा जब कि दूसरी ओर इंजिनियर और व्यवसायी की दृष्टि में उत्पादन-क्षमता में वृद्धि होने का मुख्य श्रेय टैक्निकल सूझ बूझ और जानकारी को प्राप्त होगा। इसी प्रकार अन्य बहुत से उदाहरण दिये जा सकते हैं, जहां एक ही शब्द भिन्न वर्गों के लिए भिन्न अर्थ का द्योतक है।

संक्षेप में यह कह पाना बहुत कठिन है कि आधुनिक औद्योगिक विकास में श्रम और टैक्निकल जानकारी अथवा सूझ बूझ ने अलग अलग कितना योग दिया है। इस सम्बन्ध में एक बहुत ही सुन्दर उदाहरण दिया जाता है। कुछेक अनुभवी और प्रख्यात अर्थशास्त्रियों का कथन है कि मानव-श्रम और टैक्निकल-ज्ञान उस पर्वतारोही की दो टांगों के सदृश हैं, जो २० हजार फुट ऊंची पर्वत की चोटी पर विजय प्राप्त करता है। प्रश्न यह उठता है कि चोटी पर विजय प्राप्त करनेका श्रेय किस टांग को दिया जाय। यही कहा जा सकता है कि दोनों टांगों ने मिल कर ही विजय प्राप्त की है यही उत्तर औद्योगिक विकास में मानव-श्रम और टैक्निकल-ज्ञान के योगदान के सम्बन्ध में दिया जा सकता है।

व्यावहारिक प्रश्न

महत्वाकांक्षी आर्थिक विकास योजनाओं में संलग्न राष्ट्रों के समक्ष कुछ व्यावहारिक प्रश्न उठ खड़े होते हैं। औद्योगिक विकास के इच्छुक ये राष्ट्र यह भली भान्ति अनुभव करते हैं कि औद्योगिक विकास कार्यों के लिए उनके पास दक्ष और कुशल कारीगरों और मिस्त्रियों की भारी कमी है। इस कमी की पूर्ति के लिए वह अपने कारीगरों को विदेशों में आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए

अभी प्राथमिक दशा में है। भविष्य उज्ज्वल प्रतीत हो रहा है। दोनों देशों की आर्थिक स्थिति प्रशंसनीय है। भारत व रूमानिया के व्यापार सम्बन्ध दोनों देशों के लिए लाभकारी हैं।

रूमानिया भारत को फैक्ट्री सामान, औद्योगिक साधन, सीमेंट निर्माण सम्बन्धी सामग्री, पुर्जे, ट्रैक्टर, कृषि सम्बन्धी मशीन, तेल परिशोधक यंत्र, कांच, दवाइयां वगैरह दे रहा है, जिससे भारत की द्वितीय योजना सफल होने में काफी सहायता प्राप्त हो रही है।

रूमानिया की आर्थिक उन्नति का पहला प्रदर्शन भारत को १९५५ का अंतर्राष्ट्रीय औद्योगिक मेले में हुआ, जहां रूमानिया का राष्ट्रीय प्रदर्शन कक्ष था। इसमें एक महान् भार वाहक यंत्र भी था, जिसका उपयोग आजकल ज्वालामुखी तैल परिशोधन में हो रहा है। इस सहयोग के साथ २ रूमानिया ने कुछ विशेषज्ञों को भी भेजा है, जो वहां से आई हुई मशीनों को ठीक बिठाने तथा उन्हें चालू करने में मदद दे रहे हैं।

परस्पर आर्थिक सहयोग इसलिए बढ़ता जा रहा है कि रूमानिया की जनता महान् भारतीय तथा दक्षिण पूर्वी एशिया की जनता से अधिक निकट सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है।

—

भेजते है।

यह नहीं कहा जा सकता कि ये प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्ति अपने देश को समस्याओं को हल कर लेते हैं। अनेकों कठिनाइयां और बाधाएं उठ खड़ी होती हैं और कभी कभी सम्बन्धित देश प्रशिक्षण-प्राप्त व्यक्तियों की सेवाओं का पूरा पूरा लाभ नहीं उठा पाते। यही बात विदेशों से आने वाले टैक्निकल विशेषज्ञों के बारे में भी कही जा सकती है। यदि विदेशी टैक्निकल विशेषज्ञ और सम्बन्धित देश के निवासी एक दूसरे को भली प्रकार नहीं समझ सके और पारस्परिक सद्भावना का उनमें अभाव रहा तो आधारभूत लक्ष्य पूरा नहीं होता। उपर्युक्त औजारों और मशीनों के अभाव में स्थानीय प्रशिक्षण-केन्द्र भी इस अभाव की पूर्ति नहीं कर सकते।

लेकिन इन सभी कठिनाइयों और बाधाओं के होते हुए भी अमेरिका, संयुक्त राष्ट्रसंघ और कोलम्बो-योजना में शामिल राष्ट्रों द्वारा अल्पविकसित देशों के सहायतार्थ चालू किये गए टैक्निकल सहायता कार्यक्रम अत्यधिक सफल और लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। अल्पविकसित और विकासोन्मुख देशों के निवासियों ने यह पूरी तरह सिद्ध कर दिया है कि यदि उन्हें उचित अवसर और पथ-प्रदर्शन प्राप्त हो तो वह आधुनिकतम राष्ट्रों द्वारा प्रयुक्त की जाने वाली सभी टैक्निकल विधियों को बिना किसी कठिनाई के सीख सकते हैं, और उनका सफलतापूर्वक उपयोग कर सकते हैं। यह पूरी तरह प्रकट हो चुका है कि टैक्निकल सूझ-बूझ और जानकारी किसी देश को विरासत में प्राप्त नहीं हुए हैं और इसके लिए विशेष शिक्षा इत्यादि की भी आवश्यकता नहीं। प्राचीन काल की दस्तकारी के लिए जितनी अधिक सूझ बूझ और दक्षता की आवश्यकता पड़ती थी, उससे कम दक्षता और सूझ बूझ की आवश्यकता आधुनिक मशीनों का सचालन करने के लिए होती है।

अल्पविकसित देशोंके नेताओंके समक्ष अपने देशका तीव्रगति से औद्योगीकरण करनेका लक्ष्य उपस्थित है। जनता और सरकार तेजी के साथ उद्योगोंका विकास चाहती है। उनका तर्क बहुधा यह होता है कि यद्यपि हमारा देश गरीब हैं, परन्तु हमारे पास प्राकृतिक साधन स्रोतोंकी कमी नहीं। आवश्यकता केवल उनका उपयुक्त ढगसे विकास करनेकी है। लेकिन इनका विकास करनेके लिए हमे धन की आवश्यकता है। हमारे पास इतनी पूंजी नहीं कि हम अपने प्राकृतिक साधन स्रोतों का विकास कर सकें। इस लिए हमें जनता पर नए नए कर लगाने, ऋण लेने, विदेशों से ऋण या आर्थिक सहायता प्राप्त करनेकी आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए यदि जनता को कुछ आर्थिक तंगी उठानी पड़े और सामाजिक सुधारों एवं समाज-कल्याण कार्यक्रमों को चालू करने में कुछ देर हो जाए तो कोई परेशानी की बात नहीं। इस प्रकार इन देशों के योजना-निर्माता उन लोगों की आलोचनाओं की अवहेलना कर देते हैं जो कहते हैं कि शिक्षा इत्यादि मानवीय हित के विषयों पर भी हमें समुचित ध्यान देना चाहिए। लेकिन उनका यह दृष्टिकोण गलत है। शिक्षा इत्यादि की उपेक्षा करने से देश और जनता के हित को बड़ी हानि पहुंचने की सम्भावना रहती है।

महत्त्वाकांक्षी योजनाएं

कुछ लोग राजनैतिक, सैनिक, प्रादेशिक तथा इसी प्रकार के अन्य हितोंको दृष्टि में रख कर विकास योजनाएं तैयार करते हैं। कुछ राष्ट्रीय प्रतिष्ठा और सम्मान को बढ़ाने के उद्देश्य से महत्त्वाकांक्षी योजनाएं तैयार कर डालते हैं। उदाहरणार्थ उत्साही और महत्त्वाकांक्षी योजना निर्माता छोटे छोटे उद्योगों के विकास की ओर ध्यान न देकर आधारभूत और बड़े-बड़े उद्योगोंके विकास को अपना लक्ष्य बनाते हैं। वे चाहते हैं कि उनके देश में मोटरें बनें, हवाई जहाज और भारी मशीनें बनें और इस्पात इत्यादि आधार-भूत और महत्त्वपूर्ण वस्तुओं का निर्माण हो। लेकिन वे यह भूल जाते हैं कि क्या उनके देश में इतनी आर्थिक क्षमता है और क्या उसके लिए आवश्यक कच्चा माल वहां पर्याप्त मात्रा और परिमाण में सुलभ है। वे वास्तविकताओं की उपेक्षा कर कल्पना के पंख लगा कर उड़ना चाहते हैं, और अपने इस प्रयास में बुरी तरह असफल होते हैं। मोटर चलाना, सीखना, अशिक्षित व्यक्ति के लिए भी बिल-कुल सरल और आसान है।

आधुनिक टैक्नोलोजी आज बहुत ही आसानी से एक देश से दूसरे देश में पहुंचाई जा सकती है। जंगलों, रेगिस्तानों और पठारों पर आशातीत हवाई अड्डों का निर्माण किया जा सकता है। संक्षेप में आधुनिक टैक्नोलोजी ने संसार के

दूरस्थ स्थानों में, आधुनिक सभ्यता से बहुत दूर भी, आधुनिक सुविधाओं और उद्योगों का विकास करना बिलकुल सम्भव बना दिया है। केवल समय और व्यय का प्रश्न उठाता है। एक ही फर्म संसार के अनेकों भागों में एक ही प्रकार के औद्योगिक कारखानों का निर्माण करती है।

यातायात और परिवहन साधनों के विकास और विस्तार ने आधुनिक टैक्नौलोजी के प्रसार में बहुत अधिक योग दिया है। १८ वीं सदी में अधिकांश कारखाने रेल लाइनों, बन्दरगाहों और जल मार्गों के निकट स्थापित किए जाते थे, लेकिन आज इस बाधा पर भी विजय प्राप्त कर ली गई है। अब देश के किसी भी भाग में कारखानों की स्थापना की जा सकती है।

उपनिवेश काल में प्रचलित अर्थ-व्यवस्था आज पूरी तरह लोप हो चुकी है। राजनीतिक घटनाओं और टैक्निकल विकास ने सर्वथा एक नवीन प्रकार की परिस्थितियों का सृजन किया, जिनके प्रभाव से देशों की अर्थ व्यवस्थाएं भी अछूती नहीं रह सकीं। इस युग की समाप्ति के साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विद्यमान पुरानी आर्थिक और व्यापारिक व्यवस्था का भी अन्त हो गया। पहले कुछ देश वस्तुओं का निर्माण करते थे, तथा कुछ केवल कच्चे माल की सप्लाई करते थे। कच्चे माल की सप्लाई करने वाले देशों को अपने यहां उद्योग धन्धे स्थापित करने की छूट न थी। यूरोप के उद्योग प्रधान देशों का यह एक प्रधान लक्ष्य था कि संसार के विभिन्न भागों में स्थित उनके अधीन देश केवल कच्चा माल-सप्लाई करें और उनके कारखानों से निकलने वाली वस्तुओं के लिए मण्डियां सुलभ करें। लेकिन अब उनकी इस परम्परागत नीति में परिवर्तन हो गया है और अब वह इस बात का भरसक प्रयास कर रहे हैं कि अल्पविकसित देशों की अर्थ-व्यवस्था को आत्म-निर्भर बनाने और वहां आवश्यक उद्योग धन्धों का विकास करने में भरसक सहायता दी जाए।

तीन सिद्धान्त

कुछ लोगों में यह गलत धारणा फैल गई है कि औद्योगीकरण की दिशा में सबसे पहला कदम देश में आधारभूत और भारी उद्योगों की स्थापना करना होना चाहिए। संसार के कुछ अत्यधिक उद्योग प्रधान और प्रगतिशील राष्ट्रों के अनुभवों के आधार पर औद्योगिक विकास कार्यक्रम के आधार मुख्यतः तीन सिद्धान्त हैं:—

१—देश में आर्थिक और राजनीतिक स्थिरता हो, यातायात और परिवहन के पर्याप्त साधन सुलभ हों, जनता की क्रय-शक्ति में वृद्धि हो रही हो, सूझ बूझ वाले दक्ष प्रबन्धकों व कारीगरों का अभाव न हो।

२—देशके अन्दर से प्राप्त कच्चे माल का उपयोग किया जाए और उत्पादित वस्तुएं देश के अन्दर खप सकें,

३.—सरकार उपभोक्ता वस्तुओं के आयात पर प्रतिबन्ध लगा दे और उद्योगों के विकास में सहायक मशीनों के आयात पर अधिक जोर दे।

कुछ लोगों की धारणा यह भी है कि उपभोक्ता वस्तुओं कि उत्पादन करने वाला देश तेजीसे औद्योगिक विकास नहीं कर सकता। अतएव आवश्यकता यह है कि उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन बहुत कम कर दिया जाय और समस्त शक्ति का उपयोग भारी उद्योगों की स्थापना के लिए किया जाए, भले ही इससे जनता को कष्टों का सामना करना पड़े। यह विचार धारा सही नहीं है और सोवियत रूस के परीक्षण के परिणामों से इसकी भली भन्ति पुष्टि होती है। भविष्य के लिए वर्तमान पीढ़ी को बलिदान कर देना बुद्धिमत्तापूर्ण नीति नहीं कही जा सकती।

दूसरे यदि हम शिक्षा इत्यादि के विस्तार पर समुचित ध्यान नहीं देंगे तो हर वर्ष अशिक्षितों की संख्या बढ़ती जाएगी और इसका परिणाम यह होगा कि आगे चल कर उन्हें अच्छी नौकरी नहीं मिल सकेगी। आधुनिक अर्थ-व्यवस्थाके उपयुक्त भावी पीढ़ी तैयार करने का कार्य बहुत कठिन है। इसकी तुलनामें विदेशी ठेकेदारों और विशेषज्ञों की सहायता से बांध, कारखाने इत्यादि का निर्माण करना बहुत आसान कार्य है।

समृद्धि प्राप्त करने के लिए कोई छोटा मार्ग नहीं है। शिक्षा और नवीन तथा विस्तृत दृष्टिकोण की पूर्ति अन्य कोई वस्तु नहीं कर सकती। स्थायी आर्थिक समृद्धि के लिए स्कूलों, अस्पतालों, सफाई, विकास की परिस्थितियां, आगे बढ़ने और प्रगति करने की अभिलाषा, व्यक्ति और श्रम की प्रतिष्ठा इन सभी बातों का होना अत्यधिक आवश्यक है।

[सम्पदा

फोन : ३३१११
तार : 'ग्लोबशिप'
न्यू ग्लोब शिपिंग सर्विस लिमिटेड
खताऊ बिल्डिंग्स
४४ ओल्ड कस्टम हाउस रोड, फोर्ट बम्बई
–सब प्रकार का क्लियरिंग, फारवर्डिंग, शिपिंग
का काम शीघ्र व सुविधापूर्वक
किया जाता है।
मैनेजिंग डायरेक्टर—
श्री सी. डीडवानिया

श्रम-सम्बन्धी कानून

भारत सरकार किस तेजी से श्रम सम्बन्धी कानून बना रही है, यह नीचे के विवरण से ज्ञात हो जायगा :

क—इस साल बनाये गये कानून

१. औद्योगिक विवाद (संशोधन) कानून, १९५७—छंटनी मुआवजा देने की व्यवस्था के लिए।

औद्योगिक विवाद (केन्द्रीय) नियम, १९५७—औद्योगिक विवादों का जल्दी फैसला करने के बारे में।

२. औद्योगिक विवाद (बैंक कम्पनियां) संशोधन कानून, १९५७—ट्रावनकोर-कोचीन जांच कमीशन की सिफारिशों को अमल में लाने के लिए।

३. वेतन अदायगी (संशोधन) कानून १९५७—वेतन अदायगी कानून का लाभ निर्माण उद्योग के कामगरों को भी मिल सके, 'वेतन' की परिभाषा को बदला जा सके और वेतन सीमा को बढ़ाया जा सके।

४. न्यूनतम वेतन संशोधन कानून, १९५७—कम-से-कम वेतन निश्चित करने की तारीख बढ़ाने के लिए।

५. कोयला खान विनियम, १९५७—कोयला खान विनियम, १९२६ और कोयला खान (अस्थायी) विनियम, १९५५ में संशोधन।

ख—विचाराधीन कानून

१. खदान कनून, १९५२—अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कनवेनशनों और कारखाना कानून, १९४८ की रूप रेखा पर लाने के लिए।

२. जच्चा लाभ कानून, १९४१।

३. धातु खाद विनियम।

४. कोयला खान बचाव अधिनियम १९३९—आन्ध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश की खदानोंमें बचाव-केन्द्र स्थापित करने के लिए।

५. निर्माण-उद्योग के कामगरों के लिए कानून।

६. मोटर परिवहन के कामगरों के लिए कानून।

☆

मजदूरों को बेकारी का संकट

पिछले दिनों राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस ने विभिन्न औद्योगिक केन्द्रों में उद्योग बन्दी के कारण जो बेकारी मजदूरों में हुई, उसकी जांच करवाई थी जो अधिकृत आंकड़े प्राप्त हुए, वे भयावह हैं। बम्बई, अहमदाबाद और शोलापुर की कुछ सूती कपड़ा मिलों के बन्द हो जाने से लगभग ५०,००० मजदूर बेकार हो गए हैं। निकट भविष्य में ही कुछ अन्य मिलों ने भी काम बन्द करने की धमकियां दी हैं; जिसके फलस्वरूप बहुत जल्द लगभग ३०,००० मजदूर और बेकार हो जायेंगे। अकेले कानपुर शहर में कुछ सूती कपड़ा मिलों के बन्द हो जाने से लगभग २०,००० मजदूर बेकारी का सामना कर रहे हैं। असम के चाय बागानों में मजदूर परिवारों के २५,००० लोग रोटियों को तरस रहे हैं। लगभग १०,००० मजदूरों की ऐसी ही स्थिति पंजाब, बंगाल, राजस्थान तथा विदर्भ में है। मध्य-प्रदेश के कुछ औद्योगिक केन्द्रों में बेकारी का ताण्डव लगभग ऐसा ही है।

यह अवस्था तब है, जब कि देश दूसरी पंचवर्षीय योजना के मध्यकाल में से गुजर रहा है। इस चिन्तनीय स्थिति का वास्तविक कारण क्या है, यह सोचने की आवश्यकता है। सरकार की उद्योगनीति, जनता की क्रयशक्ति में असाधारण कमी, मजदूरों की मांगें, उद्योगपतियों की अयोग्यता, अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में भीषण प्रतिस्पर्धा आदि में से वास्तविक कारण क्या है? जो भी कारण हो, उस पर गम्भीरतापूर्वक विचार होना चाहिए और उसे शीघ्र हल करने का प्रयत्न होना चाहिए। नैनीताल में हुये श्रम सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने इस प्रश्न पर विचार अवश्य किया है, किन्तु उसके निश्चय अभी प्रारंभिक अवस्था से आगे नहीं बढ़ पाये। उसके द्वारा सुझाई गई समितियां क्या प्रभावकारी उपाय बताती है, यह निकट भविष्य में होगा।

☆

केरल के मजदूर

केरल की कम्युनिस्ट सरकार को शासन करते हुए अब कुछ समय बीत गया है। इसलिए आज जहां वह अपनी क्रियाकलाप पर गर्व प्रकट कर सकती है, वहां जनता भी उसके कार्यों का मूल्यांकन और आलोचना कर सकती है।

[सम्पदा

कम्यूनिस्ट नेता बहुत समय से कांग्रेसी शासन की मजदूर नीतिकी आलोचना करते हैं किन्तु 'इटक के एक प्रमुख नेता श्री रामसिंह वर्मा ने पिछले दिनो एक भाषण देते हुए इन्दौर और केरल के मजदूरों के वेतनो की तुलना की है। त्रिचूर और इन्दौर में वेतनों की तुलना निम्नलिखित है।

	त्रिचूर	इन्दौर
बेल ब्रेकर	२५	४१
मिक्सिंग स्प्रेडर	२१	३८
स्कूचर	२०	३४
कार्ड लेपरेरियर	२०	४३
केन मैन	२०	४०
ग्रैंडर	२५	५०
फ्रेम डाफर	१४	३०

इसी तरह अन्य खातो में भी वेतनो मे पर्याप्त अन्तर है। अब केरल सरकार को इन सख्याओ के सम्बन्ध में प्रकाश डालना चाहिए। हम यह नहीं कहना चाहते कि परिस्थितियो का बिना विचार किए यहा वेतन एक दम बढा देने चाहिए। यदि वहा वेतन वृद्धि व्यावहारिक नहीं हो तो शासन को दोष नहीं दे सकते। परन्तु इससे यह तो स्पष्ट है कि वास्तविक स्थिति की उपेक्षा करके हम नहीं चल सकते। यदि केरल में कम्यूनिस्ट शासन अभी वेतन वृद्धि के प्रस्ताव को अव्यावहारिक समझता है तो यह नहीं भूल जाना चाहिए कि दूसरे शासन भी ऐसा ही समझ सकते हैं और इसके लिए उन्हें दोष नहीं देना चाहिए।

★

श्रम-सम्बन्धी महत्वपूर्ण निर्णय

नैनीताल मे पिछले दिनों जो श्रम सम्मेलन हुआ, उसमें अनेक महत्वपूर्ण निर्णय किये गए हैं। बन्द होती हुई मिलों की सख्या लगातार बढती जा रही है और इसके परिणाम स्वरुप मजदूरों की बेकारी बढती जा रही है।

नैनीताल सम्मेलन ने एक उपसमिति नियुक्त करने की सिफारिश की है, जो मिलों के आर्थिक सकट के कारणो पर विचार करेगी, दूसरी ओर मिलों को अच्छी कपास तथा आर्थिक सहायता देने आदि की भी सिफारिश की गई है। यह भी सलाह दी गई है कि सरकार उन बन्द होने वाली मिलों को स्वय चलाये ताकि मजदूरों की बेकारी न बढ़े और मजदूरी की दर शोलापुर की तरह से मजदूरों से समझौता करके तय की जावे। सरकार द्वारा नियत समिति कानपुर और इन्दौर का विशेष रूप से तथा अन्य मिलो के सम्बन्ध मे सामान्य रूप से विचार करेगी।

इस सम्मेलन मे दो और महत्वपूर्ण प्रश्नों पर विचार किया गया है। आज देश मे मजदूर सघों मे परस्पर प्रतिस्पर्धा ने एक विकट समस्या उत्पन्न कर दी है। हर एक प्रतिस्पर्धी यूनियन अपनी मान्यता के लिए दूसरे को नीचा दिखाना चाहता है और इस स्वार्थ के लिये औद्योगिक शाति को नष्ट करके देश को नुकसान पहुँचाने में भी सकोच नहीं करता।

नैनीताल के श्रम सम्मेलन में इस प्रश्न पर विचार किया गया और यूनियन की मान्यता के सम्बन्ध में निम्नलिखित सिद्धान्त स्वीकृत किये गये

मान्यता के सिद्धान्त

—जहा एक से अधिक मजदूर सघ हैं, वहां यदि कोई सघ मान्यता के लिए दावा करे तो रजिस्ट्रेशन के बादद कम से कम १ वर्ष तक उसका सक्रिय होना आवश्यक है। जहा केवल एक ही सगठन है वहां यह शर्त लागू नहीं होती।

—सम्बद्ध उद्योग में इसकी सदस्यसख्या कम से कम १५ प्रतिशत हो।

—यदि किसी मजदूर सघ के सदस्यों की सख्या सम्बद्ध स्थानीय उद्योग के मजदूरों की सख्या का २५ प्रतिशत है, तो वह उस क्षेत्र के लिए मान्यता प्राप्त करने का दावा कर सकती है।

—किसी मजदूर सघ को मान्यता मिलने पर स्थिति में दो वर्ष तक कोइ परिवर्तन नहीं हो।

—जहां किसी उद्योग या सस्थान में कई मजदूर सगठन हों, वहां जो सबसे बड़ा सघ हो उसे मान्यता प्रदान की जाय।

—किसी क्षेत्र के उद्योग की प्रतिनिधि मजदूर यूनियन उस क्षेत्र के उस उद्योग के सभी कामगारो का प्रतिनिधित्व करेगी। परन्तु यदि किसी विशेष उद्योग की यूनि

यन की सदस्य संख्या ५० प्रतिशत है तो, वह उस उद्योग की एक सीमा तक ही प्रतिनिधित्व कर सकती है।

—प्रतिनिध्यात्मक स्वरूप के विनिश्चय के लिए प्रक्रिया और अधिक सम्पूर्ण होनी चाहिए। जहां पर विभागीय तंत्र विनिश्चयात्मक निर्णय अन्य पक्षों को स्वीकार्य न हों, वहां सभी केन्द्रीय मजदूर संगठनों के प्रतिनिधियों की एक समिति बनायी जाय जो मामले पर विचार करे तथा निर्णय दे। इसके लिए केन्द्रीय सरकार मजदूर संगठन के स्थायी तंत्र के रूप में कार्य करेगी तथा स्थानीय आधार पर व्यक्ति और धन प्रदान करेगी।

—केवल उन्हीं मजदूर संघों को मान्यता दी जायगी, जो अनुशासन संहिता का पालन करेंगे।

—ऐसे मामले में जहां कोई मजदूर संघ केन्द्रीय मजदूरों के चारों संगठनों में से किसी से भी सम्बद्ध न हों वहां मामले को अलग रूप से ही तय किया जायगा।

सम्मेलन ने मजदूर यूनियन की मान्यता के ही प्रश्न पर विचार नहीं किया, मजदूर संघों की पारस्परिक आचरण संहिता पर भी विचार किया है। इस पर देश में विद्यमान चारों मजदूर संघों ने हस्ताक्षर कर अपनी स्वीकृति प्रदान की है। इस आचरण-सम्बन्धी संहिता के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :

मजदूर-संघों की आचरण-संहिता

● किसी उद्योग या इकाई के प्रत्येक मजदूर को अपने पसन्द के श्रम संगठन का सदस्य बननें की स्वतंत्रता और अधिकार होगा। इस सम्बन्ध में किसी प्रकार की जोर जबरदस्ती नहीं डाली जावेगी।

● श्रम संगठनों की सदस्यता दोहरी नहीं होगी। प्रतिनिधिक स्वरूप वाले श्रम संगठनों के सम्बन्ध में यह तय किया जाता है कि इस सिद्धान्त की पड़ताल करने की आवश्यकता है।

● श्रम संगठन के प्रजातांत्रिक कार्य संचालन के प्रति निर्लिक स्वीकृति एवं सम्मान होगा।

● श्रम संगठनों की कार्य समितियों एवं पदाधिकारियों का नियमित प्रजातांत्रिक निर्वाचन होगा।

● कोई भी संगठन मजदूरों के अज्ञान या पिछड़ेपन का दुरुपयोग नहीं करेगा। कोई भी संगठन अतिशयोक्तिपूर्ण एवं अनाप-शनाप मांगें प्रस्तुत नहीं करेगा।

● सभी श्रम संगठन जातीयता, साम्प्रदायिकता और प्रांतीयताका दमन करेंगे।

● श्रम संगठनों के पारस्परिक आचरण में हिंसा, जोर-जबरदस्ती, धमकी या व्यक्तिशः दुर्भावनाओं को स्थान नहीं दिया जावेगा।

(पृष्ठ ३०६ का शेष)

विश्व-बैंक के आंकड़ों के अनुसार एशिया में ऋण लेने वाले देशों में सबसे पहला स्थान भारत का है। १ मई १९५८ तक भारत को ३७ करोड़ २६ लाख १० हजार डालर के ऋण प्रदान किए जा चुके थे। भारत को नए प्रदान किए जाने वाले दो ऋणों में २ करोड़ ६० लाख डालर का ऋण कलकत्ता बन्दरगाह के सुधार के लिए दिया जा रहा है। इन्हें मिलाकर विश्व-बैंक द्वारा एशिया को दिए जाने वाले ऋणों की कुल राशि ८७ करोड़ ३० लाख डालर हो जाएगी।

भारत में गैर-सरकारी उद्योगों को भी विश्व-बैंक ने १६ करोड़ ५० लाख डालर के ऋण दिए हैं। इनमें से सबसे बड़ा ऋण भारत की इस्पात कम्पनियों—"टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" तथा "इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी" को दिया गया है। उक्त दोनों कम्पनियों को १५ करोड़ १० लाख डालर के ऋण बैंक ने विदेशों से सामग्री और आवश्यक सेवाओं की उपलब्धि के लिए प्रदान किए हैं। यह ऋण प्रदान करने का उद्देश्य इनकी उत्पादन-क्षमता दुगुनी करना है।

ट्राम्बे में बिजली घर के निर्माण तथा उसके विस्तार के लिए दो ऋण टाटा पावर कम्पनी को दिए गए हैं। मूल बिजली घर बम्बई नगर को १,२५,००० किलोवाट बिजली इस समय प्रदान कर रहा है तथा १९६० तक बिस्तार पूरा हो जाने के बाद यह कारखाना ६२,५०० किलोवाट अतिरिक्त बिजली इस नगर को प्रदान कर सकेगा।

१ करोड़ डालर का एक अन्य ऋण भारत के औद्योगिक ऋण तथा पूंजी विनियोग सम्बन्धी निगम को प्रदान किया गया है।

(पृष्ठ ३१८ का शेष)

सर्वोदय का तत्त्व

जमाना अन्नप्रधान देशों का है, उद्योग-प्रधान देशों का नहीं, अतः अन्नोत्पादन के साधन बाजार से उठा दिये बिना कोई चारा नहीं है। जमीन रबड़ के जैसी बढ़ नहीं सकती, वैसे अन्न भी कारखानों में बढ़ नहीं सकता। अतः खेती का पहला उपयोग अन्नार्थ ही हो एवं दूसरा उपयोग आवश्यक कच्चे माल के उत्पादनार्थ। उत्पादन का वास्तविक उद्देश्य भी आर्थिक एवं सांस्कृतिक भूमिका पर ही साधा जा सकता है। गांधी के पहले भी चरखा, झाड़ू, चक्की, प्रार्थना थी, परन्तु गांधी ने इन्हें क्रांति का औजार बना कर इनमें और इनके द्वारा समाज में जान फूंक दी।

किसान

स्वराज्य की इमारत एक जबरदस्त चीज है जिसे बनाने में अस्सी करोड़ हाथों का काम है। इन बनाने वालों मे किसानों की तादाद सबसे बड़ी है। सच तो यह है कि स्वराज्य की इमारत बनाने वालो में ज्यादातर (करीब ८० फी सदी) वही लोग हैं; इसलिए असल में किसान ही कांग्रेस है, ऐसी हालत पैदा होनी चाहिए।

—म० गांधी

गांधी की परम्परा हमें जीवित रखनी है, उसे आगे बढ़ाना है।

उद्योग ऐसा हो, जिसमें से मनुष्यता का विकास होता रहे। इन्सान के सम्बन्ध ऐसे हों, जहां सौदा न हो। एक की मेहनत दूसरे द्वारा खरीदना बंद होगा, तभी यह संभव होगा। परस्पर के ताल्लुकात कानून से परिचालित न हों। यही लोक-चारित्र्य की भित्ति है। हमारा पुरुषार्थ गुण का विकास करने वाला हो, न कि विकारों की वृद्धि करने वाला।

वैज्ञानिक क्रांतिवाद में इस प्रश्न का जवाब न दा कि दुनिया को बदलने वाला कौन है? गांधी ने इसका जवाब दिया कि जो खुद को बदलेगा, वह समाज को बदलेगा। अब क्रांति शांति के ही साधनों से होगी। इसलिए अमृतसर में कम्युनिस्टों को भी अपना रुख बदलना पड़ा और यदि वह 'पैंतरा' भी हो, तो भी वह यहीं संकेत प्रकट करता है कि जमाने का रुख किस ओर है।

गांधी ने पहले के परिमाणों में—डायमेंशन्स में, दो और परिमाण जोड़ दिये: शांति और व्यक्तिगत आचरण के। यही क्रांति की बुनियाद है। भूदान का भी यही उद्देश्य है कि समाज के नक्शे बदल देना, जमाने के रुख को बदल देना और इन्सान की तबीयत बदल देना। सर्वोदय की क्रांति का यह लक्ष्य है।

सर्वोदय की मांग है कि समाज को बदलने वालों का गुण-विकास भी हो। दुनियां को बदलते-बदलते हमें [illegible] बनाना है। पर उसके लिए आवश्यक यह है कि दुनिया के गलत औजार नहीं होने चाहिए और सही [illegible] आदमियों के हाथ में नहीं होने चाहिए। [illegible] भी बहिष्कार चाहिए और सत्ता की प्रतिस्पर्धा [illegible]।

—दादा (देहरादून [illegible])

★

२७३ सहकारी समितियां [illegible]

उत्तर प्रदेश में चलाये गये [illegible] अच्छे परिणाम मिलने लगे हैं। [illegible] सहकारी ऋण समितियां [illegible] कार्य संचालन निजी पूंजी से [illegible]।

ये समितियां अब [illegible] और न अपने सदस्यों को [illegible] दूसरे वित्तीय [illegible]।

इन समितियों की [illegible] हो गयी है। [illegible] ४१ हजार रुपये और [illegible] रुपये हो गयी है।

[illegible]

अर्थवृत्त-चयन

(पृष्ठ ३२० का शेष)

आनुमानिक अध्ययन प्रकाशित कर बतलाया गया है कि प्रायः ४१ अरब १० करोड़ रुपये मूल्य की चांदी और सोना जनता के हाथों में है। अध्ययन में कहा गया है—देश में सोने के उत्पादन और सन् १९४९ से चालू तस्कर व्यापार को भी दृष्टि में रखकर १०॥ करोड़ औंस सोना जनता के हाथों में समझा जाता है। इसी प्रकार कुल चांदी का भी जनता के पास तथा ४ अरब २३॥ करोड़ औंस चांदी अनुमान लगाया गया है (१ औंस २ सही २।३ तोले का होता है)।

सोने के वर्तमान महंगे भाव २८६) प्रति औंस के हिसाब से १०॥ करोड़ औंस सोने का मूल्य ३० अरब ३५ करोड़ रुपया होगा। इसी प्रकार ४ अरब २३॥ करोड़ औंस चांदी भी २० अरब ७५ करोड़ रुपये की होगी।

भारत विभाजन के समय भारत में १२ करोड़ औंस सोने का अनुमान किया गया है। यदि विचार के लिए जनसंख्या को लें तो बर्मी और पाक हिस्से का सोना ३ करोड़ औंस आयेगा।

★

आंखें खोलने वाले प्रतिवेदन

पिछले दिनों सरकारी या लोकसभा के लेखा परीक्षकों की आंखें खोलने वाली रिपोर्टें अखबारों में प्रकाशित हुई हैं। हिन्दुस्तान मशीन टूल्स फैक्ट्री, हिन्दुस्तान हाउसिंग फैक्ट्री और हिन्दुस्तान स्टील लि० में जनता के लाखों रुपयों का दुरुपयोग हुआ है। उत्पादन प्रारम्भ होने से बहुत पहले ही पैकिंग फोरमैन की नियुक्ति, प्रशिक्षण अवस्था में करीब २ लाख रु० वेतन दर, भारत भेजने से पहले उनकी सेवाओं की समाप्ति, नियुक्ति के कई मास बाद भारत में विशेषज्ञों को भेजना, आठ मास के नियुक्तिकाल में से केवल एक मास अपनी ड्यूटी भुगताना, आवश्यक रूप से इन्जीनियरों की नियुक्ति आदि बीसियों शिकायतें रिपोर्ट में की गई हैं। नई दिल्ली में बने विलास गृह (अशोक होटल) के निर्माण में भी बीसियों अनियमितताएं की गई हैं। बिना काम देखे लाखों रु० के बिल चुकाये गये हैं, सरकारी नियत दर से बहुत ऊंची दर पर बिल चुकाये गये। जमीन की खुदाई, मलवे की ढुलाई, कच्चे पक्के पत्थर के मूल्य सभी में लाखों रु० बरबाद हो गये। समय-समय विभिन्न बांधों के निर्माण और सरकारी कार्यों में इसी तरह रुपये की बरबादी के उदाहरण मिलते हैं। इन रिपोर्टों के बाद क्या कार्रवाई होती है, यह ज्ञात नहीं होता। हमारी सम्मति में दोषी अपराधियों को कठोर दण्ड मिले बिना भ्रष्टाचार रुक नहीं सकता। मुंदड़ा काण्ड की तरह इन भ्रष्टाचारों के विरुद्ध भी कठोर कदम उठाने चाहिए।

★

स्वेज नहर मुआवजा सम्बन्धी समझौता

अरब गणराज्य के प्रतिनिधियों तथा स्वेज नहर कम्पनी के शेयर होल्डरों के मध्य मुआवजा चुकाने के सम्बन्ध में आखिर समझौता हो गया। इसके अनुसार अरब गणराज्य ने २८३ लाख मिश्री पौंड चुकाना स्वीकृत किया है। समझौते के अनुसार सारी विदेशी पूंजी शेयर होल्डरों को छोड़ देनी होगी। प्राथमिक भुगतान ५३ लाख पौण्ड की किश्त में है। मिश्र ने भी स्पष्ट कह दिया है कि २६ जुलाई १९५६ से लेकर लंदन तथा पैरिस में जो कर वसूल किये गए हैं, उन पर मिश्र का हक होगा।

प्राथमिक भुगतान के बाद शेष रकम छः वार्षिक किश्तों में चुका दी जायगी। प्रथम पांच किश्तों में ४० लाख तथा छठे किश्तों में ३० लाख मिश्री पौण्ड के हिसाब से। इन किश्तों पर सूद नहीं लिया जायगा।

समझौते में यह स्पष्ट किया गया है कि असाधारण सेवा करने वालों तथा पेंशन लेने वालों के लिए सम्बन्धित दोनों पक्षों के ऋणों को चालू रखने की जिम्मेदारी अरब-गणराज्य अपने ऊपर लेगा।

अमेरिका के वित्तमंत्रालय ने ३० अप्रैल को घोषणा कर दी है कि १ मई से २६० लाख डालर की ईजिप्ट की जो पूंजी स्वेज संकट काल से रोक दी गई थी, वह मुक्त कर दी जायगी। स्वेज नहर कम्पनी की ४४० लाख डालर की सम्पत्ति को भी कम्पनी तथा शेयर होल्डरों के लिए अमेरिकन सरकार ने मुक्त करना शुरू कर दिया है।

★

राष्ट्र का आर्थिक प्रवाह

(पृष्ठ ३२२ का शेष)

विदेशी सहायता	४३८	६००	१०३८
घाटे की अर्थ-व्यवस्था द्वारा	६१७	२८३	१२००
कुल स्रोत	२४५६	१८०४	४२६०

इन भारी करों के लगने पर भी पहले ३ वर्षों में बजटों के स्रोतों से केवल ४० प्रतिशत आय हुई । विदेशी सहायता भी ४० प्रतिशत प्राप्त हुई । अगले दो वर्षों में वृद्धि सम्भव है, किन्तु अन्य स्रोत गिरे हुए होंगे । इस अवस्था में करों के स्तर का कैसे विरोध किया जा सकता है। यदि ये कर न लगते तो क्या हमारी अवस्था सुधरती ? फ्रांस की तरह इस देश में राजनीतिक दल देश के आर्थिक विकास का खयाल न कर आलोचना करते हैं । कहा जाता है कि इस बड़ी योजना की क्या जरूरत है । योजना जनता के लिए है, तब ये इस्पात आदि के बड़े धंधे क्या महत्व रखते हैं । पर हकीकत में ये अनर्गल प्रश्न हैं। १९६१ तक यदि गृह-निर्माण, रेलवे यातायात और रोजगारी के प्रश्न हल न हुए, तो हमारी अवस्था १९५६ से भी १९६१ में बदतर होगी । भारत को ११०० करोड़ रुपए के स्थान पर १७४० करोड़ रुपए की विदेशी सहायता अपेक्षित है । योजना में विदेशी सहायता २० प्र० श० की अपेक्षा ४० प्र० श० आवश्यक है । यह कहना न होगा कि योजना के जो कार्य केन्द्र के तत्वावधान में है, वे ठीक ढंग से चल रहे हैं। केन्द्र के अधिकार में उद्योगों का निर्माण है, किन्तु राज्यों

भारत में सोने की खपत

(हजार औंस में)

वर्ष	आयात	निर्यात	उत्पादन	असली खपत
१८८६-८७ से १९१८-१९	७००३३,	३४३२८,	१२४३५	५८८१०
१९१९-२० से १९३०-३१	५७०२४	७४४८	४७०८	५४२८४
१९३१-३२ से १९३६-३७	११३	३६६१८	१९८०	३३५२५
१९३७-३८ से १९४१-४२	४६५	८०२४	१५४१	६०१७
१९४२-४३ से १९४७-४८	६०४	१७०	११७३	६४००
१८८६-८७ से १९४७-४८	१३०२३९	७६६१८	२१८३७	८२९९८

भारत में चांदी की खपत

(हजार औंस में)

वर्ष	आयात	निर्यात	उत्पादन	असली खपत
१८८६-८७ से १९१८-१९	२३९९४५३	४५८६१०	१०१९५७	[illegible]
१९१९-२० से १९३०-३१	११२७४६	२०९९१०	६७	[illegible]
१९३१-३२ से १९३६-३७	२११६०७	२३४०६४	६६	[illegible]
१९३७-३८ से १९३९-४०	७४३४२	३५०४७	७०	[illegible]
१९४०-४१ से १९४२-४३	३५७२९	१०३९६७	३५६७४	[illegible]
१९४३-४४ से १९४७-४८	६९७००	५२८०	६०८०८	[illegible]
१८८६-८७ से १९४७-४८ —	६९५६२९९	१०४९६०८	५२१२	[illegible]

में कृषि और ग्रामीण क्षेत्र की प्रगति चिंतनीय हैं :—

कार्यक्रम	योजना के लक्ष्य	उपलब्धि	(लाख टन) अनुमानित उपलब्धि
		१९५६-५७	१९५७-५८
बड़ी सिंचाई	३०.२	१.७	२.७
छोटी सिंचाई	१८.९	३.०	४.०
रासयनिक खाद और खाद	३७.७	३.६	७.७
सुधरे हुए बीज	३४.०	१.७	२.०
भूमि विकास	९.४	०.९	१.७
खेती की प्रथाओं का सुधार	२४.०	२.२	५.०
जोड़—	१५४.९	१३.१	२३.१

ग्रामों में रकम लगने के स्रोत

(कुल रकम का प्रतिशत)

	भारत १९५०-५१	जापान १९५१-५२	थाइलैंड १९५३
सरकार द्वारा ऋण	३.३	५.८	७.२
सहकारी समितियों द्वारा ऋण	३.१	३६.९	१४.०
सम्बन्धियों द्वारा	१४.२	४६.१	५५.४
जमींदार	२.५	—	०.२
कृषक साहूकार	२४.९	५.७	२७.३
महाजन	४४.८	—	२७.३
व्यापारी और आढ़तिया	५.८	—	—
अन्य स्रोत	२.७	५.५	१.१

सीमेंट उद्योग एक दृष्टि में

१. देश में १९५७ की अवधि में ५९ लाख टन सीमेंट का उत्पादन हुआ, जबकि १९५६ में ४९ लाख टन सीमेंट तैयार किया गया।

२. १९५७ के आरम्भ में देश के सीमेंट कारखानों की उत्पादन-क्षमता ५७ लाख टन थी। किन्तु साल के अन्त तक यह उत्पादन-क्षमता बढ़कर ६६ लाख ३० हजार टन हो गयी।

३. इस समय देश में सीमेंट के २९ कारखाने हैं। केन्द्रीय सरकार ने अब तक २५ नये कारखाने खोलने की योजनाएं ता चालू कारखानों को बढ़ाने की २९ योजनाएं स्वीकार की हैं। इन योजनाओं के चालू होने पर देश की उत्पादन-क्षमता ८६ लाख ७० हजार टन सीमेंट और बढ़ जाएगी।

४. अनुमान है कि इसमें से १५ योजनाएं (४ नये कारखाने खोलने और चालू कारखानों के विस्तार की ११ योजनाएं) १९५८ के अन्त तक पूरी हो जाएंगी और देश की उत्पादन-क्षमता १८ लाख टन सीमेंट और बढ़ जाएगी। अन्य ११ योजनाएं १९५९ के अन्त तक पूरी होंगी और इनसे उत्पादन-क्षमता १० लाख ४० हजार टन सीमेंट और बढ़ जाएगी। बाकी योजनाएं १९६०-६१ में पूरी होंगी।

५ देश में सीमेंट की कमी को पूरा करने के लिए १९५६ में विदेशों से ७,००,००० टन सीमेंट मंगाने का निर्णय किया गया था। किन्तु स्वेज नहर के झगड़े के कारण १९५६ में विदेशों से केवल १ लाख ८ हजार टन सीमेंट ही देश में आ सका है।

६. देश में सीमेंट का उत्पादन बढ़ जाने से पर्याप्त मात्रा में सीमेंट मिलने लगा है। परिणामस्वरूप सीमेंट के नियंत्रण में थोड़ी ढिलाई कर दी गयी है।

७. इन कारखानों में एस्बेस्टस सीमेंट के सायबान आदि तैयार करने के लिए उनमें नये यन्त्र लगाये गये हैं, जिससे इस उद्योग की उत्पादन-क्षमता बढ़कर २ लाख १० हजार एस्बेस्टस सीमेंट हो गयी। जबकि १९५६ में यह उत्पादन-क्षमता केवल १,४१,४०० टन थी। लगभग सभी कारखानों में भरपूर काम हो रहा है।

नये दाशमिक बाट

(पृष्ठ ३१२ का शेष)

रहेगी। लोगों को असुविधा और कष्ट होगा।

नये बाटों के रूप

मीटर-प्रणाली और नये बाट व पैमाने के प्रचलन के औचित्य के सम्बन्ध में जान लेने के पश्चात् अब यह जान लेना उत्तम होगा कि इनके रूप क्या होंगे। भारतीय प्रतिमानशाला द्वारा प्रकाशित मेट्रिक बाटों की डिजाइनों के अनुरूप इन बाटों का शीघ्र ही प्रचुर परिमाण में निर्माण होना शुरू हो जायगा। इस प्रकार की डिजाइनें निर्धारित करने के लिए बम्बई के संयुक्त उद्योग-निर्देशक श्री वी० वी० आप्टे की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गयी थी। समिति ने अच्छी तरह विचार कर इनका व्यावहारिक परीक्षण करके ही इनके रूप स्थिर किये हैं। ये बाट सभी दृष्टियों से दोषरहित रहें, इसके लिए भरपूर सतर्कता बरती गयी है। इन बाटों की बनावट ऐसी रहे जिससे किसी भी प्रकार की बेईमानी इनके माध्यम से नहीं हो सके। नये बाटों और पुराने बाटों के आकार-प्रकार में भी विभिन्नता रहे; क्योंकि जब तक नये और पुराने दोनों प्रकार के बाट चलते रहेंगे तब तक दोनों अलग-अलग पहचाने जा सकें। मीटर-प्रणाली के अनुसार सबसे बड़ा बाट ५० किलोग्राम का होगा, जो लगभग ५४ सेर का होगा। इसी प्रकार सबसे छोटा बाट १ मिलीग्राम का होगा, जो किलोग्राम का दस लाखवां भाग होगा। किलोग्राम के बटखरे में ५०,२०,१०,५ और १ ग्राम और ५००,२००,१००,५०,-२०,१०,५.२, और १ मिलीग्राम के बाट होंगे।

बाट-बटखरे के जो आकार अब तक रहे हैं—उनके मुताबिक वे मुख्यतः लोहे, पीतल अथवा कांसे, के पत्थर तथा केराट के रहे हैं। अनाज गल्ला तथा अन्य भारी भरकम वस्तुओं के तौलने के लिए लोहे के बाट; सोना-चांदी आदि तोलने के लिए पीतल अथवा कांसे के बाट; हीरे मोती अन्य रत्नों को तोलने के लिए केराट प्रणाली व्यवहृत होती रही है। मीटर-प्रणाली के बाट भी इसी प्रकार से बने रहेंगे।

लोहे के बाट ५० किलोग्राम से १०० ग्राम तक होंगे। २ किलोग्राम से १०० ग्राम तक के बाट मुलायम इस्पात के रहेंगे। लोहे का सबसे छोटा बाट १०० ग्राम का होगा, क्योंकि इससे छोटे बाट लोहे के अच्छे नहीं होंगे। मीटर-प्रणाली वाले अधिकांश देशों के बाट षटकोणाकार होते हैं। हमारे भारतीय मीटर प्रणाली वाले भी षटकोणाकार ही होंगे। ५०,२०,१० और ५ किलोग्राम के बाटों में दस्ते भी रहेंगे, जिससे उन्हें उठाने धरने में सुविधा हो। ये दस्ते मुलायम इस्पात के होंगे, जिन्हें बाटों के साथ ही ढाल दिया जायगा। २ किलोग्राम से १०० ग्राम तक के बाटों के ऊपर दस्ता लगाया जायगा, जिससे कि वे उठाते समय फिसल न जायं।

सोना-चांदी आदि तोलने के लिए जो पीतल के बाट रहेंगे, वे २० किलोग्राम से घटते हुए १ ग्राम तक के होंगे। मीटर-प्रणाली वाले दूसरे देशों की ही भांति सोना-चांदी के तोलने वाले हमारे पीतल के बाट बेलनाकार होंगे, जिन्हें पकड़ने के लिए दस्ता या घुण्डी लगी रहेगी। २० और १० किलोग्राम के पीतल के मीटर प्रणाली वाले बाटों के दस्ते होंगे और ५ किलोग्राम से १ ग्राम तक के बाटों में घुण्डियां होंगी। सोना-चांदी तोलने के बाटों पर पहचान के लिए हीरे की शक्ल बनी होगी, जिसमें अंग्रेजी और हिन्दी दोनों भाषाओं में तुलियन शब्द लिखा रहेगा। स्थानाभाव के कारण २० ग्राम तथा इससे छोटे बाटों पर हीरे की शक्ल भर ही बनी रहेगी। धातु के स्वरूप से बने बाटों में ऐसी कोई चीज नहीं रहेगी। [illegible] सोना-चांदी तोलने के बाटों के अतिरिक्त, अन्य किसी वस्तु के तोलने के बाटों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु के तोलने वाले बाटों पर हीरे की शक्ल अंकित नहीं रहेगी। सुनारों की सुविधा के लिए १ किलोग्राम से १ ग्राम तक के बाट होंगे, जो आकार में चक्कों की भांति चपटे होंगे और पीतल, कांसा या इसी प्रकार की किसी अन्य धातु के बने रहेंगे।

एक दूसरी श्रेणी के भी पीतल के बाट होंगे, जो गोलाकार होंगे और १ किलोग्राम से लेकर १ ग्राम तक के वजन के होंगे। इनकी [illegible] और ऊपर की [illegible]।

बाटों की [illegible]

[illegible]

राज्य में इनकी जांच कर सम्बन्धित अधिकारी द्वारा इन पर मुहर लगायी जायगी। २० ग्राम और इससे ऊपर के वजन वाले सभी बाट जान बूझकर पहले कम तोल के ढाले जायेंगे। उनमें छेद रखा जायगा, जिसमें सीसा ढालकर पूरी तौल करके छेद के ऊपर मुहर दे दी जायेगी। बिना मुहर को तोड़े सीसा नहीं निकाला जा सकता। आकार से छोटे होने के कारण २० ग्राम से कम वजन वाले बाटों में इस ढंग से मुहर नहीं लगायी जा सकेगी। घिस जाने पर भी बाट बदल दिये जाते रहेंगे।

मिलीग्राम वाले बाट पीतल, अलूमीनियम, निकिल आदि धातुओं के पत्थरों से बनाये जायेंगे, जिससे छोटा होने पर भी उनके धरातल काफी बड़े रहेंगे। ये बाट भी दो प्रकार के होंगे। एक साधारण तोलों के लिए और दूसरा सोना-चांदी आदि तोलने के कार्य में प्रयुक्त होगा। मिलीग्राम वाले बाट चार आकार के होंगे—षट्कोणाकार, वर्गाकार, त्रिभुजाकार और गोलाकार। षट्कोणाकार ५००, ५० और ५ मिलीग्राम के बाट होंगे, वर्गाकार २००,२० और २ मिलीग्राम के बाट होंगे, त्रिभुजाकार १००, १० और १ मिलीग्राम के बाट होंगे और सोना-चांदी तोलने वाले धातु के पत्तर के सभी बाट गोलाकार होंगे। धातु के पत्तरों से बने सभी बाट एक ओर से मुड़े हुए होंगे, जिससे उन्हें सुविधापूर्वक उठाया और पकड़ा जा सके।

निरन्तर प्रयोग में आते रहने के कारण यह संभव है कि ये बाट घिस जायं और तोल में कम हो जायं अतएव बाट-निरीक्षकों द्वारा इनका सदैव निरीक्षण परीक्षण होता रहेगा। घिस जाने अथवा टूट जाने के कारण तोल में कम हो जाने पर ये बदल दिये जाते रहेंगे। ठगी, बेईमानी आदि की आशंका नहीं रहेगी।

लोग आसानी से सभी बाटों को जान-पहचान सकें, इसके लिए सब पर अंगरेजी और हिन्दी में उनका नाम और वजन लिखा रहेगा। यह हो सकता है कि कुछ प्रारम्भिक कठिनाइयों का सामना लोगों को करना पड़े, क्योंकि हर प्रकार के परिवर्तन से जनता को कुछ न कुछ कष्ट तो होता ही है। परन्तु लोगों को कम से कम कष्ट और दिक्कत हो, इसका पूरा ध्यान रखा गया है।

—

(पृष्ठ ३१४ का शेष)

पूरा पूरा सहयोग मिले व उनसे जो आशा रखी गई है, वह पूरी हो। पर ऐसा होता नहीं है, किसी भी विकास खंड कार्यालय में चले जाइये, वहां के कर्मचारियों में वही साहिबी बू आपको मिलेगी।

एक विकास की जिला सेमिनार में मैं आमंत्रित था। एक बहिन जो समाज शिक्षा संगठनकर्त्ता (एस. ई.-ओ.) थीं, उन्होंने अपना अनुभव बतलाते हुए कहा कि गांवों में बहुत पिछड़ापन है। गांव की स्त्रियां उनके पास नहीं आती, न गांव वाले उनसे मिलने जुलने देते हैं। मैंने जवाब दिया कि जो वेष-भूषा आपकी है, उसे देख कर ग्रामवासियों को अनेक प्रकार से डर लगता है।

यही हाल अन्य कर्मचारियों का समझिये। ग्रामवासियों का जब आप विश्वास ही प्राप्त नहीं कर सकते, फिर सहयोग क्या प्राप्त कर सकेंगे? आखिर काम तो बतलाना ही है। इससे कागज रंगे जाते हैं। आपके अधिकारी भी जानते हैं कि यह सब खाना-पूरी की गई है। पर उन्हें भी अपने अधिकारी को काम बतलाना है, इसलिए वह कागजी घोड़ा एक से दूसरे के पास दौड़ता चला जाता है और जब उसके आंकड़े बनकर जनता के सामने आते हैं, तो जनता हैरान रह जाती है।

अगर हमें कागजी विकास छोड़कर सही विकास करना है, तो हमें मर्ज का मूल कारण पहचान कर उसका उचित निदान करना पड़ेगा। आज विकास खंड अधिकारी नायब तहसीलदारोंमें से चुने जाते हैं। नायब तहसीलदार वे नवयुवक ग्रेजुएट होते हैं, जो यूनिवर्सिटी या कालेज की रंगीन दुनिया से निकलकर सीधे हकूमत की गद्दी पर जा बैठते हैं। इससे यह स्वाभाविक है कि उनकी जिन्दगी मालमलिया और हकूमती बू बास लिये रहती है। फिर वे एकाएक बी. डी. ओ. बना दिये जाते हैं। अब उनसे आप आशा करें कि वे एकदम काया-पलट करके जन-सेवक बन जायें तो यह एक मिथ्या कल्पना है। आज के ग्रामीण जीवन का सामाजिक ढांचा बदलने के लिये पहले हमें उनके साथ दूध पानी की तरह मिलाकर काम करना होगा, उनका विश्वास प्राप्त करना होगा, तब कहीं हम उनका स्तर ऊंचा उठा पायेंगे।—कांग्रेस संदेश से

सम्पादक—कृष्णचन्द्र विद्यालंकार द्वारा अशोक प्रकाशन मन्दिर के लिए अर्जुन प्रेस, दिल्ली से मुद्रित व प्रकाशित।